हिन्दी काव्य सहित्य

BRAOU

डां. बी.आर. अंबेड़कर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद
हैदराबाद
2004 - 2005

पाठ्यक्रम समिति

पाठ्यक्रम निर्माण मंडल
प्रो.वी.एस. प्रसाद
प्रो.के. कुप्पुस्वामी राव
प्रो.पी. रामय्या
प्रो.आर. वसुनन्दन

पाठ्यक्रम संशोधन परामर्श समिति
प्रो.टी. मोहन सिंह
प्रो. शशि मुदिराज
डॉ. धर्मपाल पीहल

लेखक मंडल
डॉ. भीमसेन निर्मल
डॉ. वेंकटरमण राव
डॉ.टी. मोहन सिंह
डॉ. इन्दु वशिष्ठ
डॉ. सुशीला व्यापारी
डॉ.एन.पी. कुट्टन पिल्लै
डॉ. यशवंत जाधव

सम्पादक मण्डल
प्रो.आर.के. खण्डेलवाल (मूल सम्पादक)
प्रो.टी. मोहन सिंह (संशोधन सम्पादक)
प्रो. यशवंत जाधव

संशोधक एवं लेखक गण
डॉ. माणिक्याम्मा
डॉ. वेणु गोपाल
डॉ. धर्मपाल पीहल
डॉ. प्रकाश बुधाले
डॉ. मीना आहुजा
डॉ. शकीला खानम

योजक एवं समन्वय
प्रो. यशवंत जाधव
अध्यक्ष
हिन्दी विभाग
डॉ.बी.आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय

BRAOU

संधोधित संस्करण : 2002 Reprint 2003
© डॉ.बी.आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद - 500 033, आं.प्र. भारत
सर्वाधिकार सुरक्षित. विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना इसका कोई अंश किसी भी रूप में उपयोग करना मना है.
यह पुस्तक डॉ.बी.आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय की स्नातक शिक्षा-सनद के लिए निर्धारित है. डॉ.बी.आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय के कार्यक्रमों, पाठ्यक्रमों से सम्बन्धित अपेक्षित जानकारी निदेशक (शैक्षिक) प्रो.जी. रामरेड्डी मार्ग, सड़क संख्या 46, जूबिलि हिल्स, हैदराबाद - 500 033 से प्राप्त की जा सकती है.

Web : www.braou.ac.in
E-mail : braouap @hd1-dot.net.in

Lr. No. 740/Dr. BRAOU/DMP/PTG-71/J.O.241/2004-2005/Dt: 14-07-04/1,500 Copies
Printed at M/s. Joy 'N' Joy Offset Printers, 3-2-798, Kachiguda, Hyderabad. Ph : 55683425.

प्राक्कथन

यह काव्य संग्रह डॉ.बी.आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय के बी.ए. द्वितीय वर्ष के ऐच्छिक विषय - 'हिन्दी साहित्य' के छात्रों को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है । प्रस्तुत काव्य संकलन चार खण्डों में विभाजित है । प्रथम खण्ड में भक्ति युगीन काव्यधारा के आठ, द्वितीय खण्ड में आधुनिक काव्यधारा के दो, तृतीय खण्ड में छायावादी काव्यधारा के पांच, चतुर्थ खण्ड में छायावादोत्तर काव्यधारा के सात कवियों की प्रतिनिधि कविताओं को संकलित किया गया है । पाठों के विभाजन, क्रम और संगृहीत कविताओं की ओर ध्यान से देखने से यह पता चलता है कि एक विशेष दृष्टिकोण से इस पुस्तक की रचना हुई है ।

प्रस्तुत काव्य संग्रह में संकलित प्रत्येक पाठ का विश्लेषण एवं विवेचन कवि एवं कविता का परिचय, कविता का उद्देश्य, कठिन-शब्दार्थ, सारांश, समीक्षा एवं मूल्यांकन, परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न, नमूने के प्रश्नोत्तर, सहायक एवं सन्दर्भ ग्रंथ आदि विभिन्न शीर्षकों में किया गया है । आशा है कि इससे छात्रों को पाठों को सरलता से समझने और उनके काव्य सौंदर्य को आत्मसात करने में सहायता मिलेगी ।

हमारा विश्वास है कि इस पाठ्य-पुस्तक में संकलित सभी कविताएँ छात्रों के व्यक्तित्व के विकास में सहायक सिद्ध होंगी । संगृहीत कविताओं के अध्ययन से छात्रों के शब्द भण्डार में तथा उनकी भाषिक क्षमता में न केवल वृद्धि होगी अपितु वे हिन्दी के प्राचीन और आधुनिक काव्यधाराओं, काव्य रूपों, हिन्दी की विभिन्न बोलियों उदा - अवधी, ब्रज, खडीबोली एवं विभिन्न काव्य शैलियों से परिचय प्राप्त करेंगे । इससे उनमें सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, राष्ट्रीय एवं मानवतावादी भावनाओं का संचार भी होगा ।

इस काव्य संग्रह में संकलित सभी पाठ अनेक विद्वानों एवं विदूषियों द्वारा लिखे गये हैं । पाठों की रचना में उन्होंने जिस मौलिकता, गहराई एवं व्यापकता का दर्शन करवाया है उससे निस्सन्देह इस पाठ्य-पुस्तक के स्तर में वृद्धि हुई है । अत: मैं उन सभी को बधाई एवं साधुवाद देता हूँ ।

अब पाठ्य-पुस्तक आपके समक्ष है, हम जानना चाहते हैं कि इसका स्तर कैसा है ? इसमें क्या कमियाँ हैं ? यदि इसमें सुधार की कोई जरूरत हो तो वह किस दिशा में ।

- सम्पादक

BRAOU

हिन्दी काव्य की रूपरेखा

भारतीय भाषाओं के विकास क्रम की ओर दृष्टिपात करने से हमें पता चलता है कि वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश एवं आधुनिक भारतीय भाषाओं की एक सुदीर्घ परंपरा हमारे यहाँ विद्यमान है । इस परंपरा की एक कडी हिन्दी लगभग 1000 वर्ष पुरानी है । हिन्दी काव्य परंपरा का एक समृद्ध और निरन्तर विकासमान इतिहास रहा है जो आदिकाल से लेकर अब तक परिव्याप्त है ।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में इन सहस्र वर्षों के हिन्दी साहित्य को अध्ययन की सुविधा के लिए चार कालों में बांटा है -

1. आदिकाल संवत् 1050 से सं. 1375 तक
2. भक्तिकाल संवत् 1375 से सं. 1700 तक
3. रीतिकाल संवत् 1700 से सं. 1900 तक
4. आधुनिक काल संवत् 1900 से सं. अब तक

'आदिकाल' हिन्दी साहित्य का प्रारंभिक काल है । इस काल में सिद्धों, नाथ पंथियों, जैन मुनियों, चारणों आदि के मुख्यत: काव्य रचना की । इस युगीन काव्य मुख्यत: तीन केन्द्रों में धर्म के आश्रय में, राज दरबार में तथा आम जनता के हर्ष-विषाद के बीच रचा गया । अत: इस काव्य को धर्माश्रित काव्य, राज्याश्रित काव्य एवं लोकाश्रित काव्य के रूप में जाना जा सकता है । इस युग में मुख्यत: वीर एवं श्रृंगार रस का बोलबाला था । इस युगीन रचनाओं में चन्दबरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो', नरपति नाल्ह कृत 'बीसलदेव रासो', शालिभद्र सूरि कृत 'भरतेश्वर बाहुबलि रासो', विद्यापति कृत 'विद्यापति पदावली' आदि उल्लेखनीय हैं । राजस्थानी इस युग की प्रमुख साहित्यिक भाषा थी किन्तु ब्रज, मैथिली एवं खडीबोली में भी इस काल में कविता लिखी गयी । इस काल के प्रमुख कवि अमीर खुसरो को खडी बोली का प्रथम कवि माना जाता है ।

BRAOU

'भक्तिकाल' हिन्दी साहित्येतिहास का द्वितीय काल है । यह उपलब्धियों एवं संभावनाओं वाला काल है । इस काल में सर्वश्रेष्ठ साहित्यकारों का जन्म हुआ और कालजयी रचनाओं का निर्माण हुआ । इसीलिए इस काल को विद्वान् हिन्दी साहित्य का स्वर्णकाल भी कहते हैं । इस युग में ईश्वर के निर्गुण एवं सगुण रूप को आधार बनाकर कवियों ने अपनी भक्ति भावना को शब्द बद्ध किया । सूरदास, तुलसीदास, रसखान, मीरा बाई आदि सगुण भक्तिधारा के प्रमुख कवि हैं जबकि कबीर एवं जायसी निर्गुण भक्ति धारा के प्रमुख कवि हैं ।

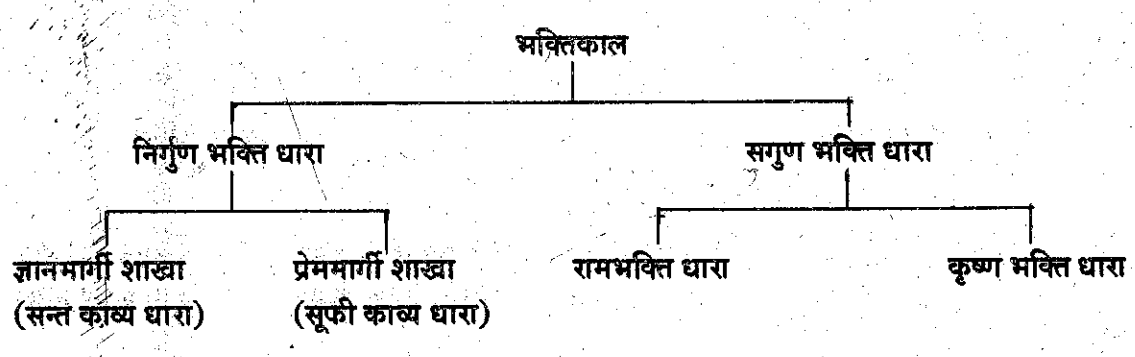

ज्ञानमार्गी शाखा के कवियों में सन्त कबीरदास, गुरुनानक, रैदास, मलूकदास, दादूदयाल, सुन्दरदास आदि सन्त कवि आते हैं । इन सन्तों ने अपने ढंग से समाज में फैले अन्धविश्वास, पाखंड, जातिभेद, कर्मकाण्ड, आडंबरों, मिथ्या प्रदर्शनों एवं मृत परंपराओं का विरोध किया । एकेश्वरवाद, गुरु महिमा, नामस्मरण, आचरण की पवित्रता, मन-वचन की शुद्धता एवं हिन्दू मुस्लिम एकता पर इन सन्तों ने बल दिया । भगवान के निर्गुण रूप की प्रतिष्ठा इस धारा के कवियों ने किया । सन्त शिक्षित नहीं थे । समाज के दलित वर्गों से सम्बन्धित सन्तों ने जन भाषा-सधुक्कडी में लोक कल्याण का संदेश दिया । सन्तों ने ज्यादातर मुक्तक कविता की रचना की । हिन्दी के सन्त कवियों में कबीर का स्थान सर्वोच्च है ।

'प्रेम मार्गी' शाखा के निर्गुण भक्त कवियों में मुल्ला दाऊद, जायसी, कुतबन, मंझन, उसमान आदि उल्लेखनीय हैं । ईश्वर प्राप्ति के लिए ज्ञान के स्थान पर प्रेम को इन्होंने आश्रय दिया । हिन्दू प्रेम गाथाओं को आधार रूप में ग्रहण कर इन्होंने सूफी संप्रदाय का प्रचार एवं प्रसार किया । सांसारिक प्रेम के माध्यम से इन्होंने ईश्वरीय प्रेम की प्रस्तुति की । अपनी विचारधारा की अभिव्यक्ति के लिए अधिकांश सूफी कवियों ने 'अवधी' भाषा का प्रयोग किया । जायसी कृत 'पद्मावत' प्रेमाख्यानक काव्य परंपरा का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है । मंझन कृत 'मधुमालती', उसमान कृत 'चित्रावली', आलम कृत 'माधवानल कामकंदला' मुल्ला दाऊद कृत 'चंदायन' इस काव्य धारा की कतिपय प्रमुख रचनाएँ हैं ।

कृष्ण के लोकरंजक तथा लोक रक्षक रूप को आधार बनाकर मुक्तक काव्य रचना करने वाले कवियों में सूरदास, नन्ददास, कुंचनदास, परमानन्द दास, गोविन्द स्वामी, छीतस्वामी, मीराबाई, रसखान, हितहरिवंश आदि प्रमुख हैं । संपूर्ण उत्तर भारत में कृष्ण भक्ति का प्रचार वल्लभाचार्य और उनके बाद उनके पुत्र गोस्वामी विट्ठलदास जी ने किया । वल्लभाचार्य द्वारा प्रचारित भक्ति मार्ग पुष्टिमार्ग कहलाता है । गोवर्धन पर्वत पर स्थित 'श्रीनाथ' के मंदिर में आठों पहर कीर्तन और भजन गाने वाले कवियों को 'अष्ट छाप' कहा जाता है । अष्ट छाप के आठों कवियों में सूरदास सर्वश्रेष्ठ हैं । उनके पदों का संग्रह 'सूरसागर' है । इसकी भाषा ब्रज है । यह एक गीति काव्य है ।

BRAOU

वस्तुत: सम्पूर्ण भक्ति साहित्य का आधार आध्यात्मिक भावना है । भक्ति काल का साहित्य अत्यन्त व्यापक, गंभीर एवं उदात्त है । यह मानव हृदय की दिव्य एवं पवित्र अनुभूतियों पर आश्रित है । इसमें भारतीय संस्कृति अपनी नई शक्ति, नई चेतना एवं नई शैली में अवतरित हुई है ।

हिन्दी काव्य धारा के विकास का तृतीय चरण 'रीतिकाल' कहलाता है । इस काल में मुख्यत: श्रृंगारिक एवं लक्षण उदाहरणों वाली कविता लिखी गयी । स्त्रियों का नख-शिख वर्णन, लक्षण ग्रन्थों का निर्माण इस युगीन कविता की मुख्य प्रवृत्ति है । चिन्तामणि त्रिपाठी रीतिकाल के प्रवर्तक हैं और 'बिहारी सतसई' के रचयिता बिहारीलाल इस काल के प्रमुख कवि माने जाते हैं । रीतिकाल के अन्य प्रसिद्ध कवियों में देव, मतिराम, पद्माकर, भूषण, भिखारीदास, आलम, घनानन्द एवं ठाकुर आदि उल्लेखनीय हैं । रीतिकाल के अधिकांश कवि राज्याश्रय में थे । इन कवियों ने प्राय: ब्रजभाषा का प्रयोग ही काव्य रचना के लिए की । भूषण वीर काव्य प्रणेता थे । उन्होंने 'शिवाजी' एवं 'छत्रसाल' की वीरता को कथ्य के रूप में ग्रहण कर 'शिवाबावनी' एवं 'छत्रसाल दशक' नामक काव्यों का प्रणयन किया । रीतिकालीन काव्य का शिल्प-पक्ष भाव-पक्ष की तुलना में अधिक श्रेष्ठ है ।

हिन्दी काव्यधारा का चतुर्थ उत्थान आधुनिक काल कहलाता है । आधुनिक काल में कविता के साथ-साथ गद्य की विभिन्न विधाओं का विकास हुआ । इसीलिए कुछ विद्वान 'आधुनिक काल' को 'गद्यकाल' के नाम से भी अभिहित करते हैं । इस काल में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेन्द्र, जयशंकर प्रसाद, मुंशी प्रेमचन्द, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, अज्ञेय, यशपाल, रागेय राघव, शिवप्रसाद सिंह, राम वलास शर्मा, आदि ने जन्म लिया ।

आधुनिक कालीन कविता पर एक ओर नवजागरण, समाज सुधार आन्दोलनों एवं स्वतंत्रता संग्राम का प्रभाव पडा तो दूसरी ओर पाश्चात्य विचारधारा, स्वच्छन्दतावाद, मार्क्सवाद, व्यक्तिवाद, अतियथार्थवाद एवं अस्तित्ववाद आदि का भी प्रभाव पडा । आधुनिक कालीन हिन्दी काव्य के विकास को अध्ययन की सुविधा के लिए साहित्येतिहासकारों ने विभिन्न कालों में बांटा है -

1. भारतेन्दु युग (1850-1900 ई.)
2. द्विवेदी युग (1900-1920 ई.)
3. छायावाद युग (1920-1936 ई.)
4. प्रगतिवाद युग (1936-1942 ई.)
5. प्रयोगवाद एवं नई कविता (1942-1960 ई.)
6. साठोत्तरी कविता (या) समकालीन कविता (ई. 1961 - अब तक)

काव्य भाषा के रूप में खडीबोली की स्थापना आधुनिक काल की प्रमुख घटना है । आधुनिक कालीन प्रमुख कवियों में सर्वश्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, नामनरेश त्रिपाठी, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर; अज्ञेय, मुक्तिबोध, नागार्जुन, धर्मवीर भारती, शमशेर बहादुर सिंह एवं नरेश कुमार मेहता आदि उल्लेखनीय हैं । आधुनिक कालीन प्रमुख हिन्दी काव्यों में अयोध्यासिंह कृत 'प्रियप्रवास', मैथिलीशरणगुप्त कृत 'भारत भारती' एवं 'साकेत', जयशंकर प्रसाद कृत 'कामायनी', सुमित्रानन्दन पंत कृत 'लोकायतन' एवं 'चिदम्बरा', महादेवी वर्मा कृत 'यामा', सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' कृत 'तुलसीदास', 'कुकुरमुत्ता' एवं 'राम की शक्तिपूजा', रामधारी सिंह दिनकर कृत 'उर्वशी', अज्ञेय कृत 'कितनी नावों में कितनी बार' आदि उल्लेखनीय हैं ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि देश में हुए अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक परिवर्तनों ने दस हजार वर्षीय हिन्दी कविता को प्रभावित किया । परिणामत: युग परिवर्तन के साथ-साथ युगीन कविता का स्वरूप एवं स्वर बदलता गया । नयी-नयी प्रवृत्तियों का विकास होता गया । इस तरह हिन्दी कविता ने अपनी एक हज़ार वर्षीय सुदीर्घ विकास यात्रा के विभिन्न पडावों को लांघते हुए अपने सामाजिक दायित्व का निर्वाह सशक्त ढंग से किया है । उसका भविष्य उज्ज्वल है ।

******

BRAOU

विषयानुक्रमणिका

		पृष्ठ क्रमांक
इकाई 1 :	कबीरदास के दोहे	1-15
इकाई 2 :	कबीरदास के पद	16-32
इकाई 3 :	तुलसीदास के दोहे	33-41
इकाई 4 :	तुलसीदास : वन गमन एवं केवट प्रसंग	42-56
इकाई 5 :	सूरदास के पद	57-81
इकाई 6	जायसी की कविता - नागमती का विरह वर्णन	82-90
इकाई 7 :	रसखान के सवैये	91-100
इकाई 8 :	रहीम के दोहे	101-116
इकाई 9 :	मीराबाई के पद	117-131
इकाई 10 :	बिहारीलाल के दोहे	132-149
इकाई 11 :	हरिऔध की कविता - प्रिय प्रवास की राधा	150-160
इकाई 12 :	मैथिलीशरण की कविता - वन में सीता	161-170
इकाई 13 :	निराला की कविता - जागो फिर एक बार	171-179
इकाई 14 :	जयशंकर प्रसाद की कविता - आंसू	180-194
इकाई 15 :	सुमित्रानंदन पंत की कविता - नौका विहार	195-205
इकाई 16 :	महादेवी वर्मा के गीत - मधुर-मधुर मेरे दीपक व प्रिय ! सान्ध्य गगन मेरा जीवन	206-217
इकाई 17 :	माखनलाल चतुर्वेदी की कविता - कैदी और कोकिला	218-224
इकाई 18 :	भगवतीचरण वर्मा की कविता : हम दीवानों की क्या हस्ती	225-231
इकाई 19 :	हरिवंशराय बच्चन की कविता - मधुशाला	232-243
इकाई 20 :	रामधारी सिंह दिनकर की कविता - पाटलीपुत्र की गंगा से	244-249
इकाई 21 :	गजानन माधव मुक्तिबोध की कविता - मुद्राराक्षस	250-269
इकाई 22 :	अज्ञेय की कविता : उधार	270-276
इकाई 23 :	नागार्जुन की कविता : 'अकाल और उसके बाद' एवं 'बाकी बच गया अंडा'	277-282
इकाई 24 :	धूमिल की कविता - 'बीस साल बाद' और 'सच्ची बात'	283-292

BRAOU

BRAOU

इकाई 1 : कबीरदास के दोहे

रूपरेखा

1.1 पाठ का उद्देश्य
1.2 पाठ एवं कवि परिचय
1.3 मूल पाठ
1.4 सारांश
1.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
1.6 शब्दार्थ
1.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
1.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
1.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
1.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
1.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
1.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
1.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में हिंदी साहित्य के भक्तिकालीन निर्गुण काव्यधारा की ज्ञानमार्गी-शाखा के प्रमुख कवि संत कबीर के भक्ति संबंधी विचारों पर प्रकाश डाला गया है. इन दोहों को पढ़ने से आप :-

* कबीर के समय की परिस्थितियां एवं मानव-समाज से परिचित होंगे.
* कबीर की निर्गुण भक्ति-भावना से परिचित होंगे.
* भारतीय भक्ति काव्यधारा की परंपरा को जान सकेंगे.
* भक्ति संबंधी कबीर के विचारों से परिचित होंगे.

BRAOU

1.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ-परिचय

संत कबीर के प्रस्तुत दोहे भक्ति भावना से संबंधित हैं. मनुष्य इस संसार में जन्म लेता है और सांसारिक माया-मोह में पडकर अपने जीवन को व्यर्थ में गवां देता है. अपनी वाणी द्वारा कबीर ऐसे ही मनुष्यों को विषय-वासनाओं के गर्त से निकालकर ईश्वरोन्मुख करने का प्रयास किया है. जो मनुष्य ईश्वर के नामस्मरण और उसकी भक्ति को अपनाता है, उसका जीवन सुखी एवं अनन्दमयी हो जाता है.

कवि-परिचय

हिंदी-साहित्य में भक्तिकाल को स्वर्णयुग माना गया है. इस काल में दो काव्य धाराएं - निर्गुण और सगुण - विकसित हुईं. निर्गुण काव्यधारा में ज्ञानाश्रयी-शाखा के प्रमुख कवि संत कबीर का स्थान उच्चतम रहा है. साहित्य के अतिरिक्त भारतीय इतिहास में भी एक महान् संत और समाज सुधारक के

रूप में कबीर की गणना होती है. अधिकतर विद्वानों के मतानुसार कबीर का जन्म सन् 1398 को बनारस में हुआ था. वे एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से जन्मे थे. जिसने लोकोपवाद के भय से इस बालक को "लहरतारा" नामक तालाब के किनारे छोड दिया था. "नीरू और नीमा" नामक मुसलमान दंपति को वहां यह बालक मिला. उन्हें संतान नहीं थी. इसे ईश्वरीय देन समझकर नीरू और नीमा ने इस बालक को पाल-पोस कर बडा किया और उसका नाम रखा "कबीर". फारसी भाषा में कबीर शब्द का अर्थ होता है - "महान्". वास्तव में ही कबीर अपने नाम के अनुसार ही कथनी-करनी, दार्शनिक-विचारधारा एवं मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण महान् संत सिद्ध हुए.

नीरू और नीमा जुलाहे थे अत: कबीर भी बचपन से ही जुलाहे का काम करने लगे. कबीर ने स्वयं कहा है कि वे निरक्षर थे - "कागद मसि छुओ नहीं, कलम गसो नहिं हाथ". कबीर ने अनुभव से ही ज्ञान प्राप्त किया था. दिनभर जुलाहे का काम करते और संध्या समय साधू-संगति में जा बैठते थे. दीक्षा के रूप में उन्होंने रामानंद के मुख से राम का गुरु-मंत्र पाया था. कबीर ने देखा कि समकालीन मानव-जीवन असंतोष पूर्ण है. राजनैतिक और सामाजिक व्यवस्थायें साधारण मानव का शोषण कर रही थी. धर्म-जाति-वर्ण आदि के भेदभावों से तद्युगीन मानव जीवन पीडित था. मनुष्य और मनुष्य के बीच भेदभावों की खाई बढ़ती जा रही थी. इसीलिए कबीर ने समविचारों वाले व्यक्तियों को जोड़कर "कबीर-पंथ" बनाया और समाज सुधार हेतु मानवतावादी विचारों का प्रचार किया. उन्होंने अंधरूढियों, अंध-विश्वासों, ढोंगी-साधुओं, पूजारियों तथा समाज घातक विचारों और शक्तियों का कडा विरोध किया. यहां तक कि धर्म-विचारकों की थोथी एवं आडंबरयुक्त ढोंगी कार्य-प्रणालियों की भी उन्होंने खूब खबर ली तथा उनके स्वार्थपरक कर्मों का भंडाफोड भी किया. कबीर मूर्ति पूजा के विरोधी थे. वे ईश्वर को अवश्य मानते थे. पर उनका ईश्वर एक परमशक्ति का प्रतीक है, जो प्रत्येक मनुष्य के हृदय में स्थित होता है. कबीर पर भारतीय दार्शनिक विचारधारा का विशेषकर शंकराचार्य के अद्वैतवाद का प्रभाव लक्षित होता है.

कबीर की पत्नी का नाम 'लोई' था. उन्हें एक पुत्र और एक कन्या - "कमाल और कमाली" हुए थे. कबीर स्वभाव से मस्तमौला और फक्कड थे. वे कथनी और करनी के कर्मवादी सिद्धांतों पर विश्वास करनेवाले थे. समकालीन समाज में मानवतावादी विचारधारा प्रेम, गुरु और ज्ञान की महिमा, सत्संग, सत्कर्म, सत्-चरित, ईश्वर का नाम-स्मरण आदि का प्रचार-प्रसार इस महान् सन्त ने किया. यही कारण है कि कबीर को कवि की अपेक्षा समाज-सुधारक के रूप में अधिक ख्याति मिली है.

कबीर के काव्य का प्रामाणिक संग्रह "बीजक" माना गया है. इसी संग्रह में साखी, रमैनी और सबद उपलब्ध हैं. "साखी" संस्कृत के "साक्षी" शब्द का तद्भव है, इसका अर्थ साक्षी है. "रमैनी" में सृष्टि, माया, मोह, कष्ट के कारण संसार की असारता आदि का विवेचन है तथा "सबद" में कबीर ने परमात्मा या परमतत्व की चर्चा की है. कबीर की भाषा "सधुक्कडी" कही गई है, जिसमें ब्रज, अवधी, राजस्थानी, बुंदेलखंडी आदि भाषाओं के शब्द पाये जाते हैं. इस तरह कबीर की वाणी का अंतरंग सक्षम है. कबीर की मृत्यु सन् 1528 में अर्थात् आयु के 120 वर्ष में हुई.

1.3 मूल पाठ

भक्तिपरक दोहे

अकथ कहानी प्रेम की, कछु कही न जाई ।
गूंगे केरी सरकरा, बैठे मुसकाई ।। 1 ।।

हरि रस पीया जानिये, जे कबहुं न जाइ खुमार ।
मैमंता घूमत रहै, नाहि तन की सार ।। 2 ।।

सबै रसाइन मैं किया, हरि सा और न कोई ।
तिल एक घट में संचरैं, तौ सब तन कंचन होई ।। 3 ।।

हेरत हेरत हे सखि, रह्या कबीर हिराइ ।
बूंद समानि समुंद में, सो कत हेरी जाइ ।। 4 ।।

कबीर काजर रेखहु, अब तो दई न जाय ।
नैननि प्रीतम रमि रहा, दूजा कहां समाय ।। 5 ।।

पहिले यह मन काग था, करता जीवन घात ।
अब तो मन हंसा भया, मोति चुनि चुनि खात ।। 6 ।।

बहुत दिनन की जोबती, बाट तुम्हारी राम ।
जिव तरसै तुझ मिलन कौ, मन नाही विश्राम ।। 7 ।।

जिहि घटि प्रीति न प्रेम रस, पुनि रसना नहि राम ।
ते नर इस संसार में, उपजि गये बेकाम ।। 8 ।।

विरह भुवंगम तन बसै, मंत्र न लागे कोई ।
राम वियोगी ना जिऔ, जिऔ त बौरा जाई ।। 9 ।।

हिरदै भीतरि दो बलै, धुयां परगट होई ।
जाके लागी सो लखै, कै जिहि लाई सोई ।। 10 ।।

आया था संसार में, देखन को बहुरूप ।
कहै कबीरा संत हो, परि गया नजर अनूप ।। 11 ।।

जब मैं था तब हरि नाहि, अब हरि है मैं नाहि ।
प्रेम गली अति साकरी, या में दो न समाहि ।। 12 ।।

कोटि कर्म पल में करै, यह मन विषया स्वादि ।
सतगुरु सबद न मानई, जनम गंवाया वादि ।। 13 ।।

कबीर मन पंखी भया, उडिकै चढ़ा अकास ।
तुहां ही तैं गिरि पडा, मन माया के पास ।। 14 ।।

कबीर मारग कठिन है, कोई सके नहि जाइ ।
गए ते बहुरे नहि, कुसल कहै को आइ ।। 15 ।।

<u>नीतिपरक दोहे</u>

बलिहारी गुरु आपनै, धौ हाडी के बार ।
जिनि मानुष तै देवता, करत न लागी बार ।। 1 ।।

कबीर संगति साधु की, बेगि करीजै जाइ ।
दुरमति दूरि गवांइसी, देसी सुमति बताइ ।। 2 ।।

BRAOU

कबीर गुरु गरवा मिल्या, रत्ति गया आटै लूँण ।
जाति-पाति कुल सब मिटै, नॉव धरौबो कूण ।। 3 ।।

पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुवा, पंडित भया न कोई ।
एकै आखर पीव का, पढै सो पंडित होई ।। 4 ।।

जाति न पूछो साधु की, पुछि लीजिये ज्ञान ।
मोल करो तलवारि का, पडा रहन दै म्यान ।। 5 ।।

जैसी मुख तैं नीकसैं, तैसी चालै चाल ।
पार ब्रह्म नियरा रहै, पल में करैं निहाल ।। 6 ।।

यह तन कांचा कुंभ है, लिया फिरै या साथी ।
ढबका लागा फूटि गया, कछु न आया हाथी ।। 7 ।।

माया मुई न मन मुया, मरि मरि गया सरीर ।
आसा तिष्णां ना मुई, यों कहि गया कबीर ।। 8 ।।

कबीर कालि खोटी भई, मुनियर मिलै न कोई ।
लालच लोभी मसकरा, तिनकू आदर होइ ।। 9 ।।

केसों कहां बिगाडियां, जो मूंडै सौ बार ।
मन को काहे न मूंडिये, जामै विषै विकार ।। 10 ।।

मूरषि संग न कीजिए, लोह जल न तिराइ ।
कदली, सीप, भुवंग, मुषी एक बूंद तिहूं भाइ ।। 11 ।।

मैं मैं बडी बलाई है, सकै तो निकसी भाजि ।
कब तक राखौं है, सखी, रुई लपेटी आगि ।। 12 ।।

जाकौ जेता निरमया, ताकौ तेता होई ।
रत्ती घटै न तिल बडै, जो सिर कूटै कोई ।। 13 ।।

कबीर सोई दिन भला, जा दिन संत मिलांहि ।
अंक भरे भरि भेटिए, पाप सरीरौ जांहि ।। 14 ।।

मंदिर मांहि झबूकती, दीवा जैसी जोति ।
हंस बटाऊ चालि गया, काढौ घर की छोति ।। 15 ।।

1.4 सारांश

भक्तिपरक दोहे

1) इस दोहे में संत कबीर 'प्रेम भावना' का महत्व बताते हुए कहते हैं कि - "प्रेम भाव दिव्य होता है. प्रेम एक ऐसा अलौकिक भाव है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता. वह केवल अनुभव ही किया जाता है. जैसे गूंगा व्यक्ति शक्कर के स्वाद का अनुभव तो करता है, पर बता नहीं

सकता वैसे ही प्रेम और प्रभु-भक्ति का अनुभव ही किया जा सकता है, पर उसे प्रकट नहीं किया जा सकता.

2) इस दोहे में कबीर ईश्वर के भक्ति-रस की महिमा बताते हुए कहते हैं कि - "हे मनुष्य, प्रभु-भक्ति एक ऐसा संजीवनी-रस है, जिसे पीने पर उसका नशा जीवनांत तक बना रहता है. जिस व्यक्ति को ईश्वर-भक्ति का नशा हो जाता है, वह उसी में मस्त होकर घूमता-फिरता है. उसे अपने शरीर एवं माया-मोह की चिंता नहीं होती.

3) इस दोहे में भी कबीर ईश्वर-भक्ति की महिमा बताते हुए कहते हैं कि - "हमने इस संसार के सभी रसों का सेवन किया है. सारे रसों का नशा कुछ समय के बाद उतर जाता है. किंतु प्रभु-भक्ति ही एक ऐसा रस है, जिसकी तुलना नहीं की जा सकती. यह तिल मात्र भी हमारे शरीर में पहुंच कर सारे तन-मन को स्वर्ण बना देती है और माया-मोह से मुक्त कर हमें मोक्ष की ओर ले जाती है.

4) इस दोहे में कबीर ईश्वर की अनन्त लीला का वर्णन करते हुए कहते हैं कि - "हे मनुष्य, ईश्वर को खोजते हुए और उसका नाम-स्मरण करते हुए मैं इतना तन्मय हो गया हूं कि, उसी में समा पाया हूं. पानी की बूंद जब तक अलग रहती है, उसका अस्तित्व बना रहता है. पर जब उसे समुद्र में मिलाया जाता है, तब उसका अस्तित्व अलग नहीं होता.

5) इस दोहे में कबीर ने ईश्वर की महिमा बताई है और कहा है कि - "मेरी आंखों में ईश्वर का रूप ऐसा बसा हुआ है, जिससे मैं अपनी आंखों में काजल की पतली रेखा भी लगा नहीं सकता. मेरी ये आंखें सतत प्रभु की भक्ति में ही लीन रहती हैं, तब दूसरे रूप को स्थान कहां ?

6) इस दोहे में कबीर ने अपने चंचल मन की चर्चा करते हुए बताया है कि - "हे मनुष्य, पहले मेरा मन एक कौअे जैसा था, जो माया-मोह की विषय-वासना में लिप्त रहता था. ईश्वर-भक्ति को पाने से मेरा यह मन अब हंस बन गया है, जो केवल मोती रूपी सद्गुणों को चुनता है और अपना जीवन धन्य बनाता है.

7) इस दोहे में कबीर ईश्वर-मिलन की आतुरता को व्यक्त करते हैं और कहते हैं, "हे ईश्वर, तुम्हारी प्रतीक्षा में मेरा मन व्याकुल हो गया है. मैं कई दिनों से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूं. तुम से मिलने के लिए मेरे प्राण तडप रहे हैं और मेरे मन को तनिक भी चैन नहीं है.

8) इस दोहे में कबीर ने ईश्वर-भक्ति और प्रेम की अनिवार्यता बतलाते हुए कहते हैं कि - "हे मनुष्य, जिस मानव-शरीर में ईश्वरीय-प्रेम और भक्ति नहीं होती और जो ईश्वर का नाम स्मरण नहीं करता, उसका जीवन इसी संसार में व्यर्थ हो जाता है.

9) माया-मोह एवं विषय-वासना में लिप्त मनुष्य से कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, तुम्हारे मन में जब तक विरह का सर्प विद्यमान है और मन संसार की विषय-वासना में लगा है, तब तक उस पर किसी भी मंत्र का प्रभाव नहीं हो सकता. ईश्वर के प्रेम तथा विरह में मन विषय-वासना से अनासक्त हो कर बावला-सा हो जाता है.

10) ईश्वर-भक्ति की प्राप्ति के आवेग को बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "मेरे मन में ईश्वर-विरह की दावाग्नि जल रही है. किंतु मेरी वेदनाओं का धुंआ प्रकट नहीं होता. जिसके मन में ऐसी अग्नि लगती है, वही मेरी व्यथा और पीडा को समझ सकता है.

BRAOU

11) ईश्वर के अस्तित्व को बताते हुए कबीर कहते हैं कि - " मनुष्य संसारिक जीवन का उपभोग करने हेतु ही जन्म लेकर आता है. मैंने भी मनुष्य का जन्म लेकर संसार के बहुरूप देखे हैं . पर ऐसा प्रतीत हुआ है कि, यह सब कुछ नश्वर है. जो व्यक्ति संत होकर विषय-वासनाओं से परे हो जाता है, उसी को ईश्वर के अनुपम स्वरूप के दर्शन होते हैं.

12) अहंकार को त्यागने हेतु कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, मन में जब तक अहंकार की भावना होती है, तब तक ईश्वर-भक्ति की अनुभूति नहीं होती. अहंकार से मुक्त होने पर ही ईश्वर का प्रेम प्राप्त होता है. इसीलिए अहंकार को मन से मिटा दो और ईश्वर-भक्ति को पा लो. क्यों कि पवित्र प्रेम और भक्ति का मार्ग इतना संकीर्ण होता है कि इसमें अहंकार और प्रेम दोनों एकसाथ नहीं समा पाते.

13) सतगुरु की महिमा बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, मन विषय-वासना के स्वाद-मोह में पडकर अनेक बुरे कर्म करता है. सतगुरु के सत्य-वचनों को न मानकर जो व्यक्ति माया-मोह के गर्त में पड जाता है, वह अपना जीवन व्यर्थ में ही गंवा देता है.

14) मन की चंचल गति को बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "अपनी साधना के आधार पर मेरा मन पक्षी बनकर उड गया है और ब्रह्म-सत्य तक पहुंच गया है अर्थात् ईश्वर के द्वार तक पहुंच गया है. किंतु सुप्त वासनाओं के कारण वह फिर से गिर पडा है और विषय-वासना के माया-जाल में फंस गया है.

15) ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग की कठिनाई बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "ईश्वर-भक्ति और प्रेम-प्राप्ति का मार्ग कठिन होता है. साधारण व्यक्ति जो अहंकार और विषय-वासना में लिप्त है, वहां तक नहीं पहुंच पाता. फिर भी जो व्यक्ति इन सारे विषयों को त्याग कर चला जाता है, लौटकर नहीं आता और उसी में लीन हो जाता है.

BRAOU

<u>नीतिपरक दोहे</u>

1) इस दोहे में गुरु की महिमा बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे गुरु, मैं आप पर बलि हो जाता हूं. आपने ही मुझे अल्प समय में ही मनुष्य से देवता-योग्य बना दिया. आपमें ऐसी शक्ति है, जो अल्प समय में ही मनुष्य को पावन बना सकती है.

2) इस दोहे में साधु-संगति का महत्व बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, जितना शीघ्र हो सके, साधु-संगति पा लो क्यों कि साधुओं की सत्-संगति से ही मनुष्य के दुर्गुण चले जाते हैं और उसमें सद्गुणों एवं सुमति का विकास होने लगता है.

3) इस दोहे में गुरु और उसके ज्ञान का महत्व बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, गौरवमयी गुरु के प्राप्त होने से मेरी आंखें खुल गई. उनके ज्ञान-कण श्रवणों में पडने से मैं पावन हो गया. उन्होंने मुझे अपने में ऐसा मिला लिया, जैसे आटे में नमक. जाति-पांति कुल-वर्ण सभी का भेदभाव मिट गया और अब मुझे किस नाम से पुकारा जाएगा ? मैं भी अब गुरु-ज्ञान से दीक्षित हो गया हूं.

4) प्रेम का महत्व बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, पोथियां और ज्ञान-ग्रंथ पढते हुए मनुष्य के कई युग बीत गये. पर कोई भी व्यक्ति सच्चा पंडित न बन सका. जो व्यक्ति प्रेम के अक्षर की महत्ता को एवं उसके अर्थ को समझता है, वही सच्चा पंडित और ज्ञानी होता है.

5) साधु के सच्चे ज्ञान की महिमा बताते हुए कबीर कहते हैं कि - हे मनुष्य, साधु की कोई जाति या वर्ण नहीं होता. इसीलिए उसकी जाति नहीं पूछनी चाहिए. वह तो ईश्वर-भक्त और ज्ञानी होता है. उसके ज्ञान को परखना चाहिए. जैसे कि तलवार को खरीदते समय तलवार का महत्व होता है और उसकी म्यान का नहीं. म्यान साधु का शरीर होता है और तलवार उसका ज्ञान.

6) कथनी और कर्म की एकता बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, अपने मुख से जैसे सत्य वचन निकलते हैं, वैसी ही हमारे कर्म भी होने चाहिए. वचन और कर्म में सार्थकता एवं सामंजस्य होना चाहिए. क्योंकि ईश्वर और नियती हमारे आचरण को देखते रहते हैं. कथनी और कर्म के आचरण में अंतर आते ही, परब्रह्म हमें नष्ट कर देता है.

7) मानव-शरीर की नश्वरता को बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, यह शरीर एक कांच के बर्तन की तरह होता है और हम इसे सुंदरतम बनाते फिरते हैं. जैसे कि धक्का लगते ही कांच का बर्तन टूट जाता है, वैसे ही बुरे कर्मों से यह शरीर नष्ट हो जाता है. परिणामत: अपना यह जीवन निरर्थक हो जाता है.

8) जीव को माया-मोह से बचाने की चेतावनी देते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, न माया का मोह मरता है और न मनुष्य का मन. कई युगों से तो मनुष्य का केवल शरीर ही मरता आया है. पर मन बार-बार जन्म लेता है और विषय वासना में लिप्त हो जाता है क्योंकि मन की तृष्णा और आशा का कोई अंत नहीं होता.

9) ढोंगी साधू और मुनियों की खबर लेते हुए कबीर कहते हैं कि - "कलियुग के इस समाज में आज सच्चे और श्रेष्ठ साधू, मुनि और सज्जन नहीं मिलते हैं. सभी धन के लोभी, विषय-वासना से ग्रस्त एवं झूठे प्रदर्शन करनेवाले साधुओं का ही सम्मान करते हैं. मसकरें और विदूषकों का ही यहां आदर होता है.

10) ढोंगी साधू-संतों की खबर लेते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे साधु-संतों, भला इन बालों को मूंडने से क्या होगा ? इन बालों ने तुम्हारा क्या बिगाडा है ? तुम्हारे मन को - जिसमें कई विषय-वासना के विकार जमे हुए हैं, पवित्र करो. मन को पवित्र एवं एकाग्र करना ही सच्ची साधना है.

11) मूर्खों की संगति से होनेवाली हानियों को बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, मूर्ख की संगति नहीं करनी चाहिए. ऐसी संगति हमें ले डूबेगी. क्योंकि लोहा पानी पर कभी नहीं तैरता. ओस की बूंदें कदली, सीपी और सांप के मुंह में एक जैसी ही पडती हैं. किंतु उसके फल और परिणाम अलग-अलग होते हैं. इसीलिए सत्संगति ही मनुष्य को पावन कर सकती है.

12) अहंकार भाव से बचने के लिए कबीर कहते हैं कि - हे मनुष्य, मनुष्य के लिए अहंकार एक बडी बला है. इससे विनाश ही होता है. इससे बचने का एवं इसे दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए. अहंकार रुई में लिपटी आग की तरह होता है, जो लपटें बन कर जीवन का सर्वनाश करता है. यही कारण है कि अहंकार मनुष्य का सबसे बडा शत्रु होता है.

13) सत्कर्मों पर बल देते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, अधिक लालच से लाभ नहीं होता. जिसके भाग्य में जितना होता है, उसे उतना ही मिलता है. न रत्ती भर अधिक मिलता है और न

BRAOU

तिलभर कम. मनुष्य चाहे कितना भी सिर धुने या प्रयत्न करें. इसीलिए जितना प्राप्त है, उसी में संतुष्ट होना चाहिए.

14) साधु-दर्शन की महिमा बताते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, जिस दिन हमें साधु-संतों के दर्शन होते हैं, वही हमारे लिए शुभ दिन होता है. सच्चे साधु-संतों के गले मिलने से हमारे शरीर के सारे पाप दूर हो जाते हैं.

15) नश्वर जीवन की चर्चा करते हुए कबीर कहते हैं कि - "हे मनुष्य, मंदिर में जिस तरह दीपक की ज्योति, प्रकाशमान रहती है, उसी तरह हमारे शरीर में आत्मा या प्राण. जब प्राण ही पक्षी बनकर उड जाता है, तब इस मिट्टी के शरीर का क्या प्रयोजन ? सभी इस निर्जीव शरीर को अपवित्र कहकर श्मशान-भूमि ले जाने को कहते हैं.

1.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

भक्तिपरक दोहे

संग्रहित दोहे कबीर के मन की पवित्र भक्ति भावना के प्रमाण हैं. मानव इस संसार में आता है और संसारिक माया मोह में उलझकर जीवन व्यर्थ गंवा देता है. अज्ञान के अंधकार में डूबे ऐसे मनुष्यों को कबीर ने प्रकाश का मार्ग दिखाया है. यह मार्ग ईश्वर के प्रति पवित्र प्रेम एवं भक्ति की एकाग्रता का है. भक्ति एवं परमात्मा के प्रति एकाग्रता दिव्य और अलौकिक होती है.

कबीर का ईश्वर निर्गुण एवं निराकार है. न उसका नाम है और न उसका स्वरूप. वह सर्वव्यापी और सर्वान्तर्यामी है. समकालीन परिस्थितियों में कबीर ने ईश्वर को सारे मतों, विवादों, सिद्धांतों और संकीर्ण विचारधाराओं से परे बताया है. उनके अनुसार ईश्वर एक ऐसा अनुभव, जिसे प्रत्येक मुनष्य पा सकें. पुष्प की सुगंध उसी के भीतर होती है, उसी तरह ईश्वर या परमात्मा हर मनुष्य के भीतर ही छिपा होता है. उसे जानना, अनुभव करना और उसके अस्तित्व को अपने में पाकर जीवन को सुखमय बनाना होता है.

कबीर ने सर्वव्यापी ईश्वर की भक्ति को सर्वसाधारण मनुष्य तक पहुंचाया है. ईश्वर के अस्तित्व को धर्म, जाति और वर्ण के दायरों से मुक्त कर मानव के उच्चतम गुणों से युक्त बताया है. कबीर ने प्रत्येक मनुष्य को सत्कर्म, सत्संग, सद्विचार, कर्त्तव्यपूर्ण एवं मानवीय प्रेम का संदेश दिया है. मनुष्य को अज्ञानता के अंधकार से और मोह के चंगुल से मुक्त कर पूर्ण मानव बनाना ही कबीर की वाणी का मूल स्वर रहा है.

नीतिपरक दोहे

कबीर का ज्ञान अनुभव जन्य है. संतों एवं मौलवियों की संगति से उन्होंने ज्ञान का जो अनुभव सहेजा, उसी को उन्होंने अपनी वाणी का आधार बनाया. समकालीन मानव जीवन त्रस्त था. धर्म, जाति और वर्ण तथा मत-मतांतरों की श्रृंखलाएं संकीर्ण होती जा रही थीं. आडंबरों, अंध-विश्वासों एवं दुराचारों का बोल-बाला था. मनुष्य और मनुष्य के बीच अंतर की खाई बढ़ती जा रही थीं. हमारी सांस्कृतिक परंपराओं एवं ईश्वरीय शक्ति पर मनुष्य का विश्वास और आस्था कम हो रही थी. सारा मानव समाज कई भागों में बंटता जा रहा था. ऐसे समय कबीर ने अपनी वाणी से समाज सुधार का काम किया.

BRAOU

सबसे पहले तो उन्होंने प्रत्येक मनुष्य को अपने भीतर ही झांकने, अपने कर्मों और विचारों को परखने को बाध्य किया. माया, मोह, काम, क्रोध एवं अहंकार से मुक्ति पाने का मार्ग बताया. लोभी और स्वार्थमय जीवन को प्रकाशमयी बनाने हेतु ज्ञान की ज्योति प्रदान की. ज्ञान प्राप्ति के लिए सतगुरु, सत्संग, सद्विचार और सत्कर्मों का महत्व बताया, जिससे मनुष्य अपने भीतर की शक्ति को पहचान सकें. मनुष्य को दूसरे मनुष्य के प्रति प्रेम और अपनापन तथा मानवीय उच्चतम गुणों से संपन्न किया.

तत्पश्चात् कबीर ने समाज को सुधारा. अंध-विश्वासों, ढोंगी-आडंबरों एवं धर्म, जाति, वर्ण के नाम पर मनुष्य और मनुष्य के बीच वैमनस्य निर्माण करनेवाली शक्तियों की खूब खबर ली. अपनी वाणी से कबीर ने मानवतावादी प्रेम एवं सद्गुणों वाले मनुष्य-समाज का निर्माण किया. हमारी सारी सांस्कृतिक परंपराओं को संजीवनी मिली. मध्य युग में कबीर ने मानव-मात्र की जो सेवा की, वह अनमोल है. यही कारण है कि उन्हें संत कहा जाता है.

1.6 शब्दार्थ

<u>भक्तिपरक दोहे</u>

हरि रस	-	भक्ति का रस
कबहुं	-	कभी भी
खुमार	-	नशा
मैमंता	-	धुन में
अकथ	-	जो कहा न जा सके
काहु	-	कुछ भी
केरी	-	की
सबै रसाइन	-	सभी रस
तिल	-	एक बूंद
घट	-	शरीर
कंचन	-	सोना
हेरत-हेरत	-	खोजते-खोजते
हिराइ	-	खो गया
सो कत	-	वह कैसे
हेरी	-	खोजना
काजर रेखहुं	-	काजल की रेखा
दई	-	देना, लगाना
दूजा	-	दूसरा
काग	-	कौआ
घाट	-	हानि
भया	-	हो गया
चुनी	-	चुनकर

BRAOU

जोवती	-	देखती
बाट	-	मार्ग
जिव	-	प्राण
विश्राम	-	आराम
जिहि घटि	-	जिस शरीर में
फुनि	-	पुनः
रसना	-	जीभ
उपजि	-	उत्पन्न
भुवंगम	-	सर्प
बसै	-	बसता है
मंत्र	-	उपाय या औषधि
बौरा	-	बावरा या पागल
हिरदै	-	हृदय
दौ	-	दावाग्नि
बलै	-	जलना
जाके लागी	-	जिसे लगती है
सो लखै	-	वही जानता है
लाई	-	लगाई
को	-	के लिए
अनूप	-	अनुपम या परमात्मा
मैं	-	अहंकार
सांकरी	-	पतली या तंग
सबद	-	शब्द या उपदेश
मानई	-	मानना
वादि	-	विवादों में
पंखी	-	पक्षी
भया	-	हो गया
अकास	-	आकाश
उहां	-	वहां से
आतम	-	आत्मा
सो	-	वही या वैसे ही

नीतिपरक दोहे

आपनै	-	अपने
धौ	-	दे देना

BRAOU

हाडी	-	शरीर
जिति	-	जिन्हें
बेगि	-	शीघ्र
करीजै	-	कर लीजिये
जाइ	-	जाकर
देसी	-	देती है
गरवा	-	गले मिलना
रत्ति	-	थोडा-सा
आटै लूण	-	आटे में नमक
कूण	-	कौन
मुवा	-	मर गया, समाप्त हो गया
भया	-	हो गया
आखर	-	अक्षर
पीव	-	प्रेम
तै	-	से
नीकसे	-	निकलता है
तैसी	-	वैसे ही
चालै चाल	-	कर्म करो
पारब्रह्म	-	काल का समय
नियरा	-	निकट ही या सामने
पल	-	क्षण
तन	-	शरीर
कांचा कुंभ	-	कांच का बर्तन
ढबका	-	धक्का
मुई	-	मरी या नष्ट हुई
आसा	-	आशा, मोह
त्रिष्णा	-	तृष्णा, प्यास या इच्छा
कालि	-	कलियुग
खोटी	-	व्यर्थ या काम न आनेवाला
मुनियर	-	मुनिवर
जाति	-	जात
म्यान	-	जिसमें तलवार रखी जाती है
केसों	-	बालों ने
मूंडे	-	मूंडते हो
जामैं	-	जिसमें

BRAOU

विषै	-	विषय-वासना
जनमिया	-	जन्म लेना
करनी	-	कर्म
सुबरन	-	स्वर्ण
सुरा	-	शराब
मैं मैं	-	अहंकार
बलाइ	-	मुसीबत या बला
निकसी	-	निकलकर
भाजि	-	भागो
राखौ	-	रखूं
जाको	-	जिसको
जेता	-	जितना
निरमया	-	निर्धारित
ताकौ	-	उसे
तेता	-	उतना
रत्ती	-	तनिक भी
सिर कूटै	-	सिर धुनना या पछताना
सोई	-	वही
मिलाहि	-	मिलते हैं
अंक भरे	-	गले मिलकर
सरीरौ	-	शरीर का
झबूकती	-	जगमगाती
हंस	-	आत्मा या प्राण
बटाऊ	-	पथिक
काढो	-	निकालो
छोति	-	मिट्टी

1.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

1.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

प्रश्न-
1. कबीर की निर्गुणोपासक भक्ति पर एक निबंध लिखिये.
2. पठित दोहों के आधार पर कबीर के ईश्वर-संबंधी विचारों को अपने शब्दों में लिखिये.
3. समकालीन स्थितियों में कबीर के "एकेश्वरवादी" विचारों का महत्व समझाइये.
4. कबीर ने ईश्वर-प्राप्ति के लिए ज्ञान का मार्ग क्यों अपनाया ? समझाइए.
5. कबीर ने सतगुरु और ज्ञान को क्यों महत्व दिया है ? समझाइए.
6. 'समकालीन परिस्थितियों में कबीर के नीति परक दोहों ने समाज-सुधार का कार्य किया है -समझाइए.

BRAOU

7. पठित दोहों के आधार पर कबीर के "कथनी और करनी" की एकता पर विचार बताइये.
8. "कबीर ने अपनी वाणी से धर्म, जाति और वर्ण के भेदों को मिटाकर मानवतावादी विचारों का सुधार-कार्य किया है" - समझाइए.

1.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

प्रश्न-
1. "जिहि घटि प्रीति न प्रेम रस, पुनि रसना नहि राम" दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. "यह मन विषयास्वादि" कबीर के अनुसार इसका तात्पर्य समझाइए.
3. आत्मा परमात्मा से मिलने के लिए बेचैन क्यों होती है ? समझाइए.
4. "सबै रसाइन मैं किया, हरि सा और न कोई". कबीर के अनुसार हरि के भक्ति-रस को समझाइए.
5. "जब मैं था तब हरि नाहि, अब हरि है मैं नाहि" के आधार पर ईश्वर-भक्ति की विशेषता बताइए.
6. "आंया था संसार में देखन को बहुरुप" दोहे के आधार पर 'संत-संगति' का महत्व बताइए.
7. "कबीर गुरु गरवा मिल्या, रत्ति गया आटै लूंण" दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
8. पठित दोहों के आधार पर "साधू-संगति" की महिमा बताइये.
9. "अहंकार मनुष्य का सबसे बडा शत्रु होता है" इस संबंध में कबीर के विचार बताइये.
10. "पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा, पंडित भया न कोई ।" दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
11. "मन को काहे न मूंडियो, जामें विषै विकार" के आधार पर अंध-विश्वास के विरोध पर कबीर के विचार बताइए.

1.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

1.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- कबीर की निर्गुणोपासक भक्ति पर एक निबंध लिखिये.

उत्तर- कबीर के समय देश संक्रमणावस्था से गुजर रहा था. देश पर मुसलमानों का शासन था. राजनैतिक एवं सामाजिक व्यवस्थायें तितर-बितर थी. जाति, धर्म और वर्ण का भेदभाव था. आडंबरों का बोल-बाला था. ऐसे समय समाज में शांति, एकता एवं मानवीय गुणों का प्रादुर्भाव आवश्यक था. यही कार्य कबीर ने अपनी वाणी से किया. धर्म के नाम पर भी अत्याचार बढ़ रहे थे. इस्लाम-धर्म का प्रचार जोरों पर था. हिंदुओं में जाति और वर्ण की आपसी फूट तथा शैव-वैष्णव मत-सिद्धांतों का मतभेद था. इसीलिए कबीर ने एकेश्वरवादी सिद्धांत को अपनाया. सारे मतभेदों का विरोध किया. उस आदिम-शक्ति को ईश्वर घोषित किया, जो सारे विश्व को चलाती है. कबीर ने ही बताया कि ईश्वर का कोई रुप, रंग, आकार, नाम या मत-सिद्धांत नहीं होता. मनुष्य ने ही उसे अपने स्वार्थ के लिए आकार एवं नाम दिया है. वह तो परमशक्ति है, जो प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान है. वही परमात्मा है, जो हर आत्मा में प्रतिष्ठित होता है. पर मनुष्य विषय-वासनाओं में ग्रस्त होकर अपने ही भीतर स्थित परमात्मा को न जानकर मंदिर और मस्जिदों में उसे ढूंढता फिरता है.

कबीर पर अद्वैतवाद का पूरा प्रभाव था. उनके विचारानुसार मनुष्य को सतगुरु से ज्ञान पाना चाहिए एवं साधू-संगति में रहना चाहिए. विषय-वासनाओं से निर्लिप्त होकर सत्चरित्र एवं सद्गुणों का विकास कर लेना चाहिए. मानव-प्रेम और मानव-सेवा के भाव-विचार अपनाने चाहिए. इसीलिए कबीर ने अंध-विश्वासों, अंध-रूढ़ियों, मूर्ति-पूजा, और ढोंगी-आडंबरों का कड़ा विरोध किया है. ढोंगी साधू-संतों, पुजारियों तथा समाज के तथाकथित ठेकेदारों की खूब खबर ली है एवं उनके स्वार्थी दुष्कृत्यों का भंडाफोड किया है. कबीर सत्यवादी, स्पष्टवक्ता और फक्कड मस्तमौला थे. उन्होंने ईश्वर के नाम का सच्चे मन से स्मरण करने की प्रेरणा दी है. समकालीन मानव समाज में मनुष्य को सारे भेदभाव मिटाकर केवल मनुष्य बनाना ही आवश्यक था. कबीर की वाणी ने यही संजीवनी-कार्य किया है. यही कारण है कि उन्हें निर्गुण-भक्ति का उपासक माना गया. सच तो यही है कि समकालीन समाज में पतन के कगारे पर स्थित मानवीय-मूल्यों को कबीर ने नव-चेतना प्रदान की है और उन्हें भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं से जोड़कर समाज-सुधारक एवं एक महान् संत का कार्य किया है.

प्रश्न- कबीर ने सतगुरु और ज्ञान को क्यों महत्व दिया है ? समझाइए.

उत्तर- कबीर के नीतिपरक दोहों का अध्ययन करने पर यह प्रतीत होता है कि उन्होंने सतगुरु और ज्ञान पर विशेष बल दिया है. उनके समय के समाज में मनुष्य का जीवन कई समस्याओं से घिरा हुआ था. मुसलमान शासकों ने इस्लाम-धर्म का प्रचार-प्रसार प्रारंभ किया था. हिंदू सनातनी परंपरा को माननेवाले भी शैव और वैष्णव मत/मतांतरों में बंट गये थे. धर्म के साथ जाति और वर्ण के भेदभाव भी बढ़ते जा रहे थे. राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक शोषण से साधारण मानव जीवन पीडित था. साधारण मनुष्य शिक्षित नहीं था. वह वंशपारंपरिक व्यवसाय कर अपना उदर पोषण कर रहा था. जो शिक्षित थे, उनमें भी अहंभाव, ढोंग, आडंबर, भ्रष्टाचार और स्वार्थी-भाव अधिक थे. ऐसे समय जन-जीवन में मानवीय-प्रेम, शांति, एकता, सत् चरित्र, कर्मवादी आदर्श एवं भाईचारा जैसे सदगुणों का आविर्भाव आवश्यक था. ये सारे गुण ज्ञान से ही प्राप्त होते हैं तथा ज्ञान की दीक्षा एवं ज्ञान-कण सतगुरु के बिना संभव नहीं. सतगुरु से प्राप्त ज्ञान ही मानव-जीवन की सारी समस्याओं का उन्मूलन कर सकता है. न केवल बाहरी समस्यायें, अपितु मानव मन के भीतर भी आत्म-विश्वास निर्माण कर उसे सत्कर्मों के लिए प्रेरित करता है.

कबीर शिक्षित नहीं थे. उनका ज्ञान अनुभव का था. वे जानते थे कि जीवन में ज्ञान का महत्व सर्वाधिक होता है. यही कारण है कि समाज में सत् चरित्रों का निर्माण करने के लिए उन्होंने ज्ञान पर बल दिया है. उसी तरह सतगुरु ही मनुष्य को सत्मार्ग पर ले जाता है. अंधा, ढोंगी, आडंबरी और स्वार्थी गुरु अपने शिष्य को भी विषय-वासना में एवं माया-मोह की खाई में धकेल देता है. सतगुरु ही मनुष्य को ईश्वरीय अस्तित्व का बोध दिलाता है और इस नश्वर विषय-वासना के माया-मोह से मुक्ति दिलाकर परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग दिखाता है. इसीलिए कबीर ने सतगुरु को ईश्वर से भी बढ़कर माना है. उनके अधिकतर दोहों में सतगुरु के प्रति आदर, श्रद्धा, भक्ति और समर्पण के भाव पाये जाते हैं. उनके अनुसार सतगुरु का ज्ञान एवं साधु-संगति ही मनुष्य के तन-मन को कंचन बना देती है और मानवीय सेवा-प्रेम की कर्मपादी कर्त्तव्य-चेतना उदित कर मनुष्य का जीवन सार्थक बना देती है.

1.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- "जिहि घटि प्रीति न प्रेम-रस, पुनि रसना नहि राम" दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

उत्तर - प्रस्तुत दोहा संत कबीर का है. हिंदी साहित्य के भक्तिकालीन निर्गुण काव्यधारा के प्रमुख कवि एवं समाज-सुधारक के रूप में कबीर की गणना की जाती है. मानवीय-प्रेमभावना और ईश्वर-भक्ति के संबंध में कबीर का अपना विशेष दृष्टिकोण था. इसी को उन्होंने इस दोहे में व्यक्त किया है.

व्याख्या-हे मनुष्य, जिस शरीर में मानवीय प्रेम-रस की उपज नहीं होती और जिस व्यक्ति के जीभ पर ईश्वर का नाम-स्मरण नहीं होता, ऐसे व्यक्ति का संसार में जन्म लेना ही व्यर्थ है.

विशेष भाव - जो मनुष्य दूसरों की व्यथा को समझता नहीं और जो किसी दीन की सहायता नहीं करता, जिसके मन में दूसरे व्यक्ति के प्रति प्रेम, स्नेह, आदर और श्रद्धा के भाव उत्पन्न नहीं होते, ऐसे व्यक्ति का जन्म व्यर्थ होता है, जो ईश्वर का नाम-स्मरण न करता हो और विषय-वासना में ग्रस्त हो, ऐसे व्यक्ति का जीना व्यर्थ है.

छन्द - यह दोहा नामक मात्रिक छन्द है. इसकी पहली और तीसरी पंक्ति में तेरह तथा दूसरी और चौथी पंक्ति में ग्यारह मात्रायें होती हैं.

प्रश्न- "साधु-संगति" की महिमा बताइए.

उत्तर- कबीर ने अपनी वाणी में साधु-संगति और सत्संग पर विशेष बल दिया है. उनके विचारानुसार मनुष्य को सत् चरित्र एवं सद्गुणों को विकसित करने के लिए ज्ञान की प्राप्ति आवश्यक है. सच्चे साधु, ज्ञानी, परोपकारी एवं परमात्मा के भक्त होते हैं. ऐसे साधु धर्म, जाति और वर्ण से परे होकर मानव-सेवा में रत रहते हैं. साधुओं की संगति में रहने से मन विषय-वासनाओं से हटकर परमात्मा के स्मरण में लीन हो जाता है. साधु एक ऐसा पारस है, जिसके स्पर्श मात्र से हमारा मन रूपी लोहा कंचन बन जाता है. ओस की बूंद जब सीपी में पड जाती है, तब वह मोती का स्वरूप धारण करती है. वही ओस की बूंद यदि सर्प के मुंह में पडती है, तब वह विष बन जाती है. अर्थात्, मनुष्य जिस संगति में घिरे रहता है, उसका प्रभाव उस पर अवश्य पडता है. इसीलिए साधु-संगति ही मनुष्य को माया-मोह एवं स्वार्थों से हटाकर ईश्वर-भक्ति का मार्ग बताती है.

BRAOU

1.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कबीर ग्रंथावली
2. कबीर - रामविलास शर्मा
3. उत्तर भारत की संत-परंपरा - पं. परशुराम चतुर्वेदी
4. कबीर - डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी
5. कबीर की विचारधारा - डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत

******

इकाई 2 : कबीर के पद

रूपरेखा

2.1 पाठ का उद्देश्य
2.2 पाठ एवं कवि परिचय
2.3 मूल पाठ
2.4 सारांश
2.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
2.6 शब्दार्थ
2.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
2.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
2.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
2.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
2.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
2.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
2.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 पाठ का उद्देश्य

BRAOU

प्रस्तुत पाठ में भक्तिकाल के निर्गुण भक्ति धारा में ज्ञानाश्रयी शाखा के संत कवि कबीरदास के नीतिपरक और भक्तिपरक पदों की विवेचना की गई है. इन पदों के अध्ययन से आप -

* कबीरदास के नीति संबंधी विचारों को समझ सकेंगे.
* कबीर की भक्तिभावना पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* कबीर की दार्शनिक विचारधारा को समझ सकेंगे.
* कबीर की सामाजिक एवं आध्यात्मिक चेतना से अवगत होंगे.

2.2 पाठ एवं कवि परिचय

प्रस्तुत पाठ में कबीरदास के नीतिपरक और भक्तिपरक पद कबीर के एकमात्र ग्रंथ 'बीजक' के 'सबद' भाग से लिए गए हैं. संत परंपरा में कबीर का सर्वश्रेष्ठ स्थान है. यद्यपि कबीरदास पढ़े-लिखे नहीं थे - "मसि कागद छूओ नहीं, कलम गही नहिं हाथ ।" तथापि कबीर के अनुभवजनित ज्ञान के सम्मुख महापंडितों का ज्ञान नगण्य था. कबीर केवल सच्चे भक्त ही नहीं थे वरन् वे सच्चे समाज सुधारक भी थे. उनके खरे सत्य के प्रयोग से उनकी वाणी कहीं तीखी और कहीं कठोर अवश्य लगती है लेकिन वे मनुष्य को अपने अंतर्मन में झांकने के लिए विवश अवश्य कर देते हैं. कबीर भक्ति के क्षेत्र में बाह्याडंबरों के घोर विरोधी थे. वे बाहरी स्वच्छता की अपेक्षा हृदय की स्वच्छता पर बल देते थे. मनुष्य का जीवन क्षणभंगुर है, अतः इस नश्वर शरीर और संसार की निःसारता का बोध करवाते हुए कबीर ईश्वर की भक्ति करने की प्रेरणा देते हैं. ईश्वर मनुष्य के हृदय में विराजमान है लेकिन मनुष्य उसे

मंदिरों एवं मस्जिदों में ढूंढ़ता फिरता है. सांसारिक विषय-वासना परछाई के समान है, मनुष्य अज्ञानवश उसी में लिप्त रहकर अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य को भूल जाता है और सिंह के समान कुएँ में अपनी ही परछाई देखकर दूसरा सिंह समझकर उसमें कूद पड़ता है.

कबीर की भक्ति दांपत्य भाव की थी. दांपत्य भाव की भक्ति में भक्त स्वयं को परमात्मा की पत्नी और परमात्मा को अपना पति मानता है. कबीर के भक्तिपरक पदों में कबीर की परमात्मा के प्रति इसी अनन्य भक्ति के दर्शन विभिन्न रूपों में दीखते हैं. वे ईश्वर से सांसारिक वसतुएँ नहीं मांगते क्योंकि वे स्थिर रहनेवाली नहीं है. अत: वे ईश्वर से उनकी भक्ति ही मांगते हैं. भक्ति की पहली शर्त है अहंकार को त्यागना. जब तक भक्त में अहंकार होता है वह परमात्मा से साक्षात्कार नहीं कर सकता. जब भक्त अहंकार छोड़कर ईश्वर की शरण में जाता है तो वह मात्र उसी पर भरोसा करता है. कबीर के भक्तिपरक पदों में कबीर की इसी एकनिष्ठ भक्ति को दर्शाया गया है. जब भक्त कहता है कि जिस प्रकार हीरे को तोड़ा नहीं जा सकता उसी प्रकार परमात्मा के प्रति उनकी अटूट आस्था और 'पक्ति भी टूट नहीं सकती.

2.3 मूलपाठ

नीतिपरक पद

1) काया मांजसि कौन गुनां ।
घर भीतरि है मलनां ।।
हिदै कपट मुखि ग्यांनी, झूठै कहा बिलोवसि पांनी ।
तूंबी अठसठि तीरथ न्हाई, कडुवापन तऊ न जाई ।
कहै कबीर बिचारी, भव सागर तारि मुरारी ।।

2) झूठे तन कौ क्या गरबावै ।
मरै तो पल भरि रहन न पावै ।।
खीर खांड घृत पिंड संवारा, प्रान त्रए लै बाहरि जारा ।
जिहिं सिरि रचि रचि बांधत पागा, सो सिरु पंचु संवारहि कागा ।
हाड़ जरै जैसे लकडी झूरी, केस जरे जैसे त्रिन कै कूरी ।
कहै कबीर नर असहुं न जागे, जम का डंड मूंड महिं लागै ।

3) लाज न मरहु कहहु घरु मेरा ।
अंत की बार नहीं कछु तेरा ।।
उपजै निपजै निपजि सगाई, नेंनन देखत यह जगु जाई ।
बहुत जतन करि काया पाली, मरती बार अगिनि संग जाली ।
चोआ चंदन मरदन अंगा, सो तनु जलै काठ के संगा ।
कहै कबीर सुनहु रे गुनियां, बिन सेंगो रूप देखै सभ दुनियाँ ।।

4) कौन बिचारि करत हौ पूजा,
आतमरॉम अवर नहिं दूजा ।।
बिनु परतीतैं पाती तोरै, ग्यान बिना देवलि सिर फोरै ।

BRAOU

लुचरी लपसी आप सँवारे, द्वारै ढाढ़ा राम पुकारै ।
पर आतम जौ तत्त बिचारै, कहि कबीर ताकै बलिहारै ।।

5) अपुनपौ आपुहि बिसर्‌यो।
जैसे स्वान कांच मंदिर में, भर्मित भूंकि मर्‌यो ।।
ज्यों केहरि बपु निरखि कूपजल, प्रतिमा देखि पर्‌यो।
वैसे ही गज फटिक सिला पर, दसनन आनि झर्‌यो ।।
मरकट मूँठी स्वाद न बिहुरै, घर घर नरत फिर्‌यो ।
कहै कबीर ललनी के सुयना, तोहि कौने पकर्‌यो ।।

भक्तिपरक पद

1) क्या मागौं किछु थिर न रहाई ।
देखत नैन चला जग जाई ।।
इक लख पूत सवा लख नाती, तिहि रावन हार दिवा न बाती ।
लंका सा कोट समुंद सी खाई, तिहि रावन की खबरि न पाई ।।
आवत संग न जात संगाती , कहा भयो दरि बांधे हाथी ।
कहै कबीर अंत की बारी, हाथ झारि जैसे चला जुवारी ।।

2) ते हरि के आवहिं केहि कांमां ।
जे नहिं चीन्हैं आतम रांमां ।।
थोरी भगति बहुत अहंकारा, ऐसे भगता मिलै अपारा ।
भाव न चीन्हैं हरि गोपाला, जानि क अरहर कै गलि माला ।
कहै कबीर जिनि गया अभिमाना, सो भगता भगवंत समानां ।।

3) अब तोहिं जांन न दैहूँ राम पियारे ।
ज्यौ भावैं ज्यौं होहु हमारे ।।
बहुत दिनन के बिछुरे हरि पाए, भाग बड़े घर बैठे आए ।
चरनन लागि करौं सेवकाई, प्रेम प्रीति राखौं उरझाई ।
आज बसौं मन मंदिर चोखै, कहै कबीर परहु मति धोखै ।।

4) अब मोहिं राम भरोसा तोरा ।
तब काहू का कवन निहोरा ।।
जाके हरि सा ठाकुर भाई, सो कत अनत पुकारन जाई ।
तीनि लोक जाकै हहि भारा, सो काहे न करे प्रति पारा ।
कहै कबीर सेवौ बनवारी, सींचो पेड़ पिवै सब डारी ।।

5) मोहिं तोहिं लागी कैसे छूटै ।
जैसे हीरा फोरे न फूटै ।।
मोहिं तोहिं आदि अंति बनि आई, अब कैसे दुरत दुराई ।
जैसे कंवल पत्र जल बासा ऐसे तुम साहेब हम दासा ।।
मोहिं तोहिं कीट भ्रिंग की नाई, जैसे सलिता सिंधु समाई ।
कहै कबीर मन लागा, जैसे सोने मिला सुहागा ।।

BRAOU

2.4 सारांश

नीतिपरक पद

1. बाहरी स्वच्छता की अपेक्षा आंतरिक पवित्रता पर बल देते हुए कबीर कहते हैं तुम केवल बाहरी शरीर को मल-मल कर धोते हो, जबकि तुम्हारे शरीर के भीतर अनेक प्रकार के विकार विद्यमान हैं. इस प्रकार मात्र शरीर धोने से कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि तुम्हारे हृदय में कपट भरा है किंतु मुंह से ज्ञान की बड़ी-बड़ी बातें करते हो. यह मात्र वाणी का ज्ञान है. यह ज्ञान पानी मथ-मथ कर मक्खन निकालने के समान निरर्थक है. कबीर आगे कहते हैं कड़वी लौकी चाहे कितने ही तीर्थों में डुबकी लगाए, फिर भी उसका कड़वापन दूर नहीं हो सकता अर्थात् बाहरी स्वच्छता से आंतरिक विकार दूर नहीं हो सकते. कबीर सोच-विचारकर कहते हैं कि केवल ईश्वर में ही भवसागर से उद्धार करने की शक्ति है. अत: हमें अपने हृदय की मलिनता को दूर करने के लिए ईश्वर की भक्ति करनी चाहिए.

विशेष -

1. कबीर बाह्याडंबर के विरोधी थे. उनकी भक्ति का आधार हृदय की पवित्रता है. इसीलिए वे गंगा-स्नान करने या तीर्थ स्थानों में भटकने आदि का घोर विरोध करते हैं और चित्त की स्वच्छता पर बल देते हैं.

2. तूंबी अठसठि तीरथ.....न जाई । पंक्ति में दृष्टांत अलंकार का सुंदर उदाहरण परिलक्षित होता है.

2) कबीर कहते हैं कि हे मनुष्य तू क्षणभंगुर और अस्थायी शरीर पर गर्व क्यों करता है ? लोग मृत्यु के बाद इस शरीर को क्षण भर भी रहने नहीं देते. जिस शरीर को दूध, शक्कर, घी आदि से पोषण करके संवारा जाता है अर्थात् सुंदर बनाया जाता है, प्राण निकल जाने पर वही शरीर इतना निकृष्ठ माना जाता है कि लोग उसे तुरंत ही घर से बाहर ले जाकर जला डालते हैं. जिस सिर पर सुरुचिपूर्ण ढंग से पगड़ी बांधी जाती थी उसी को अब कौए अपनी चोंच से खोद-खोदकर खाते हैं. हड्डियां सूखी लकड़ी के समान जलती हैं और केश (बाल) तिनके के ढेर के समान जल जाते हैं. कबीर कहते हैं शरीर की नश्वरता को जानते हुए और यह भी जानते हुए कि यमराज का डंडा सिर पर अवश्य लगेगा, मनुष्य इस शरीर से मोह नहीं छोड़ता, वास्तविक स्थिति को जानकर वह जागृत नहीं होता.

विशेष -

1. प्रस्तुत पद में अनेक दृष्टांतों एवं उदाहरणों द्वारा मनुष्य के शरीर की नि:सारता का वर्णन किया गया है और उसे नींद से जगाने का प्रयास किया गया है. मनुष्य इस संसार में आकर यह भूल जाता है कि उसे सभी कुछ यहीं छोड़कर जाना है. यहाँ तक कि उसकी स्वयं की देह भी उसका साथ देने वाली नहीं है. अत: प्रस्तुत दोहे के द्वारा कबीर यही शिक्षा देते हैं कि इस देह का अभिमान करना व्यर्थ है.

2. संवारे, संवारहि - यमक अलंकार.

3. हाड़ जरै जस लाकड़ी - उपमा अलंकार.

BRAOU

3) जीवन की क्षण भंगुरता के प्रति सचेत करते हुए कबीर कहते हैं कि हे मनुष्य धन संपत्ति और घर के मोह में पड़कर उन्हें अपना कहते हुए तुम्हें लज्जा क्यों नहीं आती, जबकि तुम जानते हो कि अंतिम समय में तुम्हारा अपना कुछ भी नहीं रहेगा अर्थात् मरणोपरांत तुम्हें सब कुछ यहीं पर छोड़कर जाना होगा. इस संसार की सभी वस्तुएँ क्षणिक हैं. प्रत्येक वस्तु उत्पन्न होती है, कुछ समय तक विकसित होती है और अंत में नष्ट हो जाती है. उत्पन्न होना, फिर कुछ समय के लिए रहना और फिर नष्ट हो जाना, यही इस संसार की रीति है. हमारी ऑखों के सामने देखते ही देखते संसार की सभी वस्तुएँ नष्ट हो जाती हैं. मनुष्य भी नाना प्रकार के यत्न करके अपने शरीर का पालन-पोषण करता है किंतु मृत्यु के समय उसका वही शरीर अग्नि में जला दिया जाता है. इस शरीर को विभिन्न प्रकार के सुगंधित द्रव्यों, चंदन आदि मलकर सुगंधित किया जाता है लेकिन वही शरीर लकड़ी के साथ जला दिया जाता है. अंत में कबीर कहते हैं कि हे गुणी मनुष्यों अर्थात् हे समझदार मानव ! जिस रूप पर तुम्हें इतना गर्व है वह एक दिन नष्ट हो जाएगा और सारा संसार इसके विनाश को देखता रह जाएगा.

विशेष -

प्रस्तुत पद में कबीर ने नाना प्रकार की चेतावनी देकर मनुष्य को सांसारिक मोह त्याग कर ईश्वर की भक्ति की ओर प्रेरित करने का प्रयास किया है.

4) बाह्याडंबरों की निंदा करते हुए कबीर कहते हैं कि तुम क्या समझकर पूजा करते हो, परमात्मा का निवास तो तुम्हारे शरीर में ही है. उसे मंदिर आदि में खोजना व्यर्थ है. लोग बिना श्रद्धा और प्रेम के देवताओं को चढ़ाने के लिए फूल-पत्ती तोड़ते हैं और बिना ज्ञान के ही मंदिर में जाकर अपना सिर फोड़ते हैं अर्थात् बिना श्रद्धा और भक्ति के मात्र दिखावे के लिए मंदिरों में जाकर माथा टेकते हैं. ऐसे लोग पूडी-हलुवा आदि स्वादिष्ट व्यंजन स्वयं खा जाते हैं और द्वार पर खड़े राम नाम को पुकारने वाले भिक्षुक की उपेक्षा करते हैं. इसका दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि अंतर में जो ईश्वर निवास करता है उसकी उपेक्षा करते हैं और दिखावे में विश्वास करते हैं. कबीर कहते हैं कि जो इस तत्व को समझते हैं कि आत्मा ही परमात्मा है, मैं उन लोगों पर बलिहारी जाता हूँ.

विशेष -

कबीर निर्गुण ईश्वर के उपासक थे. वे ईश्वर की प्राप्ति में बाह्याडंबरों की अपेक्षा मन की पवित्रता को महत्व देते थे. उनकी धारणा थी कि ईश्वर हर घर में निवास करता है इसीलिए उसे कहीं बाहर खोजने की आवश्यकता नहीं है.

5) कबीर कहते हैं कि सांसारिक विजय परछाई के समान झूठे और नश्वर हैं. मनुष्य भ्रम में माया के वश होकर अपने वास्तविक स्वरूप को भूल गया है. उसकी दशा तो उस श्वान (कुत्ते) के समान है जो शीशमहल (कांच के मंदिर) में अपनी ही परछाई देखकर भ्रमवश दूसरा श्वान समझकर भौंकता हुआ व्यथित (बेचैने) हो जाता है. अपने आत्मस्वरूप को भूलने के कारण ही मनुष्य सिंह के समान कुएँ के जल में अपना ही प्रतिबिंब देखकर भ्रमवश उसे दूसरा सिंह समझकर उससे भिडने के लिए कुएँ में कूद पड़ता है.मनुष्य हाथी के समान स्फटिक पत्थर में अपना प्रतिबिंब देखकर उसे दूसरा हाथी समझकर उससे युद्ध करने के लिए अपने दांत अड़ा देता है. बंदर का उदाहरण देते हुए कबीर कहते हैं कि मनुष्य उस बंदर के समान है जो स्वाद के लिए तंग मुँह वाले घड़े में हाथ डालकर अपनी मुट्ठी बंद कर लेता है और अपने आप को फँसाकर लोभवश उसे नहीं छोड़ता (मुट्ठी में उसने जिस खाने की वस्तु को लिया हुआ है अगर वह उसे छोड दें तो वह बंधन मुक्त हो सकता है, लेकिन लोभवश उसे नहीं छोड़ता) और कलन्दर की डोरी से बँधकर घर-घर नाचता है. मनुष्य की स्थिति उस तोते के समान है जो

बाँस की नली पर बैठकर अपने को फँसा देता है. तोता जब नली पर बैठता है तो वह घूम जाती है और तोता उलट जाता है. वह गिरने के भ्रम में उसे मजबूती से पकड़े रहता है (यदि वह उसे छोड़ दें तो उड़ कर मुक्त हो सकता है). इसी बीच शिकारी आकर उसे पकड लेता है. कबीर अंत में कहते हैं कि यही दशा मनुष्यों की भी है जो सांसारिक विषय विकारों के प्रति आसक्त होकर उसमें बंध जाते हैं और अपने वास्तविक स्वरूप को भूल जाते हैं.

विशेष -

1. प्रस्तुत पद में विभिन्न उदाहरणों द्वारा कबीर ने यह स्पष्ट किया है कि संसार के सभी आकर्षण प्रतिबिंब के समान अवास्तविक और भ्रमित करने वाले हैं. जीव भ्रमवश उन्हें वास्तविक मान लेता है.

2. उदाहरण अलंकार का अत्यंत सुंदर प्रयोग हुआ है.

भक्तिपरक पद

1) प्रस्तुत पद में कबीर संसार की नश्वरता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मैं ईश्वर से सांसारिक सुख, ऐश्वर्य आदि क्या माँगूं ? क्योंकि इस संसार में कुछ भी ऐसा नहीं है जो स्थिर हो, हमेशा रहनेवाला हो. आँखों के सामने ही सभी वस्तुएँ नष्ट होती चली जाती हैं. रावण के एक लाख पुत्र और सवा लाख पौत्र थे, अर्थात् उसका परिवार बहुत बड़ा था लेकिन अंत में उसके परिवार में दीपक जलानेवाला कोई न रहा. जिस रावण का लंका जैसा विशाल दुर्ग था, जिसके चारों ओर समुद्र की खाई लहलहाती थी, ऐसे ऐश्वर्यसंपन्न रावण का अंत इस प्रकार हुआ कि उसका कुछ भी अवशेष न बचा, जो उसका पता दे दे. कबीर आगे कहते हैं कि चाहे किसी के पास कितनी ही संपत्ति क्यों न हो, उसके द्वार पर चाहे कितने ही हाथी क्यों न बंधे हो, साधारण मनुष्य के समान उसे भी इस संसार से अकेले ही जाना पड़ता है. कबीर कहते हैं कि अंत में सभी को उसी प्रकार खाली हाथ जाना पड़ता है जैसे हारे हुए जुआरी को हाथ झाडकर द्यूत स्थल (जुए खाने) से जाना पड़ता है.

BRAOU

विशेष -

1. प्रस्तुत पद में कबीर ने संसार की नश्वरता के साथ-साथ जीवन की नि:सारता का वर्णन भी किया है. इस संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है, सभी कुछ नश्वर है. अत: अगर हमें ईश्वर से कुछ मांगना है तो वह चीज मांगे जो स्थायी हो.
2. इक लख पूत.....में निदर्शना और लोकोक्ति अलंकार है.
3. हाथ झारि जैसे..... में उपमा अलंकार का प्रयोग किया गया है.

2) प्रस्तुत पद में कबीर कहते हैं कि ऐसे लोग प्रभु के लिए किस काम के हैं जिन्होंने अपने आत्मतत्व को नहीं पहचाना. ऐसे भक्त तो अनेक मिल जाते हैं जो भक्ति तो थोड़ी करते हैं लेकिन उनमें अहंकार अधिक होता है. वे ईश्वर के सच्चे स्वरूप को नहीं समझते और गले में माला धारण करते हैं. उनकी माला कुएं के रहट की माला के समान है. अंत में कबीर कहते हैं कि जो अहंकार को पूर्णतया त्याग दिया है वह भगवान के समान हो गया है.

विशेष -

1. कबीर भक्ति के लिए अहंकार के परित्याग को अनिवार्य मानते हैं. उन्होंने अन्यत्र भी कहा है कि "जब मैं था, तब हरि नाहिं. अब हरि है मैं नाहिं." अर्थात् जब तक भक्त

में अहं होता है तब तक ईश्वर के साथ उसका साक्षात्कार नहीं हो सकता. जब वह अहं का त्याग कर अपना सर्वस्व ईश्वर को समर्पित कर देता है तब वह वास्तव में स्वयं भी ईश्वर का स्वरूप बन जाता है.

2. प्रस्तुत पद में 'जानि क अरहट कै गलि माला' पंक्ति में उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग किया गया है.

3) स्वयं को नारी मानकर ईश्वर के प्रति अपने अनन्य प्रेम को प्रकट करते हुए कबीर कहते हैं कि हे प्रियतम हे प्यारे अब मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगी. तुम जैसे भी हो हमारे ही होकर रहो. जन्म-जन्मांतर के वियोग के बाद आज मैंने प्रभु को प्राप्त किया है. यह मेरा परम सौभाग्य है कि वे स्वयं ही हमारे घर पधारे हैं अर्थात् वे स्वत: ही प्राप्त हो गए हैं. मैं आपके चरणों से लगकर आपकी सेवा करूँगी और अपने प्रेम व्यवहार से आपको उलझाए रखूँगी. आप मेरे सच्चे, शुद्ध, हृदय रूपी मंदिर में निवास करो और अन्य किसी के प्रेम जाल में न फँसो.

विशेष -

1. कबीर की भक्ति दाम्पत्य भाव की थी जिसमें जीव स्वयं को पत्नी और परमात्मा को अपना पति मानता है. प्रस्तुत पद में कबीर ने स्वयं को परमात्मा की प्रेयसी के रूप में प्रस्तुत किया है. उन्होंने अन्यत्र भी कहा है कि 'हरि मेरो पीव मैं राम की बहुरिया ।' प्रस्तुतपद में दाम्पत्य भक्ति के अंतर्गत भक्त की एकात्म भक्ति और प्रेम की प्रगल्भ आतुरता के साथ परमात्मा के प्रति सर्वस्व अर्पित करने की भावना दृष्टिगोचर होती है.

2. 'आज बरसौ मन मंदिर चोखे' पंक्ति में रूपक अलंकार का अत्यंत ही सुंदर प्रयोग हुआ है.

4) प्रभु के प्रति अपने अनन्य विश्वास को प्रकट करते हुए कबीर कहते हैं कि मैं चारों ओर से भटककर, निराश होकर आपकी शरण में आया हूँ. मुझे अब केवल आपका ही भरोसा है. मैं किसी दूसरे की मनुहार क्यों करूँ ? जिसका स्वामी हरि (दु:खों का हरण करने वाला) हो, वह किसी दूसरे को पुकारने क्यों जाएगा. जिसने तीनों लोकों की रक्षा का भार अपने ऊपर ले रखा हो, वह भला मेरा प्रतिपालन क्यों न करेगा ? अंत में कबीर कहते हैं कि तुम वनमाली अर्थात् प्रभु की सेवा करो. उसकी सेवा पेड़ को सींचने के समान है. जैसे पेड की जड़ को सींचने से जल का प्रभाव सभी शाखाओं पर पड़ता है वैसे ही एक वनमाली अर्थात् प्रभु की सेवा करने से सभी देवी-देवता स्वत: ही तृप्त हो जाते हैं. अंतिम पंक्ति का दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि जैसे पेड़ की जड़ सींचने से शाखाएँ भी सिंच जाती हैं, वैसे ही प्रभु की सेवा से अन्य सभी कामनाएं भी स्वत: ही पूर्ण हो जाती हैं.

विशेष -

1. प्रस्तुत पद में ईश्वर के प्रति अटूट विश्वास व भक्त की अनन्य भक्ति प्रकट की गई है.
2. 'सो कत अनत पुकारन जाई' पंक्ति में वक्रोक्ति अलंकार का सफल प्रयोग हुआ है.
3. 'सींचौ पेड़ पिवै सब डारी' पंक्ति में दृष्टांत अलंकार का प्रयोग किया गया है.

5) प्रभु के प्रति एकनिष्ठ प्रेम प्रकट करते हुए कबीर कहते हैं कि हे प्रभु ! तुम्हारे प्रति मेरी लगन किसी भी प्रकार से नहीं छूट सकती. जैसे हीरे को कोई कितना ही प्रयास करें, तोड़ नहीं सकता, वैसे ही तुम्हारे प्रति मेरे प्रेम को कोई फोड़ नहीं सकता. हमारा तुम्हारा प्रेम आदि से अंत तक बना रहेगा अर्थात्

वह सदैव स्थायी रहेगा. उसे न तो छिपाया जा सकता है और न अलग किया जा सकता है. जैसे कमल का पत्ता जल में ही रहता है उससे अलग नहीं होता उसी प्रकार हे स्वामी ! यह दास आपसे अलग नहीं हो सकता. मेरा और आपका संबंध कीट और भृंग के समान है. जिस प्रकार भृंग कीट पर मँडराते हुए उसे अपने रूप में परिवर्तित कर लेता है ठीक उसी प्रकार हे प्रभु ! आपने मुझे अपने रंग में रंग लिया है. जैसे सरिता सागर में मिलकर सागर का ही हिस्सा बन जाती है उसी प्रकार भक्त भी परमात्मा से मिलकर उसी में समा जाता है. कबीर कहते हैं कि मेरा मन आप में उसी प्रकार मिल गया है जैसे सोने में सुहागा.

<u>विशेष -</u>

1. हीरे को वज्र भी कहा जाता है और हीरा अपनी कठोरता और चमक के लिए प्रसिद्ध है. प्रस्तुत पद में कबीर ने ईश्वर के प्रति अपने प्रेम की दृढ़ता को हीरे के समतुल्य मानकर बहुत सुंदर तुलना प्रस्तुत की है. अत: यहाँ पर उपमा अलंकार है.

2. भृंग एक ऐसा कीड़ा होता है जो दूसरे कीड़े को भी अपने समान बना देता है. यहां कबीर यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि आत्मा परमात्मा का ही रूप है और अंत में भक्ति द्वारा भक्त ईश्वर का ही प्रतिरूप हो जाता है अर्थात् वह परमात्मा में मिल जाता है.

2.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

कबीर का लक्ष्य कविता करना नहीं था न ही उनका लक्ष्य समाज-सुधार करना था. वे मूलत: संत थे लेकिन एक संवेदनशील व्यक्ति होने के नाते वे अपने समाज की समस्याओं से अछूते नहीं रह सके. कबीर का युग अपने समय की विषम परिस्थितियों से जूझ रहा था. देश पर मुसलमानों के आक्रमण हो चुके थे. सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में हिंदू और मुसलमानों में सामंजस्य नहीं था. पारस्परिक वैमनस्य और धार्मिक कट्टरता के कारण हिंदू और मुसलमानों में तो शत्रुता थी ही, साथ ही हिंदुओं में भी जातिगत भेदभाव अपने चरम पर था. ब्राह्मण वर्ग अपने अहंकार में इतना लिप्त था कि वह निम्न वर्ग के व्यक्ति को अपने ही धर्म में अछूत मानने लगा. ऐसी विकट परिस्थिति में कबीर ने परंपरा से चली आई धार्मिक मान्यताओं के सम्मुख प्रश्न चिह्न खड़े कर एक ऐसे धर्म का संदेश दिया जिसमें जातिगत भेदभाव के लिए कतई स्थान नहीं था.

"जाति पांति पूछे नहीं कोय ।
हरि को भजै सो हरि का होय ।।"

कबीर जानते थे कि हिंदू हो या मुसलमान दोनों ही धर्म के वास्तविक स्वरूप को नहीं पहचानते थे. दोनों धर्मावलंबियों को ललकारते हुए कबीर कहते हैं -

"अरे इन दोउन राह न पाई
हिंदूअन की हिंदुआइ देखि तुरकन की तुरकाई ।"

कबीर ईश्वर की भक्ति के लिए हृदय की निर्मलता और पवित्रता को महत्व देते थे न कि धार्मिक आडंबरों को. अत: वे स्पष्टतया कहते हैं -

"माला फेरत जुग भया, फिरा न मनका फेर ।
करका मनका डारिकै, मनका मनका फेर ।।"

BRAOU

यदि हृदय रूपी मोती को नहीं बदला तो माला फेरने से कोई लाभ नहीं होगा. कबीर ने दोनों ही धर्मों में परिलक्षित रूढ़ियों, कुप्रथाओं और धार्मिक विषमताओं के लिए समान रूप से हिंदू और मुसलमानों को फटकारा. जहां एक ओर वे हिंदू समाज की मूर्तिपूजा का खण्डन करते हैं -

"पाथर पूजै हरि मिलै तो मैं पूजूं पहार ।
तातै यह चक्की भली पीस खाय संसार ।"

वहीं वे मुसलमानों के चिल्ला-चिल्लाकर प्रार्थना करने जैसे आडंबर का भी विरोध करते हैं -

"काकर पाथर जोरी के मसजिद लई बनाय ।
ता चढ़ मुल्ला बांग दे क्या बहिरा हुआ खुदाय ।।"

कबीर के व्यक्तित्व का एक पहलू है उनकी अक्खड़ता, वहीं एक अनन्य भक्त सहृदय की ईश्वर से मिलन की व्याकुलता और तड़प उनके व्यक्तित्व के दूसरे पहलू को उजागर करती है. यह सर्वविदित है कि कबीर निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे. उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है -

"दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना ।
राम नाम का मरम है आना ।।"

लेकिन इस निर्गुण ब्रह्म को पाने के लिए गुरु का मार्गदर्शन परमावश्यक है. अत: गुरु ब्रह्म से भी बड़ा है क्योंकि वही भक्त को ईश्वर से साक्षात्कार करवाता है.

कबीर की मान्यता है कि साधना का मार्ग अत्यंत ही कठिन है वहां कोई सूरमा अर्थात् शूरवीर ही पहुंच सकता है. साधना के मार्ग में माया, सांसारिक प्रलोभन आदि साधक के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न करते हैं लेकिन जो सच्चा साधक होता है वह इस क्षणभंगुर संसार के मायावी आकर्षणों को भ्रम मानकर ईश्वर की भक्ति में लीन रहता है.

कबीर की भक्ति अद्वैत दर्शन से प्रभावित है लेकिन प्रेम की पीर और गहनता में वे सूफियों से प्रभावित हैं, अंतर मात्र इतना है कि सूफी संत परमात्मा को स्त्री के रूप में मानते हैं जबकि कबीर ब्रह्म को अपना पति और स्वयं को उनकी पत्नी के रूप में स्वीकार करते हैं. लेकिन दोनों की भक्ति दाम्पत्य भाव की ही है.

कबीर की रचनाओं में रहस्यवाद का पुट भी मिलता है. कबीर ने परमात्मा के प्रेम तथा उनकी अनुभूति को गूँगे का गुड़ कहा है -

"अकथ कहानी प्रेम की कछू कही न जाय ।
गूँगे केरी सरकरा, खाय और मुसकाय ।।"

यहीं रहस्यवाद का मूल है. इसके अतिरिक्त परमात्मा के वियोग के अत्यंत मर्मस्पर्शी चित्र प्रस्तुत किया है. चिर प्रतीक्षा के बाद जब जीव रूपी दुलहिन अपने प्रिय परमात्मा से मिलती है तो उसे अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है -

"दुलहिन गाओ मंगलाचार ।
हमारे घर आये राजाराम अवतार ।।"

BRAOU

कबीर अनपढ़ थे अत: उनसे कलात्मक भाषा की आशा रखना व्यर्थ है लेकिन चूंकि उनका काव्य अनुभूति की तीव्रता से परिपूरित है अत: सहज ही उनकी भाषा अपने सौंदर्य के स्वाभाविक रुप को लिए चलती है. संभवत: इसीलिए डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उन्हें 'वाणी का डिक्टेटर' कहा है. विद्वानों ने कबीर की भाषा को सधुक्कडी भाषा की संज्ञा दी है जिसमें पूर्वी, ब्रज, पंजाबी, राजस्थानी, अरबी, फारसी आदि अनेक भाषा के शब्दों का सहज रुप से प्रयोग मिलता है. अत: भक्तिकाल में अपनी अक्खड़ता के साथ भक्त हृदय की भावतरंगिणी को सहज रुप से व्यक्त करने में कबीर का अद्वितीय स्थान है.

2.6 शब्दार्थ

नीतिपरक पद

1) काया - शरीर
मांजसि - साफ करना
गुनां - गुण के लिए, उपयोग के लिए
मलनां - गंदगी
घट - शरीर
ह्रिदै - हृदय
मुखि - मुख
बिलोवसि - बिलोता है, मथता है (पानी बिलोना मुहावरा) अर्थात् निरर्थक श्रम करना
तूंबी - कड़वी लौकी
अठसठि - अड़सठ (sixty eight) अर्थात् अनेक
न्हाई - स्नान करना
तऊ - तब भी
तारि - उद्धार करना
मुरारि - परमात्मा

2) गरबावै - गर्व करना
खीर - क्षीर, दूध
खांड - मीठा
घृत - घी
जारा - जलाना
पिंड - शरीर
जिहिं - जिस
सिरि - स्थिर
पागा - पगडी
चंचु - चोंच
कागा - कौआ, काग
हाड़ - शरीर
जरै - जलना

BRAOU

	झूरी	-	सूखी
	त्रिन कै	-	तिनका, सूखी घास
	कूरी	-	ढेर
	अजहुं	-	अभी तक
	जम	-	यमराज
	डंड	-	डंडा
	मूंड	-	सिर
	महि	-	में
	लागे	-	लगना
3)	कहहु	-	कहना
	घरू	-	घर
	अंत की बार	-	अंतिम समय में
	उपजै	-	उत्पन्न होना
	निपजै	-	बढ़ना, पुष्ट होना
	समाई	-	नष्ट हो जाना
	नैनन देखत	-	आंखों के सामने, देखते ही देखते
	जाई	-	नष्ट हो जाना
	जतन	-	यत्न
	अगिनि	-	अग्नि, आग
	जाली	-	जलना
	चोआ	-	सुगंधित द्रव पदार्थ
	मरदन	-	मलना
	काठ	-	लकडी
	गुनियां	-	गुणवाले, समझदार
4)	विचारि	-	विचार करके, समझकर
	अवर	-	अन्य
	दूजा	-	दूसरा
	परतीतै	-	प्रतीति, श्रद्धा
	देवलि	-	मंदिर
	लुचरी	-	पूडी
	लपसी	-	पतला हलवा
	संघारै	-	खा जाना
	द्वारै	-	दरवाजे पर
	ठाढ़ा	-	खड़ा
	आतम	-	आत्मा
	तत्त	-	तत्व
	बिचारै	-	विचार करना
	बलिहारे	-	न्यौछावर होना

BRAOU

5) अपुनपौ - आत्मस्वरूप
आपुहि - स्वयं
बिसर्यो - भुला दिया
स्वान - कुत्ता
कांच - शीशा
भर्मित - भ्रम में पड़कर
भूंकि - भौंकना
केहरि - सिंह
बपु - शरीर
निरखि - देखकर
कूप जल - कुएँ का पानी
प्रतिमा - परछाई
गज - हाथी
फटिक - स्फुटिक पत्थर
दसनन - दाँतों से
अरयो - अड़ा देना
मरकट - बंदर
मूँठी - मुट्ठी
बिहुरै - छोड़ता है
नटत - नाचता हुआ
ललनी - बाँस की नली
सुवना - तोता
पकर्‌यो - पकड़ना

<u>भक्तिपरक पद</u>

1) मागौ - मांगना
किछु - कुछ
थिर - स्थिर, सदैव रहनेवाला
इकलख - एक लाख
पूत - पुत्र
तिहि - उस
दिआ - दिया
बाती - बत्ती
कोट - दुर्ग
आवत - आना
संगाती - साथ में
दरि - द्वार पर
हाथ झारि - हाथ झाड़कर (मुहावरा)
जुवारी - जुआरी

BRAOU

2) आवहिं - आनेवाले (काम आने वाले)
केहि - किस
कामां - काम
चीन्है - पहचाना
आतम - आत्मा
थोरी - थोड़ी
भगति - भक्ति
भगता - भक्त
मिलै - मिलना
अपारा - अपार, असंख्य, बहु, अनंत
भाव - सच्चा स्वरूप
अरहट - रहँट
गलि - गले
जिनि - जिनका
समानां - समान

3) तोहिं - तुम्हें
जांन - जाने
दैहूँ - दूंगी
पियारे - प्रिय
ज्यौं - जैसे भी
होहु - हो
बिछुरे - बिछड़े हुए
भाग - भाग्य
चरनन - चरण
लागि करौ - लगकर
सेवकाई - सेवा करना
राखौ - रखना
उरझाई - उलझा कर
चोखै - शुद्ध, उत्तम, श्रेष्ठ
परहु - पड़ना

4) तोरा - तुम्हारा
मोहिं - मुझे
कवन - दूसरे
निहोरा - मनुहार, अनुनय, निवेदन
जाके - जिसके
ठाकुर - स्वामी
कत - क्यों
अनत - अन्यत्र
पुकारन - पुकारने, बुलाने

BRAOU

	तीनि	-	तीनों
	हरि	-	दुखों का हरण करने वाला
	काहे	-	क्यों
	प्रतिपारा	-	प्रतिपालन, रक्षा
	सेवौ	-	सेवा
	बनवारी	-	वनमाली, प्रभु
	पिवै	-	पीना
	डारी	-	डाल, लता
5)	मोहिं	-	मेरी
	तोहिं	-	तुम्हारी, आपकी
	लागी	-	लगन, प्रेम
	फोरे	-	फोड़ना
	आदि	-	प्रारंभ
	दुरत दुराई	-	छिपाने से छिपना या अलग करने से अलग होना
	कंवल	-	कमल (पुष्प)
	पत्र	-	पत्ता
	बासा	-	निवास करना
	साहेब	-	स्वामी
	भ्रिंग	-	भृंग (एक प्रकार का कीड़ा)
	नाई	-	समान
	सलिता	-	नदी, सरिता
	सिंधु	-	सागर
	समाई	-	समाना, मिल जाना

BRAOU

2.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

2.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. कबीर समाज सुधारक थे, विवेचन कीजिए.
2. कबीर की भक्ति पर अपने विचार प्रकट कीजिए.

2.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. किसी एक पद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. कबीर के अनुसार कैसे लोग ईश्वर के किसी काम नहीं आते ?

2.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

2.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- कबीर की भक्तिभावना पर अपने विचार प्रकट कीजिए.

उत्तर- हिंदी की निर्गुण भक्ति काव्यधारा के अंतर्गत ज्ञानमार्गी शाखा के प्रमुख कवि कबीरदास एक महान् संत,समाज सुधारक और क्रांतदर्शी थे. कबीर ने अपनी भक्ति में जिस ईश्वर की उपासना की है वह निर्गुण है. उनके राम दशरथ पुत्र राम नहीं है. वे वस्तुत: ईश्वर को, अद्वैत सत्ता को स्वीकार करते हैं. उनका ब्रह्म सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है. मनुष्य भ्रमवश उसे मंदिरों, मस्जिदों में ढूँढता फिरता है -

"कस्तूरी कुण्डल बसै मृग ढूंढै बन माहिं ।
ऐसे घट घट राम है, दुनियां देखै नाहिं ।।"

लेकिन जीव जब गुरु के द्वारा मार्गदर्शन प्राप्त करता है और भक्ति द्वारा अपने हृदय को निर्मल करता है तब भ्रम का परदा हट जाता है और जीव को ज्ञात हो जाता है कि वह परमात्मा का ही अंश है -

"जल में कुंभ कुंभ में जल है, बाहरि भीतरि पानी ।
फूटा कुंभ जल जलहिं समाना, यहु तत कह्यौ गियानी।।"

कबीर के अनुसार परमात्मा को प्राप्त करना आसान नहीं है, उसे तो कोई शूरवीर ही प्राप्त कर सकता है. कबीर बार-बार अपनी भक्ति में सती और शूर के आदर्श का स्मरण करते हैं. कबीर की भक्ति दाम्पत्य भाव की थी जिसमें भक्त परमात्मा को अपना पति मानता है और स्वयं को उनकी पत्नी. कबीर का कथन है -

"हरि मेरो पीव, मैं राम की बहुरिया"

इसी दाम्पत्य भक्ति के फलस्वरूप कबीर की भक्ति में ईश्वर के प्रति अनन्य भाव और सर्वस्व समर्पण की भावना दिखाई देती है. कबीर कहते हैं -

"मैं गुलाम मोहिं बेचि गुसाई ।
तन-मन-धन मेरा राम जी की ताई ।।"

ईश्वर के प्रति यह अनन्य भाव और समर्पण की भावना में कबीर अपने संपूर्ण अस्तित्व को ही मटियामेट करने के लिए तत्पर है -

"कबीर कूता राम का मुतिया मेरा नाऊं ।
गले राम की जेवड़ी जित खैंचे तित जाऊँ ।।"

कबीर की भक्ति में परिलक्षित इस आत्मसमर्पण के भाव पर मुग्ध होकर ही हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं "निरीह सारल्य का यह चरम दृष्टांत है, आत्मसमर्पण की यह हद है. इतने पर भी मन को प्रतीति नहीं होती कि यह प्रेम रस पर्याप्त है. क्या जाने उस प्रियतम को कौन-सा ढंग पसंद हो, कौन सी वेशभूषा रुचिकर हो."

दाम्पत्य भाव की भक्ति में प्रेम में गहनता और तीव्रता विरह से आती है. भक्त का हृदय सदैव परमात्मा से मिलन की आकांक्षा में व्याकुल रहता है -

"तलफै बिन बालम मोर जिवा ।
दिन नहीं चैन, रात नहीं निंदिया,
तलफ तलफ के भोर किया ।।"

BRAOU

कबीर की भक्ति में परमात्मा के प्रति विरह की पीड़ा अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची हुई दीखती है. अंत में भक्त ऐसी युक्ति सोचता है कि जहाँ प्रियतम परमात्मा से उसका कभी वियोग ही न हो और वह अपने नयनों में उसे बसाए रखने का उपाय खोज निकालता है -

"नैनों की करि कोठरी, पुतली पलंग बिछाय ।
पलकों की चिक डारिकै, पिय को लिया रिझाय ।।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि कबीर निराकार ब्रह्म के उपासक थे और उनकी भक्ति का आधार था अहं को त्याग कर अपना सर्वस्व प्रभु के चरणों में अर्पित कर देना. प्रेम की चरम परिणती में जब जीव का परमात्मा से साक्षात्कार हो जाता है. तब जीव स्वयं ब्रह्म का स्वरुप हो जाता है.

2.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- किसी एक पद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
"क्या मांगै किछु थिर न रहाई
.....
हाथ झारि जैसे चला जुआरि ।।"

उत्तर- प्रस्तुत पंक्तियां हिंदी के सुप्रसिद्ध कवि संत कबीरदास की हैं. यह पंक्तियाँ कबीर ग्रंथावली से संग्रहीत हैं.

प्रस्तुत पद में कबीर संसार की नश्वरता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मैं ईश्वर से सांसारिक सुख, ऐश्वर्य आदि क्या माँगूं ? क्योंकि इस संसार में कुछ भी ऐसा नहीं है जो स्थिर हो, हमेशा रहनेवाला हो. आँखों के सामने ही सभी वस्तुएँ नष्ट होती चली जाती हैं. रावण के एक लाख पुत्र और सवा लाख पौत्र थे, अर्थात् उसका परिवार बहुत बड़ा था लेकिन अंत में उसके परिवार में दीपक जलानेवाला कोई न रहा. जिस रावण का लंका जैसा विशाल दुर्ग था, जिसके चारों ओर समुद्र की खाई लहलहाती थी, ऐसे ऐश्वर्यसंपन्न रावण का अंत इस प्रकार हुआ कि उसका कुछ भी अवशेष न बचा, जो उसका पता दे दे. कबीर आगे कहते हैं कि चाहे किसी के पास कितनी ही संपत्ति क्यों न हो, उसके द्वार पर चाहे कितने ही हाथी क्यों न बंधे हो, साधारण मनुष्य के समान उसे भी इस संसार से अकेले ही जाना पड़ता है. कबीर कहते हैं कि अंत में सभी को उसी प्रकार खाली हाथ जाना पड़ता है जैसे हारे हुए जुआरी को हाथ झाड़कर द्यूत स्थल (जुए खाने) से जाना पड़ता है.

विशेष -

1) प्रस्तुत पद में कबीर ने संसार की नश्वरता के साथ-साथ जीवन की नि:सारता का वर्णन भी किया है. इस संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है, सभी कुछ नश्वर है. अत: अगर हमें ईश्वर से कुछ मांगना है तो वह चीज मांगे जो स्थायी हो.
2) इक लख पूत.....में निदर्शना और लोकोक्ति अलंकार है.
3) हाथ झारि जैसे..... में उपमा अलंकार का प्रयोग किया गया है.

2.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कबीर ग्रंथावली

2. कबीर : डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. कबीर की विचारधारा : डॉ. गोविंद त्रिगुणायत.

******

BRAOU

ईकाई 3 : तुलसीदास के दोहे

रूपरेखा

3.1 पाठ का उद्देश्य
3.2 पाठ एवं कवि परिचय
3.3 मूल पाठ
3.4 सारांश - विशेष टिप्पणी सहित
3.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
3.6 शब्दार्थ
3.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
3.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
3.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
3.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
3.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
3.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
3.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में गोस्वामी तुलसीदास जी के दोहों की विवेचना की गई है. गोस्वामी तुलसीदास सगुण भक्ति धारा के भक्त थे. आप राम भक्ति शाखा के प्रमुख कवि थे. इस पाठ के अध्ययन से आपको-

* तुलसीदास के नीति संबंधी विचारों और भावनाओं का परिचय प्राप्त हो सकेगा.
* तुलसी के काव्य कौशल का पता चल सकेगा.
* तुलसी की नीति संबंधी धारणाओं की पृष्ठभूमि का ज्ञान हो सकेगा.
* व्यावहारिक नैतिकता के ज्ञान से जीवनोपयोगी पाठ सीखे जा सकेंगे.

BRAOU

3.1 पाठ एवं कवि परिचय

<u>पाठ परिचय</u>

प्रस्तुत नीति परक दोहे दोहावली से उद्धृत हैं. गोस्वामी तुलसीदास के नीति संबंधी विचार उनकी जीवन दृष्टि से ही पैदा हुए थे. मनुष्य को मर्यादित रहना चाहिए. यही लक्ष्य तुलसी के नीति संबंधी विचारों में दिखायी देता है.

देश और परिवार के प्रधान को अपना व्यवहार किस तरह का रखना चाहिए, कहां जाना चाहिए और कहां नहीं जाना चाहिए, धन संपत्ति का कैसा स्वभाव होता है, चातक को आदर्श मानकर कैसे आत्म सम्मान और प्रेम की सीख ली जा सकती है, विवेक का क्या महत्व है, सचिव, वैद्य और गुरु को किस तरह के वचन बोलना चाहिए इत्यादि जीवनोपयोगी नैतिक शिक्षाओं को प्रस्तुत दोहों के माध्यम से

व्यक्त किया जाता है. निश्चित रूप से तुलसी द्वारा व्यक्त नीति वचन, मर्यादा को साध्य मानकर, साधन रूप में ही गिने जा सकते हैं. तुलसी के दोहे मनुष्य के लिए व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करने वाले हैं. तुलसी की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि हमारे लिए आदर्श भी है, अनुकरणीय भी.

कवि परिचय

चाहे जितना श्रेष्ठ कवि हो, किन्तु उसके जीवन के विषय में संदिग्धता बनी ही रहती है. उनकी जीवनी को जानने के दो ही उपाय होते हैं - या तो दूसरों द्वारा प्राप्त सूचनाएं, जिन्हें बहिर्साक्ष्य कहा जाता है एवं स्वयं उनके द्वारा दी गई सूचनाएं जिन्हें अंतर्साक्ष्य कहते हैं.

इन दोनों के आधार पर विचार-विमर्श करने के बाद अधिकतर विद्वानों ने तुलसीदास जी का जन्म संवत् 1554 माना है. 'गोसाई चरित' नामक पुस्तक में लिखा गया है -

"पंद्रह सौ चौवन विषै, कालिन्दी के तीर ।
श्रावण शुक्ल सप्तमी, तुलसी धरयो शरीर ।।"

इसी प्रकार उनकी मृत्यु के संबंध में यह माना जाता है कि संवत् 1680 में गंगा नदी के किनारे यह घटित हुई -

"संवत् सोलह सो असी, उसी गंगा के तीर ।
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यौ शरीर ।।"

इनके जन्म स्थान के विषय में अनेक मत हैं. मुख्य रूप से सोरों और राजापुर के बीच में विवाद है. इन दिनों अधिकतर विद्वान यह मानते हैं कि इनका जन्म सोरों में हुआ था लेकिन बाद में राजपुर में आकर बस गए थे. माता का नाम हुलसी और पिता का नाम आत्माराम माना जाता है. इनका नाम रामबोला रखा गया था क्यों कि कहा जाता है कि जन्म लेते ही इनके मुख से राम का नाम निकला था. बाद में इनका नाम तुलसीदास पड़ गया था.

गोस्वामी जी का जन्म अभुक्त मूल नक्षत्र में हुआ था. जन्म के तुरंत बाद माता का देहान्त हो गया और पिता ने इनका त्याग कर दिया. फिर इन्हें दर-दर भटकना पड़ा. कहा जाता है कि इनका लालन-पालन किसी दासी ने किया था. जब इनकी उम्र पांच वर्ष की थी, तब उसकी भी मृत्यु हो गई. भटकते और भीख मांगते हुए ये नरहरि दास जी तक पहुंचे, जिन्होंने सहारा दिया. गोस्वामी जी उन्हें अपना गुरु मानते हैं.

उपलब्ध सामग्री के अनुसार इनका विवाह संवत् 1589 में रत्नावली से हुआ. ये अपनी पत्नी से अत्यधिक प्रेम करते थे. एक बार वह मायके चली गई तो घनघोर बरसात में बाढ़ आई नदी को पार करके ये भी उस पार पहुंच गए. इस तरह से इनको आया हुआ देख रत्नावली लज्जित हुई और उसने कहा -

"लाज न लागत आपको दौरे आयेहु साथ ।
धिक-धिक ऐसे प्रेम को, कहा कहौ मैं नाथ ।।
आस्थि चर्ममय देह मम, तामें जैसी प्रीति ।
तैसी-जो श्रीराम मंह, होति न तो भवभीति ।।"

रत्नावली की इस डांट से तुलसी का जीवन पूरी तरह से बदल गया. उन्होंने वैराग्य धारण कर लिया और संपूर्ण भारत का भ्रमण किया. इस यात्रा से उन्हें देश और समाज की दुर्दशा का पता चला. उस दुर्दशा ने ही इन्हें आदर्श रूप में मर्यादा पुरुषोत्तम राम की छवि को स्थापित करने की प्रेरणा दी.

BRAOU

मर्यादा पुरुषोत्तम राम के ही विविध पक्ष इनकी काव्याभिव्यक्ति के आधार बने. राम के माध्यम से इन्होंने समाज में मर्यादा का आदर्श उपस्थित करना चाहा. इनके द्वारा रचे गए बारह ग्रंथ प्रसिद्ध हैं जिनमें से पांच ग्रंथ बड़े हैं और सात ग्रंथ छोटे हैं. रामचरितमानस अवधी में लिखा गया है जबकि अन्य सारे ग्रंथ ब्रज भाषा में रचे गए हैं. जब कोई व्यक्ति अत्यंत उतार-चढ़ाव वाला जीवन जीता है तो उसकी नैतिक दृष्टि में एक गहराई स्वाभाविक रूप से आ जाती है. तुलसी के ये नैतिक दोहे अपनी व्यापकता और व्यंजना में अत्यंत श्रेष्ठ बन पड़े हैं, इसमें कोई संदेह नहीं.

3.3 मूलपाठ

मुखिया मुख सो चाहिए खान पान कहुं एक ।
पालई पोषई सकल अंग तुलसी सहित विवेक ।। 1 ।।

आवत ही हरषै नहि, नयनन नहीं सनेह ।
तुलसी तहां न जाइए, कंचन बरसै मेह ।। 2 ।।

दिएं पीठि पाछें लगै सनमुख होत पराइ ।
तुलसी संपति छांह ज्यों लखि दिन बैठि गंवाइ ।। 3 ।।

मान राखिबो मांगिबो पिय सों नित नव नेहु ।
तुलसी तीनिउ तब फबैं जो चातक मत लेहु ।। 4 ।।

अमिअ गारि गोरेउ गरल गारि कीन्ह करतार ।
प्रेम बैर की जननि जुग जानहिं बुध न गवौर ।। 5 ।।

मनि भाजन मधु पारई पूरन अमी निहारि ।
का छांड़िआ का संग्रहिअ कहहु बिबेक बिचारि ।। 6 ।।

उत्तम मध्यम नीच गति पाहन सिकता पानि ।
प्रीति परिच्छा तिहुन की बैर बितिक्रम जानि ।। 7 ।।

पुन्य प्रीति पति प्रापतिउ परमारथ पथ पांच ।
लहहिं सुजन परिहरहिं खल सुनहु सिखावन सांच ।। 8 ।।

सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस ।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास ।। 9 ।।

बहु सुत बहु रुचि बहु बचन बहु अचार व्यवहार ।
इनको भलो मनाइबो यह अज्ञान अपार ।। 10 ।।

3.4 सारांश - विशेष टिप्पणी सहित

1) तुलसीदास जी कहते हैं कि जो भी व्यक्ति प्रधान या मुखिया होता है, उसे मुख के समान होना चाहिए. मुख खाने-पीने के लिए तो एक ही है किन्तु शरीर के समस्त अंगों का पालन-पोषण विवेक के साथ करता है.

BRAOU

2) तुलसीदास प्रस्तुत दोहे में यह बतलाते हैं कि जिसके घर जाने पर वहां खुशी नहीं होती है और आंखों में स्नेह नहीं झलकता है, ऐसी जगह हरगिज़ नहीं जाना चाहिए, भले ही वहां धन या सोना ही क्यों न बरसता हो. कहने का अर्थ यह है कि स्नेह और धन में स्नेह का ही अधिक महत्व है.

3) तुलसीदास कहते हैं कि संपत्ति परछाई के समान होती है. इसकी ओर से मुंह फेर कर चलने से अर्थात् इसकी ओर पीठ कर लेने से यह पीछे-पीछे चलती है और अगर इसकी ओर मुंह करते तो यह दूर चली जाती है. इस तथ्य को समझकर आराम से बैठकर ही दिन बिताना चाहिए. (संतोष से रहना चाहिए और भगवान का भजन करना चाहिए).

4) तुलसीदास जी इस दोहे में चातक पक्षी को आदर्श मानकर उसका अनुसरण करने के लिए कहते हैं. वे कहते हैं कि आत्मसम्मान की रक्षा करना, मांगना और प्रियतम से प्रेम का हमेशा ही नया होते चलना - ये तीनों बातें चातक के अनुसरण से ही सीखी जा सकती है. लोक में प्राय: मांगने वाले का मान नहीं रहता ऐसा कहा जाता है. चातक पक्षी मांगने में भी अपने आत्म-सम्मान की रक्षा का एक अनोखा उदाहरण पेश करता है.

5) प्रस्तुत दोहे में तुलसीदास जी ने गाली के विषय में बतलाया है. वे कहते हैं कि ब्रह्माजी ने अमृत और विष के सार से ही गाली को बनाया है. इसलिए गाली प्रेम और बैर-दोनों को ही पैदा करनेवाली है. इस बात को बुद्धिमान व्यक्ति जानता है लेकिन बुद्धिहीन या गंवार नहीं जानते. हंसी मज़ाक अथवा विवाह के अवसर पर गायी जानेवाली गालियां प्रेम को बढ़ाने वाली होती हैं. द्वेष और क्रोध से दी हुई गाली बैर और दुश्मनी को पैदा करती है. प्रसंग ही गाली को अमृत अथवा विष से जोड़ता है.

6) प्रस्तुत दोहे में तुलसीदास जी ने विवेक के महत्व को दर्शाया है. अगर मणियों से बना बर्तन शराब से भरा हुआ हो और मिट्टी का बर्तन अमृत से भरा हुआ हो तो विवेकपूर्वक विचार करके ही एक का त्याग किया जा सकता है और दूसरे का ग्रहण. तात्पर्य यह है कि उत्तम वस्तु मामूली जगह पर भी हो तो उसे लेना चाहिए लेकिन बुरी वस्तु अच्छी से अच्छी जगह पर भी मिले तो उसे छोड़ना ही उचित है.

7) तुलसीदास जी ने प्रेम की परीक्षा में उत्तम-मध्यम और नीच इस प्रकार तीन स्थितियां बताई है जो क्रमश: पत्थर, रेत और पानी के समान हैं. श्रेष्ठ व्यक्ति का प्रेम पत्थर की लकीर के समान अमिट रहता है. मध्यम व्यक्ति का प्रेम रेत पर खींची गई लकीर की तरह होता है जो हवा न लगने तक ही बनी रहती है और अंत में नीच व्यक्ति का प्रेम आता है जो पानी की लकीर की तरह होता है, बनते ही मिट जाता है. परंतु तुलसीदास जी कहते हैं, बैर की परीक्षा में इसके ठीक विपरीत होता है. अर्थात् श्रेष्ठ व्यक्ति का बैर पानी की लकीर के समान तत्काल नष्ट हो जानेवाला होता है. मध्यम श्रेणी के व्यक्ति का बैर रेत की लकीर के समान कुछ समय तक रहनेवाला होता है किंतु नीच व्यक्ति का बैर पत्थर की लकीर के समान अमिट होता है. इस प्रकार पत्थर, रेत और पानी प्रेम की दृष्टि से भी व्यक्तियों का परिचय देने के माध्यम हैं और बैर की दृष्टि से भी सीख देने में सक्षम हैं.

8) प्रस्तुत दोहे के माध्यम से गोस्वामी तुलसीदास सज्जन और दुर्जन का भेद बतलाते हैं. वे कहते हैं कि पुण्य, प्रेम, प्रतिष्ठा प्राप्ति अथवा लोक लाभ तथा परमार्थ के पथ को सज्जन व्यक्ति

BRAOU

ग्रहण कर लेते हैं लेकिन दुष्ट लोग इनका त्याग कर देते हैं. तुलसीदास जी इस शिक्षा को सच्ची शिक्षा कहते हुए सुनने का आग्रह करते हैं.

9) प्रस्तुत दोहे में गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं कि यदि सहायक व्यक्ति, वैद्य और गुरु इस डर से हां में हां मिलाएं, मीठी-मीठी बातें कहें कि कहीं श्रोता अप्रसन्न हो जाए तो राज्य, धर्म और शरीर- इन तीनों का ही नाश हो जाता है. अर्थात् इन तीनों को हित की बात करनी चाहिए. यहां सहायक व्यक्ति को मंत्री समझा जा सकता है.

10) प्रस्तुत दोहे के माध्यम से गोस्वामी तुलसीदास जी यह बतलाते हैं कि किसकी भलाई की चाह करनी चाहिए और किसकी नहीं. ऐसा व्यक्ति जिसके बहुत संतान या पुत्र हो जिसकी तरह-तरह की अनेक इच्छाएं हों, जो अलग-अलग तरह की बातें बनाते हों, जिनका आचरण और व्यवहार अलग-अलग तरह के हों, ऐसे व्यक्ति की भलाई की कामना करना अज्ञान का सूचक है. अर्थात् ऐसे व्यक्ति की भलाई बहुत कठिन है.

3.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

तुलसीदास के प्रस्तुत दस दोहों से यह ज्ञात होता है कि नीति के दो स्तर हैं - एक वैयक्तिक, दूसरा सामूहिक. दोनों ही स्तरों पर ये व्यवहार को निर्धारित करती हैं. व्यवहार को निर्धारित करना ही समाजीकरण होता है. निश्चित ही व्यवहार के आदर्श रूप को समाज ही उपलब्ध कराता है. इसी आदर्श को गोस्वामी जी ने 'मर्यादा' कहा है. वह मर्यादा लोकमंगलकारी होती है. दूसरे शब्दों में लोकमंगल को आदर्श मानकर ही मर्यादाएं निश्चित की जा सकती है. उदाहरण के लिए किसी भी समाज या राज्य का मुखिया अगर मर्यादित न हुआ तो वह अमंगलकारी होगा. गोस्वामी जी यह बात जानते थे कि जब किसी को कोई ऊंचा पद मिल जाता है तो उसे उसका अभिमान होने लगता है. इसे ही पद का मद कहा गया है. अमर्यादित होने के न केवल सारे अवसर बल्कि प्रलोभन भी उपस्थित रहते हैं. अगर मुख्य सिर्फ चटपटे स्वाद को ध्यान में रखे तो अंगों का पालन-पोषण नहीं हो सकेगा. मुख को इसीलिए अपने निजी आनंद को त्याग कर शरीर के उन अंगों को ध्यान में रखना पड़ता है जिनका पालन-पोषण आवश्यक है.

BRAOU

इस प्रकार तुलसीदास जी सामान्य रूप से नीति उपदेश देते हैं. कहीं वे सीधे-सीधे संबोधित करते हैं जैसे जहां स्नेहपूर्ण व्यवहार न मिले, वहाँ चाहे जितना धन हो मत जाओ. इसी प्रकार "विवेक से विचार करो", 'सच्ची सीख को सुनो' - ये सब संबोधित किये गए नीति वचन हैं. जब सामने वाले को संबोधित करके कोई बात कही जाती है तो उसका सीधा असर पड़ता है. एक विश्वसनीयता और प्रामाणिकता उस कथन में आ जाती है.

तुलसीदास जी ने अपने नीति वचनों के लिए दोहा और सोरठा छंद चुना है. ये छंद संस्कृत परंपरा से प्राप्त नहीं हुए थे. लोक से मिले थे. दोहा "दूहा" के रूप में अपभ्रंश में व्यवहार में लाया जाता था. निश्चित ही लोक का जुड़ाव इस छंद को सहज ही प्राप्त होगा. सोरठा छंद भी ठीक ऐसा ही है. चूंकि उसका व्यवहार सौराष्ट्र अथवा सोरठ प्रदेश में होता था इसलिए उसे सोरठा कहा गया. भाषा में भी तुलसी ने ब्रज भाषा को अपनाकर अपने इन नीतिपरक दोहों को लोक के लिए उपयोगी बनाया है. नैतिकता का कोई एक क्षेत्र नहीं होता. तुलसी ने सामाजिक, राजनीतिक और वैयक्तिक नैतिकता को लक्ष्य बनाकर ये दोहे लिखे हैं. साफ बात है कि वैयक्तिक व्यवहार की मर्यादा समाज को दृष्टि में

रखकर ही निश्चित की जाती है. कई स्थलों पर तुलसी के दोहे अपने युग की सीमा का अतिक्रमण करते हुए दिखाई पड़ते हैं. किंतु वास्तव में ऐसा है नहीं. अगर बहुत संतानों वाले व्यक्ति का कभी भला नहीं हो सकता तो सीधे-सीधे आधुनिक युग की जन-संख्या समस्या से इसे जोड़ देना उचित नहीं होगा. यह किसी भी युग के लिए एक सार्वभौम सच्चाई है.

तुलसीदास जी ने नैतिक मर्यादाएं शास्त्र से भी निर्धारित की हैं और लोक से भी. हंसी-मज़ाक और विवाह आदि में गाली के उपयोग की बात को लोक से ही लिया है किंतु सचिव, वैद्य और गुरु के बारे में वे शास्त्रोचित कथन कहते हैं. तुलसीदास जी के लिए जब एक बार लक्ष्य निर्धारित हो गया तो नि:संदेह सारे नैतिक उपदेश लोकमंगल की भावना को ही पुष्ट करने की भूमिका निभाते रहे. तुलसी के ये दोहे इस बात को भी प्रमाणित करते हैं कि उनका भक्त रूप उनके सामाजिक उत्तरदायित्व में कोई रुकावट नहीं डालता. भक्त और संत की समाज चेतना कितनी प्रखर हो सकती है इसका उदाहरण निस्संदेह तुलसी हैं.

3.6 शब्दार्थ

1. मुखिया - प्रधान
   सो - समान
   सकल - सब

2. हरषै - प्रसन्न होना
   नयनन - आंखें
   कंचन - सोना
   मेह - वर्षा

3. पीठि - पीट
   पांचे - पीछे
   सनमुख - सामने
   होत - होती है
   लखि - दिखती है
   गंवई - खोदते हैं

4. मौन - आत्मसम्मान
   नव - नया
   नेहु - प्रेम
   तीनिउ - तीनों ही
   पमैं - शोभित होते हैं
   जैं - अगर, यदि

5. अमिय - अमृत
   गारि - गाली
   गारेउ - मिला देती है, मिलाकर

BRAOU

	गरजल	-	विष
	करताल	-	परमात्मा
	जननि	-	माता
	जुग	-	दोनों
	बुध	-	विद्वान, समझदार
6.	भाजन	-	बरतन
	मधु	-	शराब
	पारई	-	भरा हुआ
	पूरन	-	पूरी तरह से
	बिचारि	-	सोच समझकर
7.	पाहन	-	पत्थर
	सिकता	-	रेत
	पानि	-	जल
	परिच्छा	-	परीक्षा
	तिहुन	-	तीनों
	बितिक्रम	-	व्यतिक्रम, विपरीत
8.	पति	-	प्रतिष्ठा
	लहहिं	-	ग्रहण करते हैं
	परिहरहिं	-	छोड़ देते हैं
	खल	-	दुष्ट
	सिखावन	-	शिक्षा, सीख
	सांच	-	सच्ची
9.	सचिव	-	सहायक, मंत्री
	वैद्य	-	चिकित्सक
	गुरु	-	गुरु
	बेगिही	-	जल्दी
10.	अचार	-	आचरण
	मनाइबो	-	कामना करना

3.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

3.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. तुलसी के नीतिकाव्य की विशेषताओं को पठित दोहों के आधार पर स्पष्ट कीजिए.
2. तुलसीदास के अनुसार उत्तम, मध्यम और नीच श्रेणी के व्यक्ति की परीक्षा किस तरह से की जाती है ?
3. नीति काव्य की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिए.

BRAOU

3.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. वे कौन-सी पांच वस्तुएं हैं जिन्हें सज्जन ग्रहण करते हैं और दुर्जन त्याग करते हैं ?
2. किनकी भलाई सोचना अपार अज्ञान का सूचक है ?
3. चातक से कौन-सी तीन बातें एकसाथ सीखी जा सकती हैं ?
4. गाली के विषय में तुलसी के क्या विचार हैं ?

3.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

3.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- तुलसीदास के नीतिकाव्य की विशेषताओं को पठित दोहों के आधार पर स्पष्ट कीजिए.

उत्तर- नीतिकाव्य का कवि एक कठिन चुनौती का सामना करता है. जिस नीति का वह प्रतिपादन कर रहा है, वह उसके अनुभव से प्राप्त हुई है या मात्र पुस्तकीय है ? पुस्तक का अध्ययन करना भी तब एक अनुभव बन जाता है जब वह आत्मसात कर ली जाती है. मध्यकाल में जब मुद्रित पुस्तकों का अभाव था तो सत्संग की महिमा बार-बार बखानी गयी है. सुनना भी अनुभव में बदल जाता है. मध्यकाल के कवि के लिए नीति कथन पांडित्य बतलाने के साधन नहीं थे. यद्यपि उत्तर मध्यकाल में विशेषत: रीतिकालीन कवियों ने उसे भी चमत्कार प्रदर्शन का विषय बना लिया था.

यहां यह याद रखने की आवश्यकता है कि तुलसी भक्त थे और मर्यादा पुरुषोत्तम राम की भक्ति उनका क्षेत्र भी थी और प्रतिपाद्य भी. तुलसी का नीति शास्त्र उनके आराध्य राम के आलोक में ही प्रकाशित होता है. तुलसी के अनुभव और उनके भक्ति के बीच कोई खाई नहीं थी. जब वे मुखिया को मुख के समान रहने का आदर्श बतलाते हैं तो यह स्पष्ट है कि वे राम को ऐसा ही मुखिया मानते थे. तुलसी ने वैराग्य ग्रहण करने के पश्चात् संपूर्ण भारत का भ्रमण किया था. उनका अनुभव क्षेत्र अत्यंत व्यापक था. मनुष्य की परख कैसे की जानी चाहिए, इस प्रसंग के सारे नीति सूत्र उन्होंने स्वयं के जीवन संघर्ष से प्राप्त किए थे. प्रस्तुत दस दोहों में दो दोहे राजनीतिक अर्थ से संदर्भित हैं और दोनों ही दोहों में जीवन का व्यापक अनुभव मर्यादा के सांचे में व्यक्त हुआ है. मुखिया को मुख के समान बतलाना और सचिव को वैद्य और गुरु के समान बतलाना निस्संदेह व्यापकतर जीवनानुभवों की ओर संकेत करता है, जहां दोहे जैसे छोटे छंद में भी तुलसी ने अपने नाम की छाप लगाई है, वहां निश्चित ही काव्य-वस्तु से उनकी निकटता झलकती है. जिन दोहों में 'तुलसी' की छाप नहीं है वहां उनका व्यापक निरीक्षण झलकता है. व्यक्ति को कैसा व्यवहार करना चाहिए और पराए व्यक्ति को उसके व्यवहार के आधार पर ही पहचानना चाहिए - तुलसी के नीति काव्य के ये दो आयाम हैं. तुलसी का सारा बल विवेक पर है, इसीलिए वे अमृत से भरे मिट्टी के पात्र को मदिरा से भरे मणि पात्र से अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं. सज्जन और असज्जन का भेद गहराई से बतलाना इनके नीति वचनों का सार रहा है. उदाहरण उन्होंने प्रकृति में तलाश किए हैं जैसे पत्थर, रेत और पानी के आधार पर उन्होंने उत्तम, मध्यम और नीच श्रेणी के व्यक्तियों को पहचानने का गुर बतलाया है. तुलसी एकनिष्ठ भक्त थे और इसलिए एकनिष्ठता का महत्व भली-भांति जानते थे. इसीलिए वे सहज रूप से बहुत रुचियों वाले, बहुत बातें करनेवाले और बहुत प्रकार के आचरण करने वाले लोगों को बहुत संतान वाले माता-पिता की तरह माना है जिन्हें कभी सुख प्राप्त नहीं हो सकता क्योंकि बहुत की ओर दौड़ना अज्ञान का सूचक है.

BRAOU

तुलसी के नीतिपरक दोहे उनके अनुभव, उनके अध्ययन एवं उनकी निरीक्षण शक्ति को बतलाने वाले हैं. अच्छे-अच्छे सूक्त वचन लिखनेवाला स्वयं को नीतिकाव्य का रचयिता मान लेता है. तुलसी ऐसे बिलकुल नहीं थे. वे राम के अनन्य भक्त थे और उनके नीति वचनों का आदि स्रोत राम की अवधारणा ही थी. ऐसा कोई नीतिपरक दोहा तुलसी ने नहीं लिखा है, जिसे राम अस्वीकार रक सकते हों. स्पष्ट है कि तुलसी की राम भक्ति उनकी संवेदनाओं को गढ़ती है. वे संवेदनाएं अपने मूल चरित्र में नैतिक हैं. इस प्रकार तुलसी के नीति संबंधी विचार उनके नैतिक संवेदनाओं की देन सिद्ध होते हैं. उनकी नैतिक संवेदनाएं उनकी राम भक्ति से उत्पन्न हुई हैं और तुलसी के राम निस्संदेह मर्यादा पुरुषोत्तम हैं. इसीलिए तुलसी का कोई भी दोहा न तो मर्यादा से अलग हुआ है और न ही राम से. नीतिपरक दोहे प्रसाद गुण से संपन्न होकर ही प्रभावशाली हो सकते हैं और तुलसी इस तथ्य के प्रति जागरूक थे. इस प्रकार हम देखते हैं कि तुलसी नीति काव्य के एक अति विशिष्ट कवि थे. उनकी राम भक्ति और उनकी नीति एक ही सिक्के के दो पहलू साबित होती हैं. इस अर्थ में तुलसी अन्य सारे नीति कवियों से श्रेष्ठ भी ठहरते हैं और विशिष्ट भी. सारी दोहावली ब्रजभाषा में रचित है. तुलसी ने जान-बूझ कर ब्रज भाषा का प्रयोग इसलिए किया कि उस काल में यही व्यापक तौर पर बोली जाती थी. तुलसी के संदर्भ में नीति-वचन प्रभाव डालने के उद्देश्य से अलग नहीं माने जा सकते. तुलसी के नीतिकाव्य का विशिष्ट परिदृश्य यही बनता है जो नीति को उपदेशात्मक नहीं बनने देती. बिना काव्य की क्षति किए नीति वचनों को दोहे में पिरोना अत्यंत कठिन था किंतु तुलसी ने इसे संभव किया.

3.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- गाली के विषय में तुलसी के क्या विचार हैं ?

उत्तर- तुलसीदास जी को लोक-व्यवहार का समुचित ज्ञान था. वे यह जानते थे कि शब्द का वही अर्थ होता है, जो वक्ता का अभिप्राय होता है. अभिप्राय एक संदर्भ से जुड़ा होता है. प्रस्तुत दोहे में तुलसी गाली को अच्छा या बुरा मानने की सलाह संदर्भ को केन्द्र में रखकर देते हैं. एक विशेष संदर्भ गाली को अमृत बना देता है और दूसरा संदर्भ गाली को विष बना देता है. जहां प्रेम से गाली दी जा रही हो, वहां वह प्रेम को और बढ़ानेवाली सिद्ध होती है लेकिन जहां उसके पीछे कोई शत्रुता सक्रिय हो, वहां वह ज़हर का काम करती है. तुलसी कहते हैं कि जो समझदार होता है, वह इस बात को जानता है लेकिन मूर्ख इसे नहीं जानता.

इस प्रकार तुलसी दोहे जैसे छोटे छन्द में गाली के उपयोग को संदर्भ सापेक्ष बनाकर भली-भांति प्रस्तुत कर सके हैं.

3.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. हिंदी और उसके कलाकार : फूलचन्द जैन
2. दोहावली : तुलसीदास
3. त्रिवेणी : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
4. तुलसी : डॉ. उदयभान सिंह

******

इकाई 4 : तुलसीदास : वनगमन एवं केवट प्रसंग

रूपरेखा

4.1 पाठ का उद्देश्य
4.2 पाठ एवं कवि परिचय
4.3 मूल पाठ
4.4 सारांश - विशेष टिप्पणी सहित
4.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
4.6 शब्दार्थ
4.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
4.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
4.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
4.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
4.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
4.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
4.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ का उद्देश्य तुलसी की श्रेष्ठ कृति 'कवितावली' के 'वनगमन' प्रसंग की विवेचना के माध्यम से तुलसी की बहुआयामी प्रतिभा की झलक प्रस्तुत करना है. इसी पाठ में गोस्वामी तुलसीदास जी के प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरित मानस के अयोध्या-काण्ड से केवट-प्रसंग को उद्धृत कर, उसकी विवेचना की गई है. सगुण धारा के राम भक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास जी के इस प्रसंग के अध्ययन से आप -

* राम के वनगमन प्रसंग के निमित्त से उनके उदात्त और नवीन चरित्र को जान सकेंगे.
* वनगमन प्रसंग के माध्यम से राम-सीता के संबंधों की प्रगाढ़ता को समझ पायेंगे.
* राम-वनवास के प्रति तद्युगीन ग्रामीण स्त्रियों की प्रतिक्रिया से परिचित हो पायेंगे.
* ईश्वर और भक्त के संबंधों को तुलसी की दृष्टि से समझ सकेंगे.
* कथा वर्णन में कवि के काव्य-कौशल पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* राम-कथा के प्रसंग में केवट-प्रसंग की उप-कथा का औचित्य और मर्म जान सकेंगे.

4.2 पाठ एवं कवि परिचय

वनगमन प्रसंग

तुलसी काव्य का एक ही प्रतिपाद्य था - रामचरित्र. चरित्र व्यवहार के माध्यम से ही जाना जाता है. व्यवहार की कसौटी जीवन है. राम का जीवन उतारों-चढ़ावों से भरा था. ऐसे घटना-प्रधान जीवन में

जो दो-चार घटनाएं अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं - उनमें से निर्णायक महत्व 'वनगमन' का है. 'रामकथा' की केंद्रीय घटना का दर्जा वनगमन को प्राप्त है. 'रामचरित मानस' में इसी घटना ने 'अयोध्या काण्ड' को सर्वश्रेष्ठ काण्ड बना दिया है. रामकथा के जिन पक्षों को कथा निर्वाह की विवशता के कारण तुलसी 'रामचरित मानस' में उचित विस्तार नहीं दे पाये हैं. उन्हें वे अपनी अन्य कृतियों में वर्णन का विषय बनाते हैं. इस संदर्भ में कवितावली उनकी एक श्रेष्ठ कृति है.

मानस अवधी भाषा में जायसीकृत पद्मावत की तर्ज पर लिखा गया जबकि तुलसी की अन्य कृतियां ब्रज भाषा में रची गयीं. मुक्तकों में कथा निर्वाह की विवशता नहीं रहती. भावाभिव्यक्ति के उद्देश्य से भावानुभूति के किसी विशेष बिंदु पर केंद्रित होने की सुविधा मुक्तकों में अच्छी तरह से प्राप्त होती है. कवितावली में तुलसी इसीलिए रामकथा के भावमय प्रसंगों का गहराई से वर्णन ब्रज भाषा कर सके हैं. कवितावली में वन गमन प्रसंग भी पर्याप्त भावमय बन पड़ा है.

कवितावली में तुलसीदास ने सवैया, कवित्त और छप्पय जैसे छंदों को लेकर भावमय प्रसंगों की अभिव्यक्ति की है. वन गमन प्रसंग मुख्यत: सवैया नामक छंद में रचा गया है. सवैया छंद वर्णिक है और लोक परंपरा की देन है. इसमें चार चरण होते हैं लेकिन चौथे चरण को दो बार लिखा जाता है, अर्थात् एक चरण को दोहराने से पांच चरण हो जाते हैं. भारतीय छंद शास्त्र वाचिक परंपरा का रहा है और चार चरणों को पांच चरण अर्थात् 'सवाया' करके पढ़ने के कारण इस छन्द का नाम ही सवैया हो गया. सवैये के कई भेद होते हैं, लेकिन वे सारे भेद वर्णिक के अंतर्गत ही आते हैं.

कवितावली में वन-गमन का प्रसंग यूं तो बहुत विस्तार से वर्णित है, किंतु यहां ऐसे सात छंद प्रस्तुत किए गए हैं, जो वनगमन के प्रसंग में राम के चरित्र, राम और सीता का पारस्परिक प्रगाढ़ प्रेम एवं ग्रामीण नारियों की प्रतिक्रियाओं को चित्रित करते हैं.

तुलसीदास जी का अवधी भाषा और ब्रज भाषा, दोनों पर समान अधिकार था. इसी प्रकार उनके काल में प्रचलित सारे छंद भी वे साध चुके थे. राम के प्रति उनकी अनन्य निष्ठा, उन्हें प्रेरित कर रही थी कि ऐसा कोई महत्वपूर्ण छंद छूट न पाए जो श्रेष्ठ हो. प्रत्येक श्रेष्ठ छंद में वे रामकथा कहना चाहते थे. यहां तक कि अगर 'गीतावली' का उदाहरण लिया जाए तो यह निष्कर्ष निकलता है कि वे प्रत्येक राग में भी राम कथा कहना चाहते थे. इसीलिए तो कई विद्वान आल्हा छंद की स्थिति उनके काल में नहीं मानते क्योंकि अगर आल्हा छंद में उन्होंने रामकथा नहीं लिखी, तो इसका और क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है ?

अयोध्या कांड का वन गमन प्रसंग कवितावली में कुछ ऐसी विशेषताएं लिए हुए आया है, जो मुक्तकों के श्रेष्ठ तत्वों से स्वयं में समाहित करके कथा तत्व को भी अपने साथ लिए चलता है.

<u>केवट प्रसंग</u>

गोस्वामी तुलसीदास भक्ति काल के श्रेष्ठ कवियों में से एक थे. भक्ति काव्य संपूर्ण हिंदी साहित्य के इतिहास में सर्वश्रेष्ठ काव्य माना जाता है. समस्त तुलसी काव्य में रामचरित मानस का स्थान अनुपम है. एक तो वह महाकाव्य है और दूसरे तुलसी जैसे महाकवि का समस्त काव्य-कौशल उसमें प्रस्तुत हुआ है. तुलसी ने यूं तो अपना समूचा काव्य ब्रज भाषा में रचा है किंतु एकमात्र रामचरित मानस अवधी में है. अवधी में लिखे जाने से दो विशेषताएं अपने आप ही उसमें आ गई हैं. एक तो मानस के नायक राम और उनकी कथा अयोध्या केंद्रित है. इसलिए अवधी भाषा सहज ही एक प्रामाणिकता और आत्मीयता प्रदान करती है. दूसरे, तुलसी से पहले प्रसिद्ध सूफी हिंदी कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने

BRAOU

पद्मावत नामक महाकाव्य अवधी भाषा में तथा दोहा, चौपाई शैली में लिखा था. इस काव्य-शैली को तुलसी ने मानस के माध्यम से न सिर्फ आगे बढ़ाया है बल्कि उसे समृद्ध भी किया है.

तुलसी के काव्य का केंद्र लोक मंगल है. लोकमंगल के लिए आवश्यक है कि लोक मानस में कवि का प्रवेश हो और कवि का अनुभव उससे जुड़ता हो. तुलसी में ये दोनों बातें हैं. राम-कथा उनके लिए मात्र काव्य का विषय नहीं थी. उनका आदर्श, उनका उद्देश्य और उनका प्रतिपाद्य भी थी. तुलसी का अपने काव्य-विषय के साथ इतना प्रगाढ़ संबंध था कि वे राम-कथा से तदाकार हो गये थे. यों तो उनके अन्य सभी ग्रंथ भी राम-कथा को ही वर्णित करते हैं किंतु रामचरित मानस तुलसी के आराध्य श्रीराम का जीवन चरित्र है. जब 'तुलसी के राम' कहा जाता है तो स्पष्ट हो जाता है कि अन्य कवियों द्वारा लिखी गई राम-कथा के राम से तुलसी के राम अलग हैं. तुलसी के समस्त काव्य का निचोड़ रामचरित मानस है और उसमें राम का चरित्र पुन:रचित किया गया है. वाल्मीकि के राम तथा अन्य राम-कथाओं के राम अवतारी राजकुमार थे किंतु तुलसी के राम उनकी भावना के अनुसार रचे गए हैं. इसे हर्ष का विषय ही माना जाना चाहिए कि रामचरित मानस की रचना में तुलसी का उद्देश्य जिस 'लोक' का मंगल था उस लोक ने रामचरित मानस को अपने कंठ का हार बना लिया था. तुलसी अगर कालजयी कवि माने जाते हैं तो मानस के कारण ही. तुलसी की लोकप्रियता सारी भौगोलिक सीमाओं का अतिक्रमण करती है और पिछले कई सौ वर्षों से वह राम भक्तों, काव्य प्रेमियों और भारतीय संस्कृति के पक्षधरों के जीवन का प्रमुख आधार रही है.

रामचरित मानस में सात काण्ड हैं और इनमें अयोध्या काण्ड काव्य-कला तथा काव्य-वस्तु की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ माना जाता है. राम का वनगमन इसी काण्ड में होता है और राम-कथा में निहित द्वंद्व भरत के माध्यम से भली-भांति उभरकर यहीं सामने आया है.

'केवट प्रसंग' अयोध्या-काण्ड का एक मार्मिक प्रसंग है. जब श्रीराम को राज्य के बदले चौदह वर्ष का वनवास हो जाता है तो लक्ष्मण और सीता भी उनके साथ वन को जाते हैं. दशरथ साथ में सुमंत्र को भी भेजते हैं लेकिन राम उन्हें लौटा देते हैं. फिर गंगा पार करने की समस्या आती है. राम, केवट से नाव लाने के लिए कहते हैं और केवट तथा राम के संवाद एवं राम की गंगा पार पहुंचने का प्रसंग ही 'केवट प्रसंग' के नाम से जाना जाता है.

यहां तुलसी केवट के माध्यम से एक ऐसे रामभक्त को प्रस्तुत कर सके हैं जो जनकपुरी के मार्ग में घटित हुए अहिल्या-प्रसंग से परिचित है. केवट के संवादों में अहिल्या-प्रसंग की स्मृति चमत्कार की सृष्टि करती है और तुलसी इस अवसर का लाभ उठाते हुए भगवान एवं भक्त के संबंधों की रोचक प्रस्तुति कर सके हैं.

रामचरित मानस तुलसी के प्रबंध कौशल का उदाहरण भी प्रस्तुत कर सका है. कथा-कथन में एक कुशल कथाकार यथावसर मार्मिकता, रोचकता और गंभीरता की सृष्टि करता है. तुलसी का रामचरित मानस उनके काव्य-सौंदर्य का एक संपूर्ण चित्र प्रस्तुत करने में सफल हुआ है.

4.3 मूलपाठ

वनगमन प्रसंग

1) कीरके कागर ज्यों नृपचीर, विभूषन उप्पम अंजानी पाई ।

BRAOU

औध तजी मगवास के रूख ज्यों, पंथ के साथ ज्यों लोग लोगाई ।।
संग सुबंधु, पुनीत प्रिया, मनो धर्म क्रिया धीर देह सुहाई ।
राजिवलोचन रामु चले तजि बाप को राजु बटाउ कीं नाईं ।।

2) कागर कीर ज्यों भूषन-चीर सचीरु लस्यो तजि नीरु ज्यों काई ।
मातु-पितु प्रिय लोग सबै सनमनि सुभायें सनेह सगाई ।।
संग सुभामिनि, भाइ भलो, दिन द्वै जनु औध हुते पहुनाई ।
राजीवलोचन रामु चले तजि बापको राजु बटाउ की नाईं ।।

3) पुरतें निकसी रघुबीरबधू धीर धीर दए मगने डग द्वै ।
झलकी भरि भाल कनीं जल की, पुट सूखि गए मधुराधर वै ।।
फिर बूझति हैं चलनो अब केतिक, पर्णकुटी कटिहौं कित ह्वै ?
तिय की लखि आतुरता पियकी अँखियाँ अति चारु चली जल च्वै ।।

4) वनिता बनी स्यामल गौर के बीच, बिलोकहु री सखि ! मोहि-सी ह्वै ।
मगजोगु न कोमल क्यों चलि है, सकुचाति मही पदपंकज छ्वै ।।
तुलसी सुनि ग्रामबधू बिथकीं, पुलकीं तन, औ चले लोचन च्वै ।
सब भाँति मनोहर मोहनरूप, अनूप हैं भूपके बालक द्वै ।।

5) रानी मैं जानी अयानी महा, पबि-पाहनहू तें कठोर हियो है ।
राजहुं काजु अकाजु न जान्यो, कह्यो तियको जेहिं कान कियो है ।।
ऐसी मनोहर मूरति ए, बिछुरें कैसे प्रीतम लोगु जियो है ।
आंखिन में सखि ! राखिबे जोगु, इन्हैं किमि कै बनबासु दियो है ।।

6) सीस जटा, उर बाहु बिसाल, बिलोचन लालु, तिरीछी-सी भौं हैं ।
तून सरासन-बान धरें तुलसी बन-मारग में सुठि सोहैं ।।
सादर बारहिं बार सुभायं चितै तुम्ह त्यों हमरो मनु मोहैं ।
पूछत ग्रामबधू सिय सों, कहौ, सांवरे से सखि ! रावरे को हैं ।

7) सुनि सुंदर बैन सुधारस-साने सयानी हैं जानकी जानी भली ।
तिरछे कारे नैन, दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू, मुसकाई चली
तुलसी तेहि औसर सोहैं सबै अवलोकनि लोचनलाहु अलीं ।
अनुराग-तडागमें भानु उदैं बिगसी मनो मंजुल कंजकलीं ।।

केवट प्रसंग

मागी नाव न केवटु आना । कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना ।।
चरन कमल रज कहुं सबु कहई । मानुष करनि मूरि कछु अहई ।।
छुअत सिला भइ नारि सुहाई । पाहन तें न काठ कठिनाई ।।
तरनिउ मुनि घरिनी होइ जाई । बाट परइ मोरि नाव उड़ाई ।।
एहिं प्रतिपालउं सबु परिवारु । नहिं जानउं कछु अउर कबारु ।।
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू । मोटि पद पदुम पखारन कहहू ।।

छं. पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं ।

BRAOU

मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साची कहौं ।।
बरु तीर मारहूं लखनु पै जब लगि न पाय पखारिहौं ।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपाल पारु उतारिहौं. ।।

सो. सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे ।
बिहसे करुनाऐन चितइ जानकी लखन तन ।।
कृपा सिंधु बोले मुसुकाई । सोइ करु जेहिं तव नाव न जाई ।।
बेगि आनु जल पाय पखारु । होत बिलंबु उतारहि पारु ।।
जासु नाम सुमिरत एक बारा । उतरहिं नर भवसिंधु अपारा ।।
सोइ कृपालु केवटहि निहोरा । जेहिं जगु किया तिहु
पद नाव निरीख देवसरि हरषी । सुनि प्रभु बचन मोहं मति करषी ।।
केवट राम रजायसु पावा । पानि कठवता भरि लेइ आवा ।।
अति आनंद उमगि अनुरागा । चरन सरोज पखारन लागा ।।
बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं । एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं ।।

दो. पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार ।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार ।।

उतरि ठाढ़ भडा सुरसरि रेता । सीय रामु गुह लखन समेता ।।
केवट उतरि दंडवत कीन्हा । प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा ।।
पिय हिय की सिय जान निहारी । मनि मुदरी मन मुदित उतारी ।।
कहेउ कृपाल लेहि उतराई । केवट चरन गहे अकुलाई ।।
बाद आजु मैं काह न पावा । मिटे दोष दुख दारिद दावा ।।
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी । आजु दीन्ह विधि बनि भलि भूरी ।।
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें । दीनदयाल अनुग्रह तोरें ।।
फिरती बार मोहि जो देबा । सो प्रसादु मैं सिर धरि लेवा ।।

दो. बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियं नहिं कछु केवटु लेइ ।
बिदा कीन करुनायतन भगति बिमल बरु देइ ।।

4.4 सारांश - विशेष टिप्पणी सहित

वनगमन प्रसंग

1) वनवास के लिए तैयार होते समय श्री राम ने राजोचित वस्त्रों और गहनों को त्यागकर उसी प्रकार से शोभित हुए, जैसे तोता अपने पुराने पंखों को छोड़कर होता है. अयोध्या को उन्होंने ऐसे छोड़ दिया जैसे कोई पंथी निवास या सराय के वृक्षों और वहाँ के स्त्री-पुरुषों को यात्रा के साथियों के समान छोड़ देता है. राम के साथ में बहुत ही अच्छे भाई और परम पवित्र प्रिया हैं जो ऐसे मालूम होते हैं मानो श्री राम के धर्म और क्रिया ने सुंदर देह धारण कर ली हो. कमल के समान नेत्रोंवाले श्री राम ने अपने पिता के राज्य को किसी यात्री (बटाऊ) के समान छोड़ दिए.

तोता वसंत ऋतु में जब अपने पुराने पंखों को त्याग देता है तो परम प्रसन्न होता है वैसे ही श्री राम राज वस्त्र और आभूषणों को त्यागकर प्रसन्न हैं. जैसे किसी यात्री को सराय के पेड़ों को छोड़ने में कोई दु:ख नहीं होता वैसे ही श्रीराम को अयोध्या छोड़ने में कोई दु:ख नहीं हुआ. जैसे कोई यात्री सह यात्रियों को त्यागने में मोह नहीं करता वैसे ही अयोध्या के नर-नारियों को त्यागने में राम को कोई मोह नहीं हुआ. तात्पर्य यह है कि जैसे कोई यात्री या बटोही रास्ते की सारी चीज़ों को बिना किसी तुक के त्यागकर चले जाता है वैसे ही श्रीराम अपने पिता के राज्य को किसी भी पराये पुरुष के समान त्यागकर चल दिये. यह सवैया छंद है. वस्तुत: छंद दो प्रकार के होते हैं - वर्णिक और मात्रिक. सवैया वर्णिक छंद है. 21 वर्णों से लेकर 26 वर्णों तक के कई भेद सवैये में पाये जाते हैं. प्रस्तुत सवैये में 7 भगण (1 गुरु और 2 लघु की 7 बार आवृत्ति) तथा अंत में दो गुरु आए हैं. ये 23 वर्णों का सवैया मत्तगयंद सवैया कहलाता है. भाषा ब्रज भाषा है और अर्थालंकारों में उपमा और शब्दालंकारों में अनुप्रास का प्रयोग किया गया है.

2) वन-गमन के समय श्रीराम के लिए राजसी वस्त्र और आभूषण तोते के पंखों के समान थे. उन्हें छोड़ देने पर श्री राम का शरीर ऐसे शोभित हुआ जैसे - काई के हट जाने पर जल का होता है. माता-पिता और अन्य आत्मीय लोगों को श्रीराम ने अपने स्वभाववश और संबंधानुसार सम्मानित किया साथ में बहुत ही अच्छी पत्नी और अत्यंत हितकारी भाई को लेकर श्री राम ऐसे चले जैसे अयोध्या में दो दिनों के लिए मेहमान बनकर आये थे. आगे की पंक्ति पिछले सवैये की तरह ही है.

छंद और अलंकार की स्थिति भी पिछले छंद की तरह ही है. उपमा, उत्प्रेक्षा और अनुप्रास तथा ब्रज भाषा की मिठास छंद को प्रभावशाली बनाते हैं.

3) वनगमन के समय जब श्री राम की वधू जानकी जी अयोध्या से बाहर निकली तो उन्होंने धैर्य धारण करके रास्ते पर दो कदम रखे. सीता इतनी सुकुमार थी कि दो कदम चलने की मेहनत से ही उनके ललाट पर पसीने की बूंदें झलकने लगे और दोनों मधुर अधर भी सूख गये. वे श्री राम से पूछने लगी अब और कितनी दूर चलना है और कहां चलकर पर्णकुटी बनाइएगा ? सीता जी की ऐसी आतुरता देखकर प्रियतम राम के सुंदर आँखों से आँसू बहने लगे.

यह छंद भी सवैया ही है किंतु इसमें 8 सगण इस्तेमाल किये गए हैं. सगण में 2 लघु एक गुरु होते हैं. ये 24 वर्णों का छंद है और इसे सुंदरी सवैया कहा जाता है. ब्रज भाषा की मधुरता के अलावा अनुप्रास का सुंदर प्रयोग भी इस छंद में हुआ है.

4) राम, लक्ष्मण और सीता वनवास में हैं. वे एक रास्ते पर जा रहे हैं. तभी इन्हें देखकर एक ग्रामीण स्त्री अन्य स्त्रियों से कहती है - 'अरी सखी ! सांवले और गोरे कुंवरों के बीच एक स्त्री चल रही है. इन्हें मेरी दृष्टि से देखो, वह स्त्री बडी ही कोमल है. कठिन यात्रा के योग्य नहीं है. उसके कोमल पैरों का स्पर्श करके तो पृथ्वी को भी संकोच हो जाता है. तुलसीदास जी कहते हैं कि उस ग्रामीण स्त्री की बातें सुनकर उसकी सारी सखियां व्यथित हो गई. उनके शरीर इन तीनों की सुंदरता की कल्पना करके ही पुलकित हो गए तथा उनके आंखों से आंसू बहने लगे. सब के सब आपस में कहने लगी कि ये दोनों राजकुमार प्रत्येक भांति मन को हर लेने वाले, मोह लेनेवाले और इतने सुंदर हैं कि उनकी कोई उपमा नहीं हो सकती.

प्रस्तुत छंद की विशेषताएँ भी पिछले छंदों की तरह ही हैं.

BRAOU

5) राम, सीता और लक्ष्मण को देखकर एक ग्रामीण स्त्री अपनी सखियों से कहती है कि मैं ने जान लिया कि रानी अर्थात् कैकेयी महा अज्ञानी है. उसका हृदय वज्र और पत्थर से भी ज्यादा कठोर है. राजा भी अपने कर्तव्य-अकर्तव्य को नहीं जानते. उन्होंने केवल अपने स्त्री की कही हुई बातों पर ही ध्यान दिया. ये तीनों ही सुंदर हैं. मन का हरण करने वाली ऐसी सुंदरताओं से बिछुड जाने पर इनके प्रिय जन कैसे जी पाते होंगे ? हे सखी ! ये तो आंखों में रखने योग्य हैं. इन्हें वनवास कैसे दे दिया गया है ?

पहले छंद की तरह ये 23 वर्णों का मत्तगयंद सवैया है. अन्य सारी विशेषताएं पूर्व छंदों के समान हैं.

6) तुलसीदास जी कहते हैं कि सीता जी से गांव की स्त्रियां पूछती हैं - "जिनके सिर पर जटा है, जिनका वक्ष और भुजाएं विशाल हैं, जिनकी आंखें लाल-डोरोंवाली है, जिनकी भौंहें तिरछी हैं जो धनुष बाण और तरकस धारण किए हुए हैं वे वन के रास्ते पर चलते हुए अत्यंत सुंदर प्रतीत हो रहे हैं. स्वभाव से ही आदरपूर्वक बार-बार तुम्हारी ओर देखते हैं और हमारा मन मोह लेते हैं. बताओ तो हे सखी ! वे सांवले से कुंवर आपके क्या लगते हैं ?

यह सवैया भी मत्तगयंद सवैया है और नाटकीय संवादों से युक्त है. छंद में राम, सीता और लक्ष्मण की सुंदरता इस प्रकार से वर्णित की गई है जैसे चित्त उकेरा जा रहा हो. अगला सवैया भी इसी से जुड़ता है.

7) जब ग्रामीण स्त्री ने सीता जी से पूछा तो उनके अमृत से भीगे हुए सुंदर वचनों को सुनकर सीता जी समझ गई कि ये सबके सब बड़ी ही बुद्धिमती हैं. इन्हें संकेतों में भी कहा जा सकता है. यह सोचकर सीता जी ने तिरछी नज़र से इशारा कर उन्हें सब समझा दिया और मुस्कुराकर आगे बढ़ गई. तुलसी दास जी कहते हैं कि उस समय परम सुंदर श्री राम को देखकर अपने नेत्रों को लाभान्वित करती हुई वे सारी ग्रामीण स्त्रियां ऐसे शोभित हो रही थी मानो सूर्य के उदय हो जाने से प्रेम सरोवर में कमल पुष्पों की मनोहर कलियां खिल गई हों. अर्थात् श्री राम रूपी सूर्य के उदय से प्रेम रूपी सरोवर में सखियों के नेत्र कमल कली के समान विकसित हो गए.

उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास जैसे पारंपरिक अलंकारों के प्रयोग के साथ-साथ तुलसीदास जी बिंब निर्माण में भी सक्षम हैं. उनके बिम्ब जड़ नहीं गतिशील होते हैं. इसके साथ ही नाटकीयता का भी भरपूर पुट है. कुल मिलाकर ये छंद पूरी तरह से सुंदर काव्य का उदाहरण बन गए हैं.

BRAOU

केवट प्रसंग

वनगमन के अवसर पर जब श्रीराम सुमंत को लौटा देते हैं तो उसके पश्चात् वे गंगा नदी के किनारे आते हैं. वहां आकर केवट से नाव लाने को कहते हैं लेकिन वह नाव नहीं लाता. वह कहता है - "मैं ने आपका रहस्य समझ लिया है. आपके चरणों की धूल के विषय में सब लोग यह कहते हैं कि वह मनुष्य बना देने वाली कोई जड़ी-बूटी है. इसी से तो पत्थर की शिला सुंदर स्त्री हो गई. मेरे नाव तो लकड़ी की है और लकड़ी तो पत्थर जितनी कठोर भी नहीं होती. अगर मेरी नाव भी किसी मुनि की स्त्री हो जाएगी तो फिर मैं तो लुट जाऊंगा, मेरे जीने का रास्ता ही रुक जाएगा. मैं इसी नाव से सारे परिवार को पालता-पोसता हूं. दूसरा कोई धन्धा मुझे आता नहीं है. अगर पार जाना चाहते हैं तो पहले अपने पावों को धो लेने दीजिए."

"मैं आपके पांव धोकर ही आपको नाव पर चढ़ाऊंगा. मुझे और कोई मेहनताना नहीं चाहिए. हे राम ! मैं जो भी कुछ कह रहा हूं सच कह रहा हूं. आप चाहें तो मैं आपकी दुहाई और दशरथ जी की सौगंद ले सकता हूं. अगर क्रोध में आकर श्री लक्ष्मण मुझे तीर मारना चाहें तो भले ही मारे लेकिन जब तक मैं पैरों को धोऊँगा नहीं तब तक मैं आपको पार नहीं उतारूंगा."

"जब श्रीराम ने केवट के ऐसे प्रेम भरे वचन सुने जो अनबूझ जैसे लग रहे थे तो वे श्री-सीता जी और लक्ष्मण जी की ओर देखकर हंस पड़े. उनका हंसना इस बात का प्रमाण था कि वे जान गये हैं कि केवट उनके चरणों को धोना चाहता है और उसके सारे वचन उसी उद्देश्य के लिए कहे गए हैं.

"श्री राम के चरित्र में दूसरों के प्रति करुणा और कृपा की इतनी अधिकता थी कि उन्हें कृपा सिंधु कहा जाता था. वे केवट की इस इच्छा को कैसे नहीं पूरा करते. उन्होंने केवट से मुस्कुराके कहा - "तुम वही करो जिससे तुम्हारी नाव तुम्हारे पास ही रह सके. जल्दी से पानी ले आओ और पांव धो डालो. देर हो रही है इसलिए जल्दी पार उतार दो."

तुलसीदास कहते हैं कि जिनका नाम याद करते ही मनुष्य भव सागर के पार उतर जाता है और जिन्होंने वामन अवतार के समय सारे ब्रह्माण्ड को तीन डगों में नाप लिया था वे श्रीराम गंगा जी के पार जाने के लिए केवट को मना रहे हैं.

यहां तुलसीदास अपने आराध्य श्रीराम के साक्षात् भगवान रूप तथा उनकी नर लीला के बीच सामंजस्य स्थापित कर रहे हैं. वे लिखते हैं कि केवट से कहे जा रहे श्रीराम के वचन सुनकर श्री गंगा जी को भी मोह उत्पन्न हो गया. बुद्धि संशयग्रस्त हो गई लेकिन जब राम के पांवों के नखों को देखा तो प्रसन्न हो गई. पौराणिक कथा के अनुसार गंगा जी की उत्पत्ति भगवान विष्णु के पांवों से ही हुई है. इसीलिए वे पांव के नखों को देखते ही अपने उद्गम स्थल को पहचान गई और समझ गई कि भगवान मानव लीला कर रहे हैं. उनका मोह नष्ट हो गया. इधर राम की आज्ञा पाकर केवट पांव धोने के लिए लकडी का पात्र ले आया. उसने अत्यंत आनंद से और प्रेम में भरकर श्रीराम के पॉव धोए. यह एक ऐसा सौभाग्य था कि जिसकी सराहना देवताओं ने फूल बरसाकर की. उनके विचार से इस केवट के समान पुण्यों की राशि कोई नहीं है अर्थात् इसके पुण्य अधिक हैं.

केवट ने पैरों को धोकर उस चरणोदक को परिवार सहित ग्रहण किया. इस पुण्य से पहले उस केवट के पूर्वजों की सद्गति हरे गई. वे भव-सागर के पार उतर गए और केवट परमानंदित होकर श्रीराम को गंगा जी के पार ले गया.

पार जाने के बाद श्रीराम सीता लक्ष्मण और निशाद राज गुह के साथ गंगा जी की रेत में खड़े हो गए तब केवट ने उन्हें प्रणाम किया उसे प्रणाम करते देख श्रीराम को संकोच हुआ कि इसे पार उतारने का मेहनताना तो कुछ दिया ही नहीं. पति के हृदय को पहचानने वाली सीता जी ने अपनी रत्न जटित अंगूठी उंगली से उतारी और श्रीराम को दे दी. श्रीराम ने केवट से कहा कि नाव की उतराई ले लो तो केवट ने व्याकुल होकर चरण पकड़ लिए और कहा 'हे स्वामी ! आज मैं ने क्या नहीं पाया मेरे जीवन के सारे दोष मिट गए. दुख और दरिद्रता की आग बुझ गई. मैं ने बहुत समय तक मजदूरि की है. आज विधाता ने उसका भरपूर मेहनताना दे दिया है. आपकी कृपा से अब मुझे कुछ नहीं चाहिए. लौटती बार आप जो कुछ भी देंगे मैं उसे सिर झुकाकर प्रसाद मानकर ले लूंगा."

श्रीराम, लक्ष्मण और सीताजी ने बहुत आग्रह किया लेकिन केवट ने उनकी एक न सुनी. उसने कुछ नहीं लिया. तब परम करुणाशील श्रीराम ने निर्मल भक्ति का वरदान देकर उसे विदा किया.

BRAOU

विशेष -

संपूर्ण रामचरित मानस दोहा-चौपाई शैली में लिखा गया है. ये दोनों ही मात्रिक छंद हैं और लोक परंपरा से उत्पन्न हुए हैं. संस्कृत में इन छंदों का कोई संकेत नहीं मिलता. दोहा और चौपाई दोनों ही मात्रिक छंद हैं और कथा-कथन की इस शैली को जायसी ने लोकप्रिय बना दिया था. बीच में एक जगह सोरठा छंद आया है. ये दोहे का विपरीत रूप है. गुजरात से इसका विशेष संबंध रहा और गुजरात को ही सौराष्ट्र या सोरठ प्रदेश कहते हैं. इसलिए इस छंद का नाम सोरठा पड़ा. दोहा और सोरठा दोनों ही चौबीस मात्रा के छंद हैं. दोहे में 13 और 11 पर यति होती है जबकि सोरठे में 11 और 13 पर यति की जाती है. चौपाई 16 मात्राओं का छंद है. दोहे में दूसरे और चौथे चरण में अंत्यानुप्रास रहता है जबकि सोरठे में पहले और तीसरे चरण में.

तुलसी ने संपूर्ण रामचरित मानस का विधान इस तरह से किया है कि राम की नर लीला और उनका परब्रह्म होना दोनों ही एक साथ वर्णित हो. केवट प्रसंग इस दृष्टि से एक मार्मिक प्रसंग के रूप में प्रस्तुत हो सका है.

4.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

वनगमन प्रसंग

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने युग में प्रचलित प्रत्येक काव्य रूप में रामकथा लिखी है. दोहा, चौपाई की शैली कथा-कथन में प्रयुक्त होती थी. तुलसीदास जी ने इसकी प्रेरणा जायसी से ली है. मुक्तक काव्य में सवैया, कवित्त, छप्पय आदि छंद सर्वाधिक लोकप्रिय भी थे और प्रचलित भी. कवितावली में तुलसीदास जी ने इन्हीं छंद रूपों में राम-कथा लिखी है.

राम वनगमन प्रसंग यूं भी अपने आप में मार्मिक विषय वस्तु के कारण प्रभावशाली माना जाता है. फिर तुलसीदास जी ने प्रयत्न किया है कि राम कथा के ऐसे भाव बिंदु जो मानस में पर्याप्त प्रकाशित नहीं हो सके हैं वे पूरी तरह से अन्य रचनाओं में व्यक्त हो सके. कवितावली के ये सातों छंद इस बात की पुष्टि करते हैं कि तुलसीदास जी पूरी तरह से अपने उद्देश्य में सफल हुए हैं.

वनगमन प्रसंग में सीता जी की सुकुमारता और राम का उनके प्रति लगाव उन्होंने इतनी हार्दिकता के साथ चित्रित किया है कि कई विद्वान मात्र इसी कारण दो छंदों को प्रक्षिप्त मानते हैं क्योंकि सीता जी के प्रति राम की अतिशय प्रीति इनमें प्रकट हुई हैं. मानना होगा कि तुलसीदास जी ने ब्रज भाषा के सटीक प्रयोग और उपयुक्त छंद-चयन द्वारा विशिष्ट भाव बिंदुओं की अभिव्यक्ति में पूर्ण-रूपेण सफलता प्राप्त की है.

केवट प्रसंग

रामचरित मानस का केवट प्रसंग राम के आदर्श चरित्र को उभारने की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है. तुलसी को यह प्रसंग इतना अच्छा लगता था कि उन्होंने कवितावली में भी इसे मार्मिक रूप में लिखा है. केवट या मल्लाह समाज में नीची दृष्टि से देखे जाते हैं लेकिन श्रीराम ऐसे व्यक्ति के प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार करते हैं. केवट-प्रसंग जैसी कथाओं से ही तुलसी राम का आदर्श चरित्र उभार सके हैं. चरित्र का पता व्यवहार से ही चल पाता है. केवट के प्रति राम का व्यवहार न केवल प्रेम भरा था बल्कि उनका निहोरा करना, उतराई के रूप में सीता जी की अंगूठी देने की कोशिश करना आदि से यह ज्ञात होता है

कि तुलसी राम की समदृष्टि का चित्रण करना चाहते हैं. वे तुलसी के आराध्य हैं, परब्रह्म परमेश्वर हैं किंतु केवट प्रसंग में राजकुल के होने का अहंकार भी नहीं दिखाते. केवट का पाँव धोने का हट और उसके हट के आगे राम का झुकना भक्त और भगवान के संबंधों को भी नये रूप में दर्शाता है. भक्त अपनी भक्ति से भगवान को भी झुकने के लिए विवश कर देता है. इसीलिए भक्ति जगत की प्रसिद्ध मान्यता है - 'भगत के बस् में हैं भगवान'. केवट जो वर्ण, व्यवसाय एवं अन्य दृष्टियों से अत्यंत निम्न था. वह राम के व्यवहार की वजह से स्वयं को बहुत ही ऊंचा उठा हुआ महसूस करता है. निश्चित ही यहां राम और केवट के चरित्रों के साथ-साथ आराध्य के रूप में श्रीराम और आराधक के रूप में केवट के पारस्परिक संबंधों का ज्ञान होता है. अवतार वाद में असाधारण के साधारण होने की गुंजाइश रहती है. भगवान नर लीला करते हैं.

केवट प्रसंग में गोस्वामी तुलसीदास ने इसे अच्छी तरह से व्यंजित किया है. जो सरलता तथा भोलेपन को आदर देते हैं निश्चित ही वे व्यक्ति उदात्त व्यक्तित्व से संपन्न होते हैं और केवट प्रसंग में श्रीराम का यही व्यक्तित्व सामने आता है.

श्रीराम को आदर्श मानते हुए तुलसी ने जिन कारणों से उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम कहा था वे कारण केवट प्रसंग में अच्छी तरह से प्रस्तुत हुए हैं और भक्ति काल के एक प्रतिनिधि कवि के रूप में तुलसी मानवतावाद के परम पक्षधर सिद्ध होते हैं.

4.6 शब्दार्थ

<u>वनगमन प्रसंग</u>

1) कीर - तोता
कागर - पंख
नृपचीर - राजोचित वस्त्र
विभूषण - गहनें
पायी - प्राप्त किया
औध - अयोध्या
मगवास - सराय या धर्मशाला
रुख - पेड़
पंथ - रास्ता
पुनीत - पवित्र
राजिव - कमल
बटाऊ - यात्री
नायी - के समान

2) लस्यो - शोभित हुआ
नीरु - जल
भामिनी - पत्नी
पहुनाई - मेहमानी

3) पुर - नगर

BRAOU

	रघुबीर बधु	-	सीता जी
	मग	-	रास्ता
	डग	-	कदम
	भाल	-	ललाट
	कनी	-	बूंदें
	मधुराधर	-	मधुर ओंठ
	बूझति	-	पूछती हैं
	केतिक	-	कितना
	तिय	-	स्त्री
	लकि	-	देखकर
	चारु	-	सुंदर
	च्वै	-	चूने लगी या बहने लगी
4)	बनिता	-	स्त्री
	स्यामल	-	सांवला
	बिलोकहु	-	देखो
	मगजोगु	-	चलने के काबिल, रास्ते पर चलने के काबिल
	मही	-	पृथ्वी
	पंकज	-	कमल
	बिथकी	-	व्यथित हुई
	भूप	-	राजा
5)	अयानी	-	अज्ञानी
	पबि	-	वज्र
	पाहन	-	पत्थर
	हियो	-	हृदय
	राजहूं	-	राजा भी
	किमि	-	क्यों
6)	बिसाल	-	बड़े आकार के
	तून	-	तरकस
	सरासन	-	धनुष
	सुठि	-	सुंदर
	सुभाएं	-	स्वभाव
7)	बैन	-	वचन
	सुधारस	-	अमृत रस
	सयानी	-	समझदार
	सनै	-	इशारा
	औसर	-	मौका
	अली	-	सखी
	तड़ाग	-	तालाब

BRAOU

भानु	-	सूर्य
बिक्सी	-	विकसित हुई

केवट प्रसंग

केवट	-	मल्लाह
मरमु	-	भेद, रहस्य
रज	-	धूल
मूरि	-	जडी-बूटी
भइ	-	हो गई
घरिणी	-	पत्नी
बाट	-	रास्ता
मोरि	-	मेरे
प्रतिपालऊं	-	पालन-पोषण करता हूं
कबारु	-	धंधा, व्यवसाय
अवसि	-	अवश्य
गा	-	जाना
पखारन	-	धोना
उतराई	-	उतारने का शुल्क
बरु	-	भले ही
बैन	-	वचन
अटपटे	-	अनोखे
करुणा ऐन	-	करुणा के निवास
चितई	-	देखकर
बेगि	-	जल्दी
जासु	-	जिनका
निहूंरा	-	मनुहार, मनाना
देवसरि	-	गंगा नदी
करषी	-	खिंच जाना, संकुचित हो जाना
रजायसु	-	आज्ञा
कठवता	-	लकड़ी का पात्र
उमगि	-	उमड़कर
सिहाहीं	-	सराहना करने लगे
येहि	-	इनके
मुदित	-	आनंदित
ठाढ़ भय	-	खड़े हुए
सुरसरि	-	गंगा नदी
सकुच	-	संकोच से
मुदरी	-	अंगूठी
काह	-	क्या
दावा	-	आग

BRAOU

भूरी	-	भरपूर
अनुग्रह	-	कृपा
करुणायतन	-	करुणा के धाम
बरु	-	वरदान

4.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

4.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. वनगमन प्रसंग में श्रीराम के निस्पृह चरित्र का वर्णन किस तरह हुआ है ?
2. श्रीराम के वनगमन के प्रति ग्रामीण स्त्रियों की क्या प्रतिक्रिया रही ?
3. कवितावली के कथ्य एवं शिल्प पर प्रकाश डालिए.
4. केवट प्रसंग के भाव-पक्ष की समीक्षा कीजिए.
5. केवट प्रसंग में ईश्वर और भक्त के संबंधों पर क्या कहा गया है ?

4.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न (100 शब्दों में)

1. श्रीराम को बटाऊ क्यों कहा गया है ?
2. ग्रामीण स्त्री अपने सखियों से क्या कहती है ?
3. ग्रामीण स्त्रियां सीता से क्या जानना चाहती हैं ?
4. किसी एक छंद के आधार पर तुलसी की काव्य-कला बतलाइए.
5. राम के मांगने पर भी केवट नाव क्यों नहीं लाता है ?
6. केवट के अटपटे वचन क्या थे ?
7. उतराई न लेते हुए केवट ने क्या कहा ?
8. राम के पांवों के नखों को देखकर गंगा नदी क्यों हर्षित हुई ?

BRAOU

4.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

4.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- वनगमन प्रसंग में श्रीराम के निस्पृह चरित्र का वर्णन किस तरह हुआ है ?

उत्तर- श्रीराम का चरित्र धीरोदात्त कोटि का है वे राज्य के प्रति कोई मोह नहीं रखते थे. इसी बात को अत्यंत काव्यमय पद्धति से तुलसीदास ने दो छंदों में बतलाया है. वे कहते हैं कि राजसी वस्त्रों और गहनों को छोड़ने से राम को परम प्रसन्नता हो रही है. यह प्रसन्नता ऐसी है कि जैसे वसंत ऋतु में पुराने पंखों को छोड़कर तोता प्रसन्न होता है. उन्हें अयोध्या के प्रति भी कोई मोह नहीं है. वे उसे भी ऐसे छोड़ देते हैं जैसे कोई यात्री सराय के पेड़ों को छोड़ता है. इसी प्रकार अयोध्या के नर-नारियों को वे सह-यात्रियों की भाँति छोड़ देते हैं. वन में उनके साथ लक्ष्मण हैं जो उनके आज्ञाकारी भाई हैं तथा सीता जी हैं जो परम पवित्र हैं. वे दोनों राम के साथ ऐसे शोभित हो रहे हैं जैसे धर्म और क्रिया ही सुंदर देह धारण करके सामने आ गये हों. कमल जैसे नैनों वाले राम पिता के राज्य को छोड़कर इस तरह चल देते हैं कि जैसे कोई यात्री किसी स्थान को छोड़कर आगे बढ़ जाता है. इसी बात को तुलसी आगे बढ़ाते हैं

और कहते हैं कि राजसी गहने और कपड़े तो तोते के पुराने पंखों की तरह छोड़ते ही हैं लेकिन छोड़ने के बाद इतने सुंदर लगते हैं जैसे काई के हट जाने पर पानी साफ-सुथरा लगता है. राम वनवास को जाते हुए सभी लोगों का यथोचित सम्मान करते हैं किंतु इस तरह से चल पड़ते हैं जैसे अयोध्या में दो दिन के लिए मेहमान बनकर रहे हों.

इन दोनों छंदों से राम के चरित्र का एक ऐसा उज्ज्वल पक्ष प्रस्तुत हुआ है, जिसके अंतर्गत वे राज्य के मोह से बहुत ऊपर प्रतीत होते हैं. उनका त्यागमय चरित्र राज्य को छोड़कर और भी उजागर होता है. जहां साधारण व्यक्ति राज्य के खो जाने से दुखी होता है वहीं वे परमानंदित हो रहे हैं. यह इस बात का सूचक है कि वे विलासिता से दूर हैं.

प्रश्न- केवट-प्रसंग के भाव-पक्ष की समीक्षा कीजिए ?

उत्तर- केवट-प्रसंग का भाव-पक्ष भगवान राम के लीला रूप को सामने रखना है. यह लीला मानव-लीला है. तुलसी ने यहां श्रीराम के उस रूप को प्रस्तुत किया है जो दीनों पर दया करने वाला है. केवट की क्या तो हैसियत ? वह कहता भी है कि सिवाय नाव के उसके पास कुछ भी नहीं. वह अपने काम को मजदूरी कहता है. ऐसे मजदूर के प्रति अयोध्या के राजकुमार श्रीराम का बर्ताव ऐसा है कि पाठक कहीं भी अहंकार का लेशमात्र नहीं पाता. भक्त किस प्रकार भगवान के सामने हठी बन जाता है और भगवान उसके हठ को निभाते हैं यह इस प्रसंग में बताया गया है. वह कवितावली में तो, तुलसी के शब्दों में स्वयं पर व्यंग्य भी करता है कि "मैं केवट की जाति का कुछ वेद तो पढ़ा हुआ हूँ नहीं. यही नाव मेरे परिवार के पालन-पोषण का आधार है." केवट की इच्छा यही है कि वह श्री राम के चरणों को धोये और उसका परिवार चरणोदक ले सके. केवट की इच्छा विस्मयकारी नहीं है लेकिन राम का उस इच्छा के आगे सहज भाव से झुक जाना पाठक को भाव-विभोर कर देता है.

राम की आज्ञा से केवट लकड़ी के बर्तन में पानी लाकर संपूर्ण परिवार के साथ उनके चरणों को धोता है. फिर उनको पार उतारता है. उतराई को लेकर राम का संकोच करना और सीता की अंगूठी देने के लिए तैयार होना आदि ऐसे प्रसंग हैं जो राम की भाव प्रवणता को दर्शाते हैं. भले ही राम राजकुमार हो किंतु उनके चरित्र में सामंती दोषों का निशान तक नहीं है. केवट अपने कर्तव्य को जानता है लेकिन राम अपने कर्तव्य से बहुत आगे जाकर केवट से एक संबंध बनाते हैं जो मानव का मानस से संबंध है यह मानवता ही केवट प्रसंग जैसे काव्य प्रकरणों में भाव-पक्ष को प्रस्तुत करती है. आदर्श और यथार्थ जहां दोनों ही औपचारिकता के बंधनों में सिमटकर पीछे रह जाते हैं वहां श्रीराम और केवट के बीच का भावात्मक संबंध प्रेम के शिखर को छूने लगता है. केवट प्रसंग का भाव-पक्ष इसीलिए इतना समृद्ध हो सका है कि वह शुद्ध रूप में मानवीय करुणा और दया की अभिव्यक्ति करता है.

4.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- किसी एक छंद के आधार पर तुलसी की काव्य कला बताइये.

उत्तर- "कीर के कगार ज्यों.....राजु बटाउ कीं नाईं ।"

तुलसी एक समर्थ कवि थे. अनुभूति की अभिव्यक्ति वे भली-भांति करते थे. वनगमन प्रसंग में वे राम के उस चरित्र को प्रकट करते हैं, जिसमें मोह की परछाई तक राम के हृदय को नहीं छू सकी है. उपमा वे तोते की देते हैं जो प्रसंग साधारण जनों के लिए दुःख का हो सकता था वही राम के लिए परम सुख का

है जैसे पुराने पंखों को छोड़कर तोता प्रसन्न होता है. इसीतरह वे श्रीराम की निस्पृहता बतलाने के लिए 'बटाऊ' को उपमान बनाते हैं. बटाऊ का अर्थ यूं तो यात्री होता है किंतु ऐसा यात्री जो पूरी तरह से घुमक्कड़ हो अर्थात् यात्रारत ही रहता हो. तुलसी ने छंद भी सवैया चुना है जो अपने आप में भाव प्रवणता के लिए जाना जाता है. चाहे अलंकार हो, चाहे अभिव्यक्ति कौशल के अन्य आयाम हो तुलसी किसी भी स्थल पर असफल नहीं हुए हैं.

प्रश्न- केवट के अटपटे वचन क्या थे ?

उत्तर- जब श्रीराम ने केवट को नाव लाने को कहा तो केवट कहने लगा कि मैं ने आपका रहस्य जान लिया, आपके पांव धूल भरे हैं और आपके पावों की धूल किसी भी वस्तु को मनुष्य बना देनेवाली जड़ी है. अहिल्या के उद्धार का स्मरण कराते हुए केवट कहता है कि जब पत्थर की शिला स्त्री हो गयी है, मेरी नाव तो लकड़ी की है. लकड़ी पत्थर से कोमल होती है. भले ही लक्ष्मण मुझे तीर से मार डाले लेकिन आपके पांव धोये बिना मैं आपको नाव पर नहीं चढ़ाऊंगा. वास्तव में केवट सपरिवार राम के पांवों को धोकर चरणोदक लेना चाहता था. केवट के ये वचन ही राम को अटपटे लगे.

4.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. त्रिवेणी - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
2. तुलसीदास और उनका युग - राजपति दीक्षित
3. लोकवादी तुलसी - डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी
4. तुलसी - डॉ. उदयभानु सिंह

******

BRAOU

इकाई 5 : सूदरदास के पद

रूपरेखा

5.1 पाठ का उद्देश्य
5.2 पाठ एवं कवि परिचय
5.3 मूल पाठ
5.4 सारांश
5.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
5.6 शब्दार्थ
5.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
5.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
5.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
5.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
5.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
5.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.1 पाठ का उद्देश्य

सूरदास हिंदी के सर्वश्रेष्ठ भक्त कवि हैं. प्रस्तुत पाठ में सूरदास के वात्सल्य, विनय और श्रृंगार के पदों का विवेचन किया गया है. इन पदों के अध्ययन से आपको -

* नयी और उपयोगी जानकारियां प्राप्त होंगी, आपकी भाव-संपदा बढ़ेगी तथा आपकी नैतिक समझ विकसित होगी.
* विनय भाव की समझ को विकसित करते हुए पदों की वस्तु और उनके रूप के पारस्परिक संबंध की पड़ताल करने की शक्ति प्राप्त होगी.
* वात्सल्य भाव के महत्व का ज्ञान प्राप्त होगा आप यह भी जान जायेंगे कि सूर ने वात्सल्य रस का कोना-कोना झांका है.
* वात्सल्य-रति के स्वरूप को समझते हुए वात्सल्य के विषय 'बाल्य जीवन के विभिन्न प्रसंगों' को स्पष्ट करने का ज्ञान प्राप्त होगा.
* विषय वस्तु से सूर के तादात्म्य को देखते हुए उनके अभिव्यक्ति पक्ष एवं उनकी काव्य कुशलता को समझने की शक्ति प्राप्त होगी.
* श्रीकृष्ण लीला के माध्यम से भक्ति में प्रेम के स्थान को निर्धारित करने तथा प्रेम की अनन्यता ही भक्ति का सोपान है, इस तथ्य का बोध होगा.
* गोपियों के तार्किक मानस के साक्षात्कार के द्वारा निर्गुण के विरोध में सगुण के प्रतिपादन की पद्धति से परिचय प्राप्त होगा.

BRAOU

5.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

सूर काव्य के अध्ययन के लिए सबसे पहले विनय के पांच पदों को लिया गया है. किसी भी भक्त कवि के काव्य का आरंभ विनय के पदों से हो, यह सहज है. संभवत: इसीलिए सूर-सागर के आरंभ में विनय के पद ही रखे गये हैं. अगर भावों के आधार पर भक्ति के भेद किये जाये तो विनय के पद दास्य-भाव के कहे जायेंगे. किसी भी काव्य रचना को समझने की कोशिश में उसे 'वस्तु' और 'रूप' - दो भागों में बांट कर देखा जाता है. वस्तु अर्थात् जो कहा गया और रूप अर्थात् जिस माध्यम से कहा गया. 'पद' एक ऐसा काव्य-रूप है जो संगीत से जुड़ा होता है और इसलिए गेय होता है. गेय का अर्थ होता है जो गाया जाता है.

मध्यकाल में भक्तों की महत्ता बताने वाली जो पुस्तकें लिखी गयीं, उनमें 'चौरासी वैष्णवन् की वार्ता' मुख्य है. उसमें लिखा है कि जब प्रसिद्ध वैष्णव आचार्य श्री वल्लभाचार्य पहली बार सूर से मिले, तब सूरदास भजन गायक के रूप में जाने जाते थे. वल्लभाचार्य को उन्होंने विनय-परक पद सुनाया. किंवदंती के अनुसार पद सुनकर वल्लभाचार्य ने सूरदास से कहा - 'जो सूर हो, तो काहे घिघियावत हो ! कुछ लीला वर्णन करो !' वल्लभाचार्य जी का शिष्यत्व ग्रहण करने के पश्चात् सूरदास ने कृष्ण लीला वर्णन को अपनी पद रचना का आधार बनाया. कुछ विद्वान मानते हैं कि विनयपरक पद वल्लभाचार्य जी से मिलने के पहले लिखे गये हैं.

विनयपरकता के पदों में निर्गुण भक्ति की तुलना में सगुण-भक्ति की सुलभता, आत्मालोचन, हरि-विमुखों का साथ छोड़ने का निर्देश, भक्ति-भाव की अनन्यता और आत्मदीनता का वर्णन है. संसार के प्रति वैराग्य की भावना इन सभी पदों में अंतर्निहित है.

सूर भक्ति-काल के एक श्रेष्ठ कवि के रूप में जाने जाते हैं. उनकी श्रेष्ठता की कसौटी उनके द्वारा किया गया वात्सल्य-भाव का अप्रतिम चित्रण है. वात्सल्य-रस के आलंबन श्रीकृष्ण हैं, जिनके जन्म से लेकर मथुरा-गमन तक की लीलाएं सूर ने भाव मग्न होकर चित्रित की है, मान्यता है कि सूर गोवर्धन पर्वत पर सिथत श्रीनाथ के मंदिर में अपने पदों को गाया करते थे. गेयता निश्चित ही संगीतात्मकता की सहचरी होती है. एक ओर बाल-मन की गहनतम अनुभूतियों में प्रवेश करना और दूसरी ओर माता यशोदा और पिता नंद के कथनों के माध्यम से श्रीकृष्ण के लिए उमड़ती वात्सल्य-धारा का अंकन करना और फिर इसी के साथ संगीत और गेयता का भी निर्वाह सूर को निश्चित ही हिंदी काव्य-गगन का सूर्य बना देता है. पाठक के पास भावयत्री प्रतिभा होती है और वह प्रतिभा पाठ को फिर से रचते हुए रचनाकार की कारयित्री प्रतिभा के पास पहुंचने में ही सार्थक हो पाती है. सूर के वात्सल्य-परक पदों की पृष्ठभूमि में ऐसी कारयत्री प्रतिभा की सक्रिय भूमिका है, जो पाठकों की भावयत्री प्रतिभा को संतुष्ट भी करती है और उसके लिए चुनौती भी उपस्थित करती है. बालक और वात्सल्य रस के पारस्परिक प्रसंग में मातृ-मन को नहीं भूला जा सकता. सूर ने यशोदा के मातृ-मन का ऐसा चित्रण किया है, जैसे वे स्वयं यशोदा बन गए हों, बाल-लीला वर्णन में सूर बालक में रूपांतरित हो जाते हैं, तन्मय होने की शक्ति ही किसी रचनाकार को श्रेष्ठ बनाती है, सूर की तन्मयता वात्सल्य के क्षेत्र में एक चमत्कार उपस्थित कर देती है. बालक को लेकर मां की अभिलाषाएँ, बालक का किलकारी भरना, घुटनों रेंगना, बालक के बालोचित उपालंभ, स्पष्टीकरण और बालक से बिछुड़ जाने के बाद मां की मनोस्थिति - यह सब जैसे

सूर की काव्य कला की जानी -मानी वीथियां हैं, जहां न केवल उनका मन रमता है बल्कि वे स्वयं को विस्मृत कर बैठते हैं.

मध्यकाल में काव्य की कसौटी श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति ही मानी जाती थी और वल्लभाचार्य से दीक्षित होने के बाद सूरदास ने जब कृष्ण लीला को काव्य की विषय वस्तु बनाया, तो बाल लीला के बाद श्रृंगार ही लीला का पर्याय बना. सूर ने संयोग श्रृंगार के पद भी लिखे जिसमें राधाकृष्ण के परस्पर परिचय और उनकी रागात्मक एकता का चित्रण किया. वियोग श्रृंगार की दृष्टि से तो भ्रमर गीत अनुपम ही माना जा सकता है. वियोग पीड़िता गोपियों भी निर्गुण उपासक के प्रि निधि के रूप में उद्धव को देखकर और उनके प्रवचन को सुनकर जिस प्रकार के तर्क-वितर्क करती हैं, वे अपनी मिसाल आप हैं. वियोग का चित्रण और पुष्टि मार्ग का प्रतिपादन, इन दोनों विरोधी लगने वाली स्थितियों को संगीत के आधार पर गेयता का गुण प्रदान कर देना निश्चित है, यह सूर के बस की ही बात हो सकती थी, यहां संकलित पदों में छात्रों को सूर की काव्य कला का यह चमत्कारी कौशल देखने को मिलता है.

कवि परिचय

सूरदास मध्यकालीन वैष्णव भक्त कवि हैं. संपूर्ण हिंदी कवियों में भक्त कवि और भक्त कवियों में सूरदास को विशिष्ट स्थान प्राप्त है. इनके आराध्य श्रीकृष्ण थे इसलिए इन्हें कृष्ण-भक्ति शाखा के कवि के रूप में मान्यता प्राप्त है.

सूरदास के व्यक्तिगत जीवन के विषय में बहुत कम ज्ञात है. भक्त कवि स्वयं के बारे में लिखने से कतराते थे और प्रशंसक अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करते थे. परिणामस्वरूप सूरदास के जन्म, जन्मस्थली, माता-पिता, वेश, जीवन-वृत्तांत आज भी अनुमान के विषय हैं. विद्वानों के अनुमान भेद के बावजूद जिन तथ्यों को न्यूनाधिक रूप से स्वीकार किया जाता है, वे हैं सूरदास का वल्लभाचार्य का शिष्य होना, उन्हें वल्लभ संप्रदाय के आठ श्रेष्ठ कवि 'अष्ट छाप' में श्रेष्ठ माना जाना और नेत्रहीन होना. एक मान्यता के अनुसार सूरदास का जन्म वल्लभाचार्य के जन्म के दस दिन बाद हुआ. सामान्य रूप से उनका जन्म विक्रम संवत् 1540 के आस-पास और निधन विक्रम संवत् 1620 के लगभग माना जाता है. वे नेत्रहीन थे, इतना निश्चित है किंतु प्रामाणिक रूप से यह कहना कठिन है कि वे जन्मांध थे या बाद में नेत्र गंवा बैठे.

कुछ विद्वानों के मतानुसार मथुरा-आगरा सड़क पर स्थित रुनकता नामक गांव सूरदास की जन्म स्थली है. कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार दिल्ली के निकट स्थित सीही नामक गांव उनका जन्म स्थल था. सारे विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि सूरदास के जीवन का अधिकांश समय जमुना के किनारे गऊघाट पर बीता. इसी घाट पर वल्लभाचार्य से उनकी भेंट हुई. सूरदास वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित हुए. वल्लभाचार्य के संप्रदाय में दीक्षित होने के बाद सूर श्रीकृष्ण की लीलाओं को अपने पदों में चित्रित करने लगे. विशेष रूप से उन्होंने बाल लीला को अपना विषय बनाया. बालक स्वयं में न तो मोहक होता है न आकर्षक. ममत्व एवं वात्सल्य से परिपूर्ण दृष्टि चाहिए जो उस बालक की क्रीड़ाओं से आकर्षित होकर उस पर मोहित हो सके. निश्चित रूप से सूरदास की बाल्यावस्था में ही इस रहस्य को समझने के सूत्र छिपे हैं. संभव है कि सूर का बचपन नितांत वात्सल्य रहित रहा हो. ऐसी स्थिति में अतृप्त कामनाएं-अभिलाशाएं ही इन पदों की सामग्री बन गयी हों अथवा इतना सुखी बचपन रहा कि उसकी स्मृति सूरदास की सृजनात्मक प्रतिभा को ऐसे पदों की रचना करने को प्रेरित करती हो. इतना निश्चित है कि सूरदास का बचपन सहज-साधारण नहीं रहा. इस तरह से देखने पर पाते हैं कि कवि के बाह्य जीवन से ज्यादा महत्वपूर्ण उसका आंतरिक जीवन होता है जो पाठकों तक शब्दों के माध्यम से

पहुंचता है, कई विद्वान आलोचक इसे कवि का शब्द कर्म कहते हैं. सूरदास की जीवनी में जब श्रृंगार की बात आएगी तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि वे इस प्रसंग में अनुभव शून्य नहीं थे. यह तो कोई नहीं कह सकता कि उन अनुभवों का स्वरूप क्या रहा होगा किंतु दिव्यता के स्पर्श से जो भाव राधाकृष्ण और गोपियों में चित्रित किया गया, वह सूर के जीवन में नहीं रहा.

होगा, यह मानना कवि और काव्य संबंधी अज्ञान का परिचय देना होगा. वल्लभाचार्य से मिलने से पहले ही उनके जीवन में ऐसा कुछ हो चुका था कि वे भग्न हृदय दीनता के पद गाया करते थे. जब गुरुदेव का आदेश लीला गायन का हुआ तो सूर के काव्य में निश्चित ही उनकी स्वयं की स्मृतियों को भी स्थान मिला होगा. वे स्मृतियां भक्ति काव्य में रूपांतरित होकर आज विश्व की धरोहर हैं, किंतु सूर के जीवन में वे अवश्य ही रही होंगी ऐसा मानने का सर्वाधिक प्रबल आधार सूर काव्य ही प्रस्तुत करता है. सूर के वात्सल्यपरक पदों से यह पता चलता है कि सूर को गृहस्थ जीवन से बड़ा लगाव था और उनकी स्मृतियों में गृहस्थ जीवन के चित्र हैं जो न केवल बाल क्रीड़ा वर्णन में बल्कि श्रृंगारिक अभिव्यक्ति में भी प्रकट हुए हैं.

सूरदास से संबंधित विभिन्न ग्रंथों का अध्ययन करने से यह अनुमान लगाने में सहायता मिलती है कि उन्होंने उतना ही नहीं लिखा होगा, जितना उपलब्ध है. लगभग पच्चीस ग्रंथों का उल्लेख मिलता है. पर्याप्त अनुसंधान तथा विचार-विमर्श के उपरांत सूर-साहित्य के विद्वानों ने तीन ग्रंथ ही प्रामाणिक माने हैं- 1. सूर सारावली, 2. साहित्य लहरी, 3. सूर सागर.

इनमें सर्वाधिक प्रामाणिक कृति 'सूर सागर' है. संप्रदाय में प्रचलित किंवदंती के अनुसार 'सूर सागर' में सवालाख पद संकलित थे किंतु अब छह हज़ार पद ही उपलब्ध हैं. संभव है, अन्य पद काल के अंतराल में विलीन हो चुके हों. 'सूर सागर' के पदों की रचना का आधार व्यास कृत 'श्रीमद्भागवत्' है. जो लोग यह समझते हैं कि 'सूर सागर' भागवत् का अनुवाद है, वास्तव में ऐसा मानने वाले भागवत् से अनभिज्ञ होते हैं. किसी ग्रंथ को आधार बनाकर पदों की स्वतंत्र रचना करना और बात है तथा उसका अनुवाद बिल्कुल दूसरी बात, सूरदास जी ने दशम स्कंद को अपनी पद रचना का आधार बनाया है. इसमें श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर मथुरा गमन तक की कथा है. ब्रज भाषा में लिखित 'सूर सागर' अनेक भावों, विचारों और विषयों से संबंधित है. विशेष रूप से वात्सल्य और श्रृंगार के पद, जिनमें भक्ति भाव अंतर्धारा के रूप में है, अत्यधिक विशिष्ट हैं. यथावसर निर्गुण मत का खंडन और सगुण मत का प्रचार भी है भक्ति के आगे ज्ञान को तुच्छतर बताया गया है. 'भ्रमरगीत' इस प्रसंग में अत्यधिक महत्वपूर्ण है और यह सिद्ध करता है कि भक्त की अनुभूति अखण्ड हो जाती है. अखण्ड अनुभूति हो तो विचार, भावना, कल्पना आदि की समन्वित अभिव्यक्ति संभव हो पाती है. सूर की मौलिकता की भी यह अद्भुत मिसाल है.

हिंदी साहित्य में सूर को सर्वश्रेष्ठ मानकर ही यह कहावत चल पड़ी थी - 'सूर सूर तुलसी ससी'. अभिव्यक्ति की गहनता और गंभीरता निश्चित ही अनुभूति की गहनता और गंभीरता के कारण हैं. न सिर्फ कृष्ण भक्ति शाखा बल्कि समूचे भक्ति काव्य में वे बेमिसाल हैं. निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि समूचे हिंदी काव्य में, सूर की अनुभूति और अभिव्यक्ति विशिष्टतम हैं.

5.3 मूलपाठ

सूरदास के विनयपरक पद

1) मेरो मन अनत कहां सुख पावै ।

जैसे उड़ि जहाज को पंछी, पुनि जहाज पर आवै ।।
कमल-नैन को छांड़ि महातम और देव को ध्यावै ।
परम गंगा को छांडि पियासौ, दुरमति कूप खनावै ।।
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, क्यों करील-फल खावै ।
'सूरदास' प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै ।।

2) प्रभु, हौं सब पतितनि कौ टीकौ ।
और पतित सब दिवस चारि के हैं तो जनमत ही कौ ।।
बधिक, अजामिल, गनिका तारी और पूतना ही कौ ।
मोहि छांडि तुम और उधारे, मिटै सूल क्यौं जी को ।।
कोउ न समरथ अघ करिबे कौं, खेंचि कहत हौं ली को ।
मरियत लाज सूर पतितन में, मौहूं तै को नी कौ ।।

3) अविगात गति कछु कहत न आवै ।
ज्यौं गूंगे मीठे फल को रस अंतरगत ही भावै ।।
परम स्वाद सबही सु निरंतर, अमित तोष उपजावै ।
मन बानी को अगम अगोचर, सो जाने जो पावै ।।
रूप रेख गुन जाति जुगाने बिन, निरालंब कित धावै ।
सब विधि अगम विचारहिं तातैं सूर सगुन पद गावै ।।

4) प्रभु, औगुन चित्त न धरौ ।
समदरसी है नाम तिहारो, सोई पार करौ ।।
इकलोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परौ ।
सो दुविधा पारस नहिं जानत, कंचन करन खरौ ।।
इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरौ ।
जब मिली गए तब एक बरन भये, सुरसरि नाम पर्‌यो ।।
तन माया, जिव, ब्रह्म कहावत, सूर सु मिलि बिगरौ ।
कै इनको निरधार कीजिए, कै प्रन जान टरौ ।।

5) तजौ मन, हरि विमुखनि कौ संग ।
जिनके संग कुमति उपजनि है, परत भजन में भंग ।।
कहा होत पय पान कराए, विष नहिं तजत भुजंग ।
कागहिं कहा कपूर चुगाये, स्वान अन्हाये गंग ।।
खर को कहा अरगजा लेपन, मरकट भूषन अंग ।
गज को कहा सरित अन्हवाये, बहुरि धरौ वह संग ।।
पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतौ करत निषंग ।
'सूरदास' खल काटी कामी पै, चढ़त न इजा रंग ।।

<u>सूरदास के वात्सल्यपरक पद</u>

1) जसुमति मन अभिलाष करै ।
कब मेरो लाल घुटुरुबनि रैंगै, कब धरती पग द्वैक धरै ।

BRAOU

कब द्वैत दांत दूध के देखौ, कब तोतरे मुख बचन करै ।
कब नंदहि बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिं ररै ।
कब मेरौ अंचरा गहि मोहन, जोइ-सोइ कहि मोसौ झगरै ।
कब यौं तनक-तनक कछु खै हैं अपने कर सौं मुखहि भरै ।
कब हंसि बात कहैगो मोसौ, जा छवि तैं दुख दूरि हरै ।
स्याम अकेले आंगन छाँडि, आपु गई कछु काज करै ।
इहि अंतर अंधवाह उठ्यो इक, गरजत गगन सहित धहरै ।
सूरदास ब्रज लोग सुनत धुनि, जो जहं-तहं सब अतिहिं डरै ।।

2) किलकत कान्ह घुटरुवनि आवत ।
मनिमय कनक नंद कैं आंगन, बिंब पकरिबैं धावत ।
कबहु निरखि हरि आपु छौह कौ, कर सौ पकरन चाहत ।
किलकि हंसत राजत द्वै दतिया, पुनि पुनि तिहिं अवगाहत ।
कनक भूमि पर कर-पग-छाया, यह उपमा इक राजति ।
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि वसुधा, कमल बैठकी साजति ।
बाल दसा सुख निरखि जसोदा, पुनि पुनि नन्द बुलावति ।
अंचरा तर लै ढांकि सूर के, प्रभु को दुध पियावति ।।

3) मैया मोहिं दाऊ बहुत खिजायौ ।
मोसौ कहत मोल कौं लीन्हौं तू जसुमति कब जायौ ।
कहा करौ इहि रिस के मारे खेलन हौं नहीं जात ।
पुनि पुनि कहत कौन है माता, को है तेरी तात ।
गोरे नंद, जसोदा गोरी तू कत स्यामल गात ।
चुटकी दै-दै ग्वाल नचावत, हंसत सबै मुसकात ।
तू मोहि कौं मारन सीखी, दाउहिं कबहुं न खीजै ।
मोहनं मुख रस की ये बातें, जसुमति सुनि सुनि रीझै ।
सुनहु कान्ह, बलभद्र चबाई, जनमत ही कौं धूत ।
सूर स्याम मोहिं गोधन की सौं, हौं माता तू पूत ।।

4) मेया मैं नाहिं माखन खायौ
ख्याल परै ये सखा सबै मिलि, मेरे मुख लपटायौ ।
देखि तुही छीं के पर भोजन, ऊंचे धरि लटकायौ ।
हौं जु कहत नान्हें कर अपने मैं कैसे करि पायौ ।
मुख दधि पोंछि, बुद्धि एक कीन्हीं, दोनों पीठि दुरायौ ।
डारि साटि मुसकाइ जसोदा, स्यामहिं कंठ लगायौ ।
बाल विनोद मोद मन मोह्यौ, भक्ति प्रताप दिखायौ ।
सूरदास जसुमत कौ यह सुख, सिव विरंचि नहि पायौ ।

5) संदेसौ देवकी सौं कहियौ ।
हौं तो धाइ तिहारे सुत की, माया करत ही रहियौ ।
जदपि टेव तुम जानति उनकी, तऊ मोहिं कहि आवै ।
प्रात होते मेरे लाल लड़ते माखन रोटी भावै ।

तेल उबटनौ अरु तातौ जल ताहि देखि भाजि जाते ।
जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती क्रम क्रम करिकै न्हाते ।
सूर पथिक सुनि मोहिं रैनि दिन, बढ़यौ रहत उर सोचा ।
मेरो अलक लडैतो मोहन, ह्वै है करत संकोच ।

सूरदास के श्रृंगारपरक पद

1) बूझत स्याम कौन तू गोरी ।
कहां रहति, काकी है बेटी, देखी नहीं कहुं ब्रज खोरी ।।
काहे कौं हम ब्रज तन आवति खेलति रहति आपनी पौरी ।
सुनत रहति स्रवननि नंद ढोटा करत फिरत माखन दधि चोरी ।
तुम्हारौ कहा चोरि हम लैहै, खेलन चलो संग मिली जोरी ।
सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि, बातनि, भरइ राधिका भोरी ।।

2) राधा माधव भेंट भई ।
राधा माधव, माधव राधा कीट भृङ्ग ह्वै जु गई ।
माधव राधा के रंग रांचे, राधा माधव रंग रई ।
माधव राधा प्रीति निरंतर, रसना करि सो कहि न गई ।
विहंसि कह्यौ हम तुम नहिं अंतर, यह कहिकै उन ब्रज पठई ।
सूरदास प्रभु राधा माधव, ब्रज बिहार नित नई नई ।

3) आयो घोष बड़ौ व्यौपारी ।
खेप लादि गुरु ज्ञान जोग की, ब्रज मैं आनि उतारी ।
फाटक दै कै हाटक मांगत भौरों निपट सुंधारी ।
धुरहीं तैं खोटो खाचो है, लिये फिरत सिर भारी ।
इनकै कहे कौन डहकावे, ऐसी कौन अनारी ।
अपनौ दूध छोंडि कौ पीवै, खारि कूप कौ बारी ।
ऊधौ जाहु सबारें ह्यौं तै बेगि गहरु जानि लावहु ।
मुख मागौ पैहौ सुरज प्रभ, साहुहिं आनि दिखावहु ।।

4) बिन गोपाल बैरनि भी कुंजैं ।
तब वै लाद लगति तन सीतल, अब भी विषम जंजाल की पुंजैं ।
वृथा बहति जमुना, खग बोलत वृथा कमल फूलनि अजि-गुंजै ।
पवन, पानि, घनसार, सजीवन, दधि सुत किरनि भानु भी भुजैं ।
यह ऊधौ कहियौ, माधौ सौ मदन मारि कीन्हीं हम लुंजै ।
सूरदास प्रभु तुम्हारे दरसन कौ, मन जोवत अँखियाँ भी गुंजै ।।

5) उधौ यह मन और न होय ।
पहिले ही चढ़ि रह्यौं स्याम रंग छूटत न देख्यो धोय ।
कैतव-वचन छाडि हरि हमको सोइ करै जो मूल ।
जोग हमें ऐसो लागत है ज्यों तोहि चंपक फूल ।
अब क्यों मिटत हाथ की रेखा ? कहौ कौन विधि कीजै ।
सूर स्याम मुख आनि दिखाओ, जाहि निरखि करि जी जै ।।

BRAOU

5.4 सारांश

विनय परक पद

1) इस पद में सूर ने कहा है कि मेरा मन किसी और जगह सुख नहीं पा सकता. जिस प्रकार जहाज पर बैठा हुआ पक्षी अगर उड़ता है तो चारों ओर पानी ही पानी देखकर और कहीं भी ज़मीन न पाकर, फिर से जहाज पर आ जाता है. वह लाचार और विवश है, विस्तृत समुद्र में सिवाय जहाज के और कोई ठिकाना भी तो नहीं, कमल के जैसी बड़ी-बड़ी ऑखोंवाले श्रीकृष्ण की महानता को भूलकर किसी अन्य देवता का ध्यान करने वाला मूढ़ ही होता है. कोई व्यक्ति अगर प्यासा हो और उसके सामने पवित्र गंगा बह रही हो तो भी वह व्यक्ति उसके जल से प्यास न बुझाकर कुआं खुदवाने लगे तो उसे दुर्मति अर्थात् मूर्ख ही कहा जाएगा. जिस भंवरे ने कमल-पुष्प के मकरंद को चख लिया हो वह करीले के कड़वे फल को क्यों खायेगा ? अर्थात् नहीं खायेगा. 'सूरदास' कहते हैं कि प्रभु रुपी कामधेनु को छोड़कर बकरी का दूध कौन दुहायेगा ? अर्थात् कोई नहीं दुहायेगा.

स्पष्ट ही इसमें श्रीकृष्ण और अन्य देवों की तुलना की गयी है और श्रीकृष्ण-भक्ति को ही श्रेष्ठ बताया गया है.

2) इस पद में सूरदास स्वयं को सारे पापियों में सर्वश्रेष्ठ बतला रहे हैं. अन्य पापी तो थोड़े समय के पापी रहते हैं अर्थात् उनसे सामयिक अपराध हो जाते हैं किंतु कवि कहते हैं कि वे तो जन्म से ही पापी हैं अर्थात् उनका समूचा जीवन ही पापमय है. प्रभु को संबोधित करते हुए वे कहते हैं कि आपने तो मुझसे भी बड़े-बड़े पापियों का उद्धार किया है. भक्त सदना कसाई था, अजामिल तो सिवाय मरते समय आपका नाम लेने के पुण्य के, जीवन भर पाप ही करता रहा था. गणिका तो वेश्या थी और पूतना तो शिशु-रुपी श्रीकृष्ण को मारने आयी थी जबकि प्रभु ने इन सबका उद्धार किया. कवि उपालंभ अथवा शिकायत के स्वर में कहता है कि सिर्फ मुझे छोड़कर आपने सभी का उद्धार किया. उन सभी के प्रति मेरे मन में ईर्ष्या का भाव है जो शूल की तरह मेरे चित्त को कष्ट दे रहा है. यह कष्ट कैसे मिटेगा ? फिर स्वयं को अन्य सभी पापियों से बढ़कर बतलाने के प्रयास में सूर कहते हैं कि पाप करने में मेरी तरह कोई समर्थ नहीं है. मैं इसे धरती पर लकीर पर लकीर खींचकर कह सकता हूं अर्थात् मैं यह दावा करता हूं कि मेरे पापों को देखकर तो सारे पापी लज्जित हो जाते हैं क्योंकि वे मेरी बराबरी नहीं कर सकते. मेरे लिए तो आप ही उपयुक्त हैं, अर्थात् आप ही मेरा उद्धार कर सकते हैं.
विनय के ऐसे पदों में आत्मालोचन, दीनता आदि भावों के चित्रण के सहारे प्रभु की महानता को स्थापित किया गया है. एक ओर कोई भी सामान्य जन यह जानकर आश्वस्ति प्राप्त करता है कि प्रभु ने बड़े-बड़े पापियों का उद्धार किया है और दूसरी ओर भक्त कवि अपनी दीन भावना को भी भली भांति व्यक्त कर लेता है.

3) प्रस्तुत पद में परम ब्रह्म के अज्ञेय रुप तक सामान्य व्यक्ति की पहुँच नहीं होती तो वह ज्ञान अर्थात् सगुण की उपासना करता है. इस भाव को व्यक्त करने के उपक्रम में कवि कहता है कि अज्ञात के विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता. जिस तरह कोई गूंगा व्यक्ति मीठा फल खा ले तो मिठास को मन ही मन अनुभव करता है, उसी तरह अज्ञात परम ब्रह्म के ज्ञान का आनंद सदा ही अपार संतोष देता रहता है किंतु निराकार निर्गुण होने के कारण मन उस तक जा ही नहीं सकता और वाणी उसका वर्णन नहीं कर सकती क्योंकि वह अगोचर अर्थात् अदृश्य है. जो ऐसे ब्रह्म को पा लेता है, वही जानता है कि

उसने क्या पाया ? न तो उस ब्रह्म का कोई रूप है, न उसका कोई आकार है, न उसकी कोई विशेषता ऐसी है जो व्यक्त की जा सके, न उसे किसी श्रेणी विशेष में रखा जा सकता है और न उसे प्राप्त करने की कोई युक्ति या कोई उपाय है. कोई तो सहारा होना चाहिए वरना बिना किसी सहारे के (रूप-गुण के) कोई व्यक्ति कैसे किस ओर जा सकता है ! सूरदास कहते हैं कि अत्यधिक आत्म विमर्श करके भी मैंने यही जाना है कि किसी भी तरीके से न तो उसे जाना जा सकता है और न उसे पाया जा सकता है इसलिए मैं सगुण ब्रह्म के विषय में गा रहा हूँ. स्पष्ट है कि समूचे पद में निर्गुण के जिन लक्षणों को अवरोध माना गया, सगुण में वे सारे अवरोध मिट जाते हैं.

इस प्रकार के पद संश्लिष्ट होते हैं. इनमें कई स्तरों पर बात होती है और उसके अर्थ भी संदर्भ के आलोक में ही खुल पाते हैं. निर्गुण बनाम सगुण की ज्ञानमयी अभिव्यक्ति तो वैष्णव दर्शन में बहुत हुई लेकिन इतनी भावमयी अभिव्यक्ति तो सिर्फ कवि के बस की बात है और वह भी सिर्फ़ सूर के बस की है. कथ्य और रूप का ऐसा संगम कि पाठक का हृदय भी आंदोलित हो जाए और मस्तिष्क भी विचार करने की ओर प्रेरित हो. सूर के विनयपरक पद इसी बात को प्रमाणित करते हैं कि भक्त की विनय भी इतनी भावमयी होती है कि इसे श्रृंगार और वात्सल्य से कम करके नहीं देखा जा सकता.

4) इस पद में प्रभु या आराध्य से अनुरोध किया गया है कि दोषों पर ध्यान न दें. कवि प्रभु को स्मरण दिलाते हुए कहते हैं कि आपका नाम समदर्शी है अर्थात् आप सभी को समान दृष्टि से देखते हैं. इसलिए दोषों पर ध्यान न देते हुए हमारा उद्धार कर दें. सूरदास अपने कथन के समर्थन में कई उदाहरण देते हैं. वे कहते हैं कि एक लोहा पूजा में रखा जाता है और एक लोहा कसाई के घर में रहता है. लोक-दृष्टि उन्हें समान नहीं देखती. उसके लिए एक लोहा पवित्र होता है और दूसरा अपवित्र, किंतु पारस किसी तरह की कोई दुविधा नहीं जानता, वह तो लोहे को कंचन कर देता है. सूरदास दूसरा उदाहरण देते हुए कहते हैं कि एक जल की धारा नदी कहलाती है और दूसरी ऐसी जल की धारा को, जिसमें मैला पानी भरा हो, नाला कहा जाता है. जब वे मिलकर एक रंग हो जाते हैं, तब उसे गंगा नाम से पुकारा जाता है. दूसरे शब्दों में, पारस की तरह ही, गंगा को भी कोई दुविधा नहीं होती. वह स्वच्छ जल की धार और मैले जल में कोई भेद नहीं करती. इन दो उदाहरणों के आधार पर निष्कर्ष निकालते हुए सूरदास प्रभु को संबोधित करते हुए कहते हैं कि देह को माया कहा जाता है और जीव को ब्रह्म तथा ब्रह्म-माया का यह मेल ही सारे दोषों का स्रोत है. आप या तो इन दोषों को अर्थात् ब्रह्म और माया के एकात्म होने के भ्रम को निरधार यानी समाप्त कीजिए. यदि ऐसा नहीं करेंगे तो पापियों का उद्धार करने का आपका प्रण भंग हो जायेगा.

प्रस्तुत पद इस तथ्य का साक्षी है कि विनती के पद में भी व्यंजना कितना प्रभाव उत्पन्न कर सकती है. व्यक्ति भाव में कितनी सहजता से उपालंभ और उद्बोधन को संबोधन-शैली में पिरोकर अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाया जा सकता है, यह पद इसका उदाहरण है.

5) भक्त को अभक्तों का साथ नहीं करना चाहिए. सत्संग का विलोम होता है, असत्-जनों का संग किंतु संसार में मन की सहज प्रवृत्ति असत् जनों की ओर ही होती है इसलिए इस पद में सूरदास जी का कथन है कि ऐसे लोगों को साथ छोड देना चाहिए, जो हरि अर्थात् ईश्वर से विमुख रहते हो. वे मन को संबोधित करते हुए कहते हैं कि प्रभु से विमुख रहने वालों का साथ छोड़ दो. उनके साथ से मति भ्रष्ट हो जाती है और भगवान के भजन में रुकावट पड़ती है. कई बार कुछ भक्त इस भ्रम में दुर्जनों का साथ देते हैं कि वे उन्हें सुधार देंगे. सूरदास कहते हैं कि विषैले सॉप को चाहे जितना दूध पिलाया जाए, वह सांप अपने विष का त्याग नहीं करता. इसी प्रकार कौए को कपूर खिलाने से वह मांसाहार का त्याग नहीं कर देता और गधे पर अगर चंदन केसर से युक्त लेप लगाया जाए और बंदर को गहने पहना दिये

BRAOU

जाए तो भी उनके स्वभाव में कोई अंतर नहीं पड़ेगा. इसी प्रकार हाथी को नदी में नहलाया जाए तो वह स्वयं पर धूल डालने की आदत नहीं छोड़ता. दुबारा वही ढंग अपनाता है. चाहे जैसा धनुर्धारी हो, अगर वह पत्थरपर बाण छोड़ेगा तो वे उसे बिना बेधे ही गिरते चले जायेंगे. तरकश खाली हो जायेगा. सूरदास कहते हैं कि काले कम्बल पर कोई दूसरा रंग नहीं चढ़ता. उसी प्रकार हरि-विमुख अर्थात् दुर्जन का स्वभाव भी नहीं बदल सकता.

कुल मिलाकर भक्त को दुर्जनों के संग से बचना चाहिए.

<u>वात्सल्य परक पद</u>

1) किसी भी व्यक्ति के भाव जगत की पहचान अभिलाषाओं से सहज ही हो सकती है. प्रस्तुत पद में यशोदा अपने लाल कृष्ण को देखते हुए अभिलाषा करती है कि कब यह घुटनों के बल रेंगेगा, कब धरती पर पांव टिकाते हुए एक दो कदम चलेगा, कब मैं इसके दूध के दो दांत देखूंगी, कब यह अपने मुख से तोतले वचन बोलेगा, कब यह नंद को बाबा कहेगा, कब मुझे मां कहकर पुकारेगा, कब मेरा आंचल पकड़ कर अपनी किसी मांग के लिए झगडेगा, कब यह थोड़ा-थोड़ा कुछ खाएगा, कब अपने हाथ से कौर उठाकर अपने मुंह में भरेगा, कब मुझसे हंसकर बात करेगा और कब उसकी इस तरह की छवियों से मेरे दुख दूर होंगे ? ऐसा सोचते हुए यशोदा कृष्ण को आंगन में छोड़कर घर का कोई ज़रूरी काम-काज करने के लिए भीतर गयी तभी आकाश में एक भयंकर आंधी उठी और ब्रज में जहां-जहां भी जो व्यक्ति था, वह वहीं अत्यधिक भयभीत हो गया.

इस पद के अंत में कंस द्वारा भेजे गए राक्षस के आने का उल्लेख आंधी के माध्यम से किया गया है.

2) सूरदास ने इस पद में कृष्ण के घुटनों के बल चलने और किलकारियां मारने का चित्रण किया है. कभी कृष्ण सोने और मणियों से सजे हुए नंद के आंगन में अपना प्रतिबिंब पकड़ने की इच्छा कर रहे हैं. कभी अपनी परछायी को अपने हाथों से पकड़ना चाहते हैं. जब वे किलकारी मारकर हंसते हैं, तो उनके अगले दो दांत बहुत ही सुंदर लगते हैं. बार-बार वे अपने ही छवि को देखते हैं, स्वर्ण खचित भूमि पर बालकृष्ण के हाथों और पगों की परछायी ऐसी प्रतीत होती है कि सूरदास को एक उपमा देने की इच्छा हो आती है. उन्हें ऐसा लगता है जैसे धरती कृष्ण के प्रत्येक कदम पर उनके लिए कमल का आसन बन जाती है. कृष्ण की ऐसी बाल लीला को देखकर सुखी होती हुई यशोदा बार-बार नंद को भी देखने के लिए बुला रही हैं. फिर उनका वात्सल्य इतना अधिक उमड़ पड़ता है कि वे बालकृष्ण को अपने आंचल से ढक कर दूध पिलाना शुरु कर देती है.

3) वात्सल्य भाव का परिपक्व होकर वात्सल्य-रस बनना कोई अदृश्य एवं अमूर्त प्रक्रिया नहीं है माता और उसकी संतान के बीच का परस्पर संबंध ही उसे संभव करता है. चित्रण करनेवाले रचनाकार को दोनों के मन की आंतरिक स्थिति और गति की जानकारी होनी चाहिए. इस प्रसंग में यह पद सूर की काव्य-कला की उत्कृष्ठता का एक सटीक उदाहरण है. प्रस्तुत पद में बालकृष्ण माता यशोदा से बड़े भाई बलराम की शिकायत कर रहे हैं. हे मां, मुझे बलराम ने बहुत सताया है और इससे मुझे बहुत क्रोध आ रहा है. ये मुझसे कहते हैं कि तुमने मुझे जन्म नहीं दिया बल्कि तुझे तो कीमत देकर खरीदा गया है. मैं इसी क्रोध के कारण खेलने नहीं जा रहा हूं. वे बार-बार पूछते हैं कि बताओ कौन तुम्हारी माता है और कौन तुम्हारे पिता हैं ? संतान रंग-रूप में माता-पिता पर जाते हैं लेकिन नंद भी गोरे हैं और यशोदा भी फिर तुम्हारा रंग काला क्यों है ? मेरी हंसी उड़ाने में वे अकेले नहीं हैं, दूसरे सभी ग्वाल बालक भी उनका साथ देते हैं और सबके सब हंसते और मुस्कुराते हैं. तुम तो बस मुझे ही सजा देना और पीटना

जानती हो किंतु भैया बलराम पर कभी क्रोध नहीं करती. बालकृष्ण की गुस्से में कही गयी ये बातें सुनकर यशोदा मन ही मन मुग्ध और प्रसन्न होती रहती है. फिर कहती है कि हे कन्हैया ! बलराम बहुत ही शरारती है और जन्म से ही बहुत चालाक और धोखेबाज़ है. मैं गायों की सौगंध खाकर कहती हूं कि मैं ही तुम्हारी माता हूं और तुम ही मेरे पुत्र हो.

4) बालकृष्ण की विविध लीलाओं में माखन-चोरी का विशेष महत्व है. कृष्ण माखन चुराते हुए पकड़ लिए गये हैं और जब उन्हें माता यशोदा के पास ले जाया गया तो उन्होंने सफाई देते हुए कहा कि मां, मैंने माखन नहीं खाया. अगर मेरे मुंह पर माखन लगा हुआ दिख रहा है तो यह मेरा दोष नहीं. सभी ग्वाल बालों ने मिलकर ज़बर्दस्ती लगा दिया है. भरोसा नहीं तो खुद ही देखलो कि माखन का बरतन कितने ऊंचे छीके पर लटकाया गया है. मैं अपने इन छोटे-छोटे हाथों से कैसे उन तक पहुंच सकता हूं ? यह कहते-कहते कृष्ण ने बड़ी ही चालाकी से अपना मुंह पोछा और माखन का दोना पीठ के पीछे छिपा लिया. कृष्ण की यह बालोचित चतुराई देखकर माता यशोदा ने मुस्कुराते हुए कृष्ण को अपने गले से लगा लिया. सूरदास कहते हैं कि बालकृष्ण की यह लीला आनंद देनेवाली और मन को मोह लेने वाली है. इस लीला का आनंद यशोदा को मिल रहा है, यह उनकी भक्ति का प्रताप है. यशोदा का यह सुख इतना अद्वितीय है कि शिव और ब्रह्मा भी उसे नहीं पा सकते.

5) श्रीकृष्ण मथुरा जा चुके थे और उद्धव गोपियों को समझाने गोकुल वृंदावन आते हैं. जब वे लौटने को उद्यत होते हैं, तो यशोदा उनके द्वारा देवकी को संदेश भेजती है. वे कहती हैं कि मेरा यह संदेश देवकी को जाकर कहना. मैं तो तुम्हारे पुत्र की धाय रही. सदा कर्तव्यपूर्ति के नाते लाड़-प्यार का नाटक करती रही. हे देवकी, यद्यपि तुम उनकी आदतें जानती हो फिर भी मुझे कहना पड रहा है. सुबह होते ही मेरे लाड़ले को माखन रोटी खाना अच्छा लगता है. तेल और नहाने का उबटन देखते ही वह भागने लगता है. वह जो-जो मांगता है उसे मैं देती हूं और इस तरह कृष्ण क्रमिक रूप से किश्तों में नहाते हैं. सूरदास कहते हैं कि यशोदा ने उद्धव से कहा कि रात-दिन मेरे हृदय में यह चिंता बढ़ती रहती है. मोहन मेरा बहुत ही प्यारा बेटा है. वह बहुत संकोची है. अर्थात् उसका विशेष ख्याल रखना.

<u>श्रृंगारपरक पद</u>

1) श्रीकृष्ण की राधा से प्रथम भेंट के समय वे पूछते हैं कि हे गोरी तुम कौन हो ? कहां रहती हो ? किसकी पुत्री हो ? हमने तुम्हें ब्रज की गलियों में कभी नहीं देखा. तो राधा उत्तर देती है कि हम ब्रज की गलियों में क्यों आयेंगे ? हम अपने ही दरवाज़े पर खेलते हैं क्योंकि हमने सुना है कि यहां कोई नंद का शरारती बेटा है जो माखन और दही चुराते हुए फिरा करता है. उत्तर में कृष्ण कहते हैं कि अगर तुम हमारे संग खेलो तो हम तुम्हारा क्या चुरा लेंगे ? सूरदास कहते हैं कि कृष्ण रसिकों में सर्वश्रेष्ठ हैं और राधा भोली-भाली बालिका है जो उनकी बातों से भ्रमित हो गयी.

2) राधा और माधव की भेंट हुई. जैसे भृंग नामक कीड़ा दूसरे कीड़े को भी अपने जैसा ही बना लेता है, वैसे ही राधा माधव बन गई, माधव राधा बन गये. माधव राधा के रंग में रंग गए. राधा माधव के रंग में रंग गई. उनकी प्रीति के नैरन्तर्य को जीभ गा नहीं सकती. ऐसे अवर्णनीय प्रेम से भरी भेंट के अनंतर कृष्ण ने राधा से कहा कि अब हम दोनों में कोई अंतर नहीं रहा. यह कह के राधा को घर भेज दिया. सूरदास कहते हैं कि राधा माधव का यह प्रेम ब्रज में नित्य विहार के माध्यम से होता ही रहता है, दिखता ही रहता है.

3) जब उद्धव गोपियों को निर्गुण ब्रह्म का उपदेश देते हैं, तो गोपियां उद्धव को ज्ञान योग रूपी सस्ता माल बेचने वाला व्यापारी कहकर उस पर व्यंग करती हैं. उद्धव की उपेक्षा करते हुए वे आपस में

BRACU

बात करने का अभिनय करती हैं और कहती हैं कि हम अहीरों की बस्ती में एक बड़ा व्यापारी आया है. ज्ञान और योग की बड़ी-बड़ी गठरियां उसके पास हैं, जो उसने ब्रज में आकर उतारी हैं. वह सस्ते माल को महंगी कीमत में बेचना चाहता है जैसे भूसे को देकर सोना मांग रहा हो ? लगता है कि यह पहले से ही धोकेबाज़ है तभी तो ज्ञान की गठरी का बोझा लेकर घूम रहा है. यहां ऐसे व्यापारी की बातों पर विश्वास करने वाला कौन है ? अपने मीठे दूध को छोड़कर खारे कुएं का पानी कौन पीएगा ? सूरदास कहते हैं कि यहां से जल्द से जल्द प्रस्थान कर जाओ. हां, अगर तुम्हारे पास यही माल है तो जाकर कृष्ण को दिखाना. वहां मुंह मांगी कीमत मिल जाएगी. स्पष्ट ही गोपियों को निर्गुण ब्रह्म संबंधी उपदेशों में कोई रुचि नहीं है.

4) कृष्ण के वियोग में गोपियों को सुख देने वाली वस्तुएं भी दुख देने वाली प्रतीत होती हैं जैसे - सुख दायक कुंज भी अब शत्रु जैसा दिखायी देने लगा है. कृष्ण के साथ जो लता शीतल लगती थी अब वह लपट की तरह लग रही है. यमुना का बहना बेकार लग रहा है. पक्षियों का चह चहाना भी किसी अर्थ की प्रतीति नहीं कराता तथा कमलों का खिलना और भंवरों की गुंजार भी नितांत व्यर्थ लगते हैं. हवा, पानी, कपूर, चंद्रमा आदि शीतल पदार्थ भी सूरज की तेज किरणों के समान जलाने वाले लग रहे हैं. गोपियां उद्धव से कहती हैं कि मथुरा जाकर कृष्ण से इतना जरूर कह देना कि कामदेव ने हमारे सारे शरीर को अपने बाणों से लुंज-पुंज बना दिया है. सूरदास कहते हैं कि गोपियों ने उद्धव से कहा कि कृष्ण से जाकर कहना कि तुम्हारी प्रतीक्षा करते-करते या तुम्हारी राह देखते-देखते हमारी आंखें गुंजा फल के समान लाल हो गयी हैं.

5) उद्धव के ज्ञानोपदेश की उपेक्षा करके गोपियां कहती हैं कि अब हमारा मन बदल नहीं सकता. इस पर पहले से ही श्याम रंग चढ़ा हुआ है और यह धोने से मिट नहीं सकता. छल कपट के यह वचन जो ज्ञानोपदेश के रूप में कहे जा रहे हैं, इन्हें छोड़कर कृष्ण हमसे पहले जैसा ही व्यवहार करें. यह योग तो हमें ऐसा लगता है जैसे तुम्हें अर्थात् भंवरे को चंपे का फूल लगता है (भंवरा चंपे के फूल से आकर्षित नहीं होता). कृष्ण के प्रति प्रेम अब हमारा भाग्य बन चुका है, भाग्य को बदला नहीं जा सकता. गोपियां कहती हैं कि हे उद्धव ! ज्ञानोपदेश के बजाय कृष्ण को लाकर उनका मुख दर्शन करा दो ताकि हम जी सकें.

BRAOU

5.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

विनय परक पद

पांच विनय-परक पदों के भावार्थ को जान लेने के पश्चात् समीक्षा के मार्ग के कई अवरोध दूर हो जाते हैं. शब्द, उनके अर्थ और उन प्रेरणास्वरूप भावों को जान लेने के पश्चात् एक पूरा संदर्भ उभरने लगता है. यह पांचों 'पद' गेय होने के कारण ही 'पद' कहे गये हैं. भारत में काव्य को दो भागों में बांट कर देखा-दिखाया गया है - श्रव्य काव्य और दृश्य काव्य. श्रव्य अर्थात् सुनने के लिए तथा दृश्य अर्थात् देखने के लिए. 'पद' श्रव्य-काव्य के अंतर्गत आता है. संगीत की श्रव्यता सर्वोत्कृष्ट कोटि की होती है. जब कवि संगीत का आधार ग्रहण करता है तो निश्चित ही श्रव्यता को अधिकाधिक कारगर बनाता है. श्रोता को भावार्थ से परे जाने की मदद संगीत से मिलती है. भारत आरंभ से ही वाक् के महत्व से परिचित था और वाग्देवी को वीणावादिनी रूप में देखकर वाक् के सार को पहचाना गया था. गायक

और कवि जब एक हो जाए तो पाठक या श्रोता शब्दार्थ से जुड़ जाता है और भावार्थ को आसानी से हृदयंगम करता है.

संगीत समझने का मोहताज़ नहीं होता. वह महसूस किया जाता है. विनय परकता इन पदों में काव्य गुणों के साथ-साथ संगीत से भी जुड़ी है. यदि सूरदास के लीला पदों के साथ इन विनयपरक पदों को रखकर देखें तो विस्मित हो जाना पड़ता है कि लीला तो स्वयं में मधुर होती ही है. सूरदास ने किस प्रकार 'विनय' को भी काव्य और गेयता से जोड़कर मधुर बना दिया है. निश्चित् ही ब्रज-भाषा की सहज मिठास भी सूर-काव्य के साथ है. भाषा ज्यों-ज्यों विकसित होती है, त्यों-त्यों संगीत के निकट पहुंचती है, फिर सूरदास जी जैसे महान कवियों में यह होता है कि प्रत्येक शब्द और अक्षर संगीत की उदात्त ऊंचाई से एकात्म हो जाता है. ये पांच पद इसके प्रमाण हैं. काव्य और संगीत यहां परस्पर शोभाकारक हैं तथा श्रोता को प्रभाव-रूपी सौंदर्य में लीन करने में सक्षम हैं. यह पद सूरदास की विनय-परकता को इतना मधुर बना सकते हैं कि उनकी महानता को किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं रह जाती.

प्रथम पद में भक्त सूरदास अपने भगवान की भक्ति में प्राप्त सुखानुभूति की अद्वितीयता को व्यक्त करते हैं. जहाज, पक्षी, गंगा, कूप, मधुकर, अंबुज-रस, करील-फल, कामधेनु, छेरी आदि शब्दों का प्रयोग उस अनन्यता को व्यक्त करने के लिए है जो भक्त सूरदास की भक्ति की पहचान है. 'अन्यत्र' सुख प्राप्त करना - यह विवशता है या भक्त सूरदास का चुनाव है - इसमें अंतर करना तक अनावश्यक है. भक्त की भक्ति ही उसके लिए चरम सुख है.

भक्त और भगवान के संबंध - उतने ही विविध हो सकते हैं, जितना कि इस जगत में संबंध-संसार नज़र आता है. द्वितीय पद में भी आखिरकार भक्ति-भाव की अनन्यता ही प्रकट हुई है लेकिन कथ्य का रूप भगवान के लिए चुनौती का है, आत्मालोचन की व्यंजना कुछ ऐसी है कि जैसे भक्त कह रहा हो कि मैं तो हूं ही ऐसा अब आपके प्रण की परीक्षा है. आत्मालोचन ही इस पद का सारांश है और दीनता अर्थात् निरहंकारिता ही भक्ति का लक्षण.

भावना ही तीव्र और गहन रूप में अनुभूति कहलाती है और उसको भाषा में ढालना असंभव होता है. ऐसा नितांत लौकिक भावों के साथ भी होता है. भक्ति तो श्रद्धा और प्रेम के लोकोत्तर रूपों का मिलाप है अथवा मिलने से वे लोकोत्तर की भूमि पर पहुंच जाते हैं. सूरदास इस पद में इसी अनुभूति के विषय में लिखते हुए अगम-अगोचर के अपलंब न बन पाने के संकेत करते हैं और स्वयं की सगुण भक्ति का स्पष्टीकरण देते हैं. तृतीय पद में माना गया है कि निर्गुण भक्ति असंभव है क्योंकि भाव को अवलंब याने सहारा चाहिए. भक्त की भावना तो सगुण ही हो सकती है. सूरदास के लिए तथा किसी अन्य भक्त के लिए भी. आत्मानुभूति के रूप में किसी सिद्धांत का निरूपण कितना प्रभावशाली हो सकता है, इस पद से ज्ञात होता है. सगुण भक्ति का आत्मानुभूति के रूप में प्रतिपादन करना इस पद की विशेषता भी है और सारांश भी.

पद श्रव्य होता है और संबोधन श्रव्य का सर्वाधिक तात्कालिक और प्रभावशाली लेकिन नितांत कामकाजी रूप. चतुर्थ पद के सारांश में एक ओर वल्लभाचार्य का सिद्धांत है, जहां देह को माया और जीव को ब्रह्म कहते हुए उस भ्रम को जड़ से उखाड़ देने का आग्रह किया गया है जो दोनों को एक मान लेने का है. एक दार्शनिक सिद्धांत - वल्लभाचार्य का पुष्टि-मार्ग इस पद में भक्त की आत्मानुभूति के साथ मिल गया है. निश्चित है कि वल्लभाचार्य जी के शिष्य बन चुकने के बाद भी सूर ने विनय के पद

BRAOU

लिखे. यह पद उन्हीं में से एक है. पद की विशेषता प्रभु को उनके पतितों के उद्धार संबंधी प्रण का स्मरण दिलाने में निहित है.

अहंकार के कई रूप होते हैं. वह आत्म-छल बनकर भी प्रस्तुत होता है. भक्त जब इस अहंकार से ग्रस्त होता है तो वह दुर्जनों को सज्जन बनाने का प्रयत्न करता है. इस प्रयत्न में वह उनका साथ देने लगता है. परिणामस्वरूप उसके भक्ति-भाव में विकृति आती है. अहंकार मन का अवगुण है. पंचम पद में इसीलिए मन को प्रबोध दिया गया है. निश्चित ही यह पद एकसाथ शिक्षापरक भी है और विनयपरक भी. दुर्जन का स्वभाव बदला नहीं जा सकता.

भक्ति भाव का आरंभ् विनय-भाव से ही होता है. भक्ति का अर्थ 'सेवा' है. सेवा करने वाला सेवक कहलाता है. सेवक का सहज भाव विनय का होता है. प्रस्तुत पाठ में सबसे पहले सूरदास के विनय के पद लिए गए हैं. इससे भक्त सूरदास की भक्ति भावना को समझने में सहायता मिलेगी. आत्मालोचन का भाव भी भक्त की पहचान होता है. विनय के पदों से इस आत्मालोचन को भी समझा जा सकेगा. भगवान के प्रति भक्त के भाव को भी इन पदों की व्याख्या से समझा जा सकेगा.

<u>वात्सल्य परक पद</u>

विनय परक पदों के बाद वात्सल्य परक पदों को लिया गया है. प्राणि जगत में माता और संतान का संबंध भावों की दृष्टि से सर्वाधिक प्रगाढ़ होता भी है और माना भी जाता है. यदि भक्ति भावना मूलतः संबद्ध होने की अनुभूति है तो ममत्व अथवा वात्सल्य संबद्धता की चरम स्थिति ही मानी जाएगी. सूरदास के वात्सल्यपरक पद उनके भाव जगत की इसी चरमावस्था को प्रकट करते हैं जहां वे अपनी विषय वस्तु से इस सीमा तक एक हो जाते हैं कि न तो घुटने चलते कृष्ण से उन्हें अलग किया जा सकता है और न पुत्र की हानि से आशंकित यशोदा माता से. यदि सूर काव्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंश उनका बाल लीला वर्णन माना जाता है, जो प्रकारांतर से वात्सल्य परकता की ही अभिव्यक्ति है तो निष्कर्ष के बतौर कहा जा सकता है कि सूर की भक्ति अपने सख्य भाव में भी प्रगाढ़ता की चरम ऊंचाइयों को सहज ही स्पर्श कर लेती है.

BRAOU

प्रस्तुत पद में माता की अभिलाषाओं के माध्यम से उसके वात्सल्य का चित्रण किया गया है. माता की अभिलाषाओं में पुत्र के भविष्य की मंगल कामनाएं तो रहती ही हैं, साथ में कई काल्पनिक दृश्य भी रहते हैं. अभी तो बालकृष्ण इतने छोटे हैं कि वे घुटनों रेंग तक नहीं सकते. यशोदा का मातृ हृदय कृष्ण को चलते हुए, बोलते हुए, हठ करते हुए और आंचल पकड़ते हुए देखना चाहता है. इस चित्रण के साथ ही अंत में कंस के भेजे हुए राक्षस के आने का वर्णन है, जो आंधी बना हुआ है.

पद में कोमलता और कठोरता का मार्मिक संतुलन है. ब्रज भाषा का माधुर्य सूर के पदों के प्रत्येक शब्द से साकार हुआ है.

बाल लीला का सौंदर्य देखनेवाले के वात्सल्य-बोध पर ही निर्भर है. यशोदा-कृष्ण का चलना, अपनी परछाई को पकड़ना और मुस्कुराना देख रही है. इस पद की विशेषता यह है कि सूर एक उपमा देने का लोभ संवरण नहीं कर पाते और पद के बीच में हस्तक्षेप करते हैं. सूर का विषय-वस्तु से इतना तादात्म्य हो जाता है कि पाठक अथवा श्रोता को यह कवि-हस्तक्षेप भी आनंद में निमग्न कर जाता है. बाल लीला को देखते-देखते यशोदा का दूध पिलाने लगना वात्सल्य की पराकाष्ठा है.

शिकायतें, खीझ, क्रोध आदि बाल लीला के स्थायी आकर्षण हैं. सूरदास ने तृतीय पद में बहुत ही सुंदरता से सत्य-असत्य की व्यावहारिकता को वात्सल्य की सापेक्षता में निरर्थक सिद्ध किया है कि समझदार पाठक कवि की शक्ति को प्रणाम करने के अतिरिक्त और कर ही क्या सकता है. यह सर्वविदित है कि श्रीकृष्ण-देवकी के पुत्र थे किंतु वात्सल्य में डूबी यशोदा गायों की सौगंध खा कर कहती है कि मैं ही तेरी मां हूं.

पद का सौंदर्य और सूर का काव्य कौशल इसमें है कि उस क्षण श्रीकृष्ण यशोदा के ही पुत्र हैं - यही सच प्रतीत होता है. संगीत की मर्यादा के भीतर रचना में संवाद तक पिरो देना सूर की उत्कृष्ठता का प्रमाण है.

बाल-लीला वात्सल्य भाव को उद्दीप्त करती है लेकिन यहां यह भी सच है कि श्रीकृष्ण और यशोदा के माध्यम से गृहस्थ जीवन के मार्मिक चित्र सूरदास द्वारा उकेरे गये हैं. बच्चों से ही गृहस्थ जीवन सार्थकता प्राप्त करता है. श्रीकृष्ण की उपस्थिति यशोदा नंद के गृहस्थ जीवन को भी सार्थक बना देती है. माखन नहीं खाने की सफ़ाई और सहज ही पकड़ में आ जाने वाली चातुरी बाल्य जीवन को अत्यधिक आकर्षक बनाकर प्रस्तुत करती है.

श्रीकृष्ण की प्रत्युत्पन्न मति चतुर्थ पद में अतिरिक्त आकर्षण ला देती है. यह सब गतिशील चित्रण के साथ है, यह कवि की अन्य विशेषता है.

पंचम पद वात्सल्य की दृष्टि से अनूठा है. यशोदा देवकी को संदेश भेज रही है और प्रत्येक कथन वात्सल्य-रस में डूबा हुआ है. मातृ-हृदय अपने बालक के लिए कितना चिंतित हो सकता है. भले ही देवकी श्रीकृष्ण की माता थी किंतु मातृ-हृदय जैविक मातृत्व का मोहताज नहीं होता. सूर की काव्यकला और वात्सल्य के चित्रण के लिए यह पद सर्वथा उपयुक्त है.

<u>श्रृंगार परक पद</u>

अंतिम पांच पद श्रृंगार परक हैं. भारतीय यथार्थ बोध में 'रति' नामक स्थायी भाव का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है. कालांतर में उसे श्रृंगार रस के साथ संबद्ध कर दिया गया. फिर भी कई आलोचक वात्सल्य रति, दास्य रति और शब्दों का प्रयोग करते हैं. रति भाव जुड़ाव का सूचक है और जुड़ाव की सर्वाधिक अभिव्यक्ति निश्चित ही नर-नारी संबंध के प्रणय क्षेत्र में ही प्राप्त होती है और इसलिए श्रृंगार को अगर रसराज कहा गया तो यह भारतीय बोध का जीवन-स्वीकार उद्घोष था. पारंपरिक रूप में श्रृंगार के दो भेद किए गए हैं - संयोग और वियोग. सूरदास ने राधा और गोपियों को लेकर इन दोनों का ही चित्रण किया है और भले ही सूर को वात्सल्य का अप्रतिम कवि माना जाता हो, किंतु श्रृंगार-विशेषत: वियोग श्रृंगार में उनका काव्य अनूठा बन पड़ा है. उनका भ्रमर गीत इसका उदाहरण है. वस्तुत: सूरदास को ही भक्ति और श्रृंगार के पारस्परिक जुड़ाव का प्रवर्तक कवि माना जा सकता है. कम से कम हिंदी में, भले ही विद्यापति या महाराष्ट्र के नामदेव आदि पहले हुए हों. किंतु श्रृंगार के स्थायी भाव के रूप में रति किस प्रकार से परिपक्व होकर भक्ति रस को निष्पन्न करती है, इसका उदाहरण सूर में बहुलता से मिलता है.

भारतीय मिथक शास्त्र में श्रीकृष्ण अपनी वाक् चातुर्य के लिए प्रसिद्ध हैं. राधा कृष्ण की सारी लीलाएं ब्रज क्षेत्र की हैं जहां दोनों ही बाल्यावस्था में हैं. एक ओर बाल मनोविज्ञान दूसरी ओर श्रृंगार परक वाग्चातुरी. इस विरोधाभास को केवल भक्ति का विराट परिदृश्य ही अंपने में समाहित करके दिव्यता

BRAOU

प्रदान कर सकता है. प्रथम पद इसका एक दृष्टांत है. किसी भी शरारती बालक और किसी भी भोली बालिका के साथ जब श्रीकृष्ण और राधा नाम जुड़ जाए तो वे सहज ही आराध्य पद प्राप्त कर लेंगे और फिर शरारत, वाक्चातुरी, भोलापन, छेड-छाड़ आदि सारी क्रीड़ाएं भक्ति भाव के आलंबन हो जाएंगे. सूर की काव्य-कला का यह चमत्कार है या भक्ति भावना की सहज निष्पत्ति है, यह निर्णय करना कठिन है. ऐसे पदों को देख कर सहज ही मैथलीशरण गुप्त के एक कथन को तनिक परिवर्तित करके कहने की प्रेरणा होती है -

"भक्ति तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है ।
कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है ।"

कृष्ण राधा से पहली भेंट में पूछते हैं कि हे गोरी तुम कौन हो ? संबोधन उनकी आकांक्षा को स्पष्ट कर देता है. इसके बाद के सवाल जवाब भोली-भाली राधिका की चतुर बनने की कोशिश तथा अंत में श्रीकृष्ण द्वारा अपनी वाक् चातुरी से भ्रमित कर देना, यही इस पद का सारांश है जो श्रीकृष्ण के वाक्पटु व्यक्तित्व को प्रस्तुत करने में सक्षम है.

भक्ति प्रेम की ही पराकाष्टा है और इसमें अनन्यता तथा एकात्मता का महत्वपूर्ण स्थान है. नायक, नायिका व्यक्ति तो रह ही नहीं सकते. इसी तथ्य को दिव्यत्व का स्पर्श कराके सूर ने माधव का राधा हो जाना तथा राधा का माधव हो जाना - यह बहुत ही आकर्षक ढंग से कहा है. कभी संस्कृत के श्रृंगारिक काव्य में राम सीता को लेकर यह उक्ति कही गयी थी कि सीता राम का ध्यान करते-करते अगर भृंगी कीट न्याय से राम बन गयीं तो राम का क्या होगा ? तो कहा गया राम सीता का ध्यान करते-करते तब तक सीता बन जाएंगे और जोड़ी जस की तरु सलामत रहेगी. दसवीं शताब्दी के इस संस्कृत कथन को सूर ने अपने ढंग से कृष्ण और राधा पर चरितार्थ किया है लेकिन यहां परिदृश्य निरंतर ब्रज विहार का है जो लीला गान के अंतर्गत भली-भांति समा सकता है. इतनी कठिन व्यंजना और इतने मधुर ढंग से अभिव्यक्त की जाए, यह सूर की काव्य कुशलता का प्रमाण माना जा सकता है.

राधाकृष्ण की भेंट असामान्य है और इस असामान्यता का वर्णन भृंगी-कीट न्याय के आधार पर किया गया है. भृंगी एक ऐसा कीट होता है जो दूसरे कीट को अपने जैसा बना लेता है यहां प्रेम भावना में भी यही शक्ति देखी-दिखायी गयी है. संयोग श्रृंगार का ऐसा सांकेतिक वर्णन जो अपनी क्षणिकता में निरंतरता या शाश्वतता बन जाए, इसे ही द्वितीय पद की विशिष्टता कहा जा सकता है.

भारत में शास्त्रोचित खण्डन-मण्डन की परंपरा रही किंतु सूर ने अपने भ्रमर गीत में उसे काव्य क्षेत्र में लेकर मधुर बना दिया है. गोपियों के द्वारा निर्गुण ब्रह्म के प्रचारक उद्धव को धोखेबाज़ व्यापारी कहना तथा ज्ञान और योग की गठरी को बेकार का माल कहना एक प्रकार से सगुण द्वारा निर्गुण का खण्डन ही है किंतु कृष्ण चरित्र के साथ जुड़कर यह मधुर मार्मिक काव्य में रूपांतरित हो गया है. निस्संदेह शास्त्र को कविता में कैसे बदला जा सकता है, इसका एक श्रेष्ठ उदाहरण भ्रमरगीत का यह पद प्रस्तुत करता है. एकसाथ गोपियों की अनन्यता और तार्किकता को अभिव्यक्ति का आधार बनाना सूर काव्य की श्रेष्ठता का प्रमाण माना जाएगा.

गोपियां उद्धव के ज्ञानोपदेश से खीज चुकी हैं और भंवरे का बहाना लेकर उन पर व्यंग्य करती हैं. उद्धव को व्यापारी कहकर यह कहा गया है कि उन्हें व्यापार तक करना नहीं आता. कुल मिलाकर गोपियां

श्रीकृष्ण के प्रति अपने प्रेम की श्रेष्ठता सिद्ध करती है और उद्धव को भगाना चाहती हैं. प्रस्तुत पद में ज्ञान की तुलना में प्रेम की महत्ता बतलायी गयी है. गोपियां केवल कृष्ण के मुख का दर्शन करना चाहती हैं, अपनी इस मंशा को लगातार ज्ञानोपदेश देते उद्धव को बताना तृतीय पद का ध्येय है.

वियोग रुंगार के चित्रण में प्राय: कवियों को संयोग की अपेक्षा अधिक सफलता मिलती रही है सुखदायी वस्तुएं कैसे दुखदायी प्रतीत होने लगती हैं, यही चतुर्थ पद का कथ्य है. विरह की स्थिति में काम पीड़िता गोपियां कृष्ण का रास्ता देख रही हैं और भ्रमर गीत का यही सौंदर्य है कि एक ओर जब उद्धव को फटकारना शुरु करती हैं तो जैसे सरस्वती उनकी वाणी में आ जाती है. सूर काव्य की यह अनुपम विशेषता इस पद में भली-भांति झलकती है.

गोपियों के लिए श्रीकृष्ण के विरह में सुखद और दुखद का अंतर मिट गया. जिन कुंजों में वे कृष्ण के संग विहार किया करती थीं, वे शत्रु-सा लगने लगे और वे केवल कृष्ण से मिलना चाहती हैं, यह चाहत ही इस पद की विशेषता है.

समूचे ज्ञानोपदेश को प्रेम की तुलना में हेय सिद्ध करने वाला यह पद गोपियों के अनन्य प्रेम का उदाहरण है. गेयता, संगीतात्मकता आदि विशेषताओं के साथ सहज ही काव्यालंकार जिसमें उपमा और श्लेष प्रमुख हैं, पंचम पद को अतिरिक्त प्रभावशाली बनाते हैं. वास्तव में सूर के प्रत्येक पद काव्य और संगीत दोनों दृष्टियों से इस प्रकार से एक हो जाने का उदाहरण है कि कहां संगीत है और कहां काव्य है, यह निश्चित करना कठिन हो जाता है. किंतु गोपियां कृष्ण और उनके विरह की स्थितियां निश्चित ही काव्य भूमि के इस बने-बनाए ढांचे को एक नया रंग रूप देती हैं और सूर का यह पद ऐसे अनगिनत अद्भुत पदों का प्रतिनिधि बनकर प्रस्तुत होता है.

गोपियां उद्धव से कृष्ण के प्रति अपने प्रेम को भाग्य जैसा अटल बतलाती हैं. वे वास्तव में अपने अनन्यता को ही समझाती हैं तथा कृष्ण के मुख दर्शन को ही अपने जीवन का आधार सिद्ध करती हैं.

BRAOU

5.6 शब्दार्थ एवं अंतर्कथाएं

विनय परक पद

1)

अनत	-	अन्यत्र, किसी दूसरी जगह
पंछी	-	पक्षी
महातम	-	माहात्म्य, बड़ाई
परम	-	सर्वश्रेष्ठ
छांडि	-	छोड़कर
दुरमति	-	जिसकी मति बुरी हो
कूप	-	कुआं, बावड़ी
खनावै	-	खुदावै
मधुकर	-	भंवरा
अम्बुज	-	कमल का फूल
करील	-	एक जंगली कड़वा फल

	कामधेनु	-	स्वर्ग में देवताओं की गाय, प्रत्येक कामना को पूरा कर सकने में सक्षम गाय
	छेरी	-	बकरी
2)	पतितनि	-	पापियों
	टीकौ	-	सिरमौर, सर्वश्रेष्ठ
	जनमत	-	जनम से ही
	बंधिक	-	कसाई
	गनिका	-	वेश्या
	तारी	-	उद्धार किया
	सूल	-	कसक-दर्द
	समरथ	-	समक्ष
	अघ	-	पाप
	लीको	-	लीक, लकीर
	मौहूं	-	मुझे
	नीको	-	उचित, अच्छा
3)	अविगत	-	अज्ञेय, जिसके विशय में जाना नहीं जा सकता
	गति	-	स्थिति, दशा
	अंतरगत	-	भीतर ही भीतर, मन ही मन में
	अमित	-	असीम, अनन्त, अपरिमित
	तोष	-	संतोष
	अगोचर	-	जो दिखाई न दे सके
	जुगति	-	युक्ति, उपाय
	निरालंब	-	बिना किसी सहारे के, बेसहारा
	विधि	-	उपाय, ढंग, तरीका
	सगुन	-	गुणों से युक्त, साकार ब्रह्म
4)	औगुन	-	अवगुण, दोष
	चित न धरो	-	ध्यान मत दो
	सोई	-	इसीलिए
	समदरसी	-	सबको समान देखने वाला
	पारस	-	ऐसा कल्पित पत्थर, जिसके विषय में मान्यता है कि वह लोहे को छूकर उसे सोना बना देता है.
	कंचन	-	सोना
	नार	-	नाला, जिसमें मैला पानी बहता है
	बिगरौ	-	बिगड़ गया, विकृत हो गया
	कै	-	यातो, अथवा
	टरौ	-	टल जायेगा
	पन	-	प्रतिज्ञा, पापियों का उद्धार करने की प्रतिज्ञा

BRAOU

5) भंग - रुकावट
पय - दूध
भुजंग - विषैला सांप
काग - कौआ
खर - गधा
स्वान - कुत्ता
अरगजा - चंदन-केसर का मिला-जुला लेप
मरकट - बंदर
सरिता - छोटी नदी
अन्हवाये - स्नान करवाया
पाहन - पाषाण
पतित - गिरा हुआ, पापी
रीतौ - खाली कर देना, खाली हो जाना
निषंग - तरकश
खल - दुष्ट
कारी - काली
कामरि - कम्बल

अंतर्कथाएं

1) कामधेनु - सागर-मंथन में चौदह रत्न निकले थे. उसी में कामधेनु नामक ऐसी गाय भी निकली थी, जो किसी भी कामना की पूर्ति कर सकती थी.

2) बधिक - सदन नामक भक्त, जो कसाई-परिवार में जनम लेने के कारण वही व्यवसाय करने को विवश थे. भगवान ने उस व्यवसाय के बावजूद उसका उद्धार किया.

3) अजामिल - एक बहुत बड़ा पापी, जिसने संयोग से अपने पुत्र का नाम नारायण रखा था. अंतिम समय में उसने अपने पुत्र को पुकारा - 'नारायण - नारायण'. यह भगवान का नाम भी है और अंतिम समय में भगवान का नाम पुकारने के कारण उसका भी उद्धार हो गया.

4) गणिका - एक वेश्या, जो हमेशा अपने पतित जीवन को लेकर पश्चात्ताप करती थी और ईश्वरोन्मुख जीवन की कल्पना करती थी इसलिए अंतिम समय में भी वह भगवान का स्मरण करती रही इसलिए उसका उद्धार हो गया.

5) पूतना - कंस की दासी, जो शिशु कृष्ण को मारने के लिए स्तन पर विष लगाकर गयी थी. जब उसने विश लगे स्तन से शिशु कृष्ण को दूध पिलाया तो श्रीकृष्ण ने उसके प्राण भी खींच लिए और उसका उद्धार कर दिया.

वात्सल्य परक पद

1) जसुमति - यशोदा
लाल - लाड़ला पुत्र
घुटरुवनि - घुटनों से
द्वैक - दो

BRAOU

	तोतरे	-	तुतलाते हुए
	रैरै	-	बार बार कहे, हठ करे
	गहि	-	पकड़कर
	जोई-सोई	-	कुछ भी
	मोसो	-	मुझसे
	इहि अंतर	-	इस बीच में
	अंधवाह	-	आंधी
2)	किलकत	-	किलकारियां भरते हुए
	मणिमय	-	जहां मणियां ही मणियां हैं
	धावन	-	दौड़ते हैं
	अवगाहत	-	देखते हैं, ढूंढ़ते हैं
	प्रतिमनि	-	प्रत्येक मणि से
	वसुधा	-	पृथ्वी
3)	तात	-	पिता
	चबाई	-	शरारती
	जनमत	-	जन्म से ही नहीं
	धूत	-	चालाक
	गोधन	-	गाय रूपी धन
	सौ	-	सौगंध
4)	ख्याल परै	-	मेरा यह ख्याल है
	लपटायो	-	मल दिया, लगा दिया
	भाजन	-	बरतन
	सांटि	-	छड़ी
	विरंचि	-	ब्रह्मा
5)	धाइ	-	दाई, पालने वाली, दूध पिलाने वाली
	सुत	-	पुत्र
	माया करत	-	झूठ मूठ या नाटक करना
	टेव	-	आदत
	तऊ	-	फिर भी
	लड़ेत	-	लाड़ले
	भावे	-	अच्छा लगता है
	भाजि	-	भागना
	जाई जाई	-	जो जो
	सोइ-सोई	-	सो सो
	क्रम क्रम	-	सिलसिले से, एक एक करके
	रैन	-	रात
	संकोच	-	शर्म

BRAOU

श्रृंगारपरक पद

1) बूझत - पूछते हैं
तन - पास
पौरी - दर्वाज़ा
ढोटा - लड़का
रसिक सिरोमनि - रसिकों में सर्वश्रेष्ठ
भुरई - फुसलाकर
भोरी - भोली

2) रसना - वाणी या जीभ
रांचे - रंग जाना
कीट - कीड़ा
रई - डूबी हुई, पगी हुई, अनुरक्त

3) घोष - ग्वालों का गांव
खेप - गठरी, बोझा
फाटक - फुटकन, अन्न को फटकने के उपरांत बची हुई भूसी
हाटक - सोना
निपट - बिल्कुल
धारी - धारण करके
धुर ही तै - प्रारंभ से ही, आदि से ही
खोटी खायी है - बेईमानी से कमाया, खाया है
डहकावै - ठगी में आना
सवारें - सबेरे, प्रात:काल
गहरु - देर, विलंब
साहुहिं - साहू को, सेठ या व्यापारी

4) बैरनि - शत्रु, बैरी
भई - हो गई
पुंजै - समूह
अलि गुंजै - भ्रमर गुंजायमान होते हैं
घनसार - कपूर
दधिसुन - चन्द्रमा, उदधिसुत
भुंजै - भून डालना
भानु भाई भुजै - सूर्य के समान भूनती है
लुंजै - पंगु, लंगड़ा, लूला
गुंजै - गुंजा फल

5) कैतव - छल, कपट
मूल - वास्तविक या प्रारंभिक

BRAOU

आनि - आकर
निरखि - देखकर

5.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

5.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. सूरदास की विनय भावना का वर्णन कीजिए.
2. सूरदास के श्रंगार वर्णन पर प्रकाश डालिए.
3. "सूर वात्सल्य और श्रृंगार रस का कोना-कोना झांक आए हैं" पठित पदों के आधार पर स्पष्ट कीजिए.

5.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1 किसी एक पद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2 राधा माधव की भेंट को अपने शब्दों में लिखिए.
3 गोपियों के व्यंग्य पर अपने विचार प्रकट कीजिए.

5.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

5.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- सूर के वात्सल्य प्रेम पर एक सारगर्भित लेख लिखिए.

उत्तर- श्री वल्लभाचार्य ने कृष्ण प्रेम की विरहावस्थाजनित अनुभूतियों को बहुत महत्वशाली माना है. वल्लभ संप्रदाय के सभी उपासकों के आत्मा की विरहानुभूति को भक्ति साधना में आवश्यक माना है. सूर ने वल्लभाचार्य के शिष्य होने के कारण "सूरसागर" में संयोग श्रृंगार का भी अत्यंत विस्तृत और व्यापक चित्रण किया है. वियोग की जितनी अंतर्दशाएं हो सकती है उन सभी का चित्रण सूर ने किया है. सूर का विरह वर्णन बडा करुण, मर्मस्पर्शी और हृदय को बेधनेवाला है. कृष्ण के विरह में माता यशोदा, पिता नन्द, राधा और गोपिकाएं ग्वालबाल एवं गायें सभी अत्यंत दु:खी हैं.

सूरदास ने अपने विप्रलंभ का आरंभ वात्सल्य रस के वियोग पक्ष से किया है. कृष्ण के मथुरागमन के समाचार को सुनकर, उसके बिछुडने की आशंका मात्र से पल भर के लिए भी कृश्ण को अपनी आंखों से दूर न रखने वाली मां यशोदा का हृदय कांप उठता है. वह अक्रूर के आगमन के समाचार को सुनकर कहती है -

"कहा काज मेरे छगन मगन को नृप मधुपुरी बुलायौ. सुफलकसुत मेरे प्रान हरन को काल रूप ह्वै आयौ ।।"

वियोग भय से व्याकुल यशोदा की दशा पागलों जैसी हो जाती है. वह कहती है कि गोकुल में कोई ऐसा हितैषी नहीं जो श्याम को मथुरा जाने से रोक सके -

"यशोदा बार-बार यौं भाखै । है कोऊ ब्रज में हितू महारौ चलत गुपालहिं राखै ।।"

वह अपनी भर्त्सना करती है कि कृष्ण के जाने की बात सुनकर भी मैं जीवित क्यों हूं -

"जिहिं मुख तात कहत ब्रजपति सौ, मोहि कहत है माई । तेहि मुख चलत सुनत जीवित हौं, विधि सौं कहा बसाई ।।"

माता रोहिणी की दशा भी लगभग ऐसी ही है. कृष्ण के मथुरागमन की बात सुनकर वह व्याकुल हो भूमि पर गिर पड़ती है और निराश हो उठती है, मानो इस समय उनका कोई सहायक नहीं है -

"ये दोऊ भैया जीवन हमरे, कहित रोहिणी रोई । धरनी गिरति उक्ति अति व्याकुल, कहि राखत नहिं कोई ।"

वस्तुत: अक्रूर के साथ यशोदा कृष्ण को भेजना नहीं चाहती किंतु ऐसा नहीं हो पाता. कृष्ण को मथुरा में ही छोड़कर नन्द जब अकेले वृन्दावन को लौटते हैं तब उनका मातृहृदय मानसिक संताप से विक्षुब्ध हो जाता है. वह अपने आप में नहीं रहतीं. अपने हृदय की गहरी व्यथा के कारण पति को भला-बुरा सुनाती है. पति-प्रेम से ऊपर उठकर वह नंद को उलाहना देती है -

"'सूर' स्याम बिछुरन को हम है, दैन बधाई आए ।"

यशोदा को कृष्ण के बिना नन्द का ब्रज तनिक भी नहीं सुहाता. वह अपने प्रेम को विह्वलता में विरक्ति और तिरस्कार मिश्रित खिजलाहट से नन्द से कहती है कि तुम अपना ब्रज संभालो. तुम्हें इसका गहरा क्षोभ है, मैं तो जाती हूँ -

"नन्द ब्रज लीजै ठोकि बजाय. देहु बिदा मिलि जाहि मधुपुरी, जहं गोकुल के राय ।।"

कृष्ण के वियोग से ममतामयी माता यशोदा इतनी व्याकुल हो गई कि मथुरा जाकर वह देवकी और वसुदेव की दासी बनने को भी तैयार हो जाती है, क्योंकि वहां उसे कृष्ण के नित्य दर्शन तो मिल सकते हैं -

"हां तो माई मथुरा ही पै जैहौं । दासी ह्वै वसुदेव राह की, दरसन देखत रैहौ ।"

कृष्ण की याद में अपने को घुला देने वाली माता यशोदा कृष्ण से संबंध रखने वाली वस्तुओं को देखकर कृष्ण का स्मरण करती है और कहती है -

"मेरे कुंवर कान्ह बिनु सबवैसे ही धरयो रहै । को उठि प्रात होत लै माखन को कर नेत गहै । सूने भवन यशोदा सुत के गुनि गुनि सूल सहै ।"

माता यशोदा को कृष्ण के खाने-पीने की भी चिंता होने लगती है. अत: वह मथुरा जाते हुए पथिक से अपनी चिंता व्यक्त करते हुए कहती है कि प्रात:काल बिना मांगे मेरे लाल को कौन मक्खन रोटी देगा -

"प्रात: समय उठि माखन रोटी को बिन मांगे दैहै । को मेरे बालक कुंवर कान्ह को छन छन अंघंभ लैहै ।"

BRAOU

नन्द के हृदय में भी श्रीकृष्ण विरह की दु:खाग्नि जल रही है किंतु वे अपने मन ही मन सहन कर चुप हो जाते हैं.

वियोग वात्सल्य के अंतर्गत यशोदा के हृदय का जो चित्रण हुआ है तथा उसकी विभिन्न करुण दशाओं का जो रूपांकन हुआ है वह महान है. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सच ही कहा कि "वियोग की जितनी अन्तर्दशाएं हो सकती हैं, जितने ढंगों से उन दशाओं का साहित्य में अंकन हुआ है या हो सकता है, वे सब सूर के भीतर मौजूद हैं ।"

5.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न- इस पाठ के निम्नलिखित पद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -

"बिनु गुपाल बैरनि भई कुंजै ।
तब वै लता लगति तन सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजै ।।
वृथा बहति जमुना, खग बोलत वृथा कमल फूलनि अलि-गुंजै ।
पवन, पानि, धनसार, सजीवन, दधि सुत किरनि भानु भई भुंजै ।।
यह ऊधौ कहियो माधौ सौ मदन मारि कीन्ही हम लुंजै ।।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौ, मन-जोवत अँखियाँ भी गुंजै ।।

उत्तर- प्रसंग - प्रस्तुत पद 'सूर सागर' काव्य के 'भ्रमरगीत' खंड से उद्धृत है. भ्रमरगीत विप्रलंभ का सर्वोत्तम काव्य है. महाकवि सूर ने इस प्रसंग में विप्रलंभ श्रृंगार को अत्यंत निपुणता, रसिकता और साहित्यिकता से चित्रित किया है. कृष्ण मथुरा को चले तो गोपियां अपने प्रिय के भावी वियोग की अनुभूति से पथरा गई. कृष्ण के साहचर्य में सुख देने वाली सभी वस्तुएं उन्हें दु:खदाई लगने लगी. अपनी इसी विशेष मनोदशा की अभिव्यक्ति करते हुए गोपियां कहती हैं -

व्याख्या - हे उद्धव ! कृष्ण वियोग के कारण ब्रज-भूमि का प्राकृतिक सौंदर्य भी हमारे लिए पीड़ा का कारण बना है जिन लता-कुंजों में हमने कृष्ण के साथ विहार किया था, सरस लीलाएं रची थीं वही कृष्ण के चले जाने के पश्चात् हमें दु:खदाई लगने लगे हैं. इन कुंजों को देखकर हमें कृष्ण का स्मरण आ रहा है. इससे हमारा दु:ख और भी बढ़ रहा है. कृष्ण की उपस्थिति में हमें शीतलता प्रदान करने वाली ये लताएं वियोग में हमें भयंकर अग्निपुंजों की तरह दिखाई दे रही हैं. हमें लग रहा है कि अब यमुना व्यर्थ में बह रही है. कमलों का खिलना भौरों का गुंजन, पक्षियों का कलरव सब व्यर्थ एवं दु:खदायी हैं. इनकी हमारे लिए कोई उपयोगिता नहीं है. संयोगकाल में आनंददायक मंद पवन, शीतल जल, कपूर इत्यादि सब वस्तुएं आज हमारे लिए दु:खदायक बन गई है. चन्द्रमा की किरणें भी वियोग के कारण सूर्य-किरणों की तरह हमें जला रही है. अंत में वे कहती हैं कि आप जाकर कृष्ण से कहिए कि उनकी अनुपस्थिति में कामदेव ने हम पर वार करके हमें लुंज-पुंज एवं अपाहिज कर दिया है. इससे हमारा अंग-प्रत्यंग प्राणहीन और अशक्त हो गया है. कृष्ण ही आकर अब हमारी रक्षा कर सकते हैं. कृष्ण के दर्शनार्थ हमारी आंखें खाली एवं दृष्टिहीन तथा गुंजा फलों जैसी लाल हो गई हैं.

टिप्पणी -

1. गोपियों की वियोगावस्था का व्यापक एवं मार्मिक चित्रण इस पद में किया गया है.

BRAOU

2. इस पद के अतिरिक्त "पिया बिनु नागिनि कारी रात" , "देखियत कालिन्दी अति कारी", "मधुवन तुम कत रहत हरे" आदि अनेकानेक पदों में भी गोपियों की मनोव्यथा को सूरदास ने वर्णन किया है.
3. प्रकृति का उद्दीपन रूप इस पद में चित्रित किया गया है. इसमें अनुप्रास एवं अतिशयोक्ति अलंकारों की योजना है.
4. "संयोगकाल में जो दृश्य हृदयग्राही और सुखप्रद जान पड़ते हैं, वियोगकाल में वे ही दृश्य विदग्धकारी और दु:खप्रद बन जाते हैं" इस मनोवैज्ञानिक सत्य की अभिव्यक्ति इस पद के माध्यम से सूर ने की है.

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. सूर-साहित्य : नवमूल्यांकन - डॉ. चन्द्रभान रावत
2. सूर-निर्णय : प्रभु दयाल मीतल व द्वारिकादास पारिख
3. सूर और उनका साहित्य : डॉ. हरवंशलाल शर्मा
4. सूरदास - एक अध्ययन : डॉ. रामरतन भटनागर
5. भक्तिकालीन हिंदी काव्य में प्रेम-भावना : डॉ. रामकुमार खंडेलवाल (केवल सूरदास का भाग).
6. सूरदास व नरसी मेहता : डॉ. ललित पारिख
7. सूरदास व वामन पण्डित : डॉ. सुशीला व्यापारी.

******

BRAOU

इकाई 6 : जायसी की कविता : नागमती का विरह-वर्णन

रूपरेखा

6.1 पाठ का उद्देश्य
6.2 पाठ एवं कवि-परिचय
6.3 मूल पाठ
6.4 सारांश
6.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
6.6 शब्दार्थ
6.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
  6.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
  6.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
6.8. नमूने के प्रश्नोत्तर
  6.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
  6.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
6.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत कविता भक्तिकालीन निर्गुण काव्यधारा की प्रेम मार्गी-शाखा के प्रमुख कवि मलिक मुहम्मद जायसी कृत "पद्मावत" महाकाव्य के "नागमती का विरह-वर्णन" अंश से ली गयी है. इसमें कवि ने विप्रलंभ श्रृंगार वर्णन पर विशेष प्रकाश डाला है. इस कविता को पढ़ने से आप -

- प्रेम-तत्व द्वारा ईश्वर-प्राप्ति के सूफी विचारों से परिचित होंगे.
- जायसी विरचित प्रेमाख्यानक काव्य "पद्मावत" महाकाव्य से परिचित होंगे.
- कवि जायसी ने भारतीय कथावस्तु को अभारतीय मसनवी-शैली में जो अभिव्यक्ति दी है, उसकी जानकारी प्राप्त करेंगे.
- भारतीय दर्शन के साथ-साथ अभारतीय सूफी भक्ति सिद्धांतों से परिचित होंगे.

6.2 पाठ एवं कवि परिचय

मलिक मुहम्मद जायसी : कवि-परिचय

भारत के महापुरुष और महाकवि स्वभावत: बडे संकोची और विनयशील रहे हैं. इसी कारण प्राय: उन्होंने अपने संबंध में कुछ भी नहीं लिखा है. चन्द बरदाई, कबीर, सूरदास और तुलसीदास आदि महाकवियों का जीवन-वृत्त अतीत के गर्भ में छिपा पडा है. मलिक मुहम्मद जायसी के व्यक्तिगत जीवन-वृत्त के संबंध में भी यही हुआ है. हिंदी साहित्य के विद्वान लेखकों के अनुसार जायसी का जन्म सन् 1492 को हुआ था. जन्म तिथि की पुष्टि के लिए कवि की रचना "आखिरी कलाम" से यह पंक्ति

उद्धृत की गई है - "भा भोर नव सदी । तीस बरिस ऊपर कवि बढ़ी" - अर्थात् उनका जन्म हिजरी 900 को या सन् 1492 को हुआ एवं अपनी आयु के तीस वर्ष पूरे होने के उपरांत वे कवितायें करने लगे. अपने निवास स्थान के संबंध में कवि ने "पद्मावत" में लिखा है कि - "जायस नगर मोर अस्थान् । नगर क नांव आदि उदयान ।" इस तरह कवि "जायस"स्थान के निवासी थे. यह उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले में स्थित है और इसका नाम पहले "उदयनगर" था. इस गांव के अधिकतर निवासी मुसलमान थे और उन्होंने ही फारसी के "जैश" शब्द से इस गांव का नाम जायस रखा.

जायसी के पिता का नाम मुमरेज था. इनका ननिहाल माणिकपुर था. शेख अहलदाद इनके नाना थे. कहा जाता है कि जायसी के माता-पिता अत्यंत गरीब थे तथा धर्म, पीरों और फकीरों में उनका गहरा विश्वास था. बचपन में बालक जायसी पर शीतला का प्रकोप हुआ, जिसमें उनकी एक आंख जाती रही और उनके चेहरे पर चेचक के दाग रह गये. इस तरह जायसी शारीरिक-दृष्टि से कुरूप थे. कहा जाता है कि एक बार वे दिल्ली बादशाह के दरबार में गये थे और बादशाह उनकी कुरूपता पर हंसा था. तब जायसी ने कहा था कि "मोहि को हंसेसि कि कोहरहि" - अर्थात् तुम मुझ पर हंसते हो या उस पर, जिसने हम सबको बनाया है ?" इस तरह जायसी स्वभाव से बडे निडर थे. उनके पिता का अल्पायु में ही स्वर्गवास हुआ था निराश्रयी जीवन ने जायसी को बचपन से ही आध्यात्मिकता की दिशा प्रदान की. वे बचपन से ही साधु और फकीरों के साथ घूमा करते थे और आध्यात्मिक विचारों की ओर उनका झुकाव था.

युवा होने पर उनका विवाह हुआ और खेती का काम करते हुए वे जीवन यापन करते रहे. कहा जाता है कि उन्हें सात पुत्र थे और घर की छत गिर जाने से सातों पुत्रों की मृत्यु हो गई. यह भी किंवदंती है कि उन्हें संतान नहीं थी. जो भी हो, नि:सन्तान होने से या सात पुत्रों की अचानक मृत्यु से जायसी को जीवन से विरक्ति हो गई और वे पूर्णरूपेण आध्यात्मिक हो गये.

जायसी ने स्वाध्याय से ही फारसी और अरबी भाषा का ज्ञान प्राप्त किया था. सूफीमत को अपनाकर वे उसी विचारधारा के अनुयायी बन गये. आगे चलकर अपने एक साथी हज़रत मुहम्मद निजामुद्दीन बंदगी की सहायता से उन्होंने अपना एक शिष्य-मंडल बनाया. अमेठी-नरेश जायसी की काव्य-प्रतिभा से अत्यंत प्रभावित थे. इसीलिए, जायसी अमेठी चले गये. वहीं पर लगभग 49 वर्ष की आयु में सन् 1542 में उनका स्वर्गवास हो गया.

BRAOU

जायसी का व्यक्तित्व और कृतित्व

जायसी निर्गुण भक्ति की प्रेमाश्रयी-शाखा के प्रतिनिधि एवं हिंदी के प्रथम प्रामाणिक महाकवि माने गये हैं. उनकी शिक्षा किसी पाठशाला में नहीं हुई. बचपन में केवल अक्षराभ्यास हुआ था. उन्होंने स्वाध्याय से ही भाषा, साहित्य, सूफीमत, दर्शन विचारधारा आदि का ज्ञान पाया था. बचपन से ही साधु-संतों, पीरों, फकीरों की संगति में रहा करते थे. इसी कारण इस्लाम-धर्म के साथ हिंदू-धर्म के सिद्धांतों की जानकारी भी उन्हें थी. जायसी कुशाग्र-बुद्धि के प्रतिभा-संपन्न व्यक्ति थे. यही कारण है कि उनकी रचनाओं में हठयोग-रसायन, तमा वेदांत की बातों का उल्लेख मिलता है. जायसी एक भावुक, सहृदयी, संवेदनशील और आध्यात्मिक-वृत्ति के व्यक्ति थे. वे अपने समय के एक सिद्ध और फकीर भी माने गये. इस्लाम और हिंदू धर्मों के प्रति उदार दृष्टिकोण उनकी विशेषता थी. उनका व्यक्तित्व अत्यंत गंभीर, शांत और महान् था. उनके हृदय के सच्चे सौंदर्य का परिचय हमें उनके "पद्मावत" महाकाव्य में मिलता है. कवि ने इसमें लोकपक्ष और आध्यात्मिक पक्ष की गूढ़ता का निरूपण किया है. उनका दूसरा ग्रंथ "अखरावट" है, जिसमें उन्होंने वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर पर

सिद्धांत संबंधी बातों का विवेचन किया है. इसी प्रकार अपने तीसरे ग्रंथ "आखिरी कलाम" में कवि ने मृत्यु के बाद जीव की दशा तथा कयामत के अंतिम न्याय का वर्णन किया है.

पाठ परिचय

प्रस्तुत काव्यांश जायसी की सुप्रसिद्ध रचना "पद्मावत" के "नागमती-खण्ड" से उद्धृत है. "पद्मावत में कवि ने चित्तौड के राजा रत्नसेन और सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की प्रेम कथा सरस भाषा-शैली में वर्णित की है. इस प्रेम काव्य की कथावस्तु के गठन में कवि ने इतिहास की घटनाओं के साथ अपनी कल्पना-शक्ति का सहारा भी लिया है. भारतीय कथावस्तु को सूफी मत-सिद्धांतों में पिरो कर जायसी ने उसे मसनवी-शैली में व्यक्त किया है. कवि ने एक रुपक बांधा है - भारतीय एवं सूफी मत-सिद्धांतों का संगम - पद्मावती परमात्मा, रत्नसेन आत्मा, नागमती माया-मोह तथा हीरामन तोता-गुरु के रुप में. इस महाकाव्य की कथा इस प्रकार है -

सिंहल द्वीप के राजा गंधर्वसेन थे. उनकी पत्नी चंपावती को पद्मावती नाम की अपूर्व सुंदर कन्या हुई. पद्मावती ने एक तोता पाल रखा था, जिसका नाम था हीरामन. वह बडा बुद्धिमान था. पद्मावती युवा होने पर भी उसके पिता अपनी कन्या के विवाह के संबंध में विचार नहीं करने लगे. तब पद्मावती ने यह बात हीरामान को बताई. एक दिन पद्मावती अपनी सखियों के साथ मानसरोवर में नहाने गई. हीरामान पिंजरे से उड़ गया. एक बहेलिये ने उसे पकडा और बाजार में बेचने चला गया. वहां पर चित्तौडगढ़ के एक ब्राह्मण ने उसे खरीदा. हीरामान की बुद्धिमत्ता राजा रत्नसेन तक पहुंची. राजा ने हीरामन को ब्राह्मण से खरीद लिया. तब हीरामान ने भरे दरबार में रत्नसेन के सामने सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती के अपूर्व सौंदर्य का वर्णन किया. सुनकर रत्नसेन बेहोश हो गया. होश आने पर वह राज-काज, पत्नी नागमती आदि को छोड़कर पद्मावती को पाने सिंहल द्वीप की ओर चल पडा. कई संकटों का सामना करते हुए वह सिंहलद्वीप पहुंचा. गंधर्वसेन ने पद्मावती का विवाह रत्नसेन से संपन्न किया. रत्नसेन अपनी प्रेमिका-पत्नी पद्मावती के साथ सिंहलद्वीप में रहने लगा.

इधर चित्तौडगढ़ में रत्नसेन की पहली पत्नी नागमती अपने पति के विरह में व्याकुल होने लगी. पति के विरह में उसकी जो दशा हुई, उसी का वर्णन कवि ने इस "नागमती का विरह-वर्णन" में किया है.

6.3 मूलपाठ

नागमती का विरह-वर्णन

नागमती चितउर-पथ हेरा । पिक जो गए पुनि कीन्ह न फेरा
नागर काहु नारि बस परा । तेइ मोर पिय मो सौं हरा
सुआ काल होइ लेइगा पीक । पिउ नहि जात, जात बरु जीऊ
भयउ नरायन बावन करा । राज करत राजा बलि छरा,
करन पास लीन्हेउ कै छन्दू । विप्र रुप धरि झिलमिल इंदू,
मानत भोग गोपिचंद भोगी । लेइ अपसवा जलंधर जोगी
लेइया कृस्नहि गरुड अलोपी । कठिन बिछोह, जिअहि किमि गोपी ?
सारस जोरी कौन हरि मारि बियाधा लीन्ह ?
झुरि झुरि पींजर हौं भई विरह-काल मोहि दीन्ह ।। 1 ।।

पिउ-वियोग अस बाउर जीऊ । निति बोलै "पिउ पिउ"
अधिक काम दाधै सो रामा । हरि लेइ सुवा गयउ पिउ नामा
बिरह बान तस लाग न डोली । रकत पसीज, भीजि गइ चोली,
सूखा हिया हार भा भारी । हरि हरि प्रान तजहि सब नारी
खन पक आव पेट महं सांसा । खनहि जाइ जिउ, होइ निरासा,
पवन डोलावहिं, सींचहि चोला । पहर एक समुझहि मुख बोला
प्रान प्रयान होत को राखा ? को सुनाव पीतम कै भाखा ?

आहि जो मारै विरह कै आगि उठैं तेहि लागि ।
हंस जो रहा सरीर महं, पांख जरा, गा भागि ।।2 ।।

चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा । साजा विरह दुंद दल बाजा
धूम, साम, धौरें घन धाए । सेत धजा बग-पांति देखाए
खडग-बीजु चमकै चहुं ओरा । बुंद-बान बरसहि घन घोरा
ओनई घटा आइ चहुं फेरी । कंत, उबारु मदन हौं घेरी
दादुर मोर कोकिला, पीऊ । गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा । हौं बिनु नाह, मंदिर को छावा ?
अद्रा लागि, लागि भुइ लेई । मोहि बिनु पिव को आदर देई ?

जिन्ह घर कंता ते सुखी तिन्ह गारौ औ गर्व ।
कंत पियारा बाहिरै हम सुख भूला सर्व ।।3 ।।

6.4 सारांश

1) नागमती चित्तौडगढ़ को आनेवाला मार्ग निहार रही है और अपने मन की व्यथा प्रकट कर रही है कि - "मेरे प्राणप्रिय पति, जो गये हैं, वे पुन: लौटकर क्यों नहीं आये ? मेरे प्राणतम किसी अन्य स्त्री के प्रेमपाश में पड गये हैं. उस स्त्री ने ही मेरे पति को मुझसे छीन लिया है. यह हीरामन तोता एक अनिष्ट काल बन कर आया और मेरे प्रियतम को ले गया. ऐसा लगता है कि मेरे प्राणनाथ को ही नहीं, अपितु मेरे शरीर से मेरे प्राण और हृदय को ही ले गया. मानो सारी कलाओं में पारंगत ईश्वर ने ही इस तोते का रूप धारण किया और छलने हेतु मेरे प्रियतम को मुझसे छीन लिया. कवच-कुंडलों को पाने के लिए इन्द्र ने ब्राह्मण का रूप धारण कर राजा कर्ण को छला, वैसे ही इस नियति ने तोते का रूप धारण कर मुझसे मेरे प्रियतम को विलग किया. गोपीचन्द का पुत्र मेरा पति राजा रत्नसेन उस स्त्री के सौंदर्य-मोह में पडकर मुझे भूल गया. श्रीकृष्ण भी ऐसे ही मथुरा जाकर मोह में पड गये थे. पर उन्होंने यह नहीं सोचा कि, उनके विरह में बेचारी गोपी कैसे जिएगी ? ऐसी स्थिति में मेरी व्यथा और पीडा को कौन जानेगा और हमें धीरज कौन देगा ? अपने पति के विरह में झूर-झूर कर मैं एक अस्थि-पंजर बन गई हूं.

2) पति के वियोग में मेरे प्राण बावरे हो गये हैं और सतत पपिहे की तरह "पिया पिया" की ही रट लगाये हैं. हीरामन तोते ने उस स्त्री के सौंदर्य का ऐसा वर्णन किया, जिसे सुनकर मेरे प्रियतम काम-पीडा से व्याकुल हो गये और उस पर-स्त्री का नाम जपते हुए हमें छोडकर चले गये. पति का विरह

बाण बनकर मेरे मन-उरोजों को घायल कर रहा है, जिससे हृदय सूख रहा है और शरीर की नाडियां प्रियतम बिना निर्जीव होती जा रही हैं. पति की मधुर स्मृतियां कुछ क्षण सांसों में प्राण उंडेलती हैं, तो कभी अपनी वास्तविक स्थिति को जानकर प्राण निराश हो जाते हैं. हवा का झोंका लगते ही मेरा शरीर कांप उठता है और पता चलता है कि एक प्रहर और भी बीत गया. मेरे प्रियतम के चले जाने से उनके विरह में मेरे तन-मन की जो स्थिति और दशा है, उसे हम किसे बतायें ? विरह के मारे मेरे मन में जो आहें उठती हैं, उसकी अग्नि में मेरा तन झुलस उठता है. मानो मन का पक्षी तडप रहा हो और प्राण छोडकर केवल अपने पंखों से ही कहीं उड़ गया हो.

3) अब आषाढ़ का महीना चढ़ आया है और आकाश में बादल भी गरज रहे हैं. प्रियतम के विरह में बादलों की यह गरज तन-मन में वेदनाओं का तूफान मचा देती है. आकाश में धूमिल, काले और श्वेत बादल घोडों की तरह तेजी से दौड रहे हैं, मानो सेना ले आये हों और विजय की ध्वज-पताका दिखा रहे हों. घनघोर वर्षा में चारों ओर बिजली चमक रही है और मुझ विरहिनी के मन पर पीडा के बूंद-बाण बरसा रही हैं. घटाओं ने चारों ओर घेर लिया है. ऐसे समय हे नाथ, मेरे पति प्रियतम, शीघ्र ही चले आओ और मुझे इस काम-मदन की पीडा से बचा लो. इस समय मेंढक, मोर और कोकिला 'पिऊ-पिऊ' की रट लगाये हैं और चारों ओर बिजली गिरकर मन की उत्तेजनाओं को बढ़ा रही है. ऐसे में देखो, पुष्य-नक्षत्र भी आ चुका है. तुम्हारे बिना मैं मंदिर भी कैसे जाऊं ? आकाश के बादलों ने वर्षा के रूप में धरती की प्यास बुझा दी है और चारों ओर जल ही जल हो गया है. इस अवस्था में हे प्रियतम, तुम्हारे बिना मुझे कौन आदर की दृष्टि से देखेगा ? सच है कि, जिस स्त्री का पति उसके साथ घर पर होता है, उसी को गौरव मिलता है और वही अपने भाग्य पर गर्व करती है. पर मेरा पति तो परदेस में है, जिससे कि मैं अपने सारे सुखों, गौरव को भुला बैठी हूं और गर्व भी खो चुकी हूं.

6.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

मलिक मुहम्मद जायसी कृत "नागमती का विरह-वर्णन" काव्यांश उनके 'पद्मावत' महाकाव्य से उद्धरित है. मध्य युग में निर्गुण काव्यधारा की प्रेममार्गी-शाखा के प्रमुख कवि के रूप में उनकी गणना होती है. प्रेम-तत्व से ईश्वर-प्राप्ति प्रेम मार्ग का मूल उद्देश्य है. कवि जायसी ने समकालीन चित्तोडगढ़ के हिंदू राजा रत्नसेन एवं सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की प्रेम कथा को लेकर 'पद्मावत' की रचना की है. जायसी ने रूपक बांधा है, जिसमें रत्नसेन को आत्मा, पद्मावती को परमात्मा, नागमती को माया-मोह एवं तोते को गुरु का प्रतीक बनाया है. प्रेम के लौकिक स्वरूप को आलौकिक दर्शन धारा से शब्द-बद्ध किया है.

जायसी एक विलक्षण और अद्भुत प्रतिभा के महाकवि थे. "नागमती का विरह वर्णन" में कवि ने भारतीय नारी के विशुद्ध और पवित्र प्रेम को दर्शाया है. पति रत्नसेन के चले जाने पर उसके विरह में नागमती की जो दशा होती है और "बारह मासों" में उसके मन पर जो बीतती है, उसका अत्यंत मार्मिक चित्रण कवि ने उसी के मुख से व्यक्त किया है. श्रृंगार-रस के वियोग-पक्ष का हृदय-स्पर्शी चित्रण अन्यत्र दुर्लभ है.

कवि ने प्रेम-तत्व का चरमोत्कर्ष व्यक्त करते समय भारतीय एवं अभारतीय मसनवी काव्य-शैली को अपनाया है. साथ ही भारतीय एवं अभारतीय दार्शनिक विचारधाराओं का अति सुंदर संगम प्रस्तुत किया है. साधारण अवधी भाषा में आये बोल-बाल के शब्द भी नागमती के मन की व्यथा को व्यक्त

करने में सफल हुए हैं. काव्य में आये अनेक दृश्यों में कवि ने जो अलंकार-प्रयोग किये, उनसे काव्य के शिल्प के साथ उसका अंतरंग भी सार्थक एवं सशक्त बन पडा है.

6.6 शब्दार्थ

1)

नागर	-	नायक रत्नसेन
चितउर-पथ	-	चित्तौड का मार्ग
हेरा	-	देखना
पिउ	-	प्रियतम
कीन्ह	-	किया
काहु	-	किसी
नारि बस	-	नारी के वश
तेइ	-	उसने
मोहि पिय	-	मेरे प्रियतम को
मो सौ	-	मुझसे
समय काल होइ	-	समय तोता बनकर
लेइया पिउ	-	प्रियतम को ले गया
पिउ नहिं जात	-	प्रियतम नहीं जाता
जात बरु जीऊ	-	मेरे प्राण ले जाता है
भयउ	-	हो गये
नारायन बावन करा	-	बावन कला के रूप में ईश्वर
राज करत राजा	-	राज्य राजा करता है
बलि छरा	-	कमजोर बलि होते हैं
करन	-	राजा कर्ण
लीन्हेहु कै छन्द्	-	छल कर के लेना
विप्र रूप धरि	-	ब्राह्मण का रूप धारण कर
झिलमिल	-	कवच
गोपीचन्द	-	रत्नसेन के पिता
अपसवा	-	अपशगुन
कृस्नहि	-	कृष्ण को
कठिन बिछोह	-	कठिन बिछडना
जियहि किमि गोपी	-	गोपी कैसे जी पायेगी ?
सारस जोरी	-	शोभायमान जोडी
कौन हरि	-	किसने फूट डाली
झुरि झुरि	-	झूरकर सूखकर
पींजर	-	पिंजरा
विरह काल	-	विरह का समय

2)

पिउ वियोग	-	प्रियतम का विरह
बाउर जीव	-	बावरे प्राण
दाधै	-	जलना

BRAOU

रामा	-	नारी
रकत	-	रक्त
पसीज	-	पिघलता
खन एक	-	एक-एक क्षण
पेट मंह सांसा	-	पेट के भीतर सांस
खनहि	-	एक ही क्षण में
पवन डोलावहि	-	पवन का झोंका
सींचहि चोला	-	शरीर को ठंडक पहुंचाता है
प्रान प्रयान	-	प्राणों का प्रयाण
होत को राखा	-	कौन बचा सकता है ?
को सुनाव	-	किसे सुनाये
पीतम कै भाखा	-	प्रियतम की बातें
हंस	-	प्राण

3)

असाढ़	-	आषाढ़ मास
धूम	-	धूमिल
साम	-	श्याम
धौरे	-	दौडे
बूंद बान	-	पानी के बूंदों की तीर
ओनई	-	झुकी और घेरी हुई
कंत	-	पति
उबारू	-	बचालो
दादुर	-	मेंढक
गिरै बीजु	-	बिजली गिरना
पुष्य नखत	-	पुष्य नक्षत्र
लागि भुई लेई	-	खेत पानी से भर गए
मोहि	-	मुझे
बिनु पिउ	-	प्रियतम के बिना
तिन्ह	-	वह, उसे
गौरा औ गर्व	-	गौरव और गर्व
पियारा	-	प्यारा
बहिरै	-	बाहर है
हम सुख भूला सर्व	-	हम अपने सारे सुख भूल गए

6.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

6.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

प्रश्न- 1. "नागमती का विरह-वर्णन" कविता की विशेषताएं बताइये.

BRAOU

2. जायसी का परिचय देते हुए उनके "पद्मावत" महाकाव्य की विशेषतायें बताइये.
3. पठित कविता के आधार पर नागमती का चरित्र-चित्रण कीजिए.
4. "जायसी ने पद्मावत में श्रृंगार-रस के वियोग-पक्ष के चरमोत्कर्ष का चित्रण किया है." इसे स्पष्ट कीजिए.

6.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

प्रश्न- 1. पठित पदों से किसी एक की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. पति-वियोग में आषाढ़-मास के आगमन से नागमती अपनी व्यथा कैसे प्रकट करती है.
3. "जायसी के दार्शनिक-विचार" दस पंक्तियों में लिखिये.
4. "नागमती का विरह-वर्णन" कविता का काव्य-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए.
5. "जायसी ने नागमती के रूप में भारतीय नारी का चित्रण किया है." सिद्ध कीजिए.
6. "नागमती का विरह-वर्णन" कविता में जायसी ने जिस प्रेम-विरह अवस्था का चित्र उतारा है, उसका संक्षेप में वर्णन कीजिए.

6.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

6.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- "नागमती का विरह-वर्णन" कविता की विशेषताएं बताइये.

उत्तर- मलिक मुहम्मद जायसी द्वारा विरचित "पद्मावत" महाकाव्य का प्राण बिंदु है नागमती का विरह-वर्णन. रत्नसेन की प्रथम पत्नी श्यामांगी नागमती भारतीय नारी की सारी गुण-विशेषताओं का एकमात्र प्रतीक है. कवि ने नागमती के विरह-विदग्ध हृदय की संवेदनशीलता को चरम उत्कर्ष पर पहुंचाया है. यह भारतीय हिंदू रमणी अपने पति रत्नसेन को प्राणोपण प्रेम करती है और अपना सर्वस्व परम प्रियतम को समर्पित करती है. रत्नसेन हीरामन तोते के मुख से सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मावती के रूप-सौंदर्य का वर्णन सुनता है और उसे पाने के लिए राजकाज तथा पत्नी नागमती को छोडकर चल पडता है. अपने निर्मोही प्रियतम के प्रस्थान से ही नागमती की विरह-व्यथा का प्रारंभ होता है. उसका पति उसके एकनिष्ठ प्रेम और अपूर्व सौंदर्य की अवहेलना करके किसी अज्ञात रूपसी के प्रणय में उन्मत्त होकर चला गया. उसे पति की इस निर्मम अवहेलना की ठेस लगी. वह विचलित हो गई. जिस पति के लिए उसने तन-मन-सर्वस्व अर्पित किया था, उसी ने प्रेम-तंतु को एक ही झटके में तोड दिया और किसी अज्ञात स्त्री के रूप में बावला होकर चला गया. कितना निष्ठुर व्यवहार था. कितनी हृदय विदारक क्रिया थी. ऐसे समय कवि ने इस रमणी के नारीत्व और सतीत्व को एक दिव्य आभा प्रदान की और उसकी विरह-व्यथा को "बारहमासा" द्वारा व्यक्त किया.

नागमती का पति-प्रेम विरहावस्था में प्रगाढ़तर हो गया है. संयोगकालीन सुखद स्मृतियों के आधार पर उसने विरह के समय पर भी पति की आराधना की है. पति वियोग में बावली रानी नागमती को अपने रानीपन की सुधि भी न रही और वह सामान्य नारी की भांति बिलख-बिलख कर अपनी व्यथा व्यक्त करने लगी. वह पति-वियोग में बावली होकर वन के सभी पशु-पक्षियों और जीव-जंतुओं से अपना विलाप सुनाने लगी. इस तरह नागमती की विरह-व्यथा भारतीय नारी की अपनी विरह-पीडा है. कवि जायसी ने नागमती की व्यथा का जो विषद और सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है.

बारहमासे के वर्णन में कवि की विलक्षण प्रतिभा का परिचय होता है. हिंदू रमणी की सामान्य स्थिति के भीतर विप्रलंभ-श्रृंगार का अत्यंत सजीव, समुज्वल और हृदयस्पर्शी चित्र हिंदी-साहित्य के लिए एक अनुपम निधि सिद्ध हुआ है.

6.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- निम्नलिखित पद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -

"पिऊ-वियोग अस बाऊर जीऊ । पपिहा निति बोलै "पिऊ पिऊ" ।।
अधिक काम दाधै सो रामा । हरि लेइ सुवा गयउ पिउ नामा ।।
विरह बान तस लाग न डोली । रकत पसीज भीजि गइ चोली ।।
सूखा हिया हार भा भारी । हरि हरि प्रान तजहि सब नारी ।।"

उत्तर- प्रस्तुत पद्यांश "नागमती का विरह-वर्णन" कविता से उद्धृत है. इसे मलिक मुहम्मद जायसी के "पद्मावत" महाकाव्य से लिया गया है. रत्नसेन हीरामन तोते के मुख से सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती के रूप-सौंदर्य का वर्णन सुनता है और उसे पाने के लिए राजकाज तथा पत्नी नागमती को छोड़कर चल पडता है. तब अपने पति के प्रस्थान से नागमती विरह की पीड़ा से विलाप करने लगती है. इस पद्यांश में वह कहती है कि - "मेरे प्रिय प्राणनाथ के विरह में मेरा मन बावला होकर पपीहे की तरह "पिउ पिउ" की रट लगाये है. हीरामन तोते ने मेरे प्रिय को लिवा लिया और उनकी विरह-अग्नि तथा काम-पीडा में मेरा तन-मन झुलस रहा है. पति-वियोग का बाण मेरे हृदय में इस तरह चुभ चुका है, जिससे घायल होकर रक्त टपकता है और मेरी चोली रक्त-वर्णित हो गई है. रक्त के बह जाने से हृदय-स्थल सूख गया है और प्राण व्याकुल हो रहे हैं."

नागमती का वह विलाप भारतीय नारी-हृदय के पवित्र उद्‌गार एवं पति के प्रति उसके सच्चे प्रेम का प्रतीक है. जायसी ने साधारण ग्रामीण अवधी भाषा में प्रकृति को आलंबन बनाकर नागमती की विरहावस्था को सशक्त ढंग से व्यक्त किया है.

BRAOU

6.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. पद्मावत : मलिक मुहम्मद जायसी
2. जायसी ग्रंथावली : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
3. त्रिवेणी : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
4. हिंदी के प्राचीन कवि : भारत भूषण अग्रवाल

******

इकाई 7 : रसखान के सवैये

रूपरेखा

7.1 पाठ का उद्देश्य
7.2 पाठ एवं कवि परिचय
7.3 मूल पाठ
7.4 सारांश-विशेष टिप्पणी सहित
7.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
7.6 शब्दार्थ
7.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
7.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
7.7.2 मध्यम श्रेणी के प्र
7.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
7.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
7.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में रसखान के भक्तिपरक तीन सवैये और श्रृंगार परक तीन सवैये संकलित हैं. इनके अध्ययन से आपको -

* रसखान की भक्ति-भावना का परिचय प्राप्त हो सकेगा.
* माधुर्य भावना से युक्त भक्ति के कई नए आयामों का ज्ञान हो सकेगा.
* श्रीकृष्ण के लोकोत्तर रूप-सौंदर्य को अनुभव किया जा सकेगा.
* भक्त के लिए किस प्रकार लोक उदात्तीकृत होकर लोकोत्तर हो जाता है, इस सत्य का ज्ञान हो सकेगा.

BRAOU

7.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

रसखान ने अपने भक्ति-भाव का प्रकाशन यूं तो दोहों में भी किया है, किंतु उनकी 'रसखान' उपाधि सवैयों और कवित्तों के आधार पर ही सार्थक होती है. भक्ति भाव की कोई रूढ़ि नहीं होती है तथा न कोई रीति होती है. वैधी भक्ति में अवश्य ही विधि-विधान की व्यवस्था की गयी थी किंतु वह भक्ति-मार्ग पर यात्रा आरंभ करनेवालों के लिए थी. ज्यों ही भक्त पराभक्ति के क्षेत्र में प्रवेश करता है, त्यों ही सारे विधि-विधान छूट जाते हैं.

रसखान की रचनाओं में भक्ति भाव से श्लिष्ट है और ऐसी कोई लकीर खींचना कठिन है, जिससे श्रृंगार और भक्ति को अलग-अलग किया जा सके. भक्त का श्रृंगार वर्णन उसके आराध्य का ही श्रृंगार वर्णन होता है और भक्ति भी उसी आराध्य के प्रति होती है. भले ही किन्हीं स्थलों पर ऐसा प्रतीत हो कि कवि श्रृंगार वर्णन में अश्लील हो गया है, किंतु ज्यों ही भक्त का आराध्य के प्रति संपूर्ण समर्पण भाव का स्मरण होता है, त्यों ही अश्लीलता और श्लीलता के सारे भेद धराशायी हो जाते हैं.

आराध्य भक्त के लिए सब कुछ होता है, इसलिए कभी भक्त व्यंग्य करता है, तो कभी शिकायत करता है, यहां तक कि जहां वह सर्वाधिक गंभीर होता है, वहीं कई बार शरारत भी करने लग जाता है. उसके लिए हंसी -मज़ाक का विषय भी आराध्य ही होता है और सर्वस्व समर्पण के लिए एकमात्र आश्रय भी. जो समझना चाहते हैं, वे सुविधा के लिए भक्ति की कुछ श्रेणियां गढ़ लेते हैं और फिर भी कितना समझ पाते हैं, यह विवाद का विषय है.

रसखान की भक्ति में भले ही श्रृंगार को अलग से देखने की रूढि न निभाई गयी हो, किंतु प्रस्तुत पाठ में अध्ययन की सुविधा के लिए तीन रचनाएं श्रृंगार की ली गई हैं. रसखान के काव्य का मूल-विषय श्रीकृष्ण थे और श्रीकृष्ण का संसार असीम और अनंत था. रसखान का काव्य अपनी सहज अनुभूति तथा उसे अनायास अभिव्यक्ति देने की क्षमता के कारण अलग ही लगता है. भाषागत माधुर्य और अनुप्रास के प्रति विशेष लगाव उनके काव्य की ऐसी विशेषताएं हैं, जो अलग ही नज़र आ जाती हैं.

कवि परिचय

मध्य युगीन कृष्ण भक्त कवियों में सैयद इब्राहीम रसखान का जीवन-वृत्त इतना धुंधला है कि विद्वानों में मतभेद ही मतभेद दिखाई देते हैं. अंत:साक्ष्य के रूप में रसखान की तीन रचनाएं हैं. सुजान रसखान, प्रेमवाटिका और दान-लीला. इन तीनों के अतिरिक्त कुछ फुटकर रचनाएं भी मिलती हैं, जिनमें रसखान के नाम की छाप है.

बहिर्साक्ष्य के रूप में 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता को आधार बनाया जाता है. उसी को आधार बनाकर कुछ अन्य ग्रंथ भी रचे गए. सभी में निष्कर्ष रूप में यह माना गया है कि रसखान मुसलमान थे और वे दिल्ली के निवासी थे. जन्म सं. 1615 एवं मृत्यु सं. 1685 में मानी गयी है. वैष्णव संप्रदाय में दीक्षा काल सं. 1640 माना गया है.

रसखान के जीवन के विषय में अनेक किंवदंतियां और जनश्रुतियां प्रचलित हैं. रसखान राजदरबारों से परिचित थे और राजसत्ता की पारस्परिक कलह के कारण उन्हें वितृष्णा हुई थी. यह सच है कि उत्तर प्रदेश के जिला हरदोई में उनका जन्म हुआ था और जो कुछ भी इनके जीवन के बारे में कहा और माना जाता है, वह मात्र अनुमान है. सारे उपलब्ध प्रमाणों का विवेचन करके यही निष्कर्ष निकलता है कि वि.सं. 1590 में 'पीहानी' (जिला हरदोई, उ.प्र.) में इनका जन्म हुआ. बचपन सुख से बीता. बचपन में ही पीहानी से दिल्ली आए. किशोरावस्था और यौवन के कुछ वर्ष राजसी वैभव में बीते. सं. 1612-13 के आस-पास दिल्ली के भीषण राजविप्लव के साक्षी रहे. वहां से ब्रज धाम आ गए. सं. 1634 से 35 के बीच उन्होंने रामचरितमानस का पाठ सुना. वहीं भगवान श्रीकृष्ण की माधुर्य भक्ति में अनुरक्त हुए. लौकिक प्रेम का उदात्तीकरण हुआ. श्रीकृष्ण के प्रति दिव्य-प्रेम का अनुभव करते हुए सं. 1685 के लगभग इनका निधन हुआ.

BRAOU

भले ही उन्होंने वल्लभ संप्रदाय में दीक्षा ली, माना जाता है कि श्री वल्लभाचार्य जी के पुत्र - स्वामी विट्ठलनाथ जी का शिष्यत्व ग्रहण किया था. लेकिन रसखान सांप्रदायिक मत से आक्रांत कभी नहीं रहे. उनके जीवन का सार प्रेम भाव था. पहले लौकिक प्रेम, फिर राधाकृष्ण के प्रति अलौकिक प्रेम. यह प्रेम ही उनकी भक्ति बना.

7.3 मूलपाठ

भक्ति परक रचनाएं

1. काहू को माखन चाखि गयौ अरु काहू को दूध दही ढरकायौ ।
काहू को चीर लै रूख चढ्यौ अरु काहू को गुंजधरा छहरायौ ।
मानै नहीं बरजें रसखानि सु जानियै राज इन्हें घर आयौ ।
आव री बूझैं जसोमति सों यह छोहरा जायों कि मेघ मंगायौ ।

2. धूर भरे अति शोभित स्याम जू तैसी बनी सिर सुंदर चोटी ।
खेलत खात फिरै अंगना पग पैंजनी बाजती, पीरी कछोटी ।
वा छवि को रसखानि बिलोकत बारत काम-कला निज कोटी ।
काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सों लै गयो माखन रोटी ।

3. बैन वही उनको गुण गाई औ कान वही उन बैन सों सानी ।
हाथ वही उन गान सरै अरु पाइ वही जु उही अनु जानी ।
जान वही उन प्रान के संग औ मान वही जु करै मनमानी ।
त्यों रसखानि वही रसखानि जुहै रसखानि सो है रसखानि ।।

श्रृंगार परक रचनाएं

4. छूट्यौ गृह काज लोक लाज मनमोहन कै
भूल्यौ मनमोहन कौ मुरली बजाइबो ।
अब ही दिन द्वै मैं रसखानि बात फैलि जै है
सजनी कहा लौ चंद हाथन दुराइबो ।।
कलि ही कलिंदी तीर चितयौ अचानक ही
दो उनवौ दोउन ओर मुरि मुसिक्याइबो ।।
दोऊ परैं पैया दोऊ लेत है बलैयां
उन्हें भूलि गयीं गैयां उन्हें गागर उठाइबो ।।

5. ब्रह्म मैं ढूंढ्यो पुरानन गानन वेद रिचा सुनि चौगुने चायन ।
देख्यो सुन्यो कबहूं न कितूं वह कैसे सरूप औ कैस सुभायन ।।
टेरत-टेरत हारि परयो रसखानि बतायो न लोग लुगायन ।
देखौ दुरो वह कुंजकुटीर मैं बैठो पलोटत राधिका पायन ।।

6. सोहत है चंढवा सिर मौर के जैसियै सुंदर पाग कसी है ।
तैसिये गोरज भाल विराजति जैसी हिये बनमाल लसी है ।
रसखानि बिलोकत बौरी भई दृग मूंदि कै ग्वालि पुकारि हंसी है ।
खोलि री घूंघट खोलौं कहा वह मूरति नैनन मांझ बसी है.

BRAOU

7.4 सारांश

1. कृष्ण-भक्तों के लिए गोपियों द्वारा कृष्ण की शिकायत यशोदा जी से करना भक्ति भाव की अभिव्यक्ति का एक प्रचलित काव्य-रूप रहा है. यहां भक्त गोपियों की शिकायत के माध्यम से उनके प्रेम को ही चित्रित करता है. शिकायत तो मात्र निमित्त होती है. गोपियां यशोदा जी के पास आती इसलिए हैं कि एक झलक कृष्ण को देख लें. प्रस्तुत सवैये में एक गोपी दूसरी गोपी से कह रही है कि चलो यशोदा से पूछ कर आएं कि उन्होंने पुत्र को जन्म दिया है या कहीं से किसी लुटेरे को बुलाया है. कभी किसी के यहां माखन चख लेता है, तो किसी के घर जाकर दूध-दही गिरा आता है. किसी के कपड़े लेकर पेड़ पर चढ़ जाता है. किसी के गले से माला खींच लेता है तो उसके दाने धरती पर बिखर जाते हैं. मना करो तो सुनता नहीं है. इस प्रकार व्यवहार करता है कि जैसे राज्य ही उसका है.

   अंतिम पंक्ति का पाठ भेद इस प्रकार भी प्राप्त होता है - "आउरी बूझै" जसोमति सों यह छोहरा जायो कि भय उपजायो ।।" श्रीकृष्ण के प्रति गोपियों के प्रेम का हाल यह है कि उनका उपद्रवी होना ही प्रेम का कारण बन जाता है. प्रेम और उपद्रव कृष्ण भक्तों के लिए अलग-अलग हैं भी नहीं.

   रसखान यहां गोपियों से एकाकार हो जाते हैं. शिकायत के प्रत्येक शब्द में लाड़ और प्यार भरा पड़ा है. जैसे सारी शिकायतें आलोचना या निंदा न होकर प्रशंसा हों. श्रीकृष्ण की कथा में उनका उपद्रवी चरित्र ही उनके प्रति आकर्षण का आधार है. बिना किसी प्रकार की आलंकारिक प्रवृत्ति के ऐसी भाषिक अभिव्यक्ति, जो सीधी-सादी और प्रभावकारी हो, रसखान की अनोखी विशेषता कही जाएगी. भाषा का माधुर्य तथा उसकी कोमलता, बिना किसी अलंकार के सहज ही रसखान की अभिव्यक्ति बन जाती है.

   रसखान की सबसे बड़ी विशेषता, उनकी अभिव्यक्ति की अनायासता ही है.

2. कहा जाता है कि सैयद इब्राहीम का नाम रसखान इसलिए पड़ा क्योंकि उन्होंने अपने आराध्य का नाम रसखान रखा था. श्रीकृष्ण का बाल्यावस्था का रूप यहां कवि रसखान का प्रतिपाद्य है. रसखान का भक्त मानस पहले तो बालकृष्ण के रूप सौन्दर्य का वर्णन करता है. वे धूल से भरे हुए हैं, उनके सिर पर बालों की सुंदर चोटी गुंथी हुई है. वे पूरे आंगन में खेलते और खाते हुए फिर रहे हैं. उनके पांवों की पैंजनी बज रही है. घुटनों से ऊपर की धोती है, जो पीले रंग की है. श्रीकृष्ण की यह सुंदरता रसखान को रस की खान की तरह लग रही है. ऐसे कृष्ण के हाथ से एक कौआ रोटी छीनकर उड़ जाता है तो भक्त कवि रसखान कहते हैं कि कौवे के भाग्य की क्या सराहना की जाए ? वह कृष्ण के हाथ से माखन रोटी लेकर चला गया. अर्थात् कृष्ण को इतने निकट से देखने का उसे अवसर मिल गया. उपर्युक्त सवैये को एक गोपी द्वारा दूसरी गोपी से कही गयी उक्ति भी माना जाता है. सजनी शब्द इसी का द्योतक है. रसखान की भक्ति भावना की व्यापकता का भी पता इससे चलता है कि भले ही उन्होंने पुष्टि-मार्ग या वल्लभ संप्रदाय में दीक्षा ली हो, किंतु वे किसी सांप्रदायिक संकीर्णता में बंधे नहीं रहे.

BRAOU

सवैया रसखान का प्रिय छंद था और सवैयों में भी मत्तगयंद सवैया अत्यंत प्रिय था. मत्तगयंद सवैये में सात-बार भगण (एक गुरु दो लघु) की आवृत्ति रहती है और अंत में दो गुरु आते हैं. इसका नाम मत्तगयंद इसलिए पड़ा कि इसकी चाल मस्त हाथी की चाल की तरह होती है.

3. इस सवैये में रसखान अपने आराध्य के प्रति अनन्यता दर्शाते हैं वे कहते हैं कि वही वाणी वास्तव में वाणी है जो आराध्य के गुण गाती है और उन्हीं कानों को कान कहा जा सकता है जो आराध्य के गुणों को सुनकर तृप्त हुए हों. हाथ भी वे ही सार्थक होते हैं, जो आराध्य के शरीर को सहलाते हैं और पैर भी तभी सार्थकता प्राप्त करते हैं जब आराध्य के पीछे-पीछे चलते हैं. प्राण भी उन्हीं के साथ प्राण होने की प्रामाणिकता प्राप्त करते हैं और भक्त का मन भी तभी सार्थक हो पाता है जब आराध्य उसके साथ मनमानी करें. रसखान कहते हैं कि वही रस की खान है जो वास्तव में रस की खान होने का अधिकारी है. सिवाय आराध्य के और कोई रस की खान नहीं हो सकता.

सवैये की अंतिम पंक्ति रसखान शब्द के दोहराव के कारण संगीत सौंदर्य उत्पन्न करती है. रसखान के यहां भक्ति भाव ही इतना प्रबल होता है कि वह बिना किसी अतिरिक्त आयास के कविता में रूपांतरित हो जाता है. सवैया मत्तगयंद है और यह रसखान की रुचि के अनुकूल ही है.

<u>श्रृंगार परक रचनाएं</u>

4. रसखान के लिए आराध्य ही रस की खान थे. आराध्य श्रीकृष्ण और राधा का युगल रूप था. रसखान ने श्री राधा और श्रीकृष्ण के प्रणय को यहां कवित्त-छन्द में व्यक्त किया है. एक सखी दूसरी सखी के राधा के प्रणय के विषय में कहती है कि राधा का घर में काम-काज करना छूट गया है और कृष्ण लोक-लाज को छोड़ चुके हैं. दूसरा अर्थ यह हो सकता है कि श्री राधा जी मन मोहन श्रीकृष्ण के लिए लोक-लाज को छोड़ चुकी थीं और श्रीकृष्ण मुरली बजाना भूल चुके हैं. जब ऐसा हो रहा है तो दो दिन में अर्थात् कुछ ही समय में सब लोग यह बात जान जायेंगे क्योंकि हे सखी ! जब चांद आसमान में उदित होता है तो उसे हाथों से छुपाया नहीं जा सकता. कल की ही बात है कि यमुना नदी के किनारे दोनों आकस्मिक रूप से मिल गए. एक दूसरे की ओर देखा और मुड़कर मुस्कुराने लगे, फिर तो ऐसा हुआ कि दोनों एक दूसरे को प्रणाम कर रहे थे. एक-दूसरे की बलैयां ले रहे थे. इन्हें अपनी गाएं याद नहीं रह गईं थीं और उन्हें घड़ा उठाना याद नहीं रह गया था.

प्रस्तुत कवित्त घनाक्षरी है जिसमें बत्तीस वर्ण होते हैं. रसखान इस घनाक्षरी में श्री राधाकृष्ण के माध्यम से प्रेम में सुध-बुध खो जाने के तथ्य को चित्रित कर रहे हैं. लोक-लाज हो, गृह-काज हो अथवा मुरली बजाना हो, इन सभी के लिए होश चाहिए और प्रेम में श्री राधा-कृष्ण होश खो बैठे हैं. प्रेम भाव की तीव्रता ही इस कवित्त में दर्शायी गयी है.

5. रसखान की माधुर्य भक्ति का उत्कृष्ट प्रमाण यह सवैया है. इसमें श्री राधा जी मानिनी नाइका है और श्रीकृष्ण ऐसे नायक हैं जो नाइका को मना रहे हैं किंतु वे परब्रह्म ईश्वर हैं, यह भी रसखान को पता है. सवैये में रसखान कहते हैं कि मैंने अपने आराध्य को ब्रह्म या ब्रह्मा में ढूंढा, पुराणों में ढूंढा, वेद की ऋचाओं में ढूंढा. जहां भी मैं उनका होना सुनता, वहीं उनको पाने की चाह चौगुनी हो जाती. इसके बावजूद मैंने कहीं पर भी न तो देखा न तो सुना कि उनका स्वरूप कैसा है या उनका स्वभाव कैसा है. हर जगह उन्हें पुकारता रहा, ढूंढ़ता रहा और आखिर में हार गया. रसखान कहते हैं कि मुझे किसी

DRAOU

भी नर अथवा नारी ने उनके विषय में नहीं बताया. लेकिन आखिर में जब वे मिले तो मैं ने देखा कि वे वृंदावन के कुंजों से बनी कुटिया या मंडवे में मानिनी राधा के पांवों को सहलाते हुए मनाने का प्रयत्न कर रहे हैं.

जो ब्रह्म निराकार, निर्गुण और सर्वव्यापी हैं, वही माधुर्य भक्ति में कैसे एक धीर ललित नायक में रूपांतरित होकर प्रस्तुत होता है. निश्चित ही भगवान भक्त की भावना से अलग कुछ हो ही नहीं सकते. माधुर्य-भक्ति के भाव से युक्त भक्त आराध्य को उनकी प्रियतमा से अलग करके नहीं देख सकते तो श्रीकृष्ण सहज भाव से भक्त के लिए कुपित नाइका को मनाने वाले नायक में बदल जाते हैं. विद्वानों ने जयदेव के गीत गोविन्द और विद्यापति, चंडीदास आदि का प्रभाव इस तरह की उक्तियों पर देखा है किंतु मधुराभक्ति का यह सामान्य चरित्र है. इसके लिए प्रभाव की कोई आवश्यकता नहीं होती.

सगुण भक्ति का चरमोत्कर्ष ही मधुरा भक्ति में प्राप्त होता है और निश्चित ही रसखान इसके सर्वथा उपयुक्त पात्र हैं.

6. प्रस्तुत सवैये में एक गोपी दूसरी गोपी से श्रीकृष्ण के रूप-सौंदर्य का वर्णन कर रही है. वह कह रही है कि 'श्रीकृष्ण के सिर पर मोर पंख शोभित हो रहा है. मोर पंख में जो चंद्रमा का आकार दिखता है वह अत्यंत सुंदर लग रहा है और उसी तरह से उतनी ही सुंदर वह पगड़ी है जिसे श्रीकृष्ण ने पहन रखा है. उसी तरह से ललाट पर वह धूल सुंदर लग रही है जो गायों के खुरों से उठी है और श्रीकृष्ण के वक्ष पर वरमाला भी वैसी ही सुंदर लग रही है. वे उस समय रस की खान प्रतीत हो रहे थे जिन्हें देखते ही मैं पागल हो गई और मैंने आंखें बंद कर ली. जब आस-पास की सखियां हंसी-हंसी में पुकारने लगीं कि घूंघट उतारकर श्रीकृष्ण का सौंदर्य देखो तो सही. जवाब में मैंने कहा - न तो मुझे आंखें खोलने की जरूरत है और न ही घूंघट खोलने की क्योंकि श्रीकृष्ण का वह रूप तो मेरे आंखों के भीतर बस गया है.

रसखान की भक्ति भावना इतनी व्यापक है कि आराध्य की प्रणय क्रीड़ाएं उसका रूप सौंदर्य आदि भी उसी में सिमट आया है. कहा जा सकता है कि रसखान के लिए अपने आराध्य के प्रति प्रेम ही उनके काव्य का स्थाई विषय-वस्तु बन गया था. रसखान जो भी कुछ कहते, वह भक्ति भावना की अभिव्यक्ति बन जाता है. दूसरे शब्दों में वे सिवाय भक्ति भावना के कुछ कह ही नहीं सकते थे.

BRAOU

7.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

रसखान की रचनाएं सहज ही इस बात को प्रमाणित करती हैं कि जब कोई भाव स्थायी रूप से घर कर लेता है, तो कविता अनायास घटित होने लगती है. मैथलीशरण गुप्त जी से क्षमा मांगते हुए वे यह कह सकते हैं कि - "प्रेम तुम्हारा चरित्र स्वयं ही काव्य है, कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है." किंतु यह प्रेम लोकोत्तर है. आराध्य के प्रति ही है. इसमें चाहे व्यंग्य हो, चाहे हंसी ठिठोली अथवा उपालंभ ही क्यों न हो, ये सब अंततः भक्ति भावना की अभिव्यक्ति ही बन जाते हैं. श्रीकृष्ण भक्ति रस में स्नान करके सैयद इब्राहीम तो रसखान बन ही गए, साथ में वे ऐसे पारस की तरह हो गए कि किसी भी अभिव्यक्ति-रूप अथवा अनुभूति रूप को वे छू भर लेते तो वह भक्ति भाव बन जाता. पारंपरिकता और रूढ़ि बद्धता न रसखान के भक्ति परक काव्य में थी और न श्रृंगार परक काव्य में. रसखान स्वच्छंद धारा के कवि थे. भक्ति और श्रृंगार उनके पास शास्त्र के माध्यम से नहीं पहुंचा था बल्कि जीवन में घटित हुआ था. एकाएक उन्होंने पाया था कि वे जिस आराध्य की भक्ति कर रहे हैं, वह रस की खान हैं और भगवान का रस की खान होना, भक्त को भी रस की खान बना देता है. इसीलिए उनका नाम ही

रसखान पड़ गया. भगवान की रसखान और भक्त भी रसखान. यह चमत्कार और कीमियागिरी संपूर्ण भक्ति काव्य में केवल रसखान में ही प्राप्त होती है. तुलसी, सूर, कबीर या ऐसा कोई भी भक्त नहीं है जो यह कह सके अथवा जिसके बारे में यह कहा जा सके कि जो भगवान का स्वभाव था, वही भक्त का बन गया. इस अर्थ में रसखान अद्वितीय भक्त और अद्वितीय कवि सिद्ध होते हैं.

7.6 शब्दार्थ

1. काहू को - किसी का
   ढरकायो - गिरा दिया
   चीर - कपड़े, साड़ी
   रुख - पेड़
   धरा - पृथ्वी
   छहरायो - बिखेर दिए
   बरजे - मना करना
   इन्हें - इनके
   बूझें - पूछें
   जसोमति - यशोदा
   छोहरा - बेटा
   जायो - जन्म दिया
   मेव - लुटेरा

2. धूर - धूल
   सोभित - सुंदर लगते हैं
   पैंजनी - पैर का गहना
   कछौटी - कसी हुई धोती
   छवि - सुंदरता
   बिलोकत - देखते हुए
   बारत - निछावर करते हैं
   कोटी - करोड़
   काग - कौवा
   हरि - कृष्ण

3. बैन - वाणी या वचन
   सानी - सने हुए
   गात - शरीर, देह
   सरै - सहलाते हैं
   पाइ - पैर
   उहि - उन्हीं के
   अनुजानि - पीछे-पीछे जाते हैं
4. छूट्यो - छूट गया

BRAOU

	द्वै	-	दो
	दुराइबो	-	छिपाना
	कल्हि	-	कल की ही बात है
	कलिंदी	-	यमुना
	तीर	-	किनारा
	चित्यो	-	देखा
	मुरि	-	मुड़कर
	मुस्क्यायिबो	-	मुस्कुराना
	दोऊ	-	दोनों
	परैं	-	पड़ते हैं
	पैंया	-	पैर
5.	चायन	-	चाव, इच्छा
	किंतू	-	कहीं
	सुभायन	-	स्वभाव
	हेरत	-	पुकारते हुए, ढूंढते हुए
	हरि परयो	-	हार गया
	दुरो	-	छुपा हुआ था
	पलोटन	-	सहलाता हुआ
	पायन	-	पैरों को
6.	सोहत	-	शोभित होता है
	चंदवा	-	चंद्रमा
	जैसिए	-	जैसी
	तैसिए	-	वैसी ही
	गोरज	-	गाय के पैरों से उठी हुई धूल
	हिए	-	हृदय पर
	लसी	-	अच्छी लगती है
	बावरी	-	पागल
	भई	-	हो गयी
	दृग	-	आंखें
	ग्वालि	-	ग्वालिन, सखी
	मांझ	-	भीतर

7.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

7.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. रसखान की भक्ति भावना को समझाइए.
2. "रसखान की भक्ति में व्यापकता इतनी अधिक थी कि उसकी सीमा ही नहीं थी." इस उक्ति की व्याख्या कीजिए.
3. "रसखान के काव्य में श्रृंगार और भक्ति एक ही हो गए थे." सोदाहरण बतलाइए.

BRAOU

7.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. प्रेम भावना की तीव्रता में श्री राधा और कृष्ण क्या-क्या भूलते हैं ?
2. गोपियों ने श्रीकृष्ण को लुटेरा क्यों कहा ?
3. गोपी कौवे के भाग्य से क्यों ईर्ष्या करती है ?
4. भक्त रसखान को ब्रह्म कहां दिखाई दिये ? कहां नहीं दिखाई दिये ?
5. रसखान के लिए अनन्यता का क्या अर्थ है ?
6. श्रीकृष्ण की कैसी सुंदर छवि को गोपियों ने अपनी आंखों में बसा लिया है ?

7.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

7.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- "रसखान के काव्य में श्रृंगार और भक्ति एक ही हो गये थे" - सोदाहरण बतलाइए.

उत्तर- रसखान की भक्ति भावना शास्त्र प्रदत्त नहीं थी. उनकी भक्ति स्वच्छंद प्रकृति की थी और सीधे-सीधे जीवन में घटित हो गयी थी. रसखान के लिए आराध्य रस अर्थात् आनंद की खान थे. लोक में वे सारे व्यवहार जो आनंद की झलक दिखला सकते हैं, रसखान के लिए लोकोत्तर क्षेत्र में वे भक्तिभाव के प्रदर्शक बन गए. स्त्री-पुरुष प्रेम से बढ़कर लोक में आनंददायी कुछ नहीं होता, तो रसखान के लिए यह व्यवहार सहज ही उनके आराध्य से जुड़ गया. रसखान तो सामान्य हंसी-मजाक, व्यंग्य आदि को भी श्रीकृष्ण से जोड़कर आनंद में रूपांतरित कर देते हैं, तो फिर श्रृंगार तो उनके लिए इसकी खान तक जाने का महापथ ही हो गया.

सारी श्रृंगारिक चेष्टाएं, भाव, अनुभाव, श्रीकृष्ण और राधा के युगल रूप से जुड़ गए और देखते-देखते रसराज भक्ति-रस में घुल-मिल गया. रसखान को इससे कोई आपत्ति नहीं थी कि ब्रह्म धीर-ललित नटखट नायक श्रीकृष्ण के रूप में अवतरित होता है और रसखान के भक्तिभाव में कोई व्याघात नहीं पहुंचता. उनकी दीक्षा वल्लभ संप्रदाय में हुई थी किंतु वे रस की खान श्रीकृष्ण के उपासक थे. उन्हें इस बात से कोई सरोकार नहीं था कि उनकी भक्ति संप्रदाय सम्मत है या नहीं. न तो प्रेम की कोई सीमा होती है, न भक्ति की और न रस की. यहां तो भगवान और भक्त दोनों ही रस की खान हैं. इसलिए किसी तरह की सीमा, विभाजन और भेद की बात ही अनुचित हो जाती है. रसखान की भक्ति में श्रृंगार और भक्ति भाव प्रेम के धरातल पर एक हो जाते हैं तो यह सहज ही है क्योंकि प्रेम श्रृंगार का भी घटक है और भक्ति का भी. इसलिए रसखान अत्यंत सहजता से श्री राधा कृष्ण की प्रणय चेष्टाओं को भी भक्ति भाव से वर्णित करते हैं और भक्ति भाव में डूबकर जब अनंत अभेद को गुहारते हैं, तो तुरंत ही यह कह देते हैं कि वह अनंत थोड़ी सी छाछ के लिए अहीर की छोकरियों के इशारे पर नाच रहा है.

वास्तव में मधुराभक्ति के अंतर्गत रसखान ब्रज की गोपी हो गए हैं, जिनके लिए श्रीकृष्ण का ब्रह्म आदि होना गौण तथ्य और माखन चोर आदि होना प्रमुख है. इसलिए रसखान के काव्य में श्रीकृष्ण श्रृंगारिक नायक पहले हैं और भगवान बाद में, लेकिन हैं दोनों एक ही. जब भगवान एक ही हैं और भक्त अखंड

BRAOU

हैं, तो उन दोनों के बीच में सक्रिय भावना खंडित कैसे होगी ? न भक्ति भावना खंडित है, न श्रृंगार खंडित है क्योंकि दोनों ही अखंड अनंत के अंश हैं.

7.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- गोपी कौवे के भाग्य से ईर्ष्या क्यों करती है ?

उत्तर- श्रीकृष्ण के बाल्यावस्था का सौन्दर्य अद्‌भुत है. वे पैंजनी बजाते हुए, पीली कछौटी पहने आंगन में खेलते और माखन रोटी खाते हुए घूम रहे हैं. तभी गोपी उन्हें देखती है और यह भी देखती है कि एक कौआ श्रीकृष्ण के हाथ से माखन रोटी छीन कर उड़ गया. गोपी उस कौए के भाग्य से ईर्ष्या करने लगती है क्योंकि एक तो कौए ने अत्यंत निकट से श्रीकृष्ण के मनमोहक सौंदर्य को देखा और दूसरे श्रीकृष्ण की आधी खायी हुई माखन रोटी उसे खाने को मिल गयी.

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) मुस्लिम भक्त कवियों का सांस्कृतिक समन्वय : डॉ. सुरेश आचार्य
2) भक्ति काव्य और लोक जीवन : शिवकुमार मिश्र
3) हिन्दी और मलयालम का कृष्ण भक्ति काव्य : डॉ. भास्करन नायर
4) रसखान : डॉ. विद्यानिवास मिश्र
5) रसखान : श्री याज्ञिक.

******

BRAOU

इकाई 8 : रहीम के दोहे

रूपरेखा

8.1 पाठ का उद्देश्य
8.2 पाठ एवं कवि परिचय
8.3 मूल पाठ
8.4 सारांश
8.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
8.6 शब्दार्थ
8.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
8.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
8.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
8.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
8.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
8.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
8.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

81 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में रहीम के नीतिपरक एवं भक्तिपरक दोहों पर प्रकाश डाला गया है. इन दोहों के अध्ययन से आप -

* रहीम के नीति-संबंधी दोहों के अर्थमूलक उपदेशों को समझ सकेंगे.
* जीवन के प्रति रहीम के दृष्टिकोण को जान सकेंगे.
* रहीम की भक्ति संबंधी अवधारणा से परिचित हो सकेंगे.
* अकबरी दरबार की हिंदी कविता से परिचित हो पायेंगे.
* मानव जीवन में नीति तत्व की आवश्यकता को समझ पायेंगे.

BRAOU

8.2 पाठ एवं कवि परिचय

रहीम अकबर के दरबार में नवरत्नों में से एक थे. अद्वितीय युद्धवीर एवं अतिशय उदार, दानवीर रहीम बहुभाषाविद, कला पारखी एवं युगद्रष्टा साहित्यकार थे. उनकी रचनाओं में नीति के दोहों के साथ-साथ भक्ति के दोहे भी पर्याप्त मात्रा में हैं. प्रस्तुत पाठ में रहीम के नीतिपरक एवं भक्तिपरक दोहों को दिया गया है.

नीति का मनुष्य के चरित्र-विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है. रहीम के नीतिपरक दोहे जीवन के गहन अनुभव से उत्प्रेरित हैं. इन दोहों के माध्यम से रहीम ने जीवन को अधिकाधिक उन्नत, सुखी एवं सुंदर बनाने का प्रयास किया है.

रहीम के भक्तिपरक दोहों में उनका सगुण विश्वास, ईश्वर के प्रति अगाध प्रेम और आस्था परिलक्षित होती है. वे अकबर के दरबार में सामसिक संस्कृति के प्रतिनिधि कवि थे. अपनी बात कहने के लिए वे हिंदू मान्यताओं को उद्धरित करने में संकोच नहीं करते थे.

कवि-परिचय

रहीम का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खानखाना था. आप अकबर के अभिभावक एवं सेनानायक बैरम खान के सुपुत्र थे. आपका जन्म 17 दिसंबर सन् 1556 ई. को लाहौर में हुआ था. आपका देहावसान इकहत्तर वर्ष की उम्र में दिल्ली में ही सन् 1627 में हुआ था.

रहीम जब चार वर्ष के थे तब उनके पिता की हत्या कर दी गई थी. तब अकबर ने रहीम को अपने पास बुलवा लिया. उनकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध राज्य की ओर से कर दिया. अकबर की देखरेख में ही रहीम पले और बढ़े.

अपनी प्रतिभा के बल पर वीर सेनापति, योग्य प्रशासक, कुशल राजनीतिज्ञ एवं अकबरी दरबार के नवरत्नों में से एक बननेवाले रहीम बहुमुखी प्रतिभा-संपन्न थे. प्रकृति से बड़े दयालु, वे स्वयं कवि होने के साथ-साथ कवियों के आश्रयदाता भी थे. गुणी होने के साथ-साथ वे गुणी-जनों का आदर करने वाले भी थे. किंवदंती है कि गंग कवि के एक ही छन्द पर प्रसन्न होकर उन्होंने 36 लाख रुपये पुरस्कार में दिये थे. हो सकता है कि इसमें अतिशयोक्ति हो पर यह सच है कि वे बड़े दानी थे.

बड़े अनुभवी, दूरदर्शी, उदार, दानी, वीर और कला-प्रिय रहीम मानव प्रकृति के पारखी भी थे. अपने दीर्घ जीवन के उतार-चढ़ाव, यश-अपयश, संपन्नता-विपन्नता तथा सौभाग्य-दुर्भाग्य के कारण रहीम को प्राप्त हुआ जगत का व्यावहारिक अनुभव का परिचय उनके दोहों से मिलता है.

रहीम ने अरबी, फारसी, तुर्की, संस्कृत और हिंदी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था. इन सभी भाषाओं में काव्य रचना करने में वे समर्थ थे. रहीम 'रत्नावली' या 'दोहावली', नगर शोभा, बरवै नायिका भेद, बरवै मदुनाष्टक' 'श्रृंगार सोरठा एवं फुटकर छन्द' तथा पद आदि आपकी प्रसिद्ध हिंदी कृतियां हैं. ब्रज एवं अवधी दोनों ही भाषाओं में रचित रहीम के काव्यों की भाषा सरल और सरस है.

रहीम के नीति और उपदेश के दोहे लोकोक्तियों के रूप में लोगों की जिह्वा पर रहते हैं. वे अनेक अवसरों पर दृष्टांत के रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं. जीवन के सत्य की सफल अभिव्यक्ति करने वाले इन दोहों में भक्ति, नीति, प्रेम, लोक व्यवहार आदि का बड़ा ही सजीव चित्र उपस्थित हुआ है.

गोस्वामी तुलसीदास के घनिष्ठ मित्र रहीम के दोहों में तुलसी की सी भावुकता और मार्मिकता के दर्शन होते हैं. यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि कबीर, तुलसी और सूर के बाद हिंदी भाषा-भाषी क्षेत्र में रहीम ही सबसे अधिक लोकप्रिय कवि हैं.

रहीम का यौवन काल जितना सम्मान और वैभवपूर्ण एवं सुखद था उतना ही दु:खद उनका अंतिम समय था. धन, पद, जागीर, पुत्र सब देखते ही देखते मिट गये. उन्हें जहांगीर द्वारा अपमानित होना पड़ा. रहीम के इस दु:खद जीवन की कडवाहट भी उनके दोहों में मिलती है.

हिंदी के मुसलमान कवियों में विशिष्ठ स्थान के अधिकारी रहीम, हिंदू धर्म और संस्कृति से भली-भांति परिचित थे. उन्होंने हिंदुओं के धर्म ग्रंथों का अध्ययन भी भली-भांति किया था. इसीलिए उनके दोहों

में हिंदू धर्म के रीति-रिवाज़ों का उल्लेख मिलता है. भक्ति काव्य के अंतर्गत एक आस्थावान हिंदू के समान उन्होंने कृष्ण के साथ-साथ राम, शिव, गंगा आदि के प्रति भी अपनी भावना निवेदित की है. वे भारतीय सामासिक संस्कृति के प्रतिनिधि कवि थे.

83 मूलपाठ

रहीम के नीतिपरक दोहे

धनि रहीम गति मीन की, जल बिछुरत जिय जाय ।
जियत कंज तजि अनत बसि, कहां भ्रमर को बाय ।।1।।

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोरहु चटकाय ।
टूटे से फिर न मिले, मिले गांठ पड़ जाय ।।2।।

निहि अंचल दीपक दुरयो हन्यो से ताहि गात ।
रहिमन असमय के परे, मित्र शत्रु ह्वै जात ।।3।।

रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राखो गोय ।
सुन अठिलैहै लोग सब, बांट न लेहै कोय ।।4।।

रहिमन ओछों नरन सों, बैर भलो न प्रीति ।
काटे-चाटे स्वान के, दोउ भाँति विपरीत ।।5।।

रहिमन कठिन चिताहु ते, चिन्ता कर चित-चेत ।
चिता दहति निर्जीव को, चिंता जीव समेत ।।6।।

बडे पेट को भरन कों, हे रहीम दु:ख बाढ़ी ।
यातें हाथी हहरि कै, दिये दांत द्वै काढ़ी ।।7।।

रहिमन यों सुख होत है, बढ़त देख निज गोत ।
ज्यों बहरी अखियां निरखि, आंखिम को सुख होत ।।8।।

गयत मथत माखन रहै, दही मही बिलगाय ।
रहिमन सोई मीत है, भीर परै ठहराय ।।9।।

मांगे घटत "रहीम" पद, कितो करो बड़ी काम ।
तीन पैग वसुधा करी, तऊ बावनै नाम ।।10।।

रहीम के भक्तिपरक दोहे

जिहि "रहीम" चित आपनो, कीन्हो चतुर चकोर ।
निसि बासर लग्यो रहै, कृष्ण चन्द्र की ओर ।।1।।

समय दसा कुल देखि कै लोग करत सनमान ।
"रहिमन दीन अनाथ को तुम बिनु को भगवान ।।2।।

BRAOU

जो गरीब पर हित करै, ते "रहीम" बड़ लोग ।
कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण , मिताई जोग ।।3।।

धूर धरत नित सीस पर, कहु रहीम किहिं काज ।
जिहि रज मुनि पतनी तरी, सो ढूंढता गजराज ।।4।।

खैंचि चढ़नि, ढीली ढरनि, कहहु कौन यह प्रीति ।
आज काल मोहन गही, बंस दिया की रीति ।।5।।

रहिमन करि सम बल नहीं, मानत प्रभु की धाक ।
दाँत दिखावत दीन ह्वै, चलत घिसावत नाक ।।6।।

मुनि नारी पाषान ही, कपि पसु गुह मातंग ।
तीनों तारे राम जू, तीनों मेरे अंग ।।7।।

रहिमन को कोउ का करै, जारी चोर लबार ।
जो पत-राखन-हार है, माखन-चाखन हार ।।8।।

दीन सबन को लखत है, दीनै लखै न कोय ।
जो रहीम दीनै लखै, दीन-बंधु सम होय ।।9।।

अमर बेलि बिनु मूल की, प्रतिपालत है ताहि ।
रहिमन ऐसे प्रभुहि तजि, खोजत फिरत है काहि ।।10।।

84 सारांश

BRAOU

नीतिपरक दोहे

1) प्रेम की एकात्मकता स्पष्ट करते हुए रहीम कहते हैं मछली जल से इतना प्रेम करती है कि वह जल के बिना जीवित नहीं रह सकती. जल से बिछुड़ते ही वह अपने प्राण त्याग देती है लेकिन भ्रमर अपने प्रिय कमल को छोडकर दूसरे फूलों पर मंडराने लगता है.

विशेष

यहां रहीम ने प्रेम के महत्व और उसकी एकात्मकता को दिखाया है. सच्चा प्रेम किसी एक ही व्यक्ति से हो सकता है और उससे वियोग होने पर प्रेमी जीवित नहीं रह सकता. भोग सभी से और प्रेम किसी से भी नहीं, इसी को भ्रमरवृत्ति कहते हैं. भौंरा हर फूल पर मंडराता है, उसका रसपान करता है और रस समाप्त होने पर उसे छोड दूसरे फूल के पास जाता है. वह किसी से प्रेम नहीं करता जबकि मछली भौंरे की तुलना में महान है क्योंकि वह अपने प्रिय से बिछुडते ही प्राण त्याग देती है.

2. इस दोहे में रहीम ने प्रेम के महत्व की अभिव्यक्ति के साथ-साथ उसे किस तरह निभाना चाहिए, इस पर भी प्रकाश डाला है. रहीम कहते हैं कि प्रेम एक धागे के समान होता है. जिस प्रकार धागा अगर एक बार टूट जाए तो दुबारा जोड़ने पर उसमें गांठ पड जाती है उसी प्रकार प्रेम संबंध में भी एक बार उसमें मनमुटाव हो जाए तो वह टूट जाता है और फिर जोडने पर पहले की तरह नहीं रहता.

हृदय में टूटे हुए संबंध की गांठ सदैव की रहती है. अत: रहीम कहते हैं कि प्रेम रूपी धागे को झटककर नहीं तोड़ना चाहिए.

विशेष

यहां कवि ने धागे का उदाहरण देकर प्रेम संबंधों की बहुत ही सुंदर ढंग से व्याख्या की है. जिस प्रकार धागा एक बार टूटने पर फिर दुबारा उसी तरह से जुड़ नहीं सकता, उसी प्रकार प्रेम संबंधों में भी एक बार दरार पड जाए तो लाख प्रयास करने पर भी फिर से पहले के समान संबंध नहीं रह जाता. अत: प्रेम संबंधों को बनाए रखने के लिए विशेष सतर्कता की आवश्यकता है.

3. प्रस्तुत दोहे में समय के महत्व को प्रतिपादित करते हुए रहीम कहते हैं कि दीपक हवा के झोंके से बुझ न जाए इसीलिए स्त्री अपने आंचल की ओट से रात में उसे बचाती है लेकिन वही स्त्री सुबह होते ही उसी आंचल से दीपक को बुझा देती है. उसी प्रकार बुरा समय आने पर मित्र भी शत्रु बन जाते हैं.

विशेष

यहां मनुष्य की स्वार्थी प्रवृत्ति की ओर संकेत किया गया है. जिस दीपक को पवन से बचाने के लिए आंचल का सहारा लिया जाता है, उपयोगिता न रहने पर उसी आंचल से उसे बुझा भी दिया जाता है. इसी प्रकार बुरे समय में चूंकि हम मित्रों के लिए उपयोगी नहीं रह जाते. अत: वे हमारे शत्रु बन जाते हैं.

4. प्रस्तुत दोहे में अपने मन की व्यथा मन में ही रखने का उपदेश देते हुए रहीम कहते हैं कि इस स्वार्थी संसार में कोई भी हमारा दु:ख बांटता नहीं. अत: हमें अपने मन के दुख को मन में ही रखना चाहिए, क्योंकि सुनकर कोई हमारा दुख बांटता तो नहीं है अपितु हमारी हंसी ही उडाता है.

विशेष

इस दोहे में रहीम ने सांसारिक व्यक्तियों की स्वार्थपरता को रेखांकित किया है. दुख में कोई भी हमारा साथी नहीं होता. अत: कवि इस संसार के लोगों की प्रवृत्ति जानकर पाठकों को सचेत करता है और आपने मन की व्यथा मन में ही रखने का उपदेश देता है.

5. रहीम प्रस्तुत दोहे में नीच प्रकृति के लोगों से दूर रहने की सलाह देते हुए कहते हैं कि नीच प्रवृत्ति के लोगों से न तो शत्रुता रखनी चाहिए न ही मित्रता. कवि उदाहरण देते हुए कहते हैं कि कुत्ते के काटने और चाटने दोनों से ही हमारा अहित होता है. अत: उसका न प्रेम भला न शत्रुता भली.

विशेष

नीच प्रकृति के व्यक्ति से किसी का हित नहीं हो सकता. यदि वे हमारा भला करने का प्रयास करते हैं तो भी उसमें उनका स्वार्थ होता है और यदि शत्रुता रखते हैं, तब भी उससे तो हमारा अहित होता ही है. अतएव ऐसे नीच व्यक्तियों से दूरी बनाए रखने में ही हमारा हित है.

6. मनुष्य के हृदय को सबसे अधिक व्यथित करनेवाली चिंता की ओर लक्ष्य करते हुए रहीम कहते हैं कि चिंता चिता से भी अधिक भयंकर है क्योंकि चिता तो मृतक (मरे हुए व्यक्ति) को जलाती है लेकिन चिंता जीवित व्यक्ति को जला डालती है.

BRAOU

विशेष

प्रस्तुत दोहे में रहीम ने चिंता का मनुष्य जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है इसे स्पष्ट किया है. अत्यधिक चिंतित रहने वाले व्यक्ति का संपूर्ण जीवन ही दूभर हो जाता है. चिंता के कारण वह जीवन का आनंद नहीं उठा पाता. इसीलिए रहीम ने चिता के माध्यम से अत्यंत ही सुंदर दृष्टांत प्रस्तुत करते हुए स्पष्ट किया है कि चिता तो निर्जीव शरीर को जलाती है लेकिन चिंता सजीव व्यक्ति को ही स्वाहा कर डालती है.

7. हाथी के दो दांत बाहर की ओर निकले हुए होते हैं, इसी को लक्ष्य करते हुए रहीम कहते हैं कि बड़े पेट को भरना अत्यंत ही दुखदायी होता है. इसीलिए हाथी ने गिड़गिड़ाने के लिए दो दांत बाहर निकाल लिये हैं.

विशेष

यहां कवि के सूक्ष्म अवलोकन का पता पाठकों को चलता है. हाथी का पेट बड़ा होता है यह सर्वविदित है लेकिन उसके दो दांत गिड़गिड़ाने के लिए हैं. यह उदाहरण रहीम की सूक्ष्म बुद्धि का परिचायक है.

8. अपने कुटुम्ब की वृद्धि देखकर सभी को सुख होता है. रहीम उदाहरण देते हुए कहते हैं कि जैसे बड़ी-बड़ी आंखें देखकर आंखों को सुख होता है. वैसे ही अपने परिवार को बढ़ता हुआ देखकर सभी आनंदित होते हैं.

विशेष

एक से अनेक होना मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है. उसी प्रकार अपने गोत्र अर्थात् अपने परिवार को बढ़ता हुआ देखना मनुष्य की नैसर्गिक इच्छा होती है. अत: किसी की बड़ी-बड़ी सुंदर आंखों को देखकर जिस प्रकार आंखों को प्रसन्नता होती है, ठीक उसी प्रकार अपने वंश की वृद्धि को देखकर मनुष्य सुखी होता है.

9. प्रस्तुत दोहे में रहीम सच्चे मित्र की पहचान के बारे में बतलाते हैं. रहीम कहते हैं कि जिस प्रकार दही को मथते-मथते मक्खन निकल आता है. उसी प्रकार अनेक मित्रों में से सच्चा मित्र वही है जो संकट के समय हमारा साथ देता है. वह भीड़ में अलग दिखाई देता है.

विशेष

सच्चा मित्र वही है जो कठिनाई के समय साथ दे. सुख के साथी तो सभी मिल जाते हैं लेकिन दुख में साथ निभाने वाला कोई विरला ही होता है. अत: जैसे दही को मथते-मथते मक्खन निकल आता है उसी प्रकार कठिनाइयों से गुजरते समय ही सच्चा मित्र मिल जाता है.

10. जीवन में स्वाभिमान के महत्व को स्पष्ट करते हुए रहीम कहते हैं कि मनुष्य को किसी से कुछ नहीं मांगना चाहिए क्योंकि इससे चाहे वह व्यक्ति कितना ही महान हो, उसका सम्मान घट जाता है. रहीम विष्णु भगवान का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि यद्यपि विष्णु तीनों लोकों के पालक हैं लेकिन जब राजा बलि के पास मांगने गए तो उन्हें बौना अर्थात् छोटा (वामनावतार) होना पड़ा.

अन्तर्कथा

राजा बलि असुरों का शक्तिशाली राजा था. अपने पराक्रम से उसने इन्द्रासन छीनना चाहा लेकिन उसमें एक सद्गुण ऐसा भी था कि जो उसके पास याचक बन कर जाता वह उसे खाली हाथ नहीं जाने

BRAOU

देता था. देवता बलि के अत्याचारों से तंग आकर विष्णु के पास गए और उनसे सहायता मांगी. तब विष्णु ने वामन का रूप धारण किया और बलि से तीन कदम जमीन मांगी. वामन ने शरीर बढ़ाकर एक पग में पृथ्वी, दूसरे पग में आकाश नाप लिया और तीसरे कदम को बलि के सिर पर रखकर उसे पाताल भेज दिया. अत: भगवान विश्णु वामन (बौने) कहलाए.

विशेष

इस दोहे के माध्यम से रहीम कहना चाहते हैं कि मनुष्य चाहे कितने ही बड़े पद पर क्यों न हों लेकिन यदि वह किसी से कुछ मांगने जाता है तो उसका सम्मान घट जाता है.

रहीम के भक्तिपरक दोहे

1. प्रस्तुत दोहे में रहीम श्रीकृष्ण के प्रति अपनी भक्ति प्रकट करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार चकोर निरंतर अपने प्रियतम चंद्रमा की ओर ताकता रहता है उसी प्रकार मेरा हृदय रूपी चकोर भी श्रीकृष्ण रूपी चंद्रमा की ओर दिन-रात ताकता रहता है.

विशेष

रहीम मुसलमान थे लेकिन वे एक धर्म-निरपेक्ष विशाल हृदय के मनुष्य थे. इस दोहे में श्रीकृष्ण के प्रति उनकी अगाध भक्ति इसका उदाहरण है. चकोरीवृत्ति यह एक कवि समय है. चकोर एक ऐसा पक्षी होता है जो कि मात्र चंद्रमा से प्रेम करता है.

2. प्रस्तुत दोहे में रहीम ईश्वर के निस्वार्थ प्रेम की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि इस संसार के लोग समय, मनुष्य की दशा अर्थात् समाज में उसका स्थान, कुल (ऊंचे कुल) आदि को देखकर ही उसका सम्मान करते हैं. लेकिन हे भगवान रहीम के समान दीन (गरीब) अनाथ (जिसका कोई न हो) का तुम्हारे बिना दूसरा कौन है. क्योंकि तुम सांसारिक लोगों की तरह पद, कुल आदि नहीं देखते अपितु तुम तो दीन-दयालू अर्थात. दीन लोगों पर दया करने वाले हो.

विशेष

यहां ईश्वर के प्रति भक्त की विनय भावना दिखाई गई है. साथ ही कवि सांसारिक लोगों की स्वार्थपरता और ईश्वर के दीन जन रक्षक स्वरूप को भी स्पष्ट करते हैं.

3. प्रस्तुत दोहे में श्रीकृष्ण की उदारता प्रकट करते हुए रहीम कहते हैं कि जो गरीबों से प्रेम करते हैं और उनका भला करते हैं वे ही वास्तव में बड़े हैं. सुदामा और कृष्ण की मित्रता का उदाहरण देते हुए आगे कवि कहते हैं कि कहां तो बेचारा गरीब सुदामा और कहां द्वारिका के राजा श्रीकृष्ण. भला सुदामा उनकी मित्रता के योग्य कब था ? यह कृष्ण की महानता ही थी जो उन्होंने सुदामा को अपनाया और उनका उचित आदर-सत्कार किया और धन-सम्पदा देकर विदा किया.

विशेष

यहां भी रहीम ईश्वर की दीन-वत्सलता को ही प्रकट करते हैं. ईश्वर के यहां प्रेम ही देखा जाता है. सुदामा कृष्ण के मित्र थे लेकिन वे बहुत गरीब थे. वे जब कृष्ण से मिलने गए तो साथ में थोड़े से पोहे (चिउड़ा) लेकर गए. कृष्ण ने बड़े प्रेम से उनकी भेंट स्वीकार की. उनके सम्मुख सुदामा का प्रेम

BRAOU

महत्वपूर्ण था, उनकी गरीबी नहीं और उन्होंने अपने मित्र की निर्धनता दूर कर दी. इसीलिए ईश्वर को गरीबनिवाज़ या दीनवत्सल कहा जाता है.

4. ईश्वर पापियों का उद्धार करते हैं, इस ओर संकेत करते हुए रहीम कहते हैं कि हाथी अपनी सूंड में धूल भर-भरकर सदैव अपने सिर पर डालता है फिर वे प्रश्न पूछते हैं कि हाथी ऐसा क्यों करता है ? उत्तर देते हुए वे कहते हैं कि शायद गजराज (हाथी) उसी पावन धूल को ढूंढ रहा है जिससे गौतम की पत्नी अहल्या का उद्धार हुआ था. अत: अपने उद्धार की कामना (इच्छा) से ही गजराज सदैव रस (धूल) को अपने सिर पर डालता है.

विशेष

गोस्वामी तुलसीदास के संबंध में यह किंवदंती है कि स्नान करते समय हाथी को अपने सिर पर धूल छिडकते देख उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ और उन्होंने इस शंका को इस दोहे की प्रथम पंक्ति के रूप में लिखकर अपने समकालीन कवि मित्र रहीम के पास भेज दिया. रहीम ने इस दोहे को अत्यंत ही चतुराई और सुंदरता के साथ अगली पंक्ति हिंदुओं की शैली में हिंदुओं के ही ग्रंथों का उदाहरण देकर पूरी की.

अंतर्कथा

अहल्या गौतम ऋषि की पत्नी थीं. इन्द्र अहल्या के रूप पर आसक्त था. एक दिन सुबह जब गौतम ऋषि स्नान के लिए गए तब इन्द्र गौतम ऋषि का वेष धारण कर अहल्या के पास आया. अहल्या इन्द्र को गौतम के वेष में देखकर उसे अपना पति मान बैठी. गौतम जब वापस लौटे तो अहल्या को इन्द्र के साथ देखकर उन्हें अहल्या के चरित्र पर संदेह हुआ और उन्होंने उसे शाप दे दिया कि तू पत्थर हो जा. जब श्रीराम सीता के स्वयंवर में भाग लेने ऋषि विश्वामित्र के साथ जनकपुरी जा रहे थे तब उनके चरणों की धूल का स्पर्श पाकर अहल्या का उद्धार हुआ. अत: प्रस्तुत दोहे में रहीम का तात्पर्य श्रीराम के चरणों की धूल से है.

BRAOU

5. प्रस्तुत दोहे में रहीम श्रीकृष्ण पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि वे उनका नाम स्मरण करने वाले भक्तों पर कृपा नहीं करते हैं अपितु वे तो उन्हीं पर कृपा करते हैं जो उनको याद नहीं करते. श्रीकृष्ण के इस प्रकार के प्रेम का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि उनकी यह गति तो कार्तिक मास में बांस पर लटकाए जानेवाले बंसदीय के समान है जो डोरी खींचने पर ऊपर चला जाता है और ढीली छोड़ने पर पास आ जाता है. उसी प्रकार जो भक्त श्रीकृष्ण का ध्यान करते हैं, उनसे प्रेम करते हैं उनसे तो वे दूर होते जाते हैं अर्थात् उनके प्रति उपेक्षा दिखाते हैं और जो भक्त श्रीकृष्ण के प्रति उपेक्षा दिखाते हैं वे उनके पास आ जाते हैं.

विशेष

इस दोहे के संबंध में एक किंवदंती प्रचलित है कि एक बार रहीम जब श्रीकृष्ण के दर्शन करने के लिए श्रीनाथ जी के मंदिर गए थे तब मंदिर के द्वार बंद कर दिए गए थे और जब रहीम वहां से वापस लौट गए तब स्वयं श्रीनाथ जी (श्रीकृष्ण) प्रसाद लेकर रहीम के सामने प्रकट हो गए. अत: इसी प्रसंग को लेकर रहीम ने श्रीकृष्ण पर व्यंग्य किया है.

6. प्रस्तुत दोहे में रहीम कहते हैं कि हाथी के समान बलवान कोई नहीं लेकिन वही बलवान हाथी प्रभु की शक्ति के सम्मुख अपनी दीनता स्वीकार करता है और उनके सामने अपनी दीनता प्रकट करने

के लिए वह अपने दोनों दांत दिखाता है और सूंड को धरती से सटाकर चलते हुए अपनी नाक घिसता है.

विशेष

प्रस्तुत दोहे में रहीम ने हाथी के माध्यम से दास्य भक्ति को प्रकट किया है. भक्त चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, ईश्वर के सम्मुख वह दीन होकर, अपने अहंकार को मिटाकर ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है.

7. ईश्वर के पतित पावन स्वरुप को प्रकट करते हुए रहीम कहते हैं गौतम महर्षि की पत्नी अहल्या पत्थर बन गई थी, बन्दर अर्थात् हनुमान पशु थे और निषाद चण्डाल था फिर भी इन तीनों का श्रीराम ने उद्धार किया. मुझमें ये तीनों अवगुण मौजूद हैं. मेरा हृदय पत्थर के समान कठोर है अर्थात् उसमें ईश्वर के प्रति प्रेम की सरस धारा प्रवाहित नहीं होती. पशु के समान मेरी प्रवृत्ति भी पेट पूजा में ही है और मेरा आचरण चण्डाल के समान ही है. अत: हे प्रभु जिस प्रकार आपने इन तीनों का उद्धार किया उसी प्रकार मेरा भी उद्धार करें.

विशेष

इस दोहे द्वारा रहीम एक सच्चे भक्त की भांति विनय प्रकट करते हुए अपने अवगुणों को भगवान के समक्ष प्रकट किया है और बड़ी चतुराई से ईश्वर को उनके गुणों का स्मरण करवाकर अपने उद्धार की प्रार्थना की है.

8. श्रीकृष्ण के प्रति अपनी आस्था प्रकट करते हुए रहीम कहते हैं जुआरी, चोर और लंपट कोई भी भक्त का कुछ नहीं बिगाड़ सकते जब उसके सम्मान की रक्षा करने वाले मक्खन चखनेवाले श्रीकृष्ण उसके साथ हों.

विशेष

यहां जुआरी से रहीम का तात्पर्य शकुनि से है. श्रीकृष्ण ने जुआरी शकुनि से पाण्डवों की रक्षा की थी. चोर से तात्पर्य ब्रह्मा से है उन्होंने ग्वाल बालों की गायें चुराई थी, श्रीकृष्ण ने ग्वाल बालों की रक्षा ब्रह्मा से की थी. लंपट से रहीम का तात्पर्य दु:शासन से है. दु:शासन ने भरी सभा में द्रौपदी का चीर हरण किया था और श्रीकृष्ण ने द्रौपदी के सम्मान की रक्षा कर दु:शासन के प्रयास को विफल कर दिया. अत: जिस भक्त की रक्षा करने वाले सर्व-शक्तिमान प्रभु हों, उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता.

9. प्रस्तुत दोहे में रहीम ईश्वर के दीनबंधु स्वरुप की ओर लक्ष्य करते हुए कहते हैं कि दीन अर्थात् गरीब सभी की ओर कातरता के साथ देखता रहता है लेकिन उस दीन अर्थात् गरीब को कोई नहीं देखता. रहीम कहते हैं जो दीन-दुखियों का ध्यान रखते हैं वास्तव में वे ही दीनबंधु अर्थात् भगवान के समान होते हैं.

विशेष

इस दोहे में सांसारिक लोगों की स्वार्थी प्रवृत्ति की ओर संकेत किया गया है. इस संसार में निर्धन और असहाय व्यक्ति की सहायता कोई नहीं करता. कोई विरला ही होता है जो असहाय व्यक्ति की सहायता करता है. इन्हीं को रहीम दीनबंधु कहते हैं.

BRAOU

10. ईश्वर की सामर्थ्य के बारे में बतलाते हुए रहीम कहते हैं कि बिना जड़ की अगर अमरबेल का जो पालन-पोषण करते हैं ऐसे सर्वशक्तिमान ईश्वर को छोड़कर हे मनुष्य तू अन्य किसका आश्रय खोज रहा है.

विशेष

ईश्वर सर्वशक्तिमान होता है. जड के बिना किसी भी पौधे का पालन-पोषण असंभव है लेकिन यह सामर्थ्य ईश्वर में है अत: हमें उसी की शरण में जाना चाहिए. ऐसे प्रभु को छोड़कर यदि हम दूसरे स्थानों पर भटकते हैं तो हमें कुछ भी प्राप्त नहीं होता.

8.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

नीतिपरक दोहे

रहीम का संपूर्ण जीवन कई प्रकार के जीवनानुभवों (जीवन के अनुभव) से ओत-प्रोत रहा. उन्होंने जीवन में कई उतार-चढ़ाव देखे. पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गई थी. अकबर ने उन्हें अपने संरक्षण में लिया और वे अकबर के बहुत बड़े विश्वासपात्र बने लेकिन अंत में राजदरबार के कुचक्रों में ऐसे फंसे कि जहांगीर और शाहजहां द्वारा कैद में डाले गए. उनके प्रिय पुत्र की हत्या कर दी गई. इस प्रकार राजदरबार में रहते हुए भी जीवन के कटु अनुभवों से उनका बड़ा गहरा संबंध रहा. एक तरफ भोग-विलास, सुख आदि तो दूसरी ओर विपत्तियों का झंझावत, जीवन को पूरी गहराई से समझने में सार्थक सिद्ध हुआ.

प्राचीन भारतीय साहित्य से ही सूक्ति की एक परंपरा चली आ रही है.. इन्हीं सूक्तियों को ही नीतिपरक दोहों की संज्ञा दी जा सकती है. ये सूक्तियां या नीतिपरक दोहे मनुष्य के चारित्रिक विकास में अत्यंत ही सहायक सिद्ध हुए हैं. रहीम द्वारा रचित नीतिपरक दोहे उनके जीवन के व्यापक अनुभव से ओत-प्रोत हैं. उनमें कहीं कुचालियों का वर्णन है, तो कहीं सज्जनों की सज्जनता का चित्रण भी है. रहीम जीवन में सत्संग के महत्व का चित्रण करते हैं तो साथ ही कुसंग के बुरे प्रभाव का चित्रण भी करते हैं. वास्तव में रहीम के नीतिपरक दोहों में जीवन का व्यापक निरीक्षण और गहरी अनुभूति से उपजा हुआ सत्य झलकता है. रहीम के नीतिपरक दोहों की यह विशेषता भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि उनके सारे दृष्टांत या तो पुराणों से लिए गए हैं या फिर सामान्य जीवन से. इसी कारण एक सामान्य पाठक के लिए भी उनके दोहे सहज बोधगम्य हो जाते हैं.

भक्तिपरक दोहे

भक्तिरस की पावन पयस्विनी जितने वेग से भक्तिकाल में प्रवाहित हुई वैसी अन्यत्र नहीं. इस युग ने एक व्यापक मानवीय बोध जगाया. यही कारण है कि भक्तिकाल संपूर्ण मानवता के जागरण का काल बन गया जिसने मनुष्य के भीतर सोए हुए विराट अनुराग को जागृत कर दिया. यही कारण था कि इस काल में रसखान और रहीम जैसे कवि हुए जिनके लिए "धर्म" हिंदू और मुसलमान के संकुचित दायरों से निकलकर व्यापक मानवीय भाव-बोध का पर्याय बन गया. रहीम और रसखान ऐसे ही कवि थे जो न हिंदू बने, न बैरागी हुए लेकिन फिर भी कृष्ण की भक्ति के रस में ऐसे डूबे जो विधिवत् दीक्षित विरक्त साधुओं के लिए भी सुलभ नहीं था. रहीम ने तो अपना पूरा काव्य ही श्रीकृष्ण को अर्पित किया और बड़ी सहजता से श्रीकृष्ण के प्रति अपने अगाध प्रेम को व्यक्त किया.

रहीम ने अपने दोहों में राम, कृष्ण एवं गंगा के प्रति अनंत श्रद्धा दिखाई है. संस्कृत के श्लोकों, फुटकर बरवै एवं अन्य छंदों में रहीम ने गणेश एवं हनुमान आदि देवी-देवताओं की स्तुति भी की है.

अत: रहीम के नीतिपरक दोहों में जहां जीवन का व्यापक अनुभव और सूक्ष्म निरीक्षण दीखता है. वहीं उनके भक्तिपरक दोहों में रहीम की ईश्वर के प्रति अनन्य भक्ति, विनयशीलता के साथ हिंदू देवी-देवताओं के प्रति सम्मान भी दृष्टिगोचर होता है.

8.6 शब्दार्थ

नीतिपरक दोहे :

1)	धनि	-	धन्य
	बिछुरत	-	बिछुडकर
	जिय	-	प्राण
	मीन	-	मछली
	कंज	-	कमल
	तजि	-	त्यागकर
	अनत	-	अन्यत्र, अन्य स्थान
	भाय	-	भाव
2)	तोरह	-	तोड़ना
	चटकाय	-	चटकाकर
	धागा	-	डोरा
3)	दुरयो	-	छिपाया
	हन्यो	-	मारा, नष्ट किया
	गात	-	अंग, शरीर
	असमय	-	बुरा वक्त, विपत्तिकाल
	ह्वै	-	होना
	जात	-	जाते हैं
4)	निज	-	अपने
	व्यथा	-	दु:ख
	गोय	-	छिपाकर, गुप्त
	अठिलैहैं	-	उपहास करेंगे, हंसी उडाएंगे
	कोय	-	कोई भी
5)	ओछे	-	तुच्छ, निम्न कोटि के
	बैर	-	शत्रुता
	प्रीत	-	मित्रता, दोस्ती, प्रेम
	काटे और चाटे	-	काटना और चाटना
	स्वान	-	कुत्ता
	विपरीत	-	प्रतिकूल, उल्टा

BRAOU

6. चिताहु - चिता से
चेत - सावधान होओ
दहति - जलाती है
निर्जीव - मृत, बेजान
समेत - साथ ही

7) भरन को - भरने के लिए
बाढ़ी - बडा
यातें - इसलिए
हहरि - डर, भय
काडी - निकालना
हहरी कै - गिडगिडाकर (गिडगिडाकर दांत दिखाना दीनता का लक्षण है)

8. गोत - गोत्र, कुटुंब
बहरी - बडी बडी
निरखि - देखकर
होत - होता है

9. मथत - मथना
माखन - मक्खन
मही - में
बिलगाय - बिलौना
मीत - मित्र
भीर - भीड़

10. घटत - घटता है, कम होता है
कितो - कितना
बडी - बडा
पैंग - पग, कदम
बडीकाम - महत्वपूर्ण काम

<u>भक्तिपरक दोहे</u>

1. जिहि - जैसे, जिस प्रकार
कीन्हो - किया
निसि - रात
वासर - दिन
लग्यो - लगना, लगा हुआ है

2. दसा - हालत
कुल - खानदान, परिवार
देखि के - देखकर
सनमान - आदर
बिनु - बिना

BRAOU

3. पर हित - दूसरों की भलाई
बड़ - बड़े, उदार
महान वापुरो - बेचारा, अकिंचन
मिताई - मित्रता
जोग - योग्य

4. धूर - धूल, मिट्टी
धरत - धारण करना
नित - प्रतिदिन
किहिं - किसलिए
जिहि - जिस
रज - धूल
तरी - उद्धार पाना, तर जाना
सो - वही
पतनी - पत्नी

5. चढ़नि - चढ़ना
ढ़ीली - शिथिल
कहहु - कहो
गही - अपनाना, ग्रहण करना
बंसदिया - बांस पर लगाया आकाशदीप

6. करि - हाथी
सम - समान
मानत - मानना
थाक - रौब, साख
दंत दिखावत - दीनता प्रकट करना, विनम्रता प्रकट करना
घिसावत - घिसता हुआ

7. मुनि नारी - गौतम मुनि की स्त्री अहल्या
पाषाण - पत्थर
कपि - बंदर
गुह मातंग - निषाद चाण्डाल था
तारे - उद्धार करना, तार दिया

8. ज्वारी - जुआरी
लबर - झूठा, गप्पी, लफंगा
पत-राखनहार - लाज रखनेवाला
माखन-चाखनहार- मक्खन को चखने वाला श्रीकृष्ण

9. लखत - निहारता है
दीन बन्धु - भगवान सम

BRAOU

10. अमर बेली - अमर बेल, एक प्रकार की लता जो वृक्षों के ऊपर रहती है, इसे आकाश-लता भी कहते हैं.

मूल - जड

मुहावरे

1. दांत दिखाना - हीनता का भाव प्रकट करना.
2. नाक घिसाना - विनती करना, गिडगिडाना.

8.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

8.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. "रहीम के दोहों में जीवन के अनुभव निहित हैं" पठित दोहों के आधार पर इस कथन को समझाइए.
2. रहीम के नीतिपरक दोहों में अर्थमूलक उपदेशों को समझाइए.
3. 'ईश्वर की भक्ति पर रहीम की आस्था' - इस विषय पर एक लेख लिखिए.
4. रहीम की भक्ति भावना पर अपने विचार प्रकट कीजिए.

8.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. रहीम के नीतिपरक दोहों में से किसी एक दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. रहीम ने किस प्रकार के प्रेम को श्रेष्ठ माना है - पठित दोहे के आधार पर स्पष्ट कीजिए.
3. रहीम के अनुसार गजराज अपने सिर पर धूल क्यों डाल रहा है ?
4. रहीम के भक्तिपरक दोहों में से किसी एक दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

BRAOU

8.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

8.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- रहीम के नीतिपरक दोहों में अर्थमूलक उपदेशों को समझाइए.

उत्तर- रहीम हिंदी के लोकप्रिय कवि हैं. नीतिकाव्यकार के रूप में आपको विशिष्ट स्थान प्राप्त है. दोहावली के अधिकांश दोहे नीति एवं उपदेशात्मकता से संबंधित हैं. इस क्षेत्र में उनकी ख्याति का श्रेय उनके क्रियात्मक अनुभव जन्य ज्ञान को ही है. नीति और शील की पवित्रता के उपासक रहीम ने लोक और शास्त्र रूपी पाठशालाओं से जो कुछ सीखा उसे काव्य के रूप में पाठकों के सामने रखने का प्रयास किया. उनके दोहों में प्रेम, श्रृंगार, दान, निराशा, कुसमय, सत्संगति, परोपकार, स्वार्थ एवं चिन्ता तथा अन्य अनेकों विषयों से संबंधित उपदेशात्मक दोहे पर्याप्त संख्या में हैं.

प्रेम की शीतलता को समाप्त करने वाली प्रवृत्ति कपट की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा है - "धनी रहीम गति मीन की की..... कहा भ्रमर गो भाय ।" भ्रमरी वृत्ति की निंदा करते हुए सच्चे प्रेम की प्रशंसा में लिखा गया यह दोहा न केवल उपदेशात्मक है अपितु प्रेमादर्श का प्रतिपादन है.

प्रेम हृदय का व्यापार है. इसमें हृदय के द्वारा हृदय का सौदा होता है. प्रेम संबंधों को बनाये रखने के लिए सावधानी बरतनी चाहिए. विच्छेद की भावना उत्पन्न होते ही प्रेम संबंध टूट जाते हैं. टूटे हुए संबंधों को जोड़ना कठिन है. इसी भाव की अभिव्यक्ति निम्नलिखित दोहे में है -

"रहीमन धागा प्रेम का.....मिले गांठ पड़ जाय ।"

रहीम ने यह भी कहा है कि मांगना घृणित कार्य है. मांगने से बड़े से बड़े का मान घट जाता है. "मांगे घटत रहीम पद.....बावनै नाम" अपने अनुभव के आधार पर रहीम कहते हैं कि समय की गति विचित्र होती है. अच्छे समय में जो हमारे मित्र होते हैं, कुसमय में वे ही हम से दूर हो जाते हैं. यथा - "जिहि अंचल दीपक दुरयो.....मित्र शत्रु ह्वै जाता ।।"

रहीम ने अपने उपदेशात्मक दोहों में कहा है कि दुर्दिन आने पर हम उन्हें चुपचाप काट लेना चाहिए. व्यर्थ में शिकवा शिकायत नहीं करना चाहिए. इसमें हमारी जग हंसाई होती है - " रहिमन निज मन की .....बांट न ले है कोय ।।"

रहीम के दोहों में दिये गये संदेश उपदेशक प्रवचन नहीं हैं. स्वानुभूति से पूर्ण रहीम की उक्तियों का प्रभाव शीघ्र और निश्चित रूप से पड़ता है.

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि रहीम का काव्य उपदेशात्मकता की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है. उनके उपदेशात्मक दोहे पाठकों एवं श्रोताओं पर वांछित प्रभाव डालने में समर्थ हैं. धार्मिक संकीर्णता से मुक्त रहीम का नीतिकाव्य केवल किसी वर्ग विशेष तक सीमित न रहकर समस्त पाठकों की जिह्वा पर अंकित है.

BRAOU

8.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- पठित दोहों के आधार पर किसी एक दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

"धूर धरत नित सीस पर, कहु रहीम किहिं काज ।
जिहि रज मुनि पतनी तरी, सो ढूंढत गजराज ।।"

उत्तर- प्रसंग : प्रस्तुत दोहा हिंदी के लोकप्रिय कवि रहीम का है. "रहीम दोहावली" से उद्धृत इस दोहे में श्रेष्ठ भक्ति की काव्यात्मक अभिव्यक्ति परिलक्षित होती है. रहीम के दोहे नीति एवं भक्ति के समन्वय के लिए विख्यात हैं.

व्याख्या : अपनी सूंड में धूल भरकर नित्य अपने ही मस्तक पर डालते हाथी को देखकर रहीम प्रश्न करते हैं कि वह ऐसा क्यों करता है ? अपने प्रश्न का उत्तर आप ही देते हुए वे कहते हैं कि अपने उद्धार की कामना से ही गजराज उस पवित्र धूल को ढूंढ रहा है जिसके स्पर्श मात्र से गौतम की पत्नी अहल्या का उद्धार हुआ था.

<u>विशेष</u>

1. अहल्या गौतम की पत्नी थी. उसके चरित्र पर गौतम को संदेह हुआ. अत: उसने उसे शाप दिया - तू पत्थर हो जा. शापवश अहल्या पत्थर हो गई. राम जब जनकपुरी जा रहे थे तब उनके पद रज के स्पर्श से उसका उद्धार हुआ.

2. इस दोहे को पढ़कर पाठक इस तथ्य से अवगत हो जाता है कि रहीम के हृदय में वैष्णवी भक्ति का अथाह एवं निश्चल पारावार तरंगित रहता था.
3. भक्ति भाव से नि:सृत इस दोहे को देखकर यह आभास ही नहीं होता कि यह किसी मुसलमान कवि की रचना है.

8.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. रहीम दोहावली : रहीम
2. रहीम ग्रंथावली : सं. विद्यानिवास मिश्र
3. अकबरी दरबार के कवि और रहीम : डॉ. कैलाश सिंह

******

BRAOU

इकाई 9 : मीराबाई के पद

रूपरेखा

9.1 पाठ का उद्देश्य
9.2 पाठ एवं कवि परिचय
9.3 मूल पाठ
9.4 सारांश
9.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
9.6 शब्दार्थ
9.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
9.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
9.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
9.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
9.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
9.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
9.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में मीराबाई के भक्ति और श्रृंगार के पदों का विवेचन किया गया है. इन पदों के अध्ययन से आपको -

* श्रीकृष्ण के प्रति मीराबाई की दाम्पत्य भाव की भक्ति की जानकारी मिलेगी.
* मीराबाई की प्रेम व भक्ति भावना की विशेषताओं का परिचय प्राप्त होगा.
* श्रीकृष्ण के प्रति मीराबाई की समर्पण भावनाओं का बोध होगा.
* मीरा की श्रृंगारिक भावनाओं पर प्रकाश डालने का अवसर मिलेगा.
* राजस्थानी भाषा से परिचय प्राप्त होगा.

BRAOU

9.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

प्रस्तुत पद मीराबाई द्वारा रचित पदावली से लिए गए हैं. इसके अंतर्गत मीरा ने कृष्ण प्रेम और उनके प्रति अपनी भक्ति भावना को व्यक्त किया है. मैं तो कृष्ण के रंग में डूब गई हूं. पंचतत्व का यह शरीर है, मेरी आत्मा इसमें निवास करती है. मेरी आत्मा प्रति क्षण प्रभु-दर्शन की लालसा लिए हुए है. मीरा सोचती है कि कोई भी पत्नी अपने पति को पत्र लिखकर अपने मन की व्यथा को व्यक्त कर सकती है, मैं क्या उपचार करूं ? क्योंकि मेरा प्रिय तो मेरे हृदय में ही बसता है. जब गिरधर की इच्छा होगी तभी वे दर्शन देंगे. मुझे तो हर जगह वे ही दिखाई देते हैं. कबीर और तुलसीदास की तरह मीरा के प्रभु भी सर्वव्यापी हैं. वे संसार के कण-कण में विराजमान हैं.

मीराबाई की भक्ति दाम्पत्य भाव की है. मीरा कृष्ण को अपना पति मानती है. वस्तुत: प्रेम की पराकाष्ठा कांताभाव से ही प्राप्त होती है. मीरा अपनी भक्ति के माध्यम से हमारे सामने एक सती, साध्वी, भक्ति विह्वला, प्रेम परायणा सखी के रूप में आती है. मीरा के श्रृंगार वर्णन में जहां कहीं मिलन के स्वाभाविक सुख का संकेत है, उसमें आलिंगन, चुंबन, परिरंभन आदि का नाम नहीं है. मिलन के आनंद को हृदय की प्रफुल्लता द्वारा ही मीरा ने प्रकट किया है. मीरा के संयोग श्रृंगार वर्णन में जहां एकांत प्रेम की गरिमा है वहीं प्रेम के वियोग पक्ष में विरह की गहनता भी है. प्रिय दर्शन की अभिलाषा, वियोग की पीड़ा, मिलन की उत्कंठा आदि का गहराई से मीरा ने अनुभव किया है. प्रस्तुत पाठ में मीरा की भक्ति, संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार के पदों का संकलन किया गया है.

कवयित्री -परिचय

प्रसिद्ध कवयित्री मीराबाई अपने पदों में निहित गेयता, भक्तिभावना व मधुरता के कारण प्रसिद्ध है. मीराबाई जोधपुर के संस्थापक सुप्रसिद्ध राठौड राजा राव जोधा जी के पुत्र रवि दूधा जी की पौत्री तथा रत्नसिंह जी की पुत्री थी. इनका जन्म राजस्थान के कुडकी गांव में सं. 1555 विक्रम के आस पास हुआ था. मीराबाई ने प्रतिष्ठित घराने में जन्म लिया था. माता पिता ने अत्यधिक स्नेह से उनका लालन-पालन किया. किंतु उन्हें बाल्यजीवन में ही माता की मृत्यु का दु:ख झेलना पड़ा. पिता युद्धों में व्यस्त रहते थे. दादा रवि दूध जी ने मीरा को अपने पास मेड़ता बुला लिया.

दादा के साथ रहकर उनके धार्मिक भाव अंकुरित हुए. गिरिधर नागर के प्रति उनके मन में बाल्यावस्था से ही सहज प्रेम था. किसी साधु से गिरिधरलाल की एक सुंदर मूर्ति इन्हें प्राप्त हुई थी. उसके प्रति उसके मन में गहरी आस्था थी. एक प्रकार से गिरिधर को उन्होंने अपना 'प्रियतम' मान लिया था.

मीरा का विवाह (1573 सं.) मेवाड के प्रसिद्ध महाराणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र कुंवर भोजराज के साथ हुआ. कुछ समय पश्चात ही कुंवर भोजराज की मृत्यु हो गई. मीरा ने अपना वैधव्य गिरिधर नागर की उपासना में व्यतीत करना प्रारंभ कर दिया. कुछ समय पश्चात् पिता एवं श्वसुर की मृत्यु ने मीरा को जीवन के प्रति उदासीन कर दिया. वे पूरी तरह श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन हो गई.

मीरा का युग ऐसा था जब कि लोक लाज, मर्यादा के बंधन बहुत अधिक थे. मीरा कृष्ण प्रेम में पागल होकर साधु संतों की संगति में बैठ जाती. मंदिरों में प्रेम विह्वल होकर नाचने भी लगती थीं. ऐसे समय सबने उनका विरोध किया. भोजराज के छोटे भाई को ये सब कुछ अच्छा नहीं लगा. उन्होंने मीरा को जहर दिया तथा अन्य प्रकार से उन्हें मारने का प्रयत्न किया. मीरा इन सबसे मुक्त होकर मेड़ता चली गयी. उसके कुछ काल पश्चात तीर्थ यात्रा करने निकल पड़ी. वृंदावन होते हुए द्वारका चली गई. यहां आकर भगवान की भक्ति में तल्लीन रहने लगीं. वि.सं. 1603 में द्वारका में ही इनका देहांत हो गया.

रचनाएं

विद्वानों की खोज के अनुसार मीरा द्वारा रचित साहित्य स्फुट रूप में है, जिनकी संख्या निश्चित नहीं है. 200 के लगभग मीरा के पदों की प्राप्ति हुई है. उन्हीं के आधार पर मीरा की माधुर्य भक्ति के बारे में विचार किया जा सकता है. विद्वानों द्वारा निर्धारित पद संग्रह इस प्रकार हैं :

1. नरसी जी रो माहेरो
2. गीत गोविंद की टीका

BRAOU

3. राग गोविंद
4. सोरठ के पद
5. मीराबाई की मलार
6. गर्दा गीत
7. फुटकर पद

मीरा के सभी पदों पर तीन भाषाओं का प्रभाव है. राजस्थानी, ब्रज और गुजराती. मीरा की पदावली को मुख्यत: दो रूपों में देखा जा सकता है. एक भाग में मीरा ने प्रारंभिक जीवन में जिन कष्टों को और अत्याचारों को सहा उसका विवरण है. दूसरे भाग में मीरा के साधना संबंधी पद हैं, जिनमें निर्गुण-रूप ब्रह्म की साधना, सगुण रूप कृष्ण भगवान की भक्ति तथा पौराणिक कृष्ण लीलाओं का वर्णन मिलता है.

मीरा की भक्ति

मीरा की भक्ति को मूलत: विद्वानों ने माधुर्य भक्ति के अंतर्गत माना है. डॉ. श्रीकृष्णलाल के शब्दों में "मीरा की जिन रचनाओं की दूर-दूर तक प्रसिद्धि थी वे रचनाएं माधुर्य भाव की भक्ति से पूर्ण थीं. भगवान कृष्ण की ब्रज लीला के गीत थे.....विरह के पदों को मीरा की सर्वाधिक प्रामाणिक रचना मानता हूँ." माधुर्य भक्ति को ही मीरा ने अपनाया है. कृष्ण को अपने पति के रूप में स्वीकार कर उनके समक्ष अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति की है. माधुर्य भक्ति में जितनी तीव्र अनुभूति भक्त को हो सकती है उतनी मिलन की नहीं. मीरा के प्रिय मोर मुकुट धारण करने वाले, गिरिधर नागर हैं. पीताम्बर धारण करनेवाले कृष्ण गाय चराने जाते हैं. वे बांसुरी की मधुर तानों से मोहनेवाले हैं. सहज माधुरी से गोपियों को पागल कर देने वाले हैं. ऐसे मोहन को मीरा अपना पति मानती है. विरह के क्षणों में मीरा की वेदना तीव्र हो जाती है. भक्ति के आवेग में जिस प्रकार की भावनाएं अभिव्यक्ति हुई हैं उनमें माधुर्य की छाप पूर्ण रूप से देखी जा सकती है. मीरा के भक्तिपूर्ण पदों में इस प्रकार की भावनाओं का संचय है, जो सहृदय को स्पंदित व विभोर कर देती हैं.

BRAOU

मीरा जिस प्रभु के चरणों में आत्म समर्पण करती है वह सामान्य प्रियतम नहीं है, जिनसे सहज भेंट हो जाए. अत: दरद की मारी मैं वन-वन ढोलूं पंक्तियां उनकी प्रेम विभोर स्थिति का सुंदर परिचय देती हैं. डॉ. हरवंशलाल जी के शब्दों में "इन भक्ति-कवियों ने प्रेमा-भक्ति के वे गीत गाए जिनकी मधुर धारा में तर्क शास्त्र-ज्ञान, अविश्वास आदि के भाव विलीन हो गए और समस्त देश सिक्त हो गया." (सूर और उनका साहित्य पृष्ठ-95)विरह, प्रेम का निष्कर्ष है. पीड़ा, प्रेम को गहन करती है. पूर्ण आत्म समर्पण की ओर उन्मुख करती है. वस्तुत: माधुर्य भक्ति ने भक्तिकालीन साहित्य में रस की अद्भुत धारा प्रवाहित की है. भक्ति और प्रेम का समन्वय अद्वितीय है. शुक्ल जी के अनुसार "ये कृष्ण भक्त कवि हमारे साहित्य में प्रेम माधुर्य का जो सुधा स्रोत बहा गए हैं उसके प्रभाव से हमारे काव्य क्षेत्र में सरसता और प्रफुल्लता बराबर बनी रहेगी. दु:खवाद की छाया आ-आकर भी टिकने न पायेगी. इन भक्तों का हमारे साहित्य पर बड़ा भारी उपकार है." हिंदी साहित्य : पृ. 195.

मीरा अपने युग की एकमात्र ऐसी भक्त नारी थी जिन्होंने श्रीकृष्ण के प्रेम में लोक लाज व समाज की चिंता नहीं की. एक तरह से उनका विरोध बहुत बड़ी क्रांति का कारण था. साधु-संगति, मंदिरों में विभोर होकर नाचना, स्थान-स्थान पर भ्रमण करना आदि बातें उस युग की व्यवस्था के अनुकूल नहीं

थी. इसी कारण मीरा को बहुत कष्ट सहने पड़े. मीरा के मन की अटल भक्ति और अधिक कृष्णमय होती चली गयी. आज वह एक महान भक्त कवयित्री के रूप में जानी जाती हैं.

9.3 मूलपाठ

मीरा के भक्तिपरक पद

1) श्री गिरिधर आगे नाचूंगी ।
नाच नाच प्रिय रसिक रिझाऊं प्रेमी जन को जांचूंगी ।।
लोक लाज कुल की मर्यादा यामें एक न राखूंगी ।
पिय के पलना जा पौढूंगी, मीरा हरि रंग राचूंगी.

2) बसो मोरे नैनन में नंदलाल ।
मोहिनी मूरत सांवली सूरत नैना बने विसाल ।
अधर सुधारस मुरली राजत उर वैजन्ती माल ।।
छुद्रघंटिका कटितर सोभित नूपुर सबद रसाल ।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई भगतबछल गोपाल ।।

3) हरि बिन कूण गती मेरी ।
तुम मेरे प्रतिपाल कहिये में रावरी चेरी ।।
आदि अंत निज नांव तेरो हिया में फेरी ।
बेर-बेर पुकार कहूं प्रभु आरति है तेरी ।।
यों संसार विकार सागर बीच में घेरी ।
नाव फाटी प्रभु पाल बांधो बूडत है चेरी ।।
विरहणि पिव की बाट जोवै राखयो नेरी ।
दासि मीरा राम रटत है, मैं सरण हूँ तेरी ।।

4) हरि मोरे जीवन प्राण अधार ।
ओर आसिसे नहीं तुम बिन तीनू-लोक मैझार ।।
आप बिना मोहि कछु न सुहावै निरखा सब संसार ।
मीरा कहै मैं दासी रावरी दीज्यौ मती बिसार ।।

5) था मोहन के मैं रूप लुभानी ।
सुंदर वदन कमल दल लोचन वाली चितवन मंद मुसकानी ।।
जमुना के नीरे तीरे धेनु चरायै बंसी में गावै मीठी बानी ।
तन मन धन गिरधर पर वारूं चरण कंवल मीरा लपटानी ।।

मीरा के श्रृंगारपरक पद

1) होली खेलत है गिरिधारी ।
मुरली चंग बचत डफ न्यारो, संग जुवति ब्रजनारी ।
चन्दन केसर छिरकत मोहन, अपने हाथ बिहारी ।
भरि भरि मूठि गुलाल लाल, चहुं, देत सबन पे डारी ।
छैल छबीले - नवल कान्ह संग स्यामा, प्राण पियारी ।

गावत चार धमार राग तंह, दे दे कर करतारी ।
फाग जु खेलत रसिक सांवरो, बाढयो रस ब्रज भारी ।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर, मोहन लाल बिहारी ।।1।।

2) जोसीडा णे लाख बधाया, आय्यो म्हारो स्याम ।
म्हारे आणंद उमंग भरया री जीव लह्यां सुखधाम ।।
पांच सख्यां मिल पीव रिझावां, आणंद ठांम ठांम ।
विसरि जावां दु:ख निरखां पियारो सुफल मनोरथ काम ।
मीरा रे सुख सागर स्वामी, भवण पधारया स्याम ।।2।।

3) म्हां गिरिधर रंग राती, मैंया म्हां.....
पंचरंग चोला पहरया सखी म्हां, झिरमिट खेलण जाती ।
वां झिरमिट मां मिल्यो सांवरो, देख्यां तण मण राती ।
जिणरो पिया परदेस बस्यांरी लिख लिख भेज्यां पाती ।
म्हारा पियां म्हारे हीयडे बसतां णा आवा णा जाती ।
मीरा रे प्रभु गिरिधर नागर मग जोवां दिण राती ।।3।।

4) दरस बिन दूषण लागे नैण ।
जब से तुम बिछुरे, प्रभु मोरे, कबहुं न पायो चैन ।।
सबद सुणत मेरी छतियां कांपै, मीठे मीठे बैन ।
कल न परत पल हरि मग जोवत, भई छमासी रैन ।
'मीरा' कहै प्रभु कबर मिलोगे, चेरी भइ हूं तेरे दांवन की ।।

5) प्यारे दरसण दीज्यो आय, तुम बिन रह्यो न जाय ।
जल बिन कंवल चंद बिन रजनी, ऐसे तुम देख्या बिन सजनी ।।
आकुल व्याकुल पिरुं रैण दिना, बिरह कलेजो खाय ।
दिवस न भूख, नहिं रैण, मुंख सूं कथत आवै बैण ।।
कहा कहूं कुछ कहत न आवै, मिलकर तपन बुझाय ।
क्यूं तरसावो अंतरजामी, आप मिलो किरपा कर स्वामी ।
'मीरा' दासी जनम जनम - की, परी तुम्हारे पाय ।।

9.4 सारांश

मीरा के भक्तिपरक पद

1. प्रस्तुत पद में मीराबाई की श्रीकृष्ण के प्रति पूर्ण अनुरक्ति दिखाई गई है. श्रीकृष्ण के परम सौंदर्य पर रीझकर मीरा नाच उठती है. मीरा कहती है कि मैं गिरधर अर्थात् श्रीकृष्ण के आगे नाचूंगी, नाच-नाचकर अपने प्रिय को रिझाऊंगी, श्रीकृष्ण के प्रति अपने प्रेम को परखूंगी. मैंने अपने पैरों में श्रीकृष्ण के प्रेम के घुंघरु बांध रखे हैं, उनके प्रेम में खोट नहीं है. मैं श्रीकृष्ण के प्रेम में कुल की चिंता भी नहीं करूंगी. मीरा कहती है कि मैं अपने प्रियतम की छवि को पलभर के लिए भी नहीं भूलती अर्थात् मेरे मन-मंदिर में उनकी छवि सदैव विराजमान रहती है. मैं तो उनके रंग में रंग गई हूं अर्थात् मैंने उनके प्रति पूर्ण समर्पण कर दिया है.

विशेष

प्रस्तुत पद में मीरा की अनन्य भक्ति भावना और पूर्ण समर्पण भाव परिलक्षित होता है. इस पद में माधुर्य भक्ति का भाव प्रस्तुत किया गया है. सरस प्रवाह एवं संगीतात्मकता पाठकों को भाव-विभोर करने में समर्थ है.

2. प्रस्तुत पद में मीराबाई सदैव श्रीकृष्ण से अपने मन में बसे रहने की प्रार्थना करती है. वह कहती है तुम्हारी सांवली सूरत और विशाल नेत्र, होठों पर अमृत बरसाने वाली बांसुरी तथा घुटनों तक झूलती वैजयंती माला बहुत ही सुंदर हैं. कमर पर छोटी-छोटी घंटियों वाली कमरपट्टी और पैरों में नूपुर की आवाज कानों में रस घोलती है. मीरा के प्रभु श्रीकृष्ण तुम संतों को सुख देनेवाले भक्तवत्सल हो.

विशेष

प्रस्तुत पद में श्रीकृष्ण के रूप-सौंदर्य का वर्णन करते हुए कृष्ण की भक्तवत्सलता पर भी प्रकाश डाला गया है. मीरा की भक्ति का सरस भाव भी दिखाया गया है, जिसमें मीरा कृष्ण के इसी रूप को सदैव अपनी आंखों में बसे रहने की प्रार्थना करती है.

3. इस पद में श्रीकृष्ण के प्रति अपनी भक्ति प्रकट करते हुए मीरा कहती है कि कृष्ण के बिना मुझे कोई पूछनेवाला नहीं है. वह कृष्ण से कहती है कि तुम ही मेरे पालनकर्ता हो, मैं तुम्हारी दासी हूं. आरंभ से लेकर अंत तक मैं अपने हृदय में आपका ही नाम स्मरण करती रहती हूं. मैं बार-बार आतुरता से पुकार कर कहती हूं कि मैं आपकी हूं. यह संसार विषय-विकार का सागर है और मैं इसमें घिरी हुई हूं. मेरी नाव टूट चुकी है, यह डूबनेवाली है. हे प्रभु इस टूटी नांव में पाल बांध कर तुम ही इसे बचा सकते हो. यह विरहिणी मीरा राह देख रही है, अब मैं तुम्हारी शरण में तुम्हारी बनकर आई हूं, मुझ पर कृपा करो और अपनी शरण में ले लो.

BRAOU

विशेष

प्रस्तुत पद में भक्त हृदय की आतुरता और विनम्रता प्रकट की गई है. श्रीकृष्ण के प्रति मीरा की स्तुति एवं वंदना परंपरागत है. इस पद में वीप्सा और रूपक अलंकारों का सफल प्रयोग हुआ है.

4. प्रस्तुत पद में मीरा अपने आराध्य श्रीकृष्ण को अपने जीवन का एकमात्र आधार मानते हुए उनकी प्रार्थना करती है. वह कहती है कि हे श्रीकृष्ण तुम मेरा थोडा-सा ध्यान रखो. मेरे प्राणों और जीवन का आधार तुम ही हो. अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए मीरा कहती है कि तुम्हारे बिना मेरा कोई आसरा नहीं है, तीनों लोक मुझे मंझधार की तरह लगते हैं हे श्रीकृष्ण तुम्हारे बिना मुझे यह संसार अच्छा नहीं लगता. मैंने सारा संसार देख लिया है. मीरा कहती है कि हे प्रभु मैं आपकी दासी हूं आप मुझे भुला मत दीजिए.

विशेष

प्रसतुत पद में मीरा की श्रीकृष्ण के प्रति अपार भक्ति भावना प्रकट हुई है. साथ ही भक्त की असहायता और विनयशीलता भी प्रभावी ढंग से अभिवयक्त हुई है.

और मधुर स्वर में बांसुरी बजाते हैं. मैं तो उस गिरिधर पर अपना तन, मन और धन सभी कुछ न्यौछावर करती हूं. अंत में मीरा कहती है कि मैं तो श्रीकृष्ण के चरणरूपी कमलों में विलीन हो गई हूं अर्थात् मैं उनके चरणों से लिपट गई हूं.

विशेष

प्रस्तुत पद में श्रीकृष्ण के प्रति मीरा की समर्पण-भावना अपनी चरमावस्था में अभिव्यक्त हुई है भक्त का अपने आराध्य के सौंदर्य और उनके क्रिया-कलापों पर मुग्ध होकर सर्वस्व समर्पित कर देना ही भक्ति की पराकाष्ठा है.

मीरा के श्रृंगारपरक पद

1) मीराबाई ने अपनी पदावली में बाललीला, वंशीवादन लीला, नागलीला, चीर हरण लीला, मिलन लीला, पनघट लीला, फाग लीला, दधि बेचन लीला आदि विभिन्न लीलाओं का सुंदर वर्णन किया है. प्रस्तुत पद फाग लीला से संबंधित है. इसमें मीरा ने श्रीकृष्ण, राधा और ब्रजवासियों द्वारा मिलकर आनंदपूर्वक होली खेलने का सुंदर वर्णन किया है. गिरिधारी कृष्ण होली खेल रहे हैं. मुरली, चंग, डफ आदि बाजे बज रहे हैं. ब्रज नारियों के गीत विभिन्न वाद्यों की ध्वनि में अलग ही मुखरित हो रहे हैं. अपने हाथों से कृष्ण चंदन केसर सब पर छिड़क रहे हैं. वे मुट्ठियों से भर-भर लाल गुलाल सभी नारियों के ऊपर डाल रहे हैं. छैल छबीले कृष्ण के साथ उनकी प्राण प्यारी राधिका भी होली खेलने में तत्पर है. सभी लोग हाथों से तालियां बजाते हुए धमार राग में गा रहे हैं. कृष्ण जिस रूप में ब्रजवासियों के साथ हर्ष एवं आनंद के साथ फाग खेल रहे हैं उससे समूचे ब्रज में हर्ष का वातावरण व्याप्त हो गया है. वहां उपस्थित सभी लोग प्रसन्न चित्त हो गये हैं. मीराबाई कहती है कि मेरे तो एकमात्र प्रभु गिरिधर नागर श्रीकृष्ण हैं.

विशेष

अनुप्रास अलंकार की छटा से युक्त यह पद संगीतात्मकता की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है.

2) मीरा आनंदमय है. मीरा के इस आनंद का कारण मिलनोल्लास है. प्रस्तुत पद में मिलन जन्य आनंदोल्लास का बड़ा ही भव्य एवं मनोहारी चित्रण है. मीरा कहती है कि हे ज्योतिषी !तुम्हें धन्यवाद ! मेरे श्याम अब मेरे घर आ गए. आज मेरे मन में आनंद उमड़ रहा है. मेरे प्राणों को अत्यंत सुख की प्राप्ति हो गई है. पांच सखियां अर्थात् पांच ज्ञानेंद्रियों को उस परम मिलन की आनंदोपलब्धियां हुई हैं. ये धन्य हुए हैं. "बिसारे जावां दुख निरखां पियारो" में अत्यंत स्वाभाविक उल्लासपूर्ण सुखानुभूति की दिव्य व्यंजना मीरा ने की है. "उसे" यानी प्रियतम कृष्ण को पाकर जन्म-जन्म के प्यासे मीरा के प्राण परितृप्त हो गये.

विशेष

परमात्मा को पति के रूप में अनुभव करते हुए उसके चरणों में संपूर्ण भाव से आत्म-समर्पण करने की स्थिति को ही "परमभाव" कहते हैं. ऐसे भाव की प्राप्ति के बाद जीवन और मृत्यु मिलन और विरह, सुख और दुःख का द्वैत नष्ट हो जाता है. अपना भला बुरा सबकुछ प्राण-धन के चरणों में निछावर हो जाता है. मीरा की प्रेम पद्धति की तुलना सुप्रसिद्ध आलवार कवयित्री अण्डाल से कर सकते हैं.

BRAOU

3) सन्ध्या समय है. मीरा के कमरे का द्वार बंद है. कमरे में कृष्ण की दिव्य मूर्ति विराज रही है. मीरा आरती कर चुकी है. कमरा दिव्य गन्ध से भर रहा है और तेज से जगमगा रहा है. ऐसे दिव्य वातावरण में मीरा अपने प्राणाधार गिरिधर लाल के सामने नाच रही है. प्रभु कृष्ण का सुखद स्पर्श, उस स्पर्श की मादक मधुर सिहरन मीरा के रोम-रोम को प्रेम में डुबोये हुई है. ऐसी स्थिति में मीरा कह रही है कि "मैं गिरिधर के प्रेम में रंग गई हूं. पंचतत्वों द्वारा निर्मित शरीर लेकर झूरमुट मारने का खेल (जिसमें सारा शरीर इस प्रकार ढक लिया जाता है कि कोई जल्दी पहचान न सके) खेलने गयी. वहीं उसी अवसर पर मैं निरावरण होकर, अवगुण्ठन हटाकर प्राणाधार से मिली और देखते ही उसी श्यामसुंदर में मिल गई, एक हो गई, तल्लीन हो गई. आगे मीरा कहती है कि जिनका प्रियतम परदेश में है वे उसे पत्र लिख-लिखकर भेजती है. मेरा प्रेमी तो मेरे हृदय में बसा हुआ है. वह न तो जाता है न आता है. मीरा के प्रभु गिरिधर नागर हैं. मीरा दिन-रात उनकी बाट जोहती है.

विशेष

प्रस्तुत पद में मीराबाई ने अपनी कृष्ण भक्ति का किंचित दार्शनिक आधार प्रस्तुत किया है. हिंदी साहित्य के संत कवियों की कृतियों में झिरमिट, पंचरंग, सगराती आदि शब्दों का प्रयोग दिखाई देता है. दार्शनिक विचारों को भावमय भाषा में बांधने का सफल प्रयास इस पद में किया गया है.

4) विरह व्यथा का परंपरागत वर्णन करते हुए मीरा कहती है प्रियतम के दर्शन के बिना आँखें दुख रही हैं. मेरे प्रिय जब से तुम बिछुड़ गए हो तब से मुझे कभी भी चैन नहीं मिला. तुम्हारे मीठे शब्दों को सुनने पर अर्थात तुम्हारी स्मृति आने पर मेरी छाती कांपने लगती है. जब से तुम बिछुड गए हो तब से मुझे कभी भी चैन नहीं मिला. मैं सदैव तुम्हारे आने की प्रतीक्षा करती रहती हूं. अब तो प्रत्येक रात मुझे छः मास लम्बी प्रतीत होती है. मीरा के प्रभु कब मिलोगे ? कब दुःख दूर करोगे और सुध दोगे ?

विशेष

प्रस्तुत पद में विरह का परंपरागत वर्णन है. विरह प्रेम की पीड़ा को तीव्र कर देता है. इसमें प्रियतम की स्मृति सदैव हृदय में छायी रहती है. विरह की इसी स्थिति की अभिव्यंजना प्रस्तुत पद में अत्यंत सफल रूप से हुई है.

5) अपने प्रियतम को संबोधित करते हुए मीरा कहती है कि हे प्रिय तुम आकर दर्शन दो. अब तुम्हारे बिना नहीं रहा जाता. मीरा कहती है कि जिस प्रकार जल के बिना कमल और चन्द्रमा के बिना रात की स्थिति काल विहीन हो जाती है, उसी प्रकार तुम्हारे बिना मेरी रात अत्यंत बेचैनी के साथ कटती है. तुम्हारा विरह मेरे हृदय को खाए जा रहा है. मीरा कहती है कि तुम्हारे वियोग में न तो मुझे भूख लगती है और न रात में नींद आती है. मैं अपनी विरह व्यथा को अपने मुंह से अभिव्यक्त नहीं कह सकती. अपनी दयनीय स्थिति का वर्णन करते हुए मीरा कहती है कि मेरी विरह व्यथा कौन सुनेगा ? मैं किससे अपनी मनोदशा का वर्णन करूं ? हे प्रियतम दर्शन देकर मेरी विरहाग्नि बुझा दो. हे अंतर्यामी मुझे अब क्यों तरसा रहे हो, शीघ्र ही आकर मुझे दर्शन दो जिससे मेरे हृदय की व्यथा दूर हो सके. मीरा कहती है कि हे प्रियतम मैं तो तुम्हारी जन्म-जन्म की दासी हूं, मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूं.

विशेष

प्रस्तुत पद में विरह का परंपरागत वर्णन किया गया है. भक्त की आकुलता की तीव्रता देखकर ही भगवान उसे दर्शन देता है, भारतीय परंपरा में यह धारणा सुदृढ है. यही विश्वास मीरा ने अपने इस पद में व्यक्त किया है.

9.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

हिंदी साहित्य के मध्यकाल में भक्ति की स्वर्णिम धारा प्रवाहित हुई जिसने मनुष्य की उत्तमोत्तम भावनाओं को अभिव्यक्ति दी. मीराबाई भक्तिकाल की ऐसी कवयित्री हुई जिसकी तुलना दक्षिण की प्रसिद्ध भक्त आंडाल से की जाती है. मीरा कृष्ण भक्त थी, कृष्ण से उनकी भक्ति दाम्पत्य भाव की थी जिसमें भक्त अपने आराध्य के अपना पति मानता है. मीरा भी कृष्ण को अपना पति मानती थी.

भक्ति में श्रद्धा और प्रेम दोनों का योग होता है. मीरा की भक्ति में श्रीकृष्ण अर्थात् अपने आराध्य के प्रति अथाह प्रेम तो है ही, साथ ही कृष्ण के लोकरक्षक, पापियों और अत्याचारियों से भक्तों की रक्षा करने वाले लोक-कल्याणकारी स्वरूप के प्रति श्रद्धा भी है. मीरा का आराध्य कृष्ण एक ओर तो गोपियों की मटकियां तोड़नेवाला और मक्खन चुरानेवाला रसिक कृष्ण है तो दूसरी ओर भरी सभा में द्रौपदी की लाज बचानेवाला, अजामिल से नराधम का उद्धार करनेवाला, गजराज की ग्राह से रक्षा करनेवाला भक्त वत्सल भगवान भी है.

दाम्पत्य भाव की भक्ति होने के कारण मीराबाई के काव्य में श्रृंगार के दोनों रूप संयोग और विप्रलंभ के अत्यंत मर्मस्पर्शी वर्णन मिलते हैं. कहीं तो वह श्रीकृष्ण के अप्रतिम सौंदर्य की ओर आकर्षित होकर कहती हैं -

"बसो मेरे नैनन में नंदलाल
मोह नी मूरत सांवली सूरत नैना बने बिसाल ।"

कहीं पर वह अत्यंत ही विनयशील होकर विनती करती है कि कृष्ण के बिना उसकी कोई गति नहीं है -

"हरि बिन कूण गत्ती मेरी ।"

भक्ति के क्षेत्र में ईश्वर के प्रति भक्त का प्रेम अपनी लौकिक स्थिति में नहीं रहता. वह उदात्त स्वरूप ग्रहण कर भव्यसत्ता का परिचय देता है, जिससे भक्त का एकमात्र लक्ष्य परमात्मा से मिलना ही होता है, वह इस लौकिक संसार की परवाह नहीं करता. यही कारण है कि मीरा कृष्ण की भक्ति में इतनी दीवानी हो गई कि उसे लोक निंदा या कुल की मर्यादा आदि की चिंता नहीं रही. वह लौकिक बंधनों और मर्यादाओं को भूलकर कृष्ण से एकाकार होने के लिए तड़प उठी. मीरा कहती है -

"माई सांवरे रंग राचो
साज सिंगार बांध पग घुंघरू, लोकलाज तज नाचो ।"

मीरा के काव्य में संयोग श्रृंगार के ऐसे सरस चित्र मिलते हैं जिसमें वह अपने प्रिय के वियोग में भी सुख की संचित अनुभूतियों को याद कर अभूतपूर्व सुख और आनंद में मग्न हो जाती है -

"होरी खेलत है गिरधारी ।
मुरली चंग बजत डफ न्यारो, संग जुवती ब्रजनारी"

मीरा के काव्य में वियोग की गहन पीड़ा भी चरमावस्था को छूती है. वह श्रीकृष्ण से बार-बार प्रार्थना करती है कि वे आकर उसे दर्शन दे दें -

"प्यारे दरसण दीज्यो आय, तुम बिन रह्यो न जाय ।"

BRAOU

संक्षेप में मीरा का काव्य भक्त हृदय का खुला दस्तावेज़ है जिसमें कहीं अनुनय-विनय है, कहीं वह प्रियतम के रूप-सौंदर्य पर न्यौछावर होने के लिए तत्पर है तो और कहीं विरह ज्वाला में दग्ध होकर संपूर्ण रूप से समर्पित होकर मिलन की अभिलाषा है.

9.6 शब्दार्थ

भक्तिपरक पद

1) रसिक - रसमय, प्रेमी
रिझाऊं - आकर्षित करूंगी, लुभाऊंगी
जांचूंगी - परखूंगी, देखूंगी
थामे - इसमें
पौढूंगी - लेटूंगी
राचूंगी - रच जाऊंगी, तन्मय होऊंगी

2) बसो - रहो
सांवली - सांवरी, श्याम वर्ण
बिसाल - बड़े-बड़े
सुधारस - अमृत का रस
राजत - सुशोभित
उर - हृदय
सबद - शब्द, आवाज
रसाल - मीठा
बछल - वत्सल, पुत्र की तरह प्रेम करने वाले

3) कूण - कैसी, कौन
रावरी - आपकी
चेरी - दासी
नांव - नाम
फेरी - जपना
आरति - आतुरता
भिकार - बुराइयों का
फाटी - फूटना, टूटना
बूडत - डूबता
जोवे - देखना
बाट - राह, प्रतीक्षा
नेरी - पास में
सरण - चरणों में, आश्रय में

4) मोरे - मेरे
अधार - आधार

BRAOU

	आसिरो	-	आसरा, सहारा
	मंझार	-	मंझधार
	सुहावै	-	अच्छा लगना
	निरखा	-	देखना, देख लिया
	रावरी	-	आपकी
	दीज्यौ	-	देना
	मती	-	मत
	बिसार	-	भुला देना
5)	या	-	जिस
	लुभानी	-	मोहित होना
	लोचन	-	आंखें
	दल	-	पंखुडी
	तीरे	-	किनारे
	धेनु	-	गाय
	चरावै	-	चराना

<u>श्रृंगारपरक पद</u>

1)	चंग	-	छोटे आकार का डफ बाजा
	न्यारो	-	अनोखा
	बिहारी	-	कृष्ण का एक नाम
	धमार राग	-	होली के समय गाया जाने वाला एक प्रकार का गीत
	कल	-	सुंदर, मनोहर
	करतारी	-	हाथी से ताली बजाना
	जु	-	जो
	रस	-	प्रेमानंद
2)	जोसीडा	-	ज्योतिषी, पुरोहित
	णे	-	ने
	बधाया	-	बधाई, उपहार, धन्यवाद
	जीव लहूयां सुख धाम	-	प्राणी को सुख की प्राप्ति हो गई
	पांच सख्यां	-	पांच सखियां अथवा पांच ज्ञानेन्द्रियां
	ठांम-ठांम	-	जगह-जगह पर
	जावां	-	गई
	निरखां	-	निरखि
	काम	-	कामना
	रे	-	के
	स्याम	-	प्रियतम
3)	म्हां	-	मैं

BRAOU

रंगराती	-	प्रेम में रंगी एवं भग्न
म्हां	-	मैंने
म्हारां	-	मेरा
पंच रंग	-	पांच रंगों का अथवा पंचतत्वों द्वारा निर्मित चोला - शरीर, लम्बा व ढीलाढाला फकीरों जैसे कुर्ता
झिरमिट	-	झुरमुट मारने का खेल जिसमें सारा शरीर इस प्रकार ढंक लिया जाता है कि कोई जल्दी पहचाना न जा सके अथवा कर्मानुसार प्राप्त जीवात्मा की योनी का शरीरा धारण कर.
वा झिरमिट मां	-	उसी वेष में, वहां उसी अवसर पर
जिण रो	-	जिनका
बस्यांरी	-	बसते हैं
णा	-	ना
देख्यां	-	देखते ही
सांवरो	-	श्याम सुंदर, प्रियतम
4) दूषण	-	दुखना
बिछुरे	-	बिछुडे, अलग होना
चैन	-	आराम, सुख
कबहुं	-	कभी
सबद	-	शब्द
मग जोवत	-	रास्ता देखना
छमासी	-	छः मास
रैन	-	रात
मैटर	-	मिटाने वाले
5) दरसण	-	दर्शन
कंवल	-	कमल
रजनी	-	रात
दैख्या	-	देखना
आकुल	-	व्याकुल
बैण	-	बात
तपन	-	तड़पना
पाय	-	पैर

9.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

9.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. मीराबाई की भक्ति की विशेषताओं को रेखांकित कीजिए.
2. कवयित्री मीराबाई का जीवन-परिचय दीजिए.
3. मीरा के पदों में श्रृंगार रस पर अपने विचार प्रकट कीजिए.

BRAOU

9.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित पाठ के किसी एक पद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. मीराबाई के पदों के आधार पर श्रीकृष्ण के रूप सौंदर्य का वर्णन कीजिए.
3. मीरा की भक्ति पर अपने विचार प्रकट कीजिए.

9.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

9.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- मीरा के पदों में श्रृंगार रस के संयोग पक्ष पर प्रकाश डालिए.

उत्तर- मीरा प्रेम दीवानी थी. श्रीकृष्ण प्रेम ने मीरा को परा बौद्धिक ऊंचाई पर पहुंचा दिया था. मीरा ने श्रीकृष्ण से अपना जन्म जन्मांतर का संबंध माना है और उनके विराटत्व में एकाकार होने की कामना की है. मीरा ने श्रीकृष्ण के बालरूप में रुचि ली है और वृंदावन की लीलाओं में स्वयं को उनकी सहचरी के रूप में देखा है.

श्रीकृष्ण का भुवनमोहन रूप निरंतर उसके नेत्रों में बसा रहता था. प्रियतम श्रीकृष्ण के संयोग सुख की असंख्य कल्पनाएँ मीरा के मानस-वन में हरसिंगार के महकते हुए फूलों की तरह खिलती थी. वस्तुत: तीनों लोकों में कृष्ण के अतिरिक्त मीरा का कोई भी सगा, संरक्षक या स्नेही नहीं था.

मीरा ने कृष्ण से जो प्रेम किया था वह राधा भाव से नहीं किया था. मीरा के कृष्ण मीरापति हैं. वे जब मीरा के मनोजगत में प्रवेश करते हैं तब अन्य सारे बंधनों संबंधों और परिचयों को मीरा की दहलीज के बाहर छोड़ जाते हैं. परमसत्ता से साक्षात्कार के अनुभव को मीरा ने झिरमिट के खेल के माध्यम से व्यक्त किया है -

"म्हां गिरिधर रंग राती ।
पंचरंग चोला पहेरियां सखि म्हा झरमट खेलण जाती ।
वा झरमट मां मिल्या सांवरो देख्यां तणमण राती ।।"

मीरा के प्रेम से प्रसन्न होकर उनके प्रियतम ने माया का आवरण हटा दिया है.

मीरा का मन वृंदावन है जहां वह श्रीकृष्ण की लीला - संगिनी के रूप में उनके सामीप्य का सुख व्यक्तिगत धरातल पर पाती है.

मीरा का संयोग वर्णन एक-पक्षीय है. वह श्रीकृष्ण की उन चेष्टाओं का वर्णन करती है जो उनके मन में रीझभरी प्रतिक्रियाओं को जागृत करती है. फिर भी मीरा अपने कृष्ण के प्रति पूर्ण-रूपेण समर्पित है. इसीलिए वह कहती है -

"माई री म्हा लिया गोवन्दा मोल"

मीरा श्रीकृष्ण प्रेम में इतनी समर्पित है कि वह अपने आप को "गिरिधर हाथ बिकाणी" मानती है.

BRAOU

प्रिय के प्रथम दर्शन का सिहरन भरा कोमल क्षण अपनी पूरी सहजता और मधुरता के साथ मीरा के काव्य में उपस्थित है. मीरा अपने घर में खड़ी थी. श्रीकृष्ण मंद मुसकान बिखेरते हुए सामने से आ निकले. उनका रूप देखते ही वह तन-मन से उन पर अनुरक्त हो गई. इस संयोग वर्णन में न राधा की साझेदारी है और न गोपियों की.

"म्हा ठाढी घर आपणे .....बिकाय"

प्रभु कृष्ण के मुरली वादन की अपनी मुग्धता है-

"मुरलियां बाजां जमणा तीर ।
मुरली म्हारो पण हर लीन्हो चित्त धरा जां धीर ।"

श्रीकृष्ण मीरा के साथ केलि करते हैं. वह कुसुम्बी साडी पहन कर उनसे मिलने के लिए जाती है. वह आधी रात को जमुना तट के संकेत स्थल पर उन्हें दर्शन देते हैं -

"आधी रात प्रभु दरशण दीश्यों जमणा जी रे तीरा ।"

स्वप्न में मीरा ने अपने अधरों पर कृष्ण के चुंबन का शीतल, मधुर, विद्युत स्पर्श का अनुभव किया. आलिंगन अमृत का पान किया और यह स्वप्न ही मीरा के लिए जागरण का कारण बन गया.

जयदेव, चण्डीदास, विद्यापति आदि वैष्णव कवियों में संयोग श्रृंगार का जो विशद वर्णन मिलता है वह मीरा में नहीं है. मिलन के आनंद को हृदय की प्रफुल्लता द्वारा ही मीरा ने प्रकट किया है. रोमांच, वैवर्ण्य प्रकंप, प्रस्वेद आदि के बहुत हल्के चित्र उनके काव्य में मिलते हैं.

मीरा ने संयोग चित्रण श्रीकृष्ण की परमसाध्वी अंतरंगिनी सखी के रूप में, प्राण प्रिय हृदयेश्वरी के रूप में किया है. तभी तो सच्चे हृदय से वह कहती है -

"मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई ।"

DRAOU

9.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- नीचे दिये गये पद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

"श्री गिरिधर आगे नाचूंगी ।
नाच नाच प्रिय रसिक रिझाऊं प्रेमी जन को जांचूंगी ।।
लोक-लाज कुल की मर्यादा यामें एक न राखूंगी ।
पिय के पलना जा पौढूंगी, मीरा हरिरंग राचूंगी ।।"

उत्तर- प्रस्तुत पद "मीरा पदावली" से लिया गया है. इसकी रचयिता मीरा बाई हैं. मीराबाई कृष्ण प्रेम की दीवानी थी. पैरों में घूंघरु बांधकर अपने गिरिधर नागर के सामने नाचने लगती और नाचते-नाचते बेसुध हो जाती थी. प्रस्तुत पद इन्हीं भावनाओं से युक्त है. इसमें मीरा का क्रांतिकारी रूप है. वह कहती है मेरे लिए संसार में केवल मेरे पति कृष्ण है इसीलिए मैं -- हृदय खोलकर उन्मुक्त होकर अपने गिरिधर नागर के समक्ष नाचूंगी और उन्हें रिझाऊंगी. मेरा यह नाचना, यह झूमना यदि मेरे आंतरिक गहराई में छिपे प्रेम को प्रकट करने वाला है तो प्रेमी इस रंग में रंग जाएगा. प्रभु से प्रेम

किसका है ? यह क्षण बता सकेंगे. इस आनंद और तन्मयता में डूबकर मैं खोजाऊँगी. लोक-लाज, मर्यादा इनमें से किसी एक की भी परवाह मुझे नहीं है. प्रिय में जाकर समा जाऊंगी. उसी के रंग में रंग जाऊंगी. यही क्षण है जब मेरी आत्मा उस प्रियतम गिरधर में विलीन हो जाने के लिए आकुल हो रही है.

मीरा के पद में माधुर्य भक्ति का रंग अधिक है. अंतिम पंक्तियों में आत्मा, परमात्मा में विलीन होने की आकुलता लिये हुए है. प्रिय को प्राप्त करने के लिए रागात्मकता आवश्यक है.

यह पद रस, प्रवाहमय, संगीतात्मकता के साथ भाव-विभोर करने वाला है.

टिप्पणी

मीरा ने "प्रिय के पलना जा पौढूंगी" कह अपने पूर्ण समर्पण के भाव को व्यक्त किया है.

9.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. मीरा का काव्य : विश्वनाथ त्रिपाठी
2. मीरा की प्रेम साधना : डॉ. भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'.

******

BRAOU

इकाई 10 : बिहारीलाल के दोहे

रूपरेखा

10.1 पाठ का उद्देश्य
10.2 पाठ एवं कवि परिचय
10.3 मूल पाठ
10.4 सारांश - विशेष टिप्पणी सहित
10.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
10.6 शब्दार्थ
10.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
10.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
10.7.2 मध्यम रेणी के प्रश्न
10.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
10.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
10.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
10.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.1 पाठ का उद्देश्य

BRAOU

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन से आपको रीतिकाल के प्रतिनिधि कवि बिहारीलाल की भक्ति भावना का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा. इसके साथ-साथ आप -

* रीतिकालीन भक्ति भावना से परिचित हो पायेंगे.
* भक्त की अवधारणा से परिचित हो पायेंगे.
* भक्ति भावना की विशिष्टता की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
* भक्ति भावना के विभिन्न आयामों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
* प्रस्तुत दोहों के अध्ययन से बिहारी की नीति भावना का परिचय प्राप्त होगा.
* मध्यकालीन नीति भावना की जानकारी प्राप्त हो सकेगी.
* नीति पर आधारित उपदेशों को समझा जा सकेगा.
* रीतिकालीन रीतिमुक्त काव्य परंपरा से परिचय प्राप्त होगा.
* रीति काल के विशिष्ट श्रृंगारिक कवि बिहारीलाल की श्रृंगारिक अनुभूति और अभिव्यक्ति का पता चल सकेगा.
* नायक, नायिका के अनुभाव ही श्रृंगारिकता को व्यक्त करते हैं, इस तथ्य का ज्ञान अध्येता को हो सकेगा.
* श्रृंगार के संयोग-वियोग, इन दोनों पक्षों का भली-भांति ज्ञान हो सकेगा.
* रीतिकालीन श्रृंगारिक भावना से छात्र परिचित हो सकेंगे.

10.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय : भक्तिपरक दोहे

भारतीय साहित्य में मुक्तक रचना परंपरा अत्यधिक विशिष्ट रही है इसके तीन प्रमुख क्षेत्र रहे हैं - 1. भक्ति और वैराग्य, 2. नीति तथा 3. श्रृंगार. जिस प्रकार संस्कृत में भर्तृहरि ने वैराग्य शतक, नीति शतक और श्रृंगार शतक की रचना की उसी प्रकार प्रत्येक मुक्तककार ने या तो इन तीनों क्षेत्रों का स्पर्श किया या इन्हीं में से किसी एक क्षेत्र पर लिखा. कालान्तर में इन क्षेत्रों में विस्तार भी हुआ और नए क्षेत्र जुड़े जैसे वीरता तथा प्रेम भावना को केंद्र बनाकर रचनाएं की गईं. रीतिकाल में श्रृंगारिक क्षेत्र का ही वर्चस्व मिलता है. यही युगीन प्रवृत्ति भी थी किंतु बिहारी के काव्य में भक्ति और नीति का क्षेत्र भी सफलतापूर्वक अभिव्यक्त हुआ है. इसीलिए यहां बिहारी के पाठ को तीन भागों में बांटकर प्रस्तुत किया गया है - 'अ", "ब", "स". 'अ' पाठ में बिहारी के पांच भक्ति परक दोहे लिए गए हैं. बिहारी की भक्ति श्रीकृष्ण और राधा के युगलरूप में अधिक थी. श्री राधा की वंदना, ब्रज क्षेत्र की महत्ता, श्रीकृष्ण के प्रति अनु की विशिष्टता, श्रीकृष्ण की व्यापकता आदि विषय बिहारी के भक्ति भाव के वैचारिक पक्ष और भाव-पक्ष दोनों को दिखाते हैं.

नीति काव्य की रचना दो स्तरों पर होती है. प्रबंध काव्य में किसी चरित्र के व्यवहार के माध्यम से नीति को प्रकट किया जाता है और मुक्तक काव्य में सहज रूप से नैतिक प्रबोधन प्राप्त होता है. मध्यकालीन हिंदी मुक्तक काव्य उपदेशों से भरा पड़ा है. बिहारी का योगदान भी इस क्षेत्र में कम नहीं है. भले ही श्रृंगार की तुलना में ये नीतिपरक दोहे संख्या में कम हों किंतु नैतिक प्रौढ़ता और बहुज्ञता इनमें पर्याप्त है.

नीति काव्य प्रबोधन प्रधान होता है और कवि वहां शिक्षक की भूमिका निभाता है. बिहारी ने काव्य गुणों का भरपूर उपयोग करते हुए लोक वयवहार का ज्ञान निरीक्षण शक्ति आदि के आधार पर इन दोहों की रचना की है. निश्चित की बिहारी का नैतिक प्रबोधन काव्य उपदेशात्मक होने के साथ-साथ सरस बन पड़ा है.

भारतीय काव्य शास्त्र के सभी आचार्य इस बात पर एकमत हैं कि श्रृंगार श्रेष्ठ रस है. इसीलिए इसे रस राज कहा जाता है. बिहारी श्रृंगार काल के रस-सिद्ध कवि थे. उनके दोहों में श्रृंगार के विविध पक्ष परिलक्षित होते हैं. नायिका का रूप सौंदर्य, नायक-नायिका के मिलन क्षण, मिलन में अनेकानेक चेष्टाएं आदि सूक्ष्म रूप से वर्णित हुई है. साथ ही विरह के क्षण भी पूरी मार्मिकता के साथ चित्रित हुए हैं. प्रस्तुत पांच दोहों से अध्येता को यह झलक तो मिल ही जायेगी कि बिहारी क्योंकर रस सिद्ध कवि कहे जाते थे ?

कवि परिचय

रीतिकाल को आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने श्रृंगार काल कहा है. रीतिकाल नाम भी संस्कृत के रीति सम्प्रदाय के आधार पर रखा गया है. रीति का अर्थ होता है पद्धति. काव्य पद्धति में लक्षणों का प्रमुख

BRAOU

सथान रहता था. रीतिकाव्य में संस्कृत ग्रंथों के आधार पर सारे लक्षणों का विवरण प्रस्तुत किया जाता था. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जी ने रीतिकाल के कवियों को तीन श्रेणियों में बांटा - रीतिबद्ध, रीति सिद्ध और रीति मुक्त. जो कवि काव्य का लक्षण देकर उदाहरण के रूप में काव्य रचते थे उनके लिए काव्य लक्ष्य रहता था और ऐसे कवियों को ही आचार्य मिश्र ने रीतिबद्ध नाम दिया था. बिहारी ने कोई लक्षण काव्य नहीं लिखा फिर भी उन्हें रीतिबद्ध कवि माना गया. उनकी रीति में बंधना इतना अनोखा और विशिष्ट था कि बंध कर भी वे पूरी तरह से मुक्त थे. कहा जा सकता है कि वे रीति सिद्ध कवि थे. उनका प्रत्येक दोहा किसी शास्त्रीय लक्षण का लक्ष्य बनने की पात्रता रखता है. बिहारी के जीवन के विषय में किसी भी अन्य मध्यकालीन कवि की तरह अनिश्चय व्याप्त है. अंत:साक्ष्य और बहिर्साक्ष्य के बीच संतुलन रखते हुए इतनी ही जानकारी मिलती है कि इनका जन्म ग्वालियर में हुआ था. पिता का नाम केशवराय था. वे ब्रज के निवासी थे. डॉ. रांगेय राघव ने बिहारी के जीवन को आधार बनाकर एक उपन्यास रचा है - 'मेरी भव बाधा हरो'.

कई विद्वान इनके पिता को कवि केशराय से एक करके देखते हैं जो विवादास्पद है. बिहारी को संस्कृत और फारसी का अच्छा ज्ञान था.

बिहारी के अध्येता, उनका संबंध अनेक राजाओं से जोड़ते हैं किंतु प्रमुख रूप से शाहजहां और जयसिंह का नाम लिया जाता है. उस समय दरबारों में कवियों के बीच एक प्रतिस्पर्धा रहा करती थी. पहले तो दरबार तक पहुंचना कठिन होता था. फिर दरबार में भी निरंतर प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता था. बिहारी की अनोखी विशेषता यह मानी जा सकती है कि ऐसी प्रतिस्पर्धा के लिए भी उन्होंने दोहा जैसा छोटा छंद चुना. केवल चौबीस मात्राएं (13+11) हथियार की तरह लेकर बड़े-बड़े छंदों वाले कवियों का उन्होंने सामना किया और पुरस्कार प्राप्त किए. दरबारों में काव्य रचना समस्या पूर्ति की तर्ज पर होती थी. आश्रयदाता किसी विशेष विषय पर काव्य रचना का आदेश देता था और दरबार में रहनेवाले सारे कवि उस विषय पर लिखते थे. बिहारी की अनोखी विशेषता यह थी कि जहां अन्य कवि सवैया, कवित्त जैसे बड़े छंद चुनते थे वहां बिहारी को अपने काव्य कौशल पर इतना विश्वास था कि वे दोहा और सोरठा के अलावा किसी भी छंद का प्रयोग नहीं करते थे. इन्हीं चौबीस मात्राओं के बल पर उन्होंने कई पुरस्कार जीते. प्राय: कहा जाता है कि रीति काल के कवि राजा के चापलूस हुआ करते थे. लेकिन बिहारी पर यह बात लागू नहीं होती. जब वे जयपुर आये तो उस समय राजा जयसिंह अपनी नव विवाहिता पत्नी के आकर्षण में बंधकर राज-काज को विस्मृत कर बैठे थे बिहारी ने व्यंजना शक्ति का इस्तेमाल करते हुए राजा के पास एक दोहा लिखकर भिजवाया -

"नहिं पराग नहिं मधुर मदु, नहिं विकास इहि काल ।
अली कली ही सौं बंध्यो, आगे कौन हवाल ।।"

इस दोहे में बिहारी ने अन्योक्ति का इस्तेमाल करते हुए कहा कि अभी फूल में पराग भी नहीं है, मधु भी नहीं है और उसका ठीक से विकास भी नहीं हुआ है. हे भंवरे ! तू अभी कली से ही बंध गया है. आगे तेरा क्या हाल होने वाला है. निश्चित ही यह दोहा राजा के प्रति फटकार से भरा था. इसका वांछित प्रभाव पड़ा. राजा ने बिहारी को एक जागीर पुरस्कार के रूप में दी. वे राज कवि बना दिए गए. कहा जाता है कि राजा जयसिंह ने उन्हें हर दोहे पर सोने की एक मोहर देने की घोषणा की.

बिहारी के दोहों का संग्रह बिहारी सतसई के नाम से प्रसिद्ध है. सतसई संस्कृत के सप्तशती सात सौ छन्दों से बना काव्य है. सतसई में श्रृंगार के दोहे अधिक होते हैं, फिर भी भक्ति और नीति के दोहे कम महत्वपूर्ण नहीं होते. बिहारी के दोहों की भाषा ब्रज भाषा है. छोटे से छंद में गहरे से गहरा प्रभाव

डालने में बिहारी सक्षम थे. इसीलिए बिहारी सतसई के बारे में यह दोहा लोकोक्ति की तरह प्रचलित हो गया है - "सतसय्या के दोहरे जो नावक के तीर देखने में छोटे लगे, भाव करे गंभीर ।"

10.3 मूलपाठ

भक्तिपरक दोहे

1) मेरी भव-बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाई परै, स्याम हरित-दुति होइ ।।

2) तजि तीरथ हरि राधिका-तन-दुति करि अनुराग ।
जिहि ब्रज-केलि-निकुंज-मग पग-पग होत प्रयाग ।।

3) था अनुरागी चित की, गति समुझै नहिं कोय ।
ज्यों ज्यों बूड़ै स्याम रंग, त्यों-त्यों उज्जवल होय ।।

4) म[illegible] मूरति स्याम की, अति अद्भुत-गति जोइ ।
बसतु सु चित अंतर, तऊ प्रतिबिम्बित जग होइ ।।

5) जगतु जनायौ जिहिं सकलु, सो हरि जान्यौ नाँहि ।
ज्यौं आंखिनु सब देखिए, आंखि न देखी जाँहि ।।

नीतिपरक दोहे

1) दीरघ सांस न लेहि दुख सुख साईं नहिं भूलि ।
दई दई क्यों करत हैं दई दई सु कबूलि ।।

2) अति अगाध अति औथरौ नदी कूप सर बाय ।
सोता को सागर जहां जाकी प्यास बुझाय ।।

3) बड़े न दूजैं गुननु बिनु, विरद बड़ाई पाइ ।
कहत धतूरे सौं कनकु, गहनौ गढ्यौ न जाइ ।।

4) समै-समै सुंदर सबै, रूप कुरूप न कोइ ।
मन की रुचि जेती जितै, ति तेती रुचि होइ ।।

5) मरतु प्यासु पिंजरा - परयो, समय कैं फेर ।
आदरु दै दै बोलियत, बायस बलि की बेर ।।

श्रृंगारपरक दोहे

1) दृग उरझत टूटत कुटुम जुरत चतुर-चित प्रीति ।
परति गांठि दुरजन - हियें दई नई यह रीति ।।

2) कहत नटत रीझत खिजत, मिलत खिलत लजियात ।
भरे भौन में करत हैं, नैननु ही सों बात ।।

BRAOU

3) बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाइ ।
सौं ह करैं भौंहनु हंसै, दैन कहै नटि जाई ।।

4) इन दुखिया अंखियानु कौं, सुख सिरज्यौई नांहि ।
देखें बनैं न देखतै, नदेखैं, अकुलाहिं ।।

5) कागद पर लिखत न बनत, कहत संदेसु लजात ।
कहि है सबु तेरौ हियौ, मेरी हिय की बात ।।

10.4 सारांश

भक्तिपरक पद

1) यह दोहा बिहारी सतसई का पहला दोहा है और विद्वानों ने इसे मंगलाचरण का एक रूप माना है. बिहारी की भक्ति भावना उनकी प्रतिभा के साथ मिलकर प्रभावशाली ढँग से व्यक्त हुई है इस दोहे में बिहारी ने श्री राधिका जी से प्रार्थना की है. यह प्रार्थना इस प्रकार से की गई है कि इसके तीन अर्थ किए जा सकते हैं. दोहे का बीज शब्द 'झाँई' है. जिसके तीन अर्थ हो सकते हैं - 1. परछांई या आभा, 2. झांकी या झलक, 3. ध्यान. इस प्रकार पहला अर्थ हुआ - हे राधा नागरि ! आपके तन की परछाई पड़ने से श्याम वर्ण वाले श्रीकृष्ण चन्द्र हरे रंग की दुति (चमक) वाले हो जाते हैं. ऐसी आप हैं. कृपा करके मेरी भव बाधा का हरण कीजिए.

उपर्युक्त अर्थ में श्री राधा के गोरे वर्ण की प्रशंसा है कि उसकी आभा जब श्रीकृष्ण के श्याम वर्ण पर पड़ती है तो रंग हरा दिखने लगता है. पीले और नीले रंग के मेल से हरा रंग बनता है. श्री राधा का गोरा वर्ण सोने जैसा पीलापन लिए हुए है.

दोहे का दूसरा अर्थ इस प्रकार हो सकता है - हे चतुर राधा, आपके तन की झलक जब श्रीकृष्ण की आंखों में पड़ती है अर्थात् जब आप दिखाई देती हैं तो श्रीकृष्ण हरे भरे अर्थात् प्रसन्न मुख हो जाते हैं. ऐसी राधा जी मेरी भव बाधा को दूर कीजिए. इस अर्थ से यह प्रकट होता है कि श्री राधा जी श्रीकृष्ण की अत्यधिक प्रिय पात्री हैं.

उपर्युक्त दोनों अर्थों के अतिरिक्त एक आध्यात्मिक अर्थ भी इस दोहे का किया गया है जिसमें श्री राधा की भव-बाधा हरने की सामर्थ्य सिद्ध होती है. इस अर्थ के अनुसार - हे बुद्धिमती राधा, आपके तन अर्थात् रूप का ध्यान भक्त के हृदय में आने से काले रंगवाला भाव अर्थात् बुराई, पाप इत्यादि अपने दोषों से रहित हो जाते हैं. अर्थात् उनका दुखदाई प्रभाव छूट जाता है, ऐसी श्री राधा जी मेरी भव बाधा अर्थात् सांसारिक दुख, चिंता आदि का हरण कर लो. दु:ख और चिंता का रंग कवि परंपरा में काला माना जाता है.

भव-बाधा का पाठान्तर 'भौं बाधा' भी मिलता है. कई विद्वान इसे ही उचित मानते हैं क्योंकि मंगलाचरण के आरंभ में तगण (2 गुरु, 1 लघु) अशुभ होता है. 'भौं' रख देने से ये मगण (3 गुरु) हो जाता है जो शुभ माना जाता है. किंतु बिहारी तो दोहा राजा सभा में सुनाया करते थे. हो सकता है उनके शिष्यों ने ऐसा लिख लिया हो. बिहारी सतसई की सारी उपलब्ध कृतियों में 'भव' ही मिलता है. इसलिए उचित होते हुए भी 'भौं' नहीं माना जाता.

BRAOU

दोहे में अनुप्रास की छटा तो प्राप्त होती ही है, साथ में श्लेष का चमत्कार भी प्रस्तुत दोहे को अतिरिक्त रुप से आकर्षक बनाता है.

2) प्रस्तुत दोहे में बिहारी श्रोताओं को संबोधित करते हुए कहते हैं कि तीर्थ यात्राओं को छोड़ दो और श्रीकृष्ण तथा राधिका के मोहक रुप सौंदर्य से प्रेम करो. श्रीकृष्ण और राधिका ने ब्रज के कुंजों में अपनी लीला की थी और जहां-जहां उन्होंने अपने कदम रखे थे वहां-वहां एक प्रयाग धाम बन गया है.

हिंदुओं द्वारा प्रयाग तीर्थों का राजा माना जाता है. वहां तीन नदियों का संगम स्थल है - गंगा, यमुना और सरस्वती. गंगा और यमुना दिखाई देती हैं जबकि सरस्वती अदृश्य है. गंगा का जल अज्ज्वल है जबकि यमुना श्याम वर्णी है सरस्वती का रंग लाल माना जाता है. राधिका जी गोरे या उज्ज्वल वर्ण की हैं. इसीलिए गंगा जी के समान हैं. श्रीकृष्ण का रंग श्याम है जो यमुना जी के समान हैं और इन दोनों का पारस्परिक प्रेम अदृश्य सरस्वती के समान है और प्रेम का रंग लाल माना जाता है. इस प्रकार री राधा कृष्ण का युगल रुप प्रयाग जैसा पवित्र हो जाता है.

प्रयाग तो एक ही है किंतु श्री राधाकृष्ण के कदम जहां-जहां पड़े हैं वहां-वहां प्रयाग की परिकल्पना कवि ने की है. इस प्रकार बिहारी श्रोताओं से (भक्तों से) यह कहते हैं कि तीर्थ यात्रा में यात्रियों को तीर्थराज तो एक ही प्राप्त होगा जबकि श्री राधाकृष्ण से प्रेम करने पर अनेक तीर्थराज प्रयाग प्राप्त हो सकेंगे.

3) प्रस्तुत दोहे में भक्तिभाव के सार तत्व-विस्मय को केंद्र बनाकर एक भक्तिपरक उक्ति कही गयी है - इस अनुरागी चित्त की दशा और दिशा को कोई नहीं समझ सकता. ज्यों ज्यों ये श्रीकृष्ण के श्याम रंग में अर्थात् उनके प्रेम रस में डूबता जाता है, त्यों-त्यों उसी अनुपात में उज्ज्वल होता जाता है.

यहां विलक्षणता विरोधाभास की है. कहा जाता है कि काले रंग पर कोई दूसरा रंग चढ़ता ही नहीं. काले रंग के संपर्क में जो कोई आता है वह काला हो जाता है लेकिन इस दोहे में काले रंग में डूबने से उज्ज्वल होने की बात कही गई है. निश्चित ही काला रंग मलिनता का द्योतक है और उज्ज्वल का तात्पर्य निर्मलता और पवित्रता है.

BRAOU

4) इस दोहे में विस्मय की भावना का केंद्र श्रीकृष्ण का अद्भुत सौंदर्य है. बिहारी कहते हैं कि श्रीकृष्ण की सुंदरता मन को मोह लेनेवाली है. उसकी रीति विलक्षण है. वह हृदय के भीतर निवास करती है और सारे संसार में उसका प्रतिबिम्ब दिखाई देता है. कवि का तात्पर्य यह है कि आराध्य का निवास आराधक के हृदय में होता है किंतु आराध्य सारे संसार में प्रतिबिंबित होता हुआ जान पड़ता है.

प्रस्तुत दोहे में विलक्षण चमत्कारिकता यह है कि किसी वस्तु को छिपा लिया जाए तो बाहर उसका प्रतिबिम्ब दिखाई नहीं देता. किंतु यहां आराध्य श्री भगवान भक्त के हृदय में हैं किंतु भक्त को यह प्रतीति होती है कि सारे संसार में उसी का प्रतिबिंब झलक रहा है.

5) इस दोहे में एक ज्ञान प्रधान उक्ति को वस्तुविधान का विषय बनाया गया है. एक ज्ञानी का तर्क प्रस्तुत करते हुए कवि कहते हैं कि सारे संसार को जिस परमात्मा ने ज्ञान दिया है उसी को अज्ञानी जीव नहीं जान पाता. यह स्थिति ऐसी ही है जैसे कि आंख से ही सब कुछ देखा जाता है किंतु आंख स्वयं को नहीं देख पाती.

यहां ज्ञान मीमांसा अर्थात् ज्ञान का साधन किस प्रकार अज्ञानी के लिए अज्ञात रह जाता है इसका निर्देश किया गया है. अगर काव्यात्मक अलंकार आये भी हैं तो वे उक्ति के साथ सहज रूप से जुड़े हैं. उन्हें अलग से लादा नहीं गया है.

नीतिपरक दोहे

1) इस दोहे में बिहारी पाठक और श्रोता दोनों को उपदेश देते हुए सलाह भी देते हैं, फटकारते भी हैं और समझाते भी हैं. बिहारी कहते हैं कि दुख की घडियों में लम्बी-लम्बी सांसें मत ले और सुख में स्वामी या मालिक को मत भूला. हॉय-हॉय क्यों करता है, जो भी दैव अथवा ईश्वर ने दिया है उसे स्वीकार कर लें. इस दोहे में बिहारी व्यंजना शक्ति का इस्तेमाल तो करते ही हैं साथ ही यमक जैसे शब्दालंकार के चमत्कार को भी प्रबोधन के लिए उपयोग में ले आते हैं यहां पाठक या श्रोता को प्रभावित करने के लिए यमक का इस्तेमाल किया है किंतु काव्य वस्तु के साथ अलंकार भी पूरी तरह से एकाकार हो गया है 'दई-दई' में यमक है इतना सच है लेकिन उसका अलंकारत्व उसके सौंदर्य से बिल्कुल ही अलग नहीं है. संभवत: वामन की प्रसिद्ध उक्ति "सौंदर्य मलंकार:" (सौंदर्य ही अलंकार है) इस प्रसंग में पूरी तरह से चरितार्थ होती है. 'दई-दई' का दोहराव जिस ध्वनि सौंदर्य को संभव करता है, वह प्रबोधन का अनिवार्य हिस्सा बनकर ही प्रसतुत होता है. बिहारी का उत्कृष्टतम शिक्षक रूप यहां प्रस्तुत हुआ है.

2) इस दोहे में बिहारी एक सनातन शब्द को उद्घाटित करते हैं कि जिस साधन से जिसका अभीष्ट सध जाए वह साधन साधक के लिए सब कुछ हो जाता है, फिर वह स्वयं में छोटा हो या बड़ा. बिहारी इस प्रतिपाद्य का प्रतिपादन इस प्रकार करते हैं कि नदी, कुआं, तालाब या बावड़ी चाहे कुछ हो और जो भी हो, वह चाहे बहुत गहरा हो इतना गहरा कि उसकी थाह न पाई जा सके और इतना उथला जिसमें गहराई बिल्कुल न हो, फिर भी सच्चाई तो यह है कि जिसकी प्यास जहां बुझती है, वही उसके लिए सागर या समुंदर हो जाता है. इस प्रकार प्रस्तुत दोहे में बिहारी ने प्यास और तृप्ति को केंद्र में रखकर ही जल भण्डार को देखा है जल की उपयोगिता प्यास बुझाने में है प्यासे के लिए जल प्यास बुझाने का माध्यम मात्र होता है. जब प्यास बुझ जाती है तब प्यासे के लिए शेष बचा हुआ जल कोई अर्थ नहीं रखता. बिहारी साधन की उपयोगिता साध्य के लिए मानते हैं. एक बार साध्य प्राप्त हो जाए तो फिर साधन किसी काम का नहीं है. यहां पर साधन और साध्य साधक की अपेक्षा के संदर्भ में ही सार्थक होते हैं इसीलिए 'सो ताको' पर बल दिया गया है. सागर, सागर की जगह है और नदी, नदी की जगह है लेकिन अगर प्यासे की प्यास एक लोटे भर जल से बुझ जाती है तो फिर वह लोटा ही प्यासे के लिए सागर जैसा हो जाता है.

3) इस दोहे में बिहारी प्रबोधन को व्यंग्य की धार देते हैं लोक में अगर कोई व्यक्ति बड़ा बनता है तो वह गुणों से ही. बिना गुणों के कोई बड़ा नहीं बन सकता. चाहे फिर उसकी कितनी ही प्रशंसा क्यों न की जाए. उदाहरण प्रस्तुत करते हुए बिहारी कहते हैं कि धतूरे को कनक कहा जाता है और सोने का भी एक नाम कनक है. लेकिन कनक कहने मात्र से धतूरे में सोने के गुण नहीं आ जाते. उससे आभूषण नहीं बनाये जा सकते. आभूषण की सामग्री हो सकना सोने की विशिष्टता है जबकि धतूरा मात्र एक ज़हरीला फल है. कथा के अनुसार धतूरे ने भी चाहा कि उससे गहने बनाये जाए लेकिन वह मात्र एक ज़हरीला फल था और कनक नाम के बावजूद उसमें सोने के गुण नहीं आ सके.

4) इस दोहे में बिहारी कहते हैं कि संसार में कोई भी वस्तु, सुंदर या असुंदर नहीं होती. बिहारी के इस दोहे के अनुसार वस्तु की सुंदरता या असुंदरता समय पर निर्भर है. वस्तु का सुंदर या असुंदर होना

BRAOU

देखनेवाले के मन पर आधारित होता है. जिसकी मन की रुचि जितनी और जैसी होती है उतनी और वैसे ही वह वस्तु उसे सुंदर या असुंदर प्रतीत होने लगती है.

इस दोहे में बिहारी सौंदर्य के आत्मनिष्ठ होने के पक्षपाती हैं. भले ही सौंदर्य शास्त्र की दृष्टि से सौंदर्य के आत्मनिष्ठ होने का सिद्धांत एकांगी और विवादास्पद हो किंतु यहां काव्य वस्तु के रूप में वह नैतिक प्रबोधन बन गया है. सौंदर्य सिद्धांत नहीं रहा. नैतिक प्रबोधन बन जाने के पश्चात् यह लक्ष्य पाठक के लिए भावनाओं को और उनके निरीक्षण से प्राप्त निष्कर्षों को जीवनोपयोगी बनाने के उद्देश्य पर बल देता है.

5) प्रस्तुत दोहे में बिहारी कौओं और तोतों के उदाहरण से समय को सर्वोपरी सिद्ध करते हैं. आदर और अनादर समय के अनुसार ही होता है. तोता एक बहुत ही प्यारा पक्षी है और सुसंस्कृत जनों के घरों में इसे बहुत प्यार से पाला जाता है. किंतु श्राद्ध पक्ष में तोता पिंजडे में पड़ा रहता है. अगर उसे प्यास भी लगी हो तो भी उसकी ओर ध्यान नहीं दिया जाता. श्राद्ध के समय तो आदर के साथ कौओं को बुलाया जाता है.

हिंदू कर्मकाण्ड में श्राद्ध के समय कौओं को अन्न देने की परंपरा है. मान्यता है कि ऐसा करने से पितरों अर्थात् स्वर्गीय पूर्वजों को मुक्ति मिलती है. श्राद्ध के समय घर में व्यस्तता रहती है इसलिए तोते की ओर कोई ध्यान नहीं जा पाता. हालांकि तोते के प्रति घर वालों के प्यार में कोई कमी नहीं होती.

<u>श्रृंगारपरक दोहे</u>

1) नायिका तर्क-वितर्क की स्थिति में है. वह अपनी अंतरंगिणी सखी से इस विषय में कहती है कि प्रेम के व्यवहार में परस्पर उलझती तो आंखें हैं, किंतु टूटते कौटुम्बिक संबंध हैं. इनके साथ ही जुड़ते या मिलते चतुरों या बुद्धिमानों के चित्र हैं पर गांठ दुर्जनों के हृदय में पड़ जाती है. हे देव ! यह विलक्षण रीति है क्योंकि लोक में जो वस्तुएं उलझती हैं वे ही टूटती भी हैं, वे ही जोड़ी जाती भी हैं. किंतु यहां अनोखापन यह है कि उलझती कोई और वस्तु है, टूटती कोई और वस्तु है, जुड़ती कोई और ही है और गांठ किसी और के हृदय में पडती है.

B R A O U

यहां बिहारी प्रेम भावना को विलक्षण बताना चाह रहे हैं लेकिन यह विलक्षणता नायक-नायिका, कुटुम्ब, समाज और व्यापक संबंधों के परिप्रेक्ष्य में है दोहे जैसे छोटे छन्द में इतने सारे कृत्यों को एकसाथ शब्द-बद्ध करके प्रस्तुत करना बिहारी के कवि कर्म की विलक्षणता कहलाएगी.

2) इस दोहे में बिहारी नायक और नायिका के कई सारे प्रेम व्यवहारों को एकसाथ प्रकट करते हैं. संभवत: नायक-नायिका एक ऐसे भवन में हैं जहां अनेक लोग विद्यमान थे. उन सभी लोगों से छुपाकर नायक नायिका आंखों के इशारों से अपने मन के भाव परस्पर प्रकट करते हैं. बिहारी ने नायक और नायिका की चतुराई को वर्णित किया है. लेखक का अभिव्यक्ति विधान कुछ ऐसा है कि नायक नायिका की चतुराई का वर्णन एक सखी दूसरी सखी से कर रही है. वह कहती है - हे सखी ! देखो वे दोनों गुरु-जनों से भरे हुए भवन में कैसे चालाकी से आंखों ही आंखों में अपने मन की सारी बात कर ले रहे हैं. परस्पर अपने अभिप्राय प्रकट कर देते हैं. कभी कुछ कहते हैं, कभी इन्कार कर देते हैं, कभी परस्पर रीझते हैं, कभी खीजते हैं, कभी फिर से मेल कर लेते हैं, कभी खिलते अर्थात् प्रसन्न होते हैं और कभी लजाते हैं.

दोहे की प्रथम पंक्ति का अर्थ इस तरह भी किया जाता है - नायक नायिका से कुछ कहता है अथवा प्रेम के लिए प्रार्थना करता है नायिका अस्वीकार कर देती है. नायक नायिका के अस्वीकार के मुद्रा पर रीझ जाता है तब नायिका उसके रीझने की चेष्टा पर खीज जाती है. फिर दोनों में मेल हो जाता है और इस मेल होने पर नायक हंस देता है तो नाइका उसके हंस देने पर शर्मा जाती है.

दोहे जैसे छोटे से मात्रिक छन्द में इतनी सारी क्रियाओं को व्यक्त करना बिहारी जैसे रस सिद्ध कवि के लिए ही संभव था. बिहारी ने जैसे एक गतिशील चित्र शब्दों के माध्यम से उकेरा है. बिहारी की बिम्ब निर्माण क्षमता का आदर्श उदाहरण यह गतिशील बिम्ब श्रृंखला है. अगर रूपविधान की दृष्टि से देखा जाए तो ऐसे चित्र समस्त भारतीय साहित्य में केवल रीति काव्य में ही मिल सकते हैं. रीतिकाल में भी केवल बिहारी के बूते की ही यह बात थी.

3) यह दोहा भी बिहारी के वर्णन कौशल का एक उत्कृष्ट उदाहरण है. इसमें श्री राधिका जी श्रीकृष्ण के साथ वार्तालाप का आनंद लेना चाहती है. इसलिए उनकी मुरली कहीं छुपा देती है. इस पर दोनों में क्या वार्तालाप होता है इसका वर्णन एक सखी दूसरी सखी से करती है -

श्री राधिका जी ने बातचीत करने की लालच से लाल अर्थात् श्रीकृष्ण की मुरली कहीं छिपाकर रख दी है. श्रीकृष्ण मुरली ढूंढ देने के लिए सौगंध देते हैं जिस पर श्री राधिका जी भौंहों से थोड़ा हंस देती हैं जिससे कि श्रीकृष्ण को उन पर संदेह हो जाए और वे निराश होकर न चले जाएं लेकिन जब श्रीकृष्ण मुरली मांगते हैं तो मना कर देती हैं इस तरह से उनमें बत रस होती रहती हैं.

इस दोहे में दूसरी पंक्ति में नायक नायिका की चेष्टाएं वर्णित हुई हैं जो उसी विलक्षणता को रेखांकित करती हैं जिसके विषय में पूर्व दोहे के प्रसंग में कहा गया है.

BRAOU

4) प्रस्तुत दोहे में बिहारी श्रृंगार के वियोग पक्ष का वर्णन करते हैं. विरह पीडिता नायिका अपनी सखी से कहती हैं, हे सखी ! मैं क्या करूं ? मेरी इन दुखिनी आंखों के लिए सुख बनाया ही नहीं गया है. जब प्रियतम दिखते हैं तो लाज के कारण देखते नहीं बनता और यदि न देखें तो यह आंखें देखने की लालसा में व्याकुल होती रहती हैं.

नायिका पूर्वानुराग की स्थिति में है और उसका विरह कितनी दुविधा से भरा है, यह आंखों की स्थिति के वर्णन से पता चलता है. बहुत ही सीधे-सादे ढंग से बिहारी ने इस दुविधा की स्थिति को चित्रित किया है.

5) इस दोहे में भी बिहारी ने विरह वेदना का एक मार्मिक पक्ष प्रस्तुत किया है. नायिका प्रोषित पतिका है. प्रोषित पतिका उस नायिका को कहते हैं जिसका नायक प्रवास पर गया हुआ होता है नायिका नायक को पत्र लिखती है. कुछ वृत्तांत लिख देने के बाद यह बात जताने के लिए कि जो कुछ भी लिखा गया है उससे विरह व्यथा का पूरा ज्ञान नायक को नहीं हो सकता, वह अंत में लिखती है कि हाथ का कांपना, पसीना, आंसू इत्यादि के कारण कागज पर तो विरह वर्णन नहीं लिखा जा रहा है और मौखिक संदेश अर्थात. किसी को दूत रूप से भेजने के लिए उससे अपनी दशा कहने में लज्जा आती है. इसलिए मैं यही लिखकर संतोष करती हूं कि अगर आप विचार करेंगे तो आपका हृदय मेरे हृदय की सारी बातें कह देगा अर्थात् स्वयं के हृदय की पीड़ा से ही नायक नायिका के हृदय की सच्ची दशा का अनुभव कर लेगा.

बिहारी ने बहुत ही सीधे-सादे तरीके से प्रेम की गहराई और उसके वर्णनातीत होने की सच्चाई का वर्णन इस दोहे में किया है. बिहारी का रस सिद्ध कवि होना ऐसे ही दोहों के आधार पर प्रमाणित होता है.

10.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

भक्तिपरक दोहे

बिहारी के यह पांचों दोहे भक्ति भावना के विभिन्न आयामों को प्रकट करते हैं. अगर एक स्थान पर भक्त अभिलाशा करता है तो दूसरे स्थान पर इच्छुक भक्तों को प्रबोध भी करता है. कहीं स्वयं की भक्ति भावना में लीन होकर स्वयं की ही स्थिति पर विस्मित होता है तो कहीं किसी अध्यात्म विषयक तथ्य को काव्य वस्तु बनाता है.

वास्तव में भक्ति भावना को सीमाबद्ध करके नहीं देखा जा सकता. जहां भी असीम की अवधारणा आती है, वहां आयामों की संख्या निश्चित नहीं की जा सकती. लौकिक दृष्टि से इसे विलक्षण कहा जा सकता है अथवा विरोधाभास कहकर समझने की चेष्टा की जा सकती है किंतु ऐश्वर्य का प्रधान गुण ही यह होता [illegible] यह दर्शक को विस्मित करता है. चाहे नामकरण करते हुए भगवान कहा जाए अथवा ईश्वर सभी जगह संकेत ऐश्वर्यवान अथवा ईश्वर की ओर ही है. वह ऐश्वर्य आराध्या श्री राधिका जी के रूप सौंदर्य से जुड़ता है तो अद्भुत प्रवाह उत्पन्न करता है. युगल रूप के कुंज विहार में भी विलक्षण का चित्रण है जहां बिहारी श्री राधाकृष्ण के पग-पग पर तीर्थराज प्रयाग का होना मानते हैं. यहां बिहारी की दास्य भक्ति मधुर भक्ति के क्षेत्र में प्रवेश कर जाती है. श्याम रंग और उज्ज्वलता का विरोध खड़ा करके कवि ने स्पष्ट रूप से उस विलक्षणता को प्रकट किया है जो भगवान और भक्ति भाव के सम्मुख विस्मित भक्त की मन: स्थिति को दर्शाता है. यही विलक्षणता हृदय और जगत के विरोध में भी प्रकट होती है. इसी क्रम में बिहारी ने ज्ञान परक विचार को विस्मय तथा प्रबोधन के साथ जोड़कर विस्मय बना लिया है. कहा जा सकता है कि भक्ति रस, लोकोत्तरता अथवा दिव्य के क्षेत्र में प्रवेश किए बिना रह ही नहीं सकता.

उपर्युक्त पांचों दोहे यह तथ्य बतलाने के लिए पर्याप्त हैं कि बिहारी की भक्ति भावना अपने स्थान पर पूरी तरह से प्रामाणिक बन पड़ी है. चमत्कार उत्पन्न ज़रूर हुआ है किंतु वह कवि द्वारा आरोपित नहीं है यह दोहे यह बतलाने के लिए पर्याप्त हैं कि बिहारी की काव्य प्रतिभा राज दरबार की प्रतिस्पर्धा में कुण्ठित नहीं हुई थी और इसीलिए वे भक्ति भाव की अभिव्यक्ति पूरी पवित्रता के साथ कर सके हैं.

नीतिपरक दोहे

बिहारी के पांचों नीतिपरक दोहे यह बतलाने के लिए पर्याप्त हैं कि बिहारी उपदेश देने की पात्रता रखते थे उन्हें लोक का, जीवन का तथा मानव व्यवहार का भली-भांति ज्ञान था उनके पास अनुभव संपदा की कोई कमी नहीं थी. पहला ही दोहा नीति को भक्ति से जोड़ते हुए अपने पाठकों को यही बतलाता है कि सुख देनेवाला परमात्मा ही दुख देता है तो उसे सहज स्वीकार करना चाहिए. दुख के समय लंबी-लंबी सांसें भरनेवाले को प्रकारांतर से अज्ञानी ही कहा गया है. इसी प्रकार इच्छा का लक्ष्य और क्या होगा सिवाय इसके कि उसकी पूर्ति हो जाए. पूर्ति हो जाने के पश्चात. फिर इच्छा के लक्ष्य की चर्चा क्या अर्थ रखती है ? इसी को बिहारी ने बहुत ही अच्छे तरीके से व्यक्ति की प्यास और पानी के उदाहरण से समझाया गया. प्यासे व्यक्ति के लिए प्यास बुझना ही लक्ष्य होगा. प्यास अगर कुएं

या बावड़ी से बुझती है तो प्यासे व्यक्ति के लिए समुद्र का अलग से क्या औचित्य होगा. इन दोनों दोहों से यही सिद्ध होता है कि बिहारी भावना को सर्वोपरी महत्व देते थे. फिर गुणों की प्रशंसा होती है किंतु प्रशंसा मात्र से गुण उत्पन्न नहीं हो जाते. इस बात को बिहारी ने धतूरे और उसके एक पर्यायवाची शब्द 'कनक' के सहारे समझाया है. बिहारी के लिए नीतिपरकता अलग से कोई सत्ता न रखकर सौंदर्य और जीवन के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ तथ्य मात्र है. बिहारी का लोक-जीवन का निरीक्षण इतना व्यापक और गहरा था कि उन्होंने सहज ही समय की महत्ता श्राद्ध पक्ष में कौओं के महत्व की बात कहकर बतलाई है. नीति निश्चित ही जीवन के लिए उपयोगी होती है और बिना जीवन के निरीक्षण के कोई नैतिक उपदेश की पात्रता प्राप्त नहीं करता. बिहारी ने जीवन में दु:ख और सुख दोनों का अनुभव किया था. जब तक जीवन के इन दोनों पहलुओं का अध्ययन नहीं होता तब तक व्यक्ति को स्वयं ही कुछ साफ-साफ पता नहीं होता तो फिर किसी और से वह क्या कहेगा ? किसी और को वह क्या शिक्षा देगा ?

श्रृंगारपरक दोहे

बिहारी मुक्तककार थे और मुक्तक की विशेषता यह होती है कि वह स्वयं में ही पूर्ण होता है. पूर्वापर प्रसंग में किसी अन्य पद की आवश्यकता नहीं होती. इसीलिए एक समर्थ मुक्तक एक सधे हुए काव्य कौशल की मांग करता है. चमत्कार की सृष्टि भी कवि की काव्य साधना के अनुपात में ही हो पाती है.

रीतिकाव्य में मुक्तक काव्य के तीन प्रसिद्ध क्षेत्र रहे हैं - भक्ति, नीति और श्रृंगार. रीतिकाल को श्रृंगार काल भी कहा जाता है इसलिए यह सहज ही निष्कर्ष निकलता है कि रीतिकाव्य का दूसरा नाम श्रृंगार काव्य हो सकता है. बिहारी का रस सिद्ध होना उनके श्रृंगारिक काव्य से ही प्रमाणित होता है. उनका प्रत्येक दोहा श्रृंगार रस की एक उत्कृष्ट अभिव्यक्ति था.

श्रृंगार के साथ हास्य का समन्वय होता रहा है. बिहारी ने बड़ी कुशलता के साथ श्रृंगारिक हास्य विनोद की सृष्टि की है राधा का मुरली को छुपाना आदि भावनाएं बिहारी की मौलिक परिकल्पनाएं हैं और यहां श्रृंगार की अभिवयक्ति भी अद्भुत है. सारा का सारा रीतिकाव्य चमत्कार प्रधान था मगर बिहारी ने गुरुजनों के बीच आंखों के माध्यम से वार्तालाप करते, नायक नायिका के वर्णन से श्रृंगार के उत्कर्ष को ही दर्शाया है. यह उत्कर्ष चमत्कार पर आधारित है और इस प्रकार के चमत्कार बिहारी को विलक्षण कवि सिद्ध करते हैं. वस्तुत: यह विलक्षणता बिहारी का सहज स्वभाव थी.

श्रृंगार के वियोग पक्ष में भी बिहारी का विलक्षण काव्य कौशल सहज ही चमत्कार की सृष्टि कर सका है. नायिका की आंखें नायक को देखकर भी नहीं देख पाती और बिना देखे अकुलाती रहती हैं तथा नायिका न तो अपनी दशा कागज पर लिख पाती है और न मौखिक रूप से ही व्यक्त कर पाती हैं. इस तरह की स्थितियों को जितने सीधे-सादे सरल ढंग से बिहारी ने लिखा है, वह यह बतलाने के लिए पर्याप्त है कि बिहारी श्रृंगारिक क्षेत्र के अद्वितीय कवि थे.

जो बात बिहारी को अन्य सारे रीतिकालीन कवियों से अलग करती है, वह है उनका छन्द चयन. दोहा जैसा छन्द जो प्रधानतया जायसी और तुलसी द्वारा कथा वर्णन के काम में आता रहा था, उसे अपना एकमात्र अभिव्यक्ति रूप बनाना छोटे-मोटे साहस की बात नहीं थी. बिहारी ने कुछ ऐसा ही चमत्कार दोहे जैसे छन्द को चुनकर किया है जैसे तलवारों, भालों और धनुष बाण लिये हुए योद्धाओं के बीच में कोई वीर छोटी-सी कटार लेकर पहुंच जाए और अंतत: विजय भी प्राप्त कर लें तो जैसा अविश्वसनीय

BRAOU

परिदृश्य उपस्थित होगा, वैसा ही कुछ बिहारी के दोहा छन्द चुनने से हुआ है. निश्चित ही बिहारी की काव्य साधना और उनकी सफलता अत्यंत विलक्षण है.

10.6 शब्दार्थ

भक्तिपरक दोहे

1) भव - संसार
बाधा - कष्ट अथवा रुकावट
हरौ - हरण करो, दूर करो
नागरि - बुद्धिमती, चतुर
सोयी - वही
जा - जिस
झाई - परछाई, झांकी, ध्यान
श्या[illegible] - श्याम वर्णवाले कृष्ण
हॉ[illegible] दुति - हरा रंग, प्रसन्न, यमक का घट जाना

2) तजि - छोड़कर
तन-दुति - शरीर की कांति
जिहिं - जिसके
केलि - क्रीड़ा
निकुंज - झाडियां
मग - रास्ते में

3) या - इस
अनुरागी - प्रेमी
चित्त - मन
बूड़ै - डूबता है
स्याम रंग - काला रंग, श्रीकृष्ण की भक्ति
उज्ज्वल - सफेद, निर्मल

4) मोहन - मोहनेवाले
मूरति - देह
अद्‌भुत - अनोखी
जोइ - देखो
बसत - निवास करती है, रहती है
अंतर - भीतर
तऊ - फिर भी

5) जगतु - संसार
जनायौ - बताया
जिहिं - जिन्होंने

BRAOU

	सकलु	-	सब
	जान्यौं	-	जानते
	ज्यौं	-	जो

नीतिपरक दोहे

1)	दीरघ	-	लंबी
	साईं	-	मालिक
	दई-दई	-	हॉय-हॉय
	दई	-	दिया हुआ
	कबूलि	-	स्वीकार करना
2)	अगाध	-	अथाह, जिसकी थाह न पाई जा सके
	औथरौ	-	उथला
	कूप	-	कुआं
	सर्	-	तालाब
	बाय	-	बावड़ी, बावली
	ताको	-	उसके लिए
	जाकी	-	जिसकी
3)	हूजैं	-	होते हैं
	गुनन्	-	गुण
	बिरद	-	प्रशंसा, नाम
	धतूरा	-	एक जहरीला फल जो भगवान शंकर की पूजा में काम आता है.
	कनक	-	सोना
	गढ़यौ	-	तैयार करना
4)	समै-समै	-	समय-समय पर
	जेती	-	जितनी
	सबै	-	सब
	तित	-	वहां पर
	तेती	-	उतनी
5)	मरतु	-	मरता है
	परयो	-	पड़ा रहता है
	प्यासु	-	प्यासा
	फेर	-	चक्कर
	आदरु	-	इज्जत
	बायस	-	कौआ
	बलि की बेर	-	श्राद्ध के समय

श्रृंगारपरक दोहे

1)	दृग	-	ऑखें

BRAOU

	उरझत	-	आपस में गुंथ जाती हैं, उलझ जाती हैं
	टूटत कुटुम	-	कौटम्बिक संबंधों का टूटना
	जुरत	-	जुड जाते हैं
	परति	-	पड जाती हैं
	गांठि	-	ईर्ष्या
	दुरजन	-	दुष्ट
	हिये	-	हृदय में
	दई	-	हे ईश्वर !
2)	कहत	-	कहता है
	नटत	-	अस्वीकार करती है
	रीझत	-	मोहित होना
	खिजत	-	खीजना, नाराज होना
	खिलत	-	प्रसन्न होना
	भौन	-	भवन
	नैननु	-	आंखों से
3)	बतरस	-	बातचीत करने का आनंद
	लाल	-	श्रीकृष्ण
	धरी	-	रखी
	लुकाइ	-	छुपाकर
	सौं	-	सौगन्ध, कसम्
	भौंहनु	-	भौहों से
	नटि जाइ	-	इन्कार कर देना
4)	सिर ज्यौई	-	सृजन करना, बनाना
	अकुलाहिं	-	बेचैन करना
5)	कागद	-	कागज
	हियौ	-	हृदय

10.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

10.7.1दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. पठित दोहों के आधार पर बिहारी की भक्ति भायना को समझाइए.
2. बिहारी के मंगलाचरण रूपी दोहों की व्याख्या कीजिए.
3. पठित दोहों के आधार पर बिहारी के नीति विषयक विचारों का विवेचन कीजिए.
4. "बिहारीलाल के नीतिपरक दोहे भाव और विचार दोनों ही दृष्टियों से विशिष्ट हैं" - इस उक्ति की व्याख्या कीजिए.

BRAOU

5. "श्रृंगार वर्णन ही बिहारी को रस-सिद्ध कवि बनाता है" - इस उक्ति की विवेचना कीजिए.
6. "नायक-नायिका की चेष्टायें बिहारी के दोहों में बारीकी से वर्णित हुई हैं." - उदाहरण के साथ समझाइए.

10.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. बिहारी के भक्तिपरक दोहों में उपदेशात्मकता के स्वरुप को समझाइए.
2. बिहारी की भक्ति भावना में निहित विलक्षणता की विवेचना कीजिए.
3. बिहारी अपने दोहों में सहज भाव से 'चमत्कार ले आते थे' - किसी एक दोहे के आधार पर समझाइए.
4. बिहारी के दोहों में भक्ति और विरोधाभास के संबंध पर प्रकाश डालिए.
5. 'गुण ही किसी को बडा बनाते हैं' - इस कथन को बिहारी के अनुसार विवेचित कीजिए.
6. विधाता के दिये हुए दु:ख को क्यों कबूल करना चाहिए ?
7. "प्यासे के लिए प्यास जहां बुझ जाए वहीं उसके लिए सागर होता हैं" - बिहारी के इस कथन की विवेचना कीजिए.
8. बिहारी के अनुसार समय की महत्ता बतलाइए.
9. बिहारी के नायक-नायिका आंखों ही आंखों में किस तरह बात करते हैं ?
10. नायक-नायिका के परस्पर प्रेम के प्रसंग में नई रीति किसे कहा गया है ?
11. नायिका को ऐसा क्यों लगता है कि ईश्वर ने आंखों के लिए सुख बनाया ही नहीं ?

10.8. नमूने के प्रश्नोत्तर

10.8.1दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- पठित दोहों के आधार पर बिहारी की भक्ति भावना को समझाइए.

उत्तर- बिहारी के भक्तिपरक दोहे उनकी भक्ति भावना के स्वरुप को स्पष्ट करते हैं. जो भक्त जैसा जीवन जीता है, उसकी भक्ति भावना वैसी ही होती है. अगर बिहारी के भक्तिपरक दोहों में भी सहज चमत्कार दिखाई देता है, तो उसका एक कारण उनका दरबारी कवि होना भी है. दरबारी कवि की काव्य रचना निश्चित रुप से जनता एवं राजा को प्रभावित करने के उद्देश्य से रची जाती है. इस प्रभावित करने में ही चमत्कार तत्व प्रधान हो जाता है. प्राय: भक्त कवियों में यह चमत्कार तत्व व्यापक तौर पर पाया जाता है क्योंकि ज्ञानी भी जब 'नेति-नेति' कहने पर विवश हो जाता है. अर्थात् जो कुछ भी ज्ञान के नाम से कहा जाता है, ज्ञान उतना ही नहीं होता उससे बहुत अधिक होता है. भक्त वस्तुत: इस नेति-नेति को भावना के स्तर पर जीता है. निश्चित ही विस्मय उसका स्थाई भाव बन जाता है. भक्ति रस अनिवार्य रुप से अद्भुत रस के निकट पहुंच जाता है. बिहारी के दोहों में विलक्षणता की सृष्टि इसी अद्भुत रस के कारण हो सकी है. बिहारी की भक्ति भावना इस विलक्षणता को प्रस्तुत कर सकी है और इस स्तर पर बिहारी किसी भी अन्य भक्त कवि से कम सिद्ध नहीं होते. जिस भक्ति भाव को भक्त भाव स्तर पर जीता है वह संश्लिष्ट चरित्र की होती है. बिहारी की भक्ति भावना भी संश्लिष्ट

है. इसीलिए वे कहीं युगल रूप की उपासना करते दिखाई देते हैं तो कहीं केवल श्री राधा ही उनकी आराध्या हो जाती है और कहीं श्रीकृष्ण एकमात्र आराध्य प्रतीत होते हैं. बिहारी कुल मिलाकर मध्यकालीन भक्ति भावना की कसौटी पर खरे उतरते हैं और यह तथ्य उनकी भक्ति भावना को प्रामाणिक बनाता है.

प्रश्न- "बिहारी लाल के नीतिपरक दोहे भाव और विचार दोनों ही दृष्टियों से विशिष्ट हैं." इस उक्ति की व्याख्या कीजिए.

उत्तर- बिहारी रीतिकाल के एक विशिष्ट कवि थे. उनकी विशेषता इस अर्थ में अनोखी थी कि उक्ति में चमत्कार उत्पन्न करना तो रीतिकाव्य की सामान्य प्रवृत्ति थी. निश्चित ही चमत्कार प्रधान युग में सामान्य चमत्कार का प्रभाव अलग से उल्लेखित करने का कोई औचित्य नहीं है. बिहारी के नैतिक प्रबोधन की एक विशेषता यह थी कि उनके नैतिक कथन जीवन के गहन निरीक्षण में से प्राप्त हुए थे. नीति का व्यापकतम रूप बिहारी में प्राप्त होता है नीति में नियमों का विधान किया जाना प्रमुख होता है. ये विधान विधि निषेधमूलक होते हैं और जीवन के सामाजिक, व्यावहारिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में तथा देश, काल और पात्र के संदर्भ में उन नियमों का विधान किया जाता है बिहारी भले ही दरबारी वातावरण के बीच में रहते थे किंतु जीवन के प्रसंग में उनका नैतिक चिंतन पूरी तरह से भारतीय परंपरा में गुंथा हुआ था. भारतीय चिंतक, भले ही वह मुक्तककार कवि ही क्यों न हो, प्राय: सूक्ति के रूप में अपनी अभिव्यक्ति करता है. बिहारी के नीतिपरक दोहों को नि:संकोच सूक्तिपरक दोहे कहा जा सकता है. बिहारी यह अच्छी तरह जानते थे कि मानव जीवन के लिए शील का क्या महत्व है. जब वे 'गुणों के बिना' बड़े होने या न होने की बात करते हैं तो सहज ही भारतीय नैतिक दृष्टि को अभिव्यक्त करते हैं. बिहारी सामंती युग के कवि थे और सामंती युग में धन का इतना महत्व था कि सारे गुण धन के अधीन माने जाते थे. तब बिहारी का यह कहना कि गुणों से संपन्न ही गुणी होता है, निस्संदेह विशेष महत्व रखता है.

इसी प्रकार लोक व्यवहार के विषय में बिहारी को पर्याप्त ज्ञान था. समय पड़ने पर व्यक्ति की महत्ता स्वीकारी जाती है. नहीं तो उसका कोई मूल्य आंका नहीं जाता. इसी को श्राद्ध पक्ष और कौए के माध्यम से अभिव्यक्त किया है. निश्चित ही बिहारी के नीतिपरक दोहों की सर्वप्रमुख विशेषता इस बात में निहित है कि बिहारी का अनुभव-जगत व्यापक था, उनके भीतर स्वस्थ जीवन की चाह भरपूर थी और उनके लिए जीवन के आदर्श और यथार्थ में कोई बनावटी अंतर नहीं था. नीतिपरक दोहे उन्हें एक श्रेष्ठ नीतिकार कवि के रूप में स्थापित करते हैं.

प्रश्न- 'नायक-नायिका की चेष्टाएं बिहारी के दोहों में बारीकी से वर्णित हुई हैं.' उदाहरण के साथ समझाइए.

उत्तर- कोई भी भाव जब परिपक्व होकर रस बनता है तो नायक-नायिका की चेष्टाएं ही उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम होती हैं. बिहारी के तीन दोहे ऐसे हैं जो उनके काव्य-कौशल और निरीक्षण क्षमता को उजागर करते हैं. दोहे जैसे छोटे छन्द में इतने अधिक अर्थ को समाहित कर देना बिहारी को न केवल रीति काव्य का बल्कि समस्त हिंदी काव्य का अनूठा कवि सिद्ध करता है. डॉ. बच्चन सिंह ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'बिहारी का वाग वैभव' में उन्हें 'अपने युग का सर्वाधिक ईमानदार कवि' कहा है. बिहारी की यह ईमानदारी उनके दोहों में आये चरित्रों, विशेष रूप से नायक-नायिका के माध्यम से ही प्रकट हुई है.

BRAOU

बिहारी नायक-नायिका की चेष्टाओं को समाज की सापेक्षता में बतलाते हैं लेकिन वह समाज अदृश्य होता है. अधिक से अधिक कहीं पृष्ठभूमि में निहित होता है जब बिहारी कहते हैं कि आंखों के उलझने से कुटुम्ब टूटते हैं लेकिन बुद्धिमानों के चित्त जुड़ जाते हैं और दुर्जन ईर्ष्या करने लगते हैं, तो एक ओर विसंगति, विडम्बना आदि का चित्रण होता है किंतु दूसरी ओर यह समाज पर टिप्पणी होती है. नायक-नायिका और उनकी चेष्टाएं समाज में होती हैं. उसी तरह भरे भवन में इशारों से बात करना भी नायक-नायिका और उसके समाज को प्रस्तुत करता है प्रोषित पतिका नायिका का चाहते हुए भी कुछ नहीं लिख पाना एक समाज के भीतर ही घटित होता है. कोई बात कह पाना या न कह पाना, समाज से छुपकर इशारा करना और दो बुद्धिमान वयस्क स्त्री-पुरुषों के चित्त के जुड़ जाने से दुर्जनों के हृदय में ईर्ष्या पैदा होना - यह सारे व्यवहार समाज के बीच ही घटित होते हैं. सामाजिक सदस्यों का व्यवहार समाज निरपेक्ष हो ही नहीं सकता. इस अर्थ में बिहारी के यह दोहे नायक-नायिका के पारस्परिक व्यवहार के स्थूल चित्रण नहीं है. स्थूल के भीतर सूक्ष्मता निहित है. समाज को प्रेम की भावना कभी स्वीकार नहीं होती. वह प्रत्येक उस भावना का शत्रु होता है जो समाज के अहं को मिटाकर ही संभव होती है. समाज में प्रेमी को इसीलिए गोपनीयता का सहारा लेना पड़ता है तथा इस बिंदु पर व्यवहार सहज नहीं रह पाता. अनैतिकता समाज ही उत्पन्न करता है और फिर उसका विरोध भी यही करता है. बिहारी के नायक-नायिका की चेष्टाओं में यह बात निहित है और इसीलिए वे चेष्टाएं अर्थगर्भी और मार्मिक बन पड़ी हैं. जब स्थूल चेष्टाएं सूक्ष्म संकेत हो जाएं तो निश्चित ही कवि की प्रशंसा करनी पड़ेगी.

10.7.3 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- बिहारी के दोहों में भक्ति और विरोधाभास के संबंध पर प्रकाश डालिए.

उत्तर- किसी भी काव्य रचना में चमत्कार का आधार विरोधाभास ही होता है. बिहारी के प्रस्तुत दोहों में विरोधाभास के अलग-अलग रूप प्राप्त होते हैं. जैसे - श्याम रंग में चित्र का डूबकर उज्ज्वल होना, चित्र में छुपी हुई श्याम की मूर्ति का सारे जगत में प्रतिबिम्बित होना तथा सारे जगत को देखनेवाली आंखों का स्वयं को नहीं देख पाना. निश्चित रूप से भक्त कवि भगवान के ऐश्वर्य के सम्मुख अवाक् और हतप्रभ रहता है. एक समर्थ कवि होने के नाते बिहारी अपनी इस अवाक् स्थिति का वर्णन कर देते हैं. विरोधाभास यहां इस वर्णन का एक कारगर साधन बनकर प्रस्तुत होता है. चमत्कार, विलक्षणता आदि सारी विशेषताएं बिना विरोधाभास के प्राप्त करना कठिन है और इसी प्रसंग में विरोधाभास भक्ति भावना को अभिव्यक्त करने के साधन रूप में प्रस्तुत हुआ है. भक्ति भावना की अभिव्यक्ति साध्य है और विरोधाभास साधन है - यही इन दोनों का संबंध है.

प्रश्न- 'गुण ही किसी को बड़ा बनाते हैं' इस कथन को बिहारी के अनुसार विवेचित कीजिए.

उत्तर- जब समाज के संबंध वास्तविक न रहकर नकली और मिथ्या हो जाते हैं तो प्रशंसा अथवा नाम का कोई औचित्य नहीं रह जाता. स्वाभाविक रूप से देखा जाए तो गुणी वह होता है जिसमें गुण होते हों. किंतु जब बिना गुणों के केवल नाम या प्रशंसा को ही बड़प्पन मान लिया जाता है तो बिहारी कहते हैं कि यह गलत है. धतूरे जैसे ज़हरीले फल को अगर कनक कह दिया जाए तो वह सोना नहीं हो जाता. सोने के आभूषण बनते हैं लेकिन धतूरे का नाम कनक हो जाने से उसके आभूषण बनाये नहीं जा सकते. बिहारी के कथन का तात्पर्य यह है कि झूठी प्रशंसा और झूठा नाम किसी को बड़ा नहीं बनाता. बड़ा होने के लिए वसतुत: बड़प्पन चाहिए.

प्रश्न- नायिका को ऐसा क्यों लगता है कि ईश्वर ने आंखों के लिए सुख बनाया ही नहीं ?

उत्तर- नायिका विरहिणी है और संभवत: नायक से उसके संबंध की स्थिति पूर्वराग की है. बिहारी ने नायिका से कहलवाया है कि इन दु:खी आंखों के लिए ईश्वर ने सुख बनाया ही नहीं है क्योंकि जब ये प्रियतम को देखना चाहती हैं तो संकोच के मारे देख नहीं पातीं और जब नहीं देखती हैं तो बेचैन होती रहती हैं. प्रत्येक स्थिति में नायिका की आंखें बेचैनी और दुख को अनुभव करती रहती हैं.

10.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. बिहारी रत्नाकर : जगन्नाथदास रत्नाकर
2. बिहारी : भगीरथ मिश्र
3. बिहारी का नया मूल्यांकन : डॉ. बच्चन सिंह
4. बिहारी सतसई : सांस्कृतिक सामाजिक संदर्भ : रवीन्द्र कुमार सिंह

******

BRAOU

इकाई 11 : - हरिऔध की कविता - प्रियप्रवास की राधा

रूपरेखा

11.1 पाठ का उद्देश्य
11.2 पाठ एवं कवि परिचय
11.3 मूल पाठ
11.4 सारांश
11.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
11.6 शब्दार्थ
11.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
 11.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
 11.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
11.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
 11.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
 11.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
11.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में आधुनिक हिंदी काव्यधारा के प्रथम महाकवि अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" की प्रसिद्ध कृति "प्रियप्रवास" के "पवनदूत प्रसंग" पर प्रकाश डाला गया है. इसके अध्ययन से आप -

* प्रियप्रवास की राधा के मनोभावों पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* दूत काव्य के रूप में इस कविता की समीक्षा कर सकेंगे.
* इस कविता की विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे.
* राधा के विरह वेदना के संदेश पर विचार कर सकेंगे.

BRAOU

11.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

"प्रियप्रवास" मूलत: विप्रलंभ काव्य है. इस काव्य के षष्ठ सर्ग में राधा की हृदयगत विरह वेदना का वर्णन किया गया है. यह प्रसंग हिंदी साहित्य में "प्रवनदूत प्रसंग" के नाम से प्रसिद्ध है. इस प्रसंग में राधा की विरह व्यथा के साथ स्त्रीजनोचित वाक्पटुता, युक्ति निपुणता आदि के दर्शन होते हैं. राधा के हृदय की व्याकुलता सहृदयता और मर्यादा तीनों ही गुण इस प्रसंग में पूर्णतया व्यक्त हुए हैं. "हरिऔध" जी की काव्य प्रतिभा का यह सुंदर उदाहरण है.

एक दिन राधा श्रीकृष्ण की याद में रोती हुई, अनमनी बैठी थी. प्रात:काल का सुरभित पवन उसके शरीर का स्पर्श करने लगा. पवन के स्पर्श से राधा की विरहाग्नि और प्रज्वलित हो उठी. कामार्त यक्ष ने मेघ को अपना दूत बनाया था, उसी प्रकार राधा ने विरह-व्यथा से विमूढ़ होकर, पवन को अपना दूत बनाया और पवन से प्रार्थना की कि मथुरा जाकर श्रीकृष्ण से उसकी विरह-वेदना का निवेदन करे. प्रियतम श्रीकृष्ण के पास से कोई ऐसी वस्तु ला दे जिससे उसे शांति मिले और प्राणों की रक्षा हो. राधा स्वयं दुखी है, इसीलिए उसके मन में अन्य दुखी जनों के प्रति सहानुभूति है. अत: अपना संदेश ले जानेवाले पवन से वह यह प्रार्थना करती है कि मार्ग में कोई थका हुआ पथिक, पीड़ा-ग्रस्त रोगी, पसीना बहाती हुई किसान की नारी आदि पीड़ित जन दिखाई पड़े, तो उन सबकी बाधाओं को दूर करता हुआ ही वह आगे बढ़े. राधा के मन की यह सद्भावना कृष्ण प्राप्ति की आकांक्षा की अपेक्षा जनहित की कामना - "हरिऔध" जी के काव्य की नूतन परिकल्पना है.

पवन तो बोल नहीं सकता. वह केवल संकेतों से ही मन की बात को व्यक्त कर सकता है. इसलिए राधा पवन को नाना प्रकार के उपायों के बारे में समझाती है जिनसे राधा के हृदय की विरह-वेदना को श्रीकृष्ण समझ सकें.

अंत में राधा कहती है कि अगर पवन के सब प्रयत्न निष्फल हो जाएँ और श्रीकृष्ण को राधा का स्मरण तक न हो तो पवन कम से कम श्रीकृष्ण की चरण धूल ही ला दे तो वह उसी को अपना अहोभाग्य मानकर स्वीकार कर लेगी और संतुष्ट हो जाएगी. अगर यह भी संभव न हुआ तो प्यारे श्रीकृष्ण के चरण-कमलों का स्पर्श कर आए हुए पवन के स्पर्श से ही वह संतोष कर लेगी.

इस प्रसंग में ब्रजेश्वर श्रीकृष्ण के वियोग से व्याकुल राधा के हृदयगत भावों का प्रभावशाली चित्रण किया गया है.

BRAOU

कवि परिचय

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के प्रारंभ में, खड़ी बोली को काव्य-भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने वालों में अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है. खड़ी बोली में संस्कृत के वर्णवृत्तों में अतुकांत महाकाव्य लिखने वाले कवियों में "हरिऔध" जी अग्रणी रहे. उनके बाद ऐसा सफल प्रयास और किसी कवि ने नहीं किया है.

"हरिऔध" कवि का उपनाम है जो उन्हीं के नाम के शब्दों से बनाया गया है. "अयोध्या" का रूपांतर "औध" है सिंह का पर्याय है "हरि". इस प्रकार अयोध्या सिंह का "हरिऔध" बना है.

"हरिऔध" जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ जिले के निज़ामाबाद नामक स्थान में सन् 1865 में हुआ था. जब ये पच्चीस वर्ष के थे तभी साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश किया अर्थात् 19वीं शती के अंतिम दशक में 1890 के लगभग ये रचना करने लग गए. इनकी मृत्यु सन् 1941 में हुई जबकि ये छिहत्तर [76] वर्ष के थे.

आरंभ में "हरिऔध" जी नाटक और उपन्यास की रचना करने लगे. "प्रदयुम्न विजय" तथा "रुक्मिणी परिणय" नामक नाट्यकृतियाँ और "प्रेमकांता", "ठेठ हिंदी का ठाठ", "अधखिला फूल" नामक उपन्यास लिखे. लेकिन "हरिऔध" जी की प्रसिद्धि कवि के रूप में हुई है. कविता के क्षेत्र में इन्होंने पन्द्रह से ज्यादा छोटे-बड़े काव्यों की रचना की है. मुक्तक, खंडकाव्य, महाकाव्य के अतिरिक्त इन्होंने

काव्यशास्त्र संबंधी काव्य ग्रंथ "रसकलश" की भी रचना की है. "चुभते चौपदे" और "चोखे चौपदे" नामक काव्य संकलन आपके व्यंग्यपूर्ण मुक्तक हैं.

कवि के रूप में "हरिऔध" जी को विशिष्ट प्रसिद्धि "प्रियप्रवास" के कारण प्राप्त हुई है. इस महाकाव्य की रचना सन् 1914 में हुई थी. इसमें श्रीकृष्ण के वृन्दावन छोड़कर मथुरा प्रवास की कथा का 17 सर्गों में वर्णन किया गया है. यह संस्कृत के वर्णवृत्तों में, अतुकांत [अंत्यानुप्रास रहित] रूप से खड़ी बोली में लिखा गया प्रथम सफल महाकाव्य है. अतुकांत कविता हिन्दी भाषा की प्रकृति के अनुकूल नहीं है. फिर भी "हरिऔध" जी ने जो नूतन प्रयास किया है, वह सर्वथा सराहनीय है. इसके अतिरिक्त हिन्दी के छन्दों को छोड़कर, संस्कृत के वर्णवृत्तों में समस्त महाकाव्य को लिखने का यह विशिष्ट प्रयास था. इन दो कारणों से हिन्दी काव्य क्षेत्र में "प्रियप्रवास" का महत्वपूर्ण स्थान है.

स्वयं कवि के शब्दों में "प्रियप्रवास" ग्रंथ 15-10-1903 ई. को प्रारंभ और कार्य बाहुल्य से 24-2-1913 को समाप्त हुआ है. अर्थात् इस महाकाव्य को संपूर्ण करने में लगभग दस वर्ष का समय लगा था.

"हरिऔध" जी ने इस काव्य का नाम पहले "ब्रजांगन-विलाप" रखा था किंतु बाद में बदलकर "प्रियप्रवास" रखा.

"प्रियप्रवास" की रचना के कई वर्षों के बाद "हरिऔध" जी ने "वैदेही वनवास" नामक एक और प्रबंध काव्य की रचना सन् 1940 में की थी, लेकिन इसे "प्रियप्रवास" के समान प्रसिद्धि नहीं मिली है.

"प्रियप्रवास" की मुख्य कथा श्रीकृष्ण के मथुरा चले जाने के बाद, ब्रजवासियों के विरह-संतप्त जीवन तथा उनके मनोभावों के प्रभावशाली चित्रण से संबद्ध है. इस कथा को "हरिऔध" जी ने नूतन दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत किया है. इस महाकाव्य में राधा और श्रीकृष्ण के मानवीय स्वरूप का चित्रण किया गया है. श्रीकृष्ण "नर नागर" होने की अपेक्षा लोकरक्षक नेता हैं. "हरिऔध" जी ने उन्हें भगवान न मान कर लोकनायक नरशिरोमणि ही माना है. वे विशुद्ध योगी या भावुक न होकर कर्तव्यपरायण मानव ही रहे हैं. "प्रियप्रवास" में श्रीकृष्ण और राधा के सेवाभाव और परोपकार के लिए तत्परता को विशेष महत्व मिला है. नायक श्रीकृष्ण तथा नायिका राधा को समस्त विश्व के कल्याण की भावना से युक्त, विशुद्ध मानव-रूप में चित्रित किया गया है. इस प्रकार श्रीकृष्ण की कथा को आधुनिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य के अनुरूप ढालने का प्रयास "प्रियप्रवास" महाकाव्य की विशेषता है.

अयोध्या सिंह जी ने कुछ वर्ष तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अवैतनिक प्राध्यापक के रूप में काम किया था. उस समय इन्होंने "कबीर रचनावली" नामक ग्रंथ का संकलन किया था. उसकी भूमिका "हरिऔध" जी की आलोचना पद्धति का सुन्दर प्रमाण प्रस्तुत करने वाली है. इन्होंने "हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास" नामक इतिहास ग्रंथ भी लिखा था, जो काफी लोकप्रिय हुआ.

"हरिऔध" जी ने ब्रज भाषा में लिखना शुरू किया था लेकिन बदलती हुई परिस्थितियों को पहचानकर उन्होंने खड़ीबोली को अपनाया और खड़ीबोली का परिमार्जन और संस्कार किया. खड़ीबोली की विविध शैलियों में रचनाएं प्रस्तुत कर, इन्होंने खड़ीबोली को सुसंपन्न बनाया. "प्रियप्रवास", "वैदेही वनवास" आदि रचनाओं में इनकी शैली संस्कृत गर्भित है तो "चौपदों" में इनकी शैली मुहावरेदार और बोलचाल की भाषा है. "ठेठ हिन्दी का ठाठ" नामक उपन्यास में ठेठ हिन्दी [संस्कृत, अरबी-फारसी शब्दों को छोड़कर केवल देशी शब्द] भाषा का प्रयोग किया गया है.

"हरिऔध" जी के जीवनकाल में ही काव्य प्रतिभा के कारण इनका यथेष्ठ सम्मान हुआ है. सन् 1924 में इन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में चुना गया. हिन्दी साहित्य सेवियों में इनका विशिष्ट स्थान है. अंत में इतना कहना समुचित होगा कि "प्रियप्रवास" खड़ीबोली का प्रथम महाकाव्य है और "हरिऔध" जी खड़ीबोली के प्रथम महाकवि हैं.

11.3 मूलपाठ - "प्रियप्रवास" में पवनदूत प्रसंग

1) रो रो चिन्ता - सहित दिन को राधिका थी बिताती.
आंखों को थीं सजल रखती उन्मना थी दिखाती.
शोभावाले जलद - वधु की हो रही चातक थीं.
उत्कण्ठा थी परम प्रचल वेदना वर्द्धिर्धता थी

2) बैठी खिन्नायक दिवस वे गेह में थी अकेली.
आके आंसू दृग - युगल में थे धरा को भिगोते.
आई धीरे इस सदन में पुष्प सदगंध को ले.
प्रात: वाली सुपवन इसी काल वातायनों से.

3) आके पूरा सदन उसने सौरभीला बनाया.
चाहा सारा - कलुष तन का राधिका के मिटाना.
जो बूंदे थी सजल दृग के पक्षी में विद्यमान.
धीरे धीरे क्षिति पर उन्हें सौम्यता से गिराया.

4) मेरे प्यारे नव जलद से कुंज से नेत्रवाले.
जाके आये न मधुवन से औ न भेजा संदेस.
मैं रो रो के प्रिय - विरह से बावली हो रही हूं.
जा के मेरी सब दुख - कथा श्याम को तू सुना दे.

5) हो पाये जो न यह तुझ से तो किया चातुरी से.
जाके रोने विकल बनने आदि ही को दिखा दे.
चाहे ला दे प्रिय निकट से वस्तु कोई अनूठी.
हा हा ! मैं हूं मृतक बनती प्राण मेरा बचा दे.

6) जाते जाते अगर पथ में क्लान्त कोई दिखावे.
तो जा के सन्निकट उसकी क्लान्तियों को मिटाना.
धीरे धीरे परस करके गात उत्पात खोना.
सदगंधों से श्रमित जन को हर्षितों सा बनाना.

7) तेरी जैसी मृदु - पवन से सर्वथा शान्ति - कामी.
कोई रोगी पथिक पथ में जो पड़ा हो कहीं तो.
मेरी सारी दुखमय दशा भूल उत्कण्ठ होके.
खोना सारा कलुष उसका शान्ति सर्वांग होना.

BRAOU

8) कोई क्लान्ता कृषक ललना खेत में जो दिखावे.
धीरे धीरे परस उसकी क्लान्तियों को मिटाना.
जाता कोई जलद यदि हो व्योम में तो उसे ला.
छाया द्वारा सुखित करना, तप्त भूतांगना को.

9) तेरे में है न यह गुण जो तुव्यथायें सुनाए.
व्यापारों को प्रखर मति और युक्तियों से चलाना.
बैठे जो हों निज सदन में मेघ सी कान्तिवाले.

10) जो चित्रों में विरह-विधुरा का मिले चित्र कोई.
तो जा जाके निकट उसको भाव से यों हिलाना.
प्यारे हो के चकित जिससे चित्र की ओर देखें.
आशा है यों सुरति उनको हो सकेगी हमारी.

11) कोई प्यारा - कुसुम कुम्हला गेह में जो पड़ा हो.
ता प्यारे के चरण पर ला डाल देना उसी को.
यों देना ऐ पवन बतला फूल सी एक बाला.
म्लाना हो हो कमल पग को चूमना चाहती है.

12) जो ला देगी चरणरज तो तू बड़ा पुण्य लेगी.
पूता हूंगी भगिनि उसको अंग में मैं लगा के.
पोतूंगी जो हृदय तल में वेदना दूर होगी.
डालूंगी मैं शिर पर उसे आंख में ले मलूंगी.

13) पूरी होवें न यदि तुझसे अन्य बातें हमारी.
तो तू मेरी विनय इतनी मान ले और चली जा.
छू के प्यारे कमलपग को प्यार के साथ आ जा.
जी जाऊंगी हृदयतल में मैं तुझी को लगा के.

14) भ्रांता हो के परम दुख और भूरि अद्विग्नता से.
ले के प्रात: मृदु पवन को या सखी आदि को.
यों ही राधा प्रगट करती नित्य ही वेदनाएं.
चिन्तायें थी चलित करती वद्धिर्धता थी व्यथाए

11.4 सारांश

1. सारा दिन राधा चिन्ता सहित रोती हुई बिताती थी. सदा उनकी आंखों में आंसू भरे रहते थे और वे बेचैन रहती थीं. शोभा से युक्त जलद-युक्त जलद-वपु [मेघ समान शरीर] वाले श्रीकृष्ण के दर्शन के लिए ये चातक पक्षी के समान व्याकुल हो रही थी और दिन ब दिन उनकी वेदना बढ़ती जा रही थी.

2. एक दिन वे अपने घर में खिन्न मन से अकेली बैठी थीं. दोनों आंखों से आंसू निकल कर धरती को भिगो रहे थे. ऑसुओं की धारा बह रही थी. इतने में प्रात:कालीन हवा खिड़कियों में से फूलों की सुगंध से युक्त होकर धीरे-धीरे घर में आई.

3. इस प्रकार आकर हवा ने सारे घर को सौरभ से भर दिया और राधा के शरीर के कलुष [ताप] को दूर करना चाहा. आंखों की पलकों में जो आंसू की बूंदें थी, उन्हें धीरे-धीरे सौम्यता से नीचे गिराया.

4. शीतलता और सुगंध से अपने मन की व्यथा को बढ़ानेवाली हवा से राधा यों कहती है - मेरे प्यारे श्रीकृष्ण नव-जलद [मेघ] के समान नेत्र वाले हैं. वे मधुवन को चले गए और जाकर वहां से संदेश तक नहीं भेजा. मैं यहां प्रिय के विरह में रो रो कर बावली [पगली] बन रही हूं. तुम जाकर श्याम [श्रीकृष्ण] से मेरे विरह दुख की कथा को सुना देना.

5. अपने कार्य-कुशलता से यह काम नहीं कर पाओ तो उनके सामने मेरी दु:खी दशा को रख देना. प्रिय के पास जाकर, उनकी कोई भी वस्तु ला देकर मेरे प्राणों को बचा देना. उनके बिना इस विरह के कारण मैं मृतक बनती जा रही हूं.

6. मेरा संदेश लेकर प्रिय के पास मथुरा जाते समय, अगर पथ [मार्ग] में कोई क्लांत [थका हुआ] दिखाई दे तो उसके पास जाकर उसकी क्लांतियों को दूर कर देना. धीरे-धीरे उसके शरीर का स्पर्श करके, उसके उत्ताप को दूर कर देना. अपनी सद्गंधों से श्रम से थके लोगों को हर्षित [खुश] कर देना.

7. कहीं कोई सूखी हुई लता, मलिन बनकर [उदास बन कर] ज़मीन पर पड़ी हो, तो उसे लाकर, श्याम [श्रीकृष्ण] के चरणों के पास डाल देना. ऐसा करके सीधे श्रीकृष्ण को समझाना कि तुम्हारे प्रेम से वंचित होकर राधा अति मलिन [अत्यंत उदास] बनकर, नित्य सूखती जा रही है [दु:ख के कारण दुबली बनती जा रही है.].

8. कहीं किसी खेत में काम करते-करते थकी हुई किसान की नारी दिखाई पड़े तो धीरे से उसके शरीर का स्पर्श कर, उसकी क्लांति को दूर कर देना. आकाश में जाने वाली किसी जलद [मेघ] को लाकर, उसकी छाया से, तप्त [गरम] बनी हुई भूतांगना को सुखी और शीतल बना देना.

9. तुम में व्यथाओं को कह सुनाने के सामर्थ्य अथवा गुण नहीं है. कार्य-व्यापारों को प्रखर मति [तेज बुद्धि] से और युक्ति चलाना तुम्हें नहीं आता. मेघ के समान कांतिवाले [घनश्याम=श्रीकृष्ण] अपने सदन में बैठे होते तो उस घर के सभी चित्रों को बराबर ध्यान से देख लेना.

10. उन चित्रों में कहीं विरह-विधुरा [विरह के कारण व्याकुल बनी] नारी का चित्र दिखाई पड़े तो उस चित्र के निकट जाकर उसे भावयुक्त रूप से हिला देना. इससे प्यारे श्रीकृष्ण चकित होकर उस चित्र की ओर देखेंगे कम से कम इस चित्र को देखकर ही सही, उन्हें हमारी याद हो जाये. वे समझ लें कि हम भी इसी तरह विरह के कारण व्याकुल हैं.

11. अगर घर में कोई मुरझाया हुआ फूल पड़ा हो, तो उसी फूल को लाकर प्यारे श्रीकृष्ण के चरणों के पास डाल देना. ऐसा करके हे पवन ! उन्हें समझा देना कि इस मुरझाए फूल के समान ही एक बाला [राधा] म्लान [उदास] बन कर, इन चरण कमलों को [श्रीकृष्ण के चरणों को] चूमना चाहती है.

12. अगर तुम किसी प्रकार श्रीकृष्ण के चरण रज [पैरों की धूल] ला दोगी, तुम्हारा बहुत पुण्य होगा. हे बहिन ! मैं उस चरण रज को शरीर से लगाकर पवित्र बन जाऊंगी. उस धूल को हृदय पर पोत लूं तो

BRAOU

मेरी वेदना दूर हो जाएगी. मैं उस चरण रज को सिर पर डाल लूंगी और आंखों में मलूंगी. इस छन्द में राधा के हृदय में श्रीकृष्ण के प्रति निहित अतिशय प्रेम को अभिव्यक्त किया गया है.

13. अगर तुम मेरी बातों को पूरी न कर सकोगी तो कम से कम हमारी इतनी सी प्रार्थना को मान लो और मथुरा में श्रीकृष्ण के पास चली जाओ. वहां जाकर प्यारे श्रीकृष्ण के चरण कमलों को प्रेम से छूकर आ जाओ. श्रीकृष्ण के चरण कमलों को छूकर आनेवाली तुम्हीं को हृदय से लगाकर, मैं अपने प्राण बचा लूंगी. प्रियतम का स्पर्श कर आने वाली हवा भी श्रीकृष्ण के समान मुझे प्रिय लगती है.

14. इस प्रकार प्रेम और विरह के कारण अत्यंत दुखी और उद्विग्न बनी हुई राधा भ्रांत [पागल सी] हो गई. वह रोज प्रात:कालीन हवा से या सखियों से इसी प्रकार की बातें कहती रहती है. इस प्रकार नित्य ही अपनी वेदनाओं को प्रकट करती रहती है. चिन्ताएं उसे चंचल बनाती है और व्यथाओं को और बढ़ा देती हैं.

11.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

विशेष ज्ञातव्य बातें

कहा गया था कि "प्रियप्रवास" संस्कृत के वर्ण वृत्तों में लिखा गया है.

छन्द शास्त्र के नियमों के अनुसार जिस छन्द के चरणों में वर्गों की संख्या की समानता के नियम का पालन किया गया हो, उसे "मात्रिक छन्द" कहते हैं. "वर्णवृत्त" के चारों चरणों में लघु और "गुरु" अक्षर एक ही क्रम से होते हैं. मात्रिक छन्द के प्रत्येक चरण में वर्ण समान रूप से नहीं होते, लेकिन मात्राओं की संख्या समान रहती है.

ह्रस्व या उनके मेल से बने हुए व्यंजनों की मात्रा को "गुरु" माना जाता है. लघु के लिए "ल" या "।" और गुरु के लिए "ग" या "॥" संकेत चिह्न हैं. लघु और गुरु के आधार पर ही मुख्य रूप से आठ गण बनाए गए हैं. लघु के लिए एक मात्रा और गुरु के लिए दो मात्राएं. इस प्रकार मात्राओं की गिनती की जाती है.

अतुकांत या भिन्न तुकांत काव्य

छन्द के प्रत्येक चरण के अंत में जब एक ही अक्षर [व्यंजन या स्वर] आता है, तब उस समता को तुक कहते हैं. इसे "अंत्यानुप्रास" भी कहते हैं. हिंदी में अधिकतर तुकांत कविता ही लिखी जाती है. यह हिंदी कविता की प्रकृति के अनुरूप है. तुक के कारण विशेष प्रकार का कर्ण सुखद आनंद प्राप्त होता है. इसीलिए कुछ लोग मानते हैं कि कविता में तुक का होना अत्यंत आवश्यक है. यह सच है कि तुक से लय और नाद की सुंदरता बढ़ती है और कविता सुनने में अधिक रोचक होती है किंतु तुक को कविता के लिए अनिवार्य तत्व नहीं माना जा सकता. संस्कृत के अधिकांश काव्य तुक से रहित हैं. भिन्न तुकांत या अतुकांत काव्य भी लोकप्रिय हुए हैं. संस्कृत के वर्णवृत्तों में तुक का निर्वाह करना कठिन है.

"हरिऔध" जी ने "प्रियप्रवास" को संस्कृत के वर्णवृत्तों में लिखा है. इन्होंने तुक का निर्वाह न करके, भिन्न तुकांत रूप में समग्र काव्य की रचना की है.

फिर भी यह ध्यान देने की बात है कि तुकांतता हिंदी भाषा और कविता की प्रकृति के अनुरूप है.

BRIOU

दूत काव्य

श्रृंगार प्रधान साहित्य में दूती और दौत्य कार्य को विशेष महत्व दिया गया है. प्रिय और प्रिया के समागम के लिए दूती का अस्तित्व अत्यंत आवश्यक है. मान, मन शांति, अभिसार, मिलन आदि कार्य दूती के बिना असंभव हैं. संयोग के समय और वियोग के समय भी दूत नायक और नायिका के संदेशों को एक दूसरे के पास पहुंचाता है. भारतीय भाषाओं के सभी काव्यों में दूत संदेश का वर्णन मिलता है. संस्कृत के दूत काव्यों में "मेघदूत" सर्वश्रेष्ठ माना जाता है. यह कालिदास की रचना है. इसमें विरही यक्ष मेघ को अपना दूत बनाकर अपनी नायिका के पास भेजता है. इसी प्रकार नल दमयंती के बीच प्रेम पैदा करने के कार्य को हंस ने संपन्न किया था. यह कथा संस्कृत के "नैषधम" में है. "मेघदूत" के हिंदी में कई अनुवाद हुए हैं.

प्रस्तुत प्रसंग में राधा पवन को अपना दूत बनाकर श्रीकृष्ण के पास भेजती है.

अलंकार

जलद-वपु, कमल पग आदि में रूपक अलंकार है. जब उपमेय को उपमान के रूप में दिखाया जाता है तब "रूपक" अलंकार होता है. रूपक अलंकार में दोनों प्रस्तुत और अप्रस्तुत में एकरूपता या अभेद होता है. जलद रूपी वपु और कमल रूपी पग कहने में जलद और वपु, कमल और पग में अभेद को बताया गया है. इसलिए यहां रूपक अलंकार हुआ.

11.6 शब्दार्थ

जलद वपु	-	मेघ रूपी शरीर
गेह	-	घर
दृग	-	युगल-आंखों की जोड़ी
धरा	-	धरती, ज़मीन
सदन	-	घर
वातायन	-	खिड़की
सौरभीला	-	सौरभ से युक्त
कलुष	-	कल्मष
पक्षम	-	पलक
क्षिति	-	पृथ्वी, ज़मीन
सौम्यता	-	उदारता, कोमलता
कंज	-	कमल
बावली	-	पगली
क्लांत	-	थका हुआ
सन्निकट	-	अति समीप
परस	-	स्पर्श
गात	-	शरीर
श्रांतिहारी	-	थकावट को दूर करने वाली
निर्धूली	-	धूल से रहित

BRAOU

ललना	-	नारी
व्योम	-	आकाश
भूतांगना	-	धरती
प्रखर	-	तेज़
विरह-विधुरा	-	विरह से दुखी
सुरति	-	स्मरण, याद
लतिका	-	लता
पूता	-	पवित्र
भगिनि	-	बहिन
कमलपग	-	चरण कमल
भूरी	-	बहुत अधिक

11.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

11.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. दूत काव्य के रूप में "प्रियप्रवास" काव्य के "पवनदूत प्रसंग" कविता की समीक्षा कीजिए.
2. "प्रियप्रवास" में "पवनदूत प्रसंग" कविता की विशेषताओं को रेखांकित कीजिए.

11.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित पाठ के किसी एक मात्रिक छन्द की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. "प्रियप्रवास" की राधा के मनोभावों पर प्रकाश डालिए.
3. "पवनदूत प्रसंग" कविता का सारांश लिखिए.

BRAOU

11.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

11.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : दूत काव्य के रूप में प्रियप्रवास काव्य के दूत प्रसंग कविता की समीक्षा कीजिए.

उत्तर : श्रृंगार प्रधान साहित्य में दूत या दूती का विशेष प्राधान्य है. वे नायक और नायिका को मिलाने और एक दूसरे के पास परस्पर संदेश ले जाने का काम करते हैं. प्रिया के समागम के लिए दूती का रहना जरूरी माना गया है. संयोग का समय हो या वियोग का, नायक नायिका के विचारों के परस्पर विनिमय के लिए दूती आवश्यक है. भारतीय भाषाओं के सभी काव्यों में दूत और उसके कार्य का वर्णन हुआ है.

संस्कृत के दूत काव्यों में मेघदूत सबसे प्रसिद्ध है. उसमें विरही यक्ष मेघ को अपना दूत बनाकर, अपनी नायिका के पास भेजता है. काम के अतिरेक से वह यह नहीं सोचता कि मेघ जो प्राणरहित है, जो बोल नहीं सकता वह उसके संदेश को प्रियतमा के पास कैसे ले जाएगा ? इसी प्रकार "नैषधम" में भी नल और दमयंती को मिलाने का काम एक हंस करता है.

"प्रियप्रवास" में राधा अपनी विरह वेदना के संदेश को भेजने के लिए पवन को चुनती है. संयोग में जो चीजें सुख देती हैं, वे ही वियोग की दशा में दुख देने वाली हो जाती हैं. प्रात:काल के समय शीतल सुरभित मंद पवन के कारण राधा की विरह वेदना और प्रज्वलित हो जाती है. उस समय वे उसी पवन को अपनी दूती बनाकर श्रीकृष्ण के पास भेजने का विचार करती है. वह कहती है - मैं श्रीकृष्ण के विरह में रो-रोकर समय बिता रही हूं. तुम मेरी एक सहायता करो. श्रीकृष्ण के पास जाकर मेरी दुख कथा उनको सुनाओ. अगर यह काम तुम नहीं कर सकोगे तो उनकी कोई अनूठी वस्तु लाकर मुझे दे दो जिससे मेरे प्राणों की रक्षा हो जाए. मैं यह जानती हूं कि तुम में बोलने की शक्ति नहीं है, अपने भावों को अभिव्यक्त करने का सामर्थ्य नहीं है. व्यथाओं को सुनाने का गुण नहीं है और कार्य व्यापारों को प्रखर गति तथा युक्ति से चलाना नहीं आता. फिर भी तुम प्यारे श्रीकृष्ण के भवन में पहुँचने के बाद कुछ ऐसे क[illegible] करो कि श्रीकृष्ण का ध्यान मेरी विरह-व्यथा की ओर आकर्षित हो जाए. उन्हें मेरी, सुध दिलाने के कुछ काम करो. उसके बाद राधा पवन से कहती है - तुम साभिप्राय विरह-विधुरा के किसी चित्र को हिला देना या मुरझाए फूल को लाकर श्रीकृष्ण के चरण-कमलों के पास डाल देना जिससे प्यारे श्रीकृष्ण मेरी व्यथाओं से परिचित हो जाएं. विरह-विधुरा नायिका का चित्र, मुरझाया फूल, सूखी हुई लता - ये सभी ऐसे साधन हैं जो श्रीकृष्ण को राधा की विरह-व्याकुल दशा की याद दिला सकते हैं.

अंत में राधा कहती है कि इतना भी तुम से न हो सके तो श्रीकृष्ण की चरण धूल ही ला देना जिसे शरीर पर मलकर, सिर और आंखों पर डाल कर मैं पवित्र बन जाऊंगी. यह भी न हो, तो कम से कम श्रीकृष्ण के चरण कमलों को छूकर आ जाना, श्रीकृष्ण के स्पर्श से पुनीत बने तुम्हारे स्पर्श से ही सही, मैं प्रसन्न और संतुष्ट हो जाऊंगी.

इस प्रकार परम दुख और भूरि उद्विग्नता से राधा पवन से या सखियों से प्रतिदिन अपना दुख कह सुनाती है. बेचारी राधा की वेदनाएँ नित्य बढ़ती जा रही थीं.

इस प्रसंग में विरह दुख से तम बनी हुई राधा, दूसरे दुखी जनों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करती है. जो स्वयं घायल हो जाता है या स्वयं दु:खी हो जाता है, वही दूसरे की वेदना को या दुख को समझ सकता है. राधा की भी यही दशा थी. अन्य दूत काव्यों में इस प्रकार की मानसिक स्थिति का इतना सुंदर वर्णन नहीं है.

"हरिऔध" जी के "पवन प्रसंग" की यह उल्लेखनीय विशेषता है.

11.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न : नीचे दिये गये मात्रिक छन्द की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

"कोई प्यारा-कुसुम कुम्हाला गेह में जो पड़ा हो.
तो प्यारे के चरण पर ला डाल देना उसी को.
यों देना ऐ पवन बतला फूल सी एक बाला.

म्लान हो हो कमल पग को चूमना चाहती है."

उत्तर : यह छन्द श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" की सुप्रसिद्ध रचना "प्रियप्रवास" के षष्ठ सर्ग से लिया गया है. इस काव्य में श्रीकृष्ण के वृंदावन से मथुरा चले जाने के बाद राधा, गोपी और अन्य ब्रजवासियों की विरह वेदना का प्रभावशाली वर्णन किया गया है. श्रीकृष्ण और राधा के चरित्र चित्रण में आधुनिक युग की विचारधारा का प्रभाव परिलक्षित होता है. वे समस्त विश्व के कल्याण की भावना से युक्त हो सेवा और परोपकार के भावों से युक्त दिखाये गये हैं. प्रस्तुत प्रसंग में प्राचीन काव्यों की परंपरा के अनुरूप राधा श्रीकृष्ण के पास पवन को दूत बनाकर भेजती है. पवन से वह कहती है कि तुम में अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की शक्ति नहीं है. फिर भी जिस किसी प्रकार से हो श्रीकृष्ण को मेरी विरह वेदना से अवगत कराओ. राधा पवन से इस प्रकार कहती है - श्रीकृष्ण के अंत:पुर में कोई मुरझाया हुआ फूल हो तो उसी फूल को लाकर श्रीकृष्ण के चरणों के पास डाल दो. ऐसा करके हे पवन श्रीकृष्ण को इस बात से अवगत करा दो कि इस मुरझाये फूल के समान ही एक बाला [युवती] म्लान [उदास] बनकर, इसी फूल के समान तुम्हारे चरण-कमलों को चूमना चाहती है. पवन में बोलने का सामर्थ्य नहीं है. इसलिए राधा अपनी विरह व्यथित दशा को अभिव्यक्त करने के अनेक उपाय पवन को बताती है. मुरझाया हुआ फूल राधा की मानसिक और शारीरिक दशा का सूचक है. हो सकता है कि उस फूल पर नज़र पड़ते ही श्रीकृष्ण राधा की दशा का स्मरण कर लें.

विशेष : फूल सी बाला कहने में उपमा अलंकार है.

11.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. महाकवि हरिऔध - धर्मेंद्र ब्रह्मचारी
2. हरिऔध का प्रियप्रवास - डॉ. राजमल बोरा
3. प्रियप्रवास - डॉ. वेदप्रकाश शास्त्री

******

BRAOU

इकाई 12 : मैथिलीशरण गुप्त की कविता - वन में सीता

रूपरेखा

12.1 पाठ का उद्देश्य
12.2 पाठ एवं कवि परिचय
12.3 मूल पाठ
12.4 सारांश
12.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
12.6 शब्दार्थ
12.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
12.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
12.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
12.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
12.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
12.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
12.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.1 पाठ का उद्देश्य

12.1 उद्देश्य :

प्रस्तुत पाठ में राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त की रचना "साकेत" के "वन में सीता" प्रसंग पर प्रकाश डाला गया है. इस पाठ में आप -

* वन में सीता के मनोभावों को समझ सकेंगे.
* कविता की विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे.
* कवि के नूतन दृष्टिकोण और भावनाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* कविता के संदेश पर विचार कर सकेंगे.

12.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

प्रस्तुत पाठ्यांश "साकेत" के अष्टम सर्ग से लिया गया है. साकेत आधुनिक युग का श्रेष्ठ महाकाव्य माना जाता है. इस काव्य में दशरथ पुत्र राम की कथा का वर्णन किया गया है. कवि ने उर्मिला और

BRAOU

लक्ष्मण को काव्य का नायक और नायिका बनाना चाहा किंतु गुप्त जी राम के अनन्य भक्त होने के कारण राम और सीता ही नायक और नायिका सिद्ध हुए.

"साकेत" का अर्थ है अयोध्या नगरी. इसलिए सारी कथा को साकेत में दर्शाने का प्रयास किया गया है. चित्रकूट जाते समय भी भरत के साथ साकेत के सभी नर-नारी जाते हैं. कवि कहते हैं कि जहां साकेत के सभी लोग हों, वहीं साकेतपुरी है.

गुप्त जी ने सीता के उद्धार को भारतीय संस्कृति के उद्धार के रूप में चित्रित किया है. वस्तुत: भारतीय संस्कृति की प्रतिष्ठा ही "साकेत" रचना का प्रधान लक्ष्य है.

रामचन्द्र के साथ सीता भी वनवास करने के लिए गई. लेकिन उन्हें वनवास कष्टप्रद नहीं लगा. वन में रहते हुए वे आनंद का अनुभव करती है. आधुनिक नारी के समान वे समझती हैं कि कुछ समय के लिए नगर के वातावरण से दूर - जंगल के प्राकृतिक वातावरण में रहने का अवसर उन्हें मिल गया है.

सीता जी को दु:ख है कि अयोध्या के महल अब कुटिया के समान है और वन में रहते हुए भी मेरे लिए क्या कमी है ? यहां का प्राकृतिक सौंदर्य आकर्षक है. सारी प्रकृति मानो हमारा हार्दिक स्वागत कर रही है. यहां आने के बाद ही मुझे श्रम का महत्व मालूम हुआ है. मैं आत्मनिर्भरता सीख गई हूं.

<u>कवि परिचय</u>

राष्ट्रकवि की उपाधि से विभूषित श्री मैथिलीशरण गुप्त वर्तमान काल के सबसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय कवि थे. लगभग आधी शताब्दी [50 वर्ष] पर्यंत इन्होंने काव्य कुसुमों से माँ भारती की अर्चना की है और भारतीय संस्कृति के वैभव का उज्वल चित्र पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है.

गुप्त जी का जन्म उत्तर प्रदेश के झांसी जिले के चिरगांव नामक स्थान में सन् 1886 में हुआ था.

गुप्त जी की प्रारंभिक रचनाएं कलकत्ते की एक पत्रिका में प्रकाशित हुईं. बाद में इनका परिचय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से हुआ. द्विवेदी जी ने गुप्त जी की कविताओं को संशोधित करके "सरस्वती" में प्रकाशित करना शुरु किया. उसके बाद गुप्त जी द्विवेदी जी के पट्ट शिष्य बन गए. द्विवेदी जी के स्नेहपूर्ण प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन के कारण गुप्त जी की काव्य प्रतिभा में निखार आया. गुप्त जी ने लगभग 40 मौलिक काव्यों की रचना की और अन्य भाषाओं के छ: काव्यों के हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किए. गुप्त जी के काव्य इतिवृत्त प्रधान हैं. इनके काव्यों के मुख्य विषय देश प्रेम भारतीय संस्कृति और इतिहास का महत्व तथा गुणगान, राष्ट्रीयता, हरिजनोद्धार, गांधीवादी विचारधारा का प्रचार, नारी जागरण आदि हैं.

गुप्त जी का पहला काव्य "रंग में भंग" सन् 1909 में प्रकाशित हुआ था. उसके बाद सन् 1912 में "भारत-भारती" का प्रकाशन हुआ. इस काव्य ने अंग्रेजी की दासता में अपने अस्तित्व को भूली बैठी भारतीय राष्ट्रीयता को जागृत किया और जनमानस में राष्ट्रीय भावनाओं को उद्बुद्ध करने का स्तुत्य प्रयत्न किया. इस काव्य के अतीत, वर्तमान और भविष्य नामक तीन खंड हैं. अतीत के गौरव गान के बाद वर्तमान शोचनीय परिस्थितियों का वर्णन करके, गुप्त जी ने स्वर्णिम भविष्य के निर्माण के लिए भारत-वासियों को प्रेरित किया. इस काव्य ने उस समय के युवकों में नव-जागरण के भाव फैलाने का

सफल कार्य किया है. "भारत-भारती" के प्रकाशन के बाद ही गुप्त जी "राष्ट्रकवि" के रूप में प्रसिद्ध हुए हैं.

गुप्त जी के अन्य प्रसिद्ध काव्यों में गुरुकुल, किसान, पंचवटी, जयद्रथवध, द्वापर, साकेत, यशोधरा, गुणाल गीत, जयभारत आदि प्रसिद्ध और लोकप्रिय हैं.

गुप्त जी को विरासत के रूप में रामभक्ति प्राप्त हुई है. वे स्वयं भी रामभक्त कवि हैं. भारतीय जीवन विधान के आदर्श के रूप में गुप्त जी ने मर्यादा पुरुषोत्तम रामचंद्र जी के चरित्र का वर्णन किया है. विद्वानों का मत है कि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित "रामचरित मानस" के बाद हिंदी काव्य जगत में मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित "साकेत" ही रामकाव्य का दूसरा सफल प्रबंध काव्य है.

काव्य की उपेक्षिता नारियों के चरित्र-चित्रण करने की दृष्टि से गुप्त जी ने प्राचीन कथा काव्यों की पुन: रचना की है. "साकेत" में लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला का, "यशोधरा" में गौतम की पत्नी यशोधरा का, "द्वापर" में राधा और गोपियों का चरित्र-चित्रण किया है.

गुप्त जी भारतीय संस्कृति के समर्थक हैं. इन्होंने अपने काव्यों में भारतीय संस्कृति के उत्कृष्ट आदर्शों का प्रभावशाली चित्रण किया है. ये जीवन के लक्ष्य को सन्यास नहीं पुरुषार्थ मानते हैं. उनकी दृष्टि में जीवन के अंतिम क्षण तक कर्तव्य-पालन ही सबसे बड़ा पुरुषार्थ है. इनका दृष्टिकोण धार्मिक संकीर्णता से मुक्त और उदार है.

आधुनिक काल में प्रचलित सभी शैलियों और विचार धाराओं को ग्रहण करने के कारण और परंपरागत विचारों को आधुनिकता के अनुरूप ढाल सकने के कारण, गुप्त जी को आधुनिक हिंदी साहित्य का प्रतिनिधि कवि माना जाता है.

गुप्त जी राज्य सभा के सदस्य और हिंदी के प्रथम राजकवि मनोनीत हुए थे.

सन् 1964 में गुप्त जी का स्वर्गवास हुआ.

BRAOU

12.3 मूलपाठ

वन में सीता

निज सौध सदन में उटज पिता ने छाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया.
सम्राट स्वयं प्राणेश, सचिव देवर हैं,
देते आकर आशीष हमें मुनिवर हैं.
धन तुच्छ यहां यद्यपि असंख्य आकार हैं,
पानी पीते मृग-सिंह एक तट पर हैं.
सीता रानी को यहां लाभ ही लाया,
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया. ॥ 1 ॥

क्या सुंदर लता-वितान तना है मेरा,
पुजांकृति गुंजित कुंज घना है मेरा,
जल निर्मल, पवन पराग सना है मेरा,

गढ़ चित्रकूट दृढ़ दिव्य बना है मेरा.
प्रहरी निर्झर, परिखा प्रवाह की काया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया. ॥ 2 ॥

औरों के हाथों यहां नहीं पलती हूं,
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूं,
श्रमवारि बिंदु फल स्वास्थ्य शुक्ति फलती हूं,
अपने अंचल से व्यंजन आप झलती हूं.

तनु, लता सफलता-स्वाद आज ही आया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया. ॥ 3 ॥

जिनसे ये प्रणयी प्राण त्राण पाते हैं,
जी भर कर उनको देख जुड़ा जाते हैं.
जब देव कि देवर विचर-विचर आते हैं,
तब नित्य नये दो-एक द्रव्य लाते हैं.
उनका वर्णन ही बिना विनोद सवाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया. ॥ 4 ॥

किसलय - कर स्वागत - हेतु हिला करते हैं,
मृदु मनोभाव - सम सुमन खिला करते हैं.
डाली में नव - फल नित्य मिला करते हैं,
तृण तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं.
निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया. ॥ 5 ॥

कहता है कौन कि भाग्य ठगा है मेरा ?
वह सुना हुआ भय दूर भगा है मेरा.
कुछ करने में अब हाथ लगा है मेरा,
वन में ही तो गार्हस्थ जगा है मेरा.
वर वधू जानकी बनी आज यह जाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया. ॥ 6 ॥

फल-फूलों से है लदी डालियां मेरी,
वे हरी पत्तलें, भरी थालियां मेरी.
मुनि बालायें हैं यहां आलियां मेरी,
तटिनी की लहरें और तालियां मेरी.
क्रीड़ा-सामग्री बनी स्वयं निज छाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया. ॥ 7 ॥

गुरु जन-परिजन सब धन्य ध्येय हैं मेरे,
औषधियों के गुण-विगुण ज्ञेय हैं मेरे.
वन - देव - देवियां अतिथेय हैं मेरे,

BRAOU

प्रिय - संग यहां सब प्रेय श्रेय, हैं मेरे.
मेरी पीछे ध्रुव - धर्म ही छाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया. ॥ 8 ॥

12.4 सारांश

वनवास के समय राम, लक्ष्मण और सीता चित्रकूट नामक स्थान पर रहते थे. वहां लक्ष्मण ने पर्णकुटीर बनाया. पर्णकुटीर के आंगन में पौधों और लताओं को पानी देते हुए सीता जी गीत गाती हैं. इस गीत में उनके मनोभावों को बड़ी सरल शैली में गुप्त जी ने अभिव्यक्त किया है.

1. सीता जी कहती हैं कि पिता दशरथ का राजमहल अब एक कुटिया के समान हो गया है. इस समय राजभवन की अपेक्षा इस कुटिया में ही मेरा मन लगता था. सीता जी को राजमहल की अपेक्षा कुटिया ही अच्छी लगती थी. आज अयोध्या नगरी की अपेक्षा जंगल में चित्रकूट में निवास करना ही उन्हें अच्छा लग रहा है, क्योंकि यहां स्वयं प्राणेश्वर राम ही सम्राट हैं तो देवर लक्ष्मण मंत्री हैं. जंगल में रहने वाले मुनिवर रोज आकर हमें आशीर्वाद दे जाते हैं. यहां जंगल में फल-फूल, शहद आदि कई चीजें आसानी से मिलती हैं. यहां धन कमाने के कई उपाय हैं. संपत्ति के कई आकर [स्थान] हैं किन्तु यहां धन का कोई महत्व नहीं है. यहां इतनी शांति परिव्याप्त है कि परस्पर शत्रु हिरन और सिंह दोनों प्रेम से एक ही घाट पर पानी पीते हैं. यह कहना समुचित है कि सीता रानी को यहां आकर लाभ ही प्राप्त हुआ है. इसीलिए राजभवन की अपेक्षा मुझे यहां अधिक सुख मिल रहा है. सीता को दु:ख है कि इस समय उनके न रहने के कारण दशरथ का राजमहल एक कुटिया के समान हो गया है.

2. मेरा बनाया लता-वितान कितनी सुंदरता के साथ फैला हुआ है. मेरा लताकुंज गोल आकार में फूलों से भरा हुआ है, इसलिए वह गुंजित है. यहां फूल ज्यादा रहते हैं, वहां भ्रमर घेरे रहते हैं. इसलिए गुंजार की ध्वनि अधिक है. यहां मुझे निर्मल जल प्राप्त हो रहा है. यहां की हवा पराग से भरी हुई है, सुगंधपूर्ण है. चित्रकूट मेरे लिए दुर्ग के समान है. निर्झर प्रहरियों के समान हैं जो सदा जागरूक रहते हैं. प्रवाह की धारा परिखा के समान है. इसीलिए राजभवन की अपेक्षा मुझे यहां अधिक सुख मिल रहा है.

3. यहां जंगल में आकर मैं औरों के हाथ नहीं पलती हूं. मैं अपने पैरों पर आप चलती हूं. यहां मैं आत्मनिर्भर हूं. श्रमवारि बिंदु के फलस्वरूप स्वास्थ्य रूपी सीपी फलती है. श्रम [मेहनत] के कारण जो पसीने की बूंदें निकलती हैं, उसके परिणाम स्वरूप मेरा स्वास्थ्य ठीक रहता है. अर्थात् मेहनत करने से कोई भी व्यक्ति स्वस्थ रह सकता है. श्रम से उत्पन्न थकावट को दूर करने के लिए मैं अपने अंचल से पंखा कर लेती हूं. राजमहल के समान पंखा झलने के लिए यहां दास-दासी नहीं हैं. राजमहल में रहते समय मेरे सभी काम दास-दासी ही करते थे. मुझे यहां हाथ-पैर हिलाने की ज़रूरत नहीं पड़ती थी. भगवान ने हाथ पैर दिए हैं तो उनसे कुछ काम लेना चाहिए. जंगल में ही मुझे शरीर धारण करने की सार्थकता मिली है. इसलिए मुझे राजभवन की अपेक्षा वन की यह कुटी ही अच्छी लगती है.

4. जिनसे इन प्रेमी-प्राणों की रक्षा होती है, मैं उन श्रीरामचंद्र को जी भर कर देखती रह सकती हूं. राजमहल में राजकाज में लगे रहने के कारण श्रीराम के साथ मिल कर रहने का अवसर कम मिलता था. अब तो सदा प्रियतम के साथ रहने से प्रेमी प्राणों को बड़ी प्रसन्नता होती है. देव याने प्रियतम राम या

देवर जंगल में विचरण कर, लौट कर आते हैं तो नित्य ही एक दो नई चीज़ें अवश्य लाते हैं. उन नई वस्तुओं का वर्णन ही अधिक विनोदप्रिय बनता है. सवा का अर्थ है 1.25 अर्थात् एक से पाव भर ज्यादा. एक से ज्यादा होने का अर्थ है सवा. इसलिए सवा का मतलब है अधिक. अर्थात् अधिक आनंद प्राप्त होता है. इसीलिए मुझे राजभवन की अपेक्षा वन की कुटिया ही अच्छी लगती है.

5. इस वन के वृक्षों के किसलय रूपी कर [हाथ] मानो हमारे स्वागत में हिलते रहते हैं. अर्थात् वन किसलय - कर हिलाकर हमारा स्वागत करता है. मृदु मनोभाव के समान सुमन [पुष्प या फूल] खिला करते हैं. सुमन शब्द का एक अर्थ फूल है तो दूसरा अर्थ सु + मन [अच्छा मन] है. भाव यह है कि हमारे मनोभावों के खिलने के प्रतीक स्वरूप फूल खिलते हैं. यहां पेड़ों की डालियों पर हम लोगों को रोज़ नए-नए फल मिलते हैं. घास पर चमकने वाली ओस की बूंदें मोतियों के समान चमकती रहती हैं. इस प्रकार प्रकृति अपनी माया [सौंदर्य] की निधि खोल कर हमें दिखा रही है. वन में ही प्रकृति के पूर्ण सौन्दर्य को हम देख सकते हैं. इसीलिए मुझे राजभवन की अपेक्षा वन की यह कुटिया ही अच्छी लगती है.

6. यह कहना ग़लत है कि भाग्य ने मुझे धोखा दिया है. यह ग़लत है कि मैं बदकिस्मतवाली बन गई हूं. जंगल के बारे में मैंने कुछ सुना था, उससे मेरे मन में जंगल के प्रति भय पैदा हुआ था. वह, आज यहां आने के बाद दूर हो गया. यहां आकर ही कुछ काम करने की मेरी आदत हो गई है. हाथ काम करने के आदि बन गए हैं. गृहस्थ धर्म के अनुसार जो-जो काम मुझे करने थे, उन सब कामों को यहां आने के बाद ही कर रही हूं. वन में ही मेरा गृहस्थ धर्म सार्थक बना है. राजमहल में मैं केवल पुत्रवधू [बहू] थी. आज यहां आकर ही मैं सच्चे अर्थों में जाया [पत्नी] बनी हूं. अर्थात् पत्नी के योग्य काम करने का अवसर मुझे यहां पर प्राप्त हुआ है. इसीलिए मुझे राजभवन की अपेक्षा जंगल की यह कुटिया ही अच्छी लगती है.

7. यहां के वृक्षों की डालियां फल-फूलों से भरी हुई है. जंगल के पेड़ों के हरे-हरे पत्ते ही मेरे लिए भोजन करने की थालियां हैं. मुनि बालाएं ही मेरी सखियां हैं. यहां यह भावना जागृत हो रही है कि यह सब मेरा अपना है. नदी की लहरों के कलनाद के साथ हम लोग तालियां बजाती हुई खेलती रहती हैं. बंधन रहित और उन्मुक्त होकर खेलने का विनोद का अवसर यहीं पर प्राप्त हुआ है. कभी-कभी अपनी छाया ही अपने लिए क्रीड़ा-सामग्री बनती है. [बाल बालिकाएं अपनी-अपनी छाया के साथ खेलती हैं]. इसीलिए मुझे राजभवन की अपेक्षा जंगल की यह कुटिया ही अच्छी लग रही है.

8. मेरे गुरुजन [बड़े लोग] और परिजन [परिवार के लोग] सब धन्य हैं. वे ही मेरे लिए ध्येय के [लक्ष्य के] समान हैं. यहां जंगल की औषधियों [वनस्पतियों या जड़ी बूटियों] के गुणों और अवगुणों सभी को मैं जानती हूं. वन के देवता और देवियां ही मुझे आतिथ्य देनेवाली हैं. प्रिय के संग रहते हुए प्रेम के सभी विषय मेरे लिए श्रेय [कल्याणप्रद] हैं. ऐसा लगता है कि पत्नी का जो ध्रुव-धर्म है, वह मेरे साथ-साथ जंगल में दौड़ा-दौड़ा आया है. इसीलिए मुझे राजभवन की अपेक्षा जंगल की यह कुटिया ही अच्छी लग रही है.

12.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

प्रस्तुत अंश में सीता जी का जो चरित्र-चित्रण किया गया है वह न तो वाल्मीकि रामाण का है न तुलसीदास के रामचरित मानस का. गुप्त जी ने सीता जी का चरित्र-चित्रण आधुनिक नारी के रूप में

किया है जो पति के साथ रह कर जंगल में भी मंगल मनाती हैं. सीता के चरित्र द्वारा राष्ट्रकवि गुप्त जी ने आत्मनिर्भरता का संदेश दिया है. दूसरों पर निर्भर रहने की अपेक्षा प्रत्येक व्यक्ति को अपने काम स्वयं कर लेने चाहिए.

प्रस्तुत अंश में कवि ने प्रकृति के व्यापार का भी सुंदर चित्रण किया है. किसलयों को प्रकृति के कर [हाथ] मानना, हरे-हरे पत्तलों को थालियां मानना आदि कवि की कल्पना शक्ति के उदाहरण हैं.

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने काव्य की उपेक्षिता नारियों के बारे में एक लेख लिखा था. उनका कथन था कि रामायण की कथा में उर्मिला सबसे अधिक दु:खी हैं लेकिन किसी कवि ने उर्मिला की मनोव्यथा का चित्रण करने का प्रयास नहीं किया. इसी प्रकार गौतमबुद्ध की पत्नी यशोधरा, वृन्दावन की गोपियों और राधा की मानसिक व्याकुलता पर किसी कवि की दृष्टि नहीं गई. इस लेख से प्रभावित होकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इसके अनुवाद को अपनी पत्रिका "सरस्वती" में प्रकाशित करवाया. उस लेख से प्रभावित होकर द्विवेदी जी के पट्टशिष्य गुप्त जी ने काव्य की उपेक्षित नारियों को ध्यान में रखकर, साकेत, यशोधना, द्वापर आदि काव्यों की रचना की है. "साकेत" के प्रथम सर्ग में उर्मिला लक्ष्मण संवाद है तो अन्तिम सर्ग में उर्मिला लक्ष्मण के वनवास से आने के पश्चात् मिलन का वर्णन है.

12.6 शब्दार्थ

सौध	-	महल
उटज	-	कुटिया
सचिव	-	मंत्री
आकर	-	स्थान
मृग	-	हिरन
लता वितान	-	लताओं से बना हुआ मंडप
पुंजाकृति	-	गोल, पुंज [ढेर] के आकार का
गुंजित	-	भ्रमरों के गुंजर से युक्त
पराग	-	सना-पराग [पुष्परज] से भरा हुआ
परिखा	-	खाई, खंदक दुर्ग के दुर्गम बनाने के लिए उसके चारों ओर खोदी जाने वाली खाई
श्रम वारि बिन्दु	-	पसीने की बूंद
वारि	-	जल
शक्ति	-	सीपी
व्यंजन	-	पंखा
तनलुता सफलता स्वाद	-	शरीर रूपी लता को धारण करने का स्वाद [शरीर धारण करने की स्वाद सार्थकता]
त्राण	-	रक्षा
कि	-	या
विचर	-	विचरण कर, घूमकर

BRAOU

सवाया	-	अधिक, एक और चौथाई [1/4]
गार्हस्थ	-	गृहस्थ धर्म
जाया	-	पत्नी
आलियां	-	सखियां
तटिनी	-	नदी [तटवाली]
क्षेय	-	जाने हुए
अतिथेय	-	आतिथ्य देने वाले
प्रेय	-	प्रिय
श्रेय	-	भला, कल्याणप्रद
बोध विनिमय	-	ज्ञान का लेन-देन [अपनी जानी हुई बातें दूसरों को बताना और दूसरों की जानी हुई बातें स्वयं जान लेना]
वृत्त	-	विषय, कथाएं
संचय	-	इकट्ठा करना
ताया	-	तप्त किया हुआ, गरम किया हुआ

12.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

12.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. मैथिलीशरण गुप्त ने वन में सीता के मनोभावों को सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है - सोदाहरण समझाइए.
2. मैथिलीशरण गुप्त की कविता "वन में सीता" की विशेषताओं को रेखांकित कीजिए.
3. काव्य की उपेक्षिता नारियों के प्रति मैथिलीशरण गुप्त के दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए.

BRAOU

12.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित पाठ के किसी एक छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. वन में सीता कविता में मैथिलीशरण गुप्त ने क्या संदेश दिया ?
3. मैथिलीशरण गुप्त का जीवन-परिचय दीजिए.

12.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

12.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दें में)

प्रश्न : काव्य की उपेक्षिता नारियों के प्रति गुप्त जी के दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए.

उत्तर : विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने पहली बार काव्य की उपेक्षिता नारियों के बारे में "काव्येर उपेक्षिता नारी" शीर्षक लेख बंगला भाषा में लिखा था. उस लेख से प्रभावित होकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किसी भुजंग भूषण भट्टाचार्य जी से विश्वकवि के लेख का हिन्दी अनुवाद अपनी "सरस्वती" नामक पत्रिका में प्रकाशित कराया. उस लेख का प्रभाव द्विवेदी जी के पट्टशिष्य गुप्त जी पर पड़ा. उन्होंने काव्य की उपेक्षिता नारियों के चरित्रों को आधार बनाकर सुंदर काव्य ग्रंथों की रचना की. ये रचनाएं काव्य जगत में पर्याप्त लोकप्रिय हुईं.

गुप्त जी ने "साकेत" में रामायण की सबसे उपेक्षिता नारी उर्मिला को काव्य की नायिका बनाया. रामायण में विवाह के बाद चारों भाई अपनी नव वधुओं के साथ अयोध्या आये. कुछ ही दिनों के बाद दशरथ के कैकेई को वर देने के कारण, राम के साथ लक्ष्मण भी वनवास के लिए निकल पड़े. सीता जी राम के साथ जंगल में चलने के लिए तैयार हुईं, उर्मिला अपने पति लक्ष्मण के साथ जंगल नहीं जा सकीं. वनवास के चौदह वर्ष के समय भरत और शत्रुघ्न की पत्नियां श्रुतिकीर्ति और मांडवी अपने पतियों के साथ अयोध्या नगरी में थीं. सब से ज्यादा दुखी कौन है ? उर्मिला ही तो है. इसलिए गुप्त जी ने उर्मिला की चरित्रगत विशेषताओं को उभारने के लिए "साकेत" की रचना की. इस काव्य का प्रथम सर्ग उर्मिला और लक्ष्मण प्रेमपूर्ण संवाद से शुरु होता है तो अंतिम सर्ग [द्वादश सर्ग] वनवास से लौटे हुए लक्ष्मण के साथ उर्मिला के मिलन से समाप्त होता है. इस काव्य के नवम सर्ग में उर्मिला के विरह का वर्णन बड़े प्रभावशाली ढंग से किया गया है. रामकथा के नायक और नायिका तो राम और सीता हैं फिर भी इस काव्य में लक्ष्मण और उर्मिला के चरित्र-चित्रण को अधिक प्राधान्य दिया गया है.

गौतम बुद्ध की पत्नी "यशोधरा" को नायिका मानकर गुप्त जी ने "यशोधरा" नामक काव्य की रचना की है. अभी कवियों ने पत्नी को सोती छोड़कर चले जाने वाले गौतमबुद्ध के बारे में ही काव्यों और नाटकों की रचना की. लेकिन राहुल जननी यशोधरा के दु:ख और पीड़ा के बारे में किसी ने कुछ नहीं लिखा. "मुझसे कह कर नहीं गए" - यशोधरा के लिए यह बड़े अपमान की बात थी. लेकिन राहुल जैसे पुत्र के भार को संभालने की जिम्मेदारी के कारण वह मर भी नहीं सकती थी. गुप्त जी ने यशोधरा की असीम पीड़ा को काव्यमय रूप दिया है और "यशोधरा" नामक सुंदर काव्य की रचना की.

वृंदावन में गोपियों और राधा का मन हरनेवाले श्रीकृष्ण मथुरा चले गए तो उनकी खबर तक नहीं ली. गुप्त जी ने "द्वापर" नामक खंडकाव्य में राधा और गोपियों की विरह वेदना का हृदयग्राही चित्रण किया है.

इस प्रकार अपने काव्यगुरु आचार्य द्विवेदी के संकेत पर गुप्त जी ने काव्य की उपेक्षिता नारियों के चरित्र-चित्रण को मुख्य लक्ष्य मानकर विशिष्ट काव्यों की रचना की है जो हिंदी काव्य जगत में काफी प्रसिद्ध और लोकप्रिय हुए हैं.

12.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दें में)

प्रश्न : नीचे दिये गये छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

"किसलय - कर स्वागत - हेतु हिला करते हैं,
मृदु मनोभाव - सम सुमन खिला करते हैं.
डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं,

तृण-तृण पर मुक्ता - भार झिला करते हैं.
निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया."

उत्तर : रामकथा को लेकर लिखे गए महाकाव्यों में "रामचरितमानस" के बाद साकेत का नाम लिया जाता है. आधुनिक काल के सुप्रसिद्ध राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने रामकथा को आधुनिक विचारधार के अनुरूप ढालने का प्रयत्न किया है. कथा तो वही है लेकिन पात्रों के चरित्र चित्रण में एकदम नवीनता है. प्रस्तुत छन्द "साकेत" के अष्टम सर्ग से लिया गया है. पति के साथ वनवास गई सीता जी वनवास को भयप्रद नहीं मानतीं. उनका विचार है कि यहीं आकर गार्हस्थ्य धर्म सार्थक हुआ है. उन्हें सारी प्रकृति रमणीय और उनके स्वागत के लिए उत्सुक दिखाई पड़ती है.

प्रस्तुत छन्द में गुप्त जी ने प्रकृति का मानवीकरण कर, उसके भव्य रूप का वर्णन किया है. किसलय [नए पत्ते] मानो प्रकृति के हाथ [कर] हैं. किसलय रूपी करों को हिला-हिला कर मानों प्रकृति हमारा स्वागत कर रही है. यहां मृदु मनोभावों के सुमन [फूल] खिलते रहते हैं. हम लोगों को पेड़ों की डालियों से रोज़ ही नए-नए फल मिलते रहते हैं. घास की नोक पर चमकनेवाली ओस की बूंदें मोतियों के समान झिलमिल चमकती रहती हैं. इस प्रकार अपनी समस्त निधि अर्थात् सौंदर्य प्रकृति हमें दिखा रही है. जंगल में ही प्रकृति के सहज स्वाभाविक सौंदर्य को जी भर कर देख सकते हैं. इसीलिए सीता जी कहती हैं कि राजभवन की अपेक्षा इस कुटिया में वनवास का जीवन मुझे अच्छा लगता है.

"साकेत" काव्य में चित्रित सीता प्राचीन काल की सीता नहीं है. वे तो आधुनिक नारी के समान प्रकृति के सौंदर्य को देखने में आसक्त और आत्म-निर्भरता को पसंद करनेवाली है.

इस छन्द में प्रकृति का मानवीकरण किया गया है. सुमन शब्द के दो अर्थ हैं - अच्छा मन और फूल. अत: यहां श्लेष अलंकार है.

12.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. "साकेत" : एक अध्ययन - डॉ. नगेन्द्र
2. मैथिलीशरण गुप्त - डॉ. कमलाकांत पाठक
3. मैथिलीशरण गुप्त - डॉ. उमाकान्त
4. मैथिलीशरण गुप्त - डॉ. दीन बहादुर पाठक
5. मैथिलीशरण गुप्त : पुनर्मूल्यांकन - डॉ. नगेन्द्र

******

BRAOU

इकाई 13 : जागो फिर एक बार - श्री सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

रूपरेखा

13.1 पाठ का उद्देश्य
13.2 पाठ एवं कवि परिचय
13.3 मूलपाठ
13.4 सारांश
13.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
13.6 शब्दार्थ
13.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
13.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
13.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
13.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
13.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
13.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
13.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में महाप्राण निराला की कविता "जागो फिर एक बार" पर प्रकाश डाला गया है. इस पाठ के अध्ययन से आप -

* कवि द्वारा उद्घोषित राष्ट्रीय जागरण पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* कवि के राष्ट्रीय प्रेम पर विचार कर सकेंगे.
* कविता की काव्यगत विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे.
* कविता में कवि के संदेश पर विचार कर सकेंगे.

BRAOU

13.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

"जागो फिर एक बार" महाप्राण निराला की राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत लंबी कविता है, जिसका दूसरा खंड यहां प्रस्तुत किया जा रहा है. यह याद रहे कि निराला जी की तीन रचनाएं "जागो फिर एक बार" [1921], "महाराज शिवाजी का पत्र" [1922] और "दिल्ली" [1924] असहयोग आंदोलन के दिनों लिखी गयीं. अंग्रेजी शासनकालीन पराधीनता के कारण भारतीय जनता पस्त हिम्मत हो, अकर्मण्य हो गयी थी. कवि ने "जागो फिर एक बार" में पुनर्जागरण का आह्वान किया है. अद्वैत दर्शन, मुगलकालीन इतिहास तथा पुनर्जागरण की शंखध्वनि का यह कलात्मक रूप हिन्दी काव्य में अन्यतम है. प्रथम खंड में कवि ने अद्वैत दर्शन के द्वारा भारत की आत्मा को जगाया है और प्रस्तुत

द्वितीय खंड में गुरु गोविन्द सिंह के लौह व्यक्तित्व द्वारा आग्नेय समर का स्मरण कराकर भारतीयों में पुन: राष्ट्रीयता की चेतना भरने तथा स्वाधीनता के लिए लड़ने की प्रेरणा दी है. छायावादी कवियों पर पलायनवादी होने का आरोप लगाने वाले आलोचकों के लिए निराला जी का आशावाद एवं कर्मठता प्रश्न चिह्न बन गये हैं. इसी कविता में एक बहु प्रचलित भ्रम के निराकरण का प्रयास किया गया है. "योग्यतम को ही जीने का अधिकार है" यह उक्ति पश्चिम से आयी बतायी जाती है, पर यह पहले ही हमारी गीता का संदेश है. हमारे ज्ञानात्मक ग्रंथों का उपदेश है कि आत्मा सच्चिदानंद स्वरूप है, मनुष्य ब्रह्म है. अत: उद्बोधनात्मक कविता ओज, पौरुष, राष्ट्रीय चेतना एवं दर्शन सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है.

कवि परिचय

सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला" खड़ीबोली हिंदी के शीर्षस्थ कवियों में से एक हैं. छायावादी बृहत्त्रयी में भी उनका नाम आदर के साथ लिया जाता है. उनका जन्म सन् 1896 में बंगाल के महिषादल राज्य के मिदनापुर जिले में हुआ था. उनके पिता पं. रामसहाय नौकरी के लिए अवध का अपना गांव छोड़कर परिवार सहित वहां जा बसे थे. तीन साल की अवस्था में निराला जी की माता जी का स्वर्गवास हुआ था. निराला जी के लिए बैसवाड़ी तथा बंगला दोनों ही भाषाएं मातृभाषा के समान थीं. साथ ही उन्होंने अंग्रेज़ी, हिन्दी तथा संस्कृत का भी अध्ययन किया. चौदह वर्ष की अवस्था में उनका विवाह रूपवती एवं गुणवती मनोहरा देवी के साथ हुआ. एक पुत्र तथा एक पुत्री को जन्म देकर मनोहरा देवी महामारी की बीमारी से मर गयीं. निराला जीवन भर संघर्षों का सामना करते रहे. पत्रिका संपादकों की निरंकुशता के कारण उनकी रचनाएं कई वर्षों तक प्रकाश में नहीं आयीं. स्वतन्त्र प्रकृति के कारण निराला स्वयं एक स्थान पर स्थाई रूप से नौकरी नहीं कर सके. समन्वय, मतवाला, सुधा आदि पत्रिकाओं का संपादन - भार कुछ समय के लिए उन्होंने संभाला था. माधुरी तथा गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ से भी उनका संबंध रहा. निराला जी रूढ़ियों, परंपराओं के विरोधी थी. उन्होंने रूढ़िगत मान्यताओं को तोड़कर अपनी पुत्री सरोज का विवाह कान्यकुब्जेतर जाति के शिवशेखर द्विवेदी के साथ कर दिया. वही कन्या 1935 में अकाल मृत्यु का ग्रास बन गयी, जिससे निराला जी का रहा-सहा साहस भी जाता रहा. 1942 तक लखनऊ में रहने के बाद वे इलाहाबाद में आकर बस गये. जीवन के अंतिम दिनों में वे कुछ विक्षुब्ध से हो गये. किसी के सामने न झुकने वाला महाप्राण निराला संघर्षों से जूझते हुए सन् 1961 में इस संसार से चल बसे.

निराला जी छायावाद एवं प्रगतिवाद के सफल कवि हैं. कल्पना और सौन्दर्य के साथ यथार्थ का समन्वय उनकी कविता की मुख्य विशेषता है. पंत जी के शब्दों में "छंद के बंधन को तोड़कर और अचल रूढ़ियों की धारा को फोड़कर उनकी कविता निकली है. वर्तमान के प्रति असंतोष, भारतीय संस्कृति के अतीत गौरव के प्रति चिर आस्था, राष्ट्रीयता और ओज तथा दार्शनिक दृष्टि से अद्वैतवाद उनकी कविता में स्पष्ट परिलक्षित होते हैं."

निराला विद्रोह के कवि हैं. सामाजिक वैषम्य और पिसती मानवता के प्रति समवेदना से उत्पन्न उनकी विद्रोही भावना उग्र रूप धारण करती है. "परिमल", "अनामिका", "गीतिका", "अपरा", "कुकुरमुत्ता", "नये पत्ते", "तुलसीदास" आदि उनकी प्रसिद्ध काव्यकृतियां हैं.

निराला जी छन्द में स्वच्छंद हैं, मुक्तक गीतों के समर्थक हैं. ध्वनि-चित्र, प्रतीक-योजना एवं लाक्षणिकता उनकी भाषा-शैली की विशेषताएं हैं. संगीत उनके गीतों का प्राण है. उनका पद-विन्यास बंगला पद-विन्यास का अनुसरण करता है. भाषा भावानुरूप, कहीं-कहीं सरल और कहीं दुरुह होती

है. शब्दों में काट-छांट एवं तोड़ने-मरोड़ने की प्रवृत्ति भी उनकी निजी विशेषता है. शब्द-प्रयोग एवं लंबी समास-योजना की और उनकी स्वाभाविक प्रवृत्ति रही है. वे मुख्यतया ओज एवं पौरुष के कवि हैं.

13.3 मूलपाठ

समर में अमर कर प्राण,
गान गाये महासिन्धु-से,
सिन्धु-नद-तीरवासी.
सैंधव तुरंगों पर
चतुरंग-चमू-संग,
सवा-सव लाख पर
एक को चढ़ाऊंगा,
गोविन्द सिंह निज
नाम जब कहाऊंगा.
किसी ने सुनाया यह
वीर जनमोहन, अति
दुर्जय संग्राम-राम,
फाग था खेला रण
बारहों महीनों में.
शेरों की मांद में.
आया है आज स्यार -
जागो फिर एक बार ! ॥ 1 ॥

सत श्री अकाल,
भाल - अनल - धक-धक कर जला,
भस्म हो गया था काल,
तीनों गुण ताप त्रय,
अभय हो गये थे तुम,
मृत्युंजय व्योमकेश के समान,
अमृत-संतान ! तीव्र
भेद कर सप्तावरण - मरण लोक,
शोकहारी ! पहुंचे थे वहां,
जहां आसन है सहस्रार
जागो फिर एक बार ! ॥ 2 ॥

सिंही की गोद से छीनता है शिशु कौन ?
मौन भी क्या रहती वह रहते प्राण ?
रे अजान,
एक मेष माता ही
रहती है निर्निमेष -

BRAOU

दुर्बल वह -
छिनती संतान जब
जन्म पर अपने अभिशप्त
तम आंसू बहाती है.
किंतु क्या ?
योग्य जन जीता है
पश्चिम की उक्ति नहीं,
गीता है, गीता है
स्मरण करो बार-बार
जागो फिर एक बार ॥ 3 ॥

पशु नहीं, वीर तुम,
समर शूर, क्रूर नहीं,
काल चक्र में हो दबे,
आज तुम राजकुंवर,
समर सरताज !
मुक्त हो सदा ही तुम,
बाधा-विहीन - बंध छंद ज्यों
डूबे आनंद में सच्चिदानंद-रूप.
महामंत्र ऋषियों का
अणुओं-परमाणुओं में फूंका हुआ,
"तुम हो महान तुम सदा हो महान
हो नश्वर यह दीन भाव,
कायरता, कामपरता,
ब्रह्म हो तुम,
पदरज भर भी है नहीं,
पूरा यह विश्व भार -"
जागो फिर एक बार ॥ 4 ॥

BRAOU

13.4 सारांश

1. राजनैतिक पराधीनता में चिर-प्रस्तुत भारतीयों को झकझोरते हुए कवि का आह्वान है कि सिन्धुनद तीरवासी आर्यों की संतानों, तुम एक बार अपनी प्रसुप्त शक्तियों को जगाओ और स्वतन्त्रता समर लड़कर अपने प्राणों को अमर बना लो. तुम्हें पता नहीं कि पहले तुम्हारे यशोगान महासिन्धु ने गाये थे. गुरु गोविन्द सिंह ने अपने सिन्धु देश के घोड़े पर सवार हो, चतुरंगिणी सेना को साथ लेकर, मुगलों का सामना किया था. उन्होंने वीर जनों में उत्तेजना भरने वाला अतिदुर्जेय संग्राम-राग सुनाया था और कहा था कि सवा-सवा लाख मुगलों पर एक-एक सिक्ख को कुर्बान कर दूंगा. तभी मेरा गोविन्द सिंह नाम चरितार्थ होगा. गुरु गोविन्द सिंह तथा उनके साथियों के लिए युद्ध होली का खेल था, जो ये बारहों महीने खेलते थे. यही भारतीयों के अतीत की कहानी है. आज शेरों के समान शूर-वीर साहसी भारतीयों पर शासन करने के लिए सियार के समान कायर अंग्रेज़ आये हुए हैं. उनकी वही हालत होगी

जो शेरों की मांद में घुस आते सियार की होती है. अत: इन साम्राज्यमोही दुष्ट अंग्रेज़ों को एक सबक सिखाने के लिए भारतीयों, तुम अपनी प्रसुप्त शक्तियों को ज़रा जगाओ.

2. "सतश्री अकाल" का उद्घोष करके हमारे योगियों ने भालनेत्र शिव की क्रोधाग्नि के समान अपनी योगाग्नि को प्रज्वलित किया था तथा कुण्डलिनी की शक्ति को ऊर्ध्वमुखी बनाकर शरीरस्थ चक्रों का उत्तरोत्तर भेदन करके मरणलोक के परे उस सहस्रार चक्र में अपना आसन बनाया था, जहां पहुंचने पर काल, तीनों गुण तथा ताप त्रयों से अतीत हो, जीव मृत्युंजय व्योमकोश भगवान शिव के समान अभय एवं शोकहारी बन, अमृत संतान की संज्ञा पाते हैं. कवि भारतीय अमृत संतान से आग्रह करता है कि अपनी इस प्रसुप्त शक्ति को पुन: जागृत करें .

3. कवि भारतीयों की क्षमता एवं वीरता से अनभिज्ञ अग्रेज़ों को चेतावनी देते हुए कहता है "सिंही की गोद से उसके शिशु को छीनने का दुस्साहस कौन कर सकता है ? अपने प्राण रहते क्या सिंही चुप रह पाएगी ? हे मूर्ख, कोई मेष माता ही, जो दुर्बल हो अपनी संतान को छीना जाते देखते हुए भी निर्निमेष नयनों से ताकती रह जाएगी और जीवन भर अभिशप्त तप्त आंसू बहाती रहेगी. यही सिंही और मेष माता में अंतर है." [अंग्रेज़ों ने भारतीयों को संभवत: मेषमाता के समान शांत एवं असहाय समझकर स्वतंत्रता को छीन लेने की मूर्खता दिखाई है. इस मूर्खता का उन्हें फल भोगना ही पड़ेगा.]. आगे कवि बहुप्रचलित एक भ्रम को दूर करने का प्रयत्न करता है. योग्यतम को ही जीने का अधिकार है - यह उक्ति पश्चिम से आयी बतायी जाती है. कवि इस भ्रम का निराकरण करते हुए कहता है कि इसका उद्घोष बहुत पहले हमारी गीता में हुआ है. इस बात को बार-बार स्मरण करना होगा. अत: कवि भारतीय अमर संतान को आह्वान देता है कि गीता के अमर संदेश को स्मरण करते हुए अपनी प्रसुप्त शक्तियों को पुन: जगा दें.

4. कवि भारतीय शूर वीरों को उद्बोधन मंत्र देता हुआ जगा रहा है और कह रहा है कि तुम पशु नहीं हो, वीर पुरुष हो, तुम क्रूर नहीं हो, समर-शूर हो. आज तुम कालचक्र में दबकर भले ही परतंत्र हो, किंतु तुम राजकुंवर हो, समय-सरताज हो. तुम सदा ही स्वच्छ, मुक्त स्वतंत्र हो जैसा कि छंदोबद्ध कविता बिना किसी बाधा-बंधन को स्वीकारे अनायास निर्गलित होती है. तुम सत् चित् आनंद स्वरूप हो. भारत के ऋषियों ने अणुओं, परमाणुओं में फूंका हुआ यह महामंत्र दिया है कि तुम महान हो और सदैव से महान रहे हो. कायरता एवं कामपरता का यह दीनभाव नश्वर है, जो तुम्हें शोभा नहीं देता. तुम स्वयं ब्रह्म हो. इसलिए केवल भारत का ही भार तुम्हारे ऊपर नहीं है, अपितु समस्त विश्व का भार तुम्हारे ऊपर है और यह भारत तुम्हारे लिए चरणों की धूलि के बराबर भी नहीं है. इसलिए दैन्य भाव को छोड़ दो तथा परतंत्रता की बेड़ियों को काटने के लिए जागृत हो जाओ.

13.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

निराला जैसा असाधारण व्यक्तित्व लेकर बहुत कम कलाकार अवतरित हुए हैं. उनमें कबीर की अक्खड़ता, तुलसी की विराटता, सूर की भावुकता, रवीन्द्र की मनस्विता एकाकार थी. ये शक्ति के अपरिमेय पुंज थे. मानव जीवन की कुत्सित शक्तियों से संघर्ष के लिए जो आत्मतेज, जो निर्द्वन्द्वता, जो मस्ती, जो लापरवाही, जो निर्भीकता, जो पौरुष, जो शक्ति अपेक्षित है वह सब निराला के रोम-रोम में बसी हुई थी.

हमारी राष्ट्रभाषा का सबसे तेजस्वी, सबसे सचेतन और सबसे अधिक प्राणवान स्वरूप निराला की कला में प्रस्फुटित हुआ है. प्रस्तुत कविता इसका एक उदाहरण है. इस कविता से हम इस सत्य से परिचित

BRAOU

होते हैं कि निराला विद्रोह और परिवर्तन के कवि हैं. उनकी काव्य-साधना निरंतर सजग रही है. "जागो फिर एक बार" कविता में निराला पराधीन भारतवासियों को क्रांति का संदेश देते हैं. गोविन्द सिंह और शिवाजी की वीरता का स्मरण दिलाकर "सिंह की मांद में घुसे स्यार" को भगाने के लिए देशवासियों को उद्बोधित करते हैं.

13.6 शब्दार्थ

सैंधव तुरंग	-	सिन्धु देश का घोड़ा
चतुरंग चमू	-	चार प्रकार की सेना [हाथी, घोड़े, रथ और पैदल]
वीर जन मोहन	-	वीर पुरुषों को मोहित करने वाला
दुर्जय	-	जो शीघ्रता से जीता ना जा सके
संग्राम राग	-	युद्ध का संगीत
फाग	-	होली
स्यार	-	सियार [कायर अंग्रेज़ों की ओर संकेत]
भाल	-	अनल-योगाग्नि
तीनों गुण	-	सत्व, रज, तम
ताप त्रय	-	तीन प्रकार के दुख [आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक]
मृत्युंजय व्योमकेश	-	मृत्युंजय भगवान शिव
अमृत संतान	-	अमर पुरुष
शोकहारी	-	शोक दूर करने वाले
सहस्रार	-	ब्रह्मरन्ध्र [योगदर्शन के अनुसार कुण्डलिनी को उद्बुद्ध करके षड्चक्रों का भेदन] करके सहस्रार चक्र में पहुंचने पर योगी परमेश्वर का दर्शन करता है. सहस्रार में सहस्र दल कमल की कल्पना की गई है और यही शिव-पार्वती का निवास है.].
मेष	-	बकरी
निर्निमेष	-	अपलक
अभिशप्त	-	शापित
पश्चिम की उक्ति	-	पश्चिमी सिद्धांत
समर शूर	-	युद्धवीर
कालचक्र	-	समय की गति
सच्चिदानन्द	-	सत् चित् आनंद
पदरज	-	चरणधूलि
विश्व भार	-	विश्व के संरक्षण का भार

13.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

13.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. महाप्राण निराला द्वारा उद्घोषित "राष्ट्रीय जागरण" पर प्रकाश डालिए.
2. "जागो फिर एक बार" कविता में कवि के राष्ट्रीय प्रेम पर विचार कीजिए.

BRAOU

3. "योग्यत्तम को ही जीने का अधिकार है" इस सिद्धांत के बारे में निराला के विचारों पर प्रकाश डालिए.

13.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित कविता के किन्हीं चार पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. "जागो फिर एक बार" कविता की काव्यगत विशेषताओं को रेखांकित कीजिए.
3. "जागो फिर एक बार" कविता में कवि के संदेश को स्पष्ट कीजिए.
4. महाप्राण निराला भारतीयों की प्रसुप्त शक्तियों को क्यों पुन: जगाना चाहते हैं ?

13.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

13.8.1दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : "जागो फिर एक बार" कविता में कवि के राष्ट्रीय प्रेम पर विचार कीजिए .

उत्तर : समस्त छायावादी कवियों में महाप्राण निराला अपनी राष्ट्रीय भावना के लिए अत्यंत प्रख्यात हैं. राष्ट्रीय चेतना उनके काव्य की मूल प्रेरणा है. निराला जी ने विषम परिस्थितियों में रहकर अपनी नूतन काव्याभिव्यक्ति द्वारा परंपरा एवं रूढ़ियों के प्रति विद्रोही स्वर फूंका तो दूसरी ओर जन-जागरण की नव ज्योति जगाने का पुनीत कार्य किया. इसी कारण प्रसिद्ध आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा ने निराला जी को नई प्रगतिशील धारा का अगुवा कहा. निराला जी का जीवन कई सामाजिक विषमताओं, असंगतियों एवं अभावों से भरा था. इन परिस्थितियों ने कवि को उद्बुद्ध एवं जागरूक बनाकर उन्हें अन्याय से संघर्ष करने की शक्ति दी. यही शक्ति निराला में राष्ट्रीय चेतना के रूप में उभरकर आई, जिसने कवि को राष्ट्रीय गौरव की शाश्वत अभिव्यक्ति की प्रेरणा दी. निराला जी की राष्ट्रीय भावना विविध रूपों में प्रकट होती रही. कभी पिसती मानवता के प्रति करुणा के रूप में वह प्रकट हुई, तो कभी देश-प्रेम एवं भारतीय संस्कृति के यशोगान में अभिव्यक्ति पाती रही. समष्टि-सुख और राष्ट्र-कल्याण की ओजपूर्ण भावना से ओत-प्रोत महाप्राण निराला से सामाजिक राजनैतिक एवं आर्थिक पराधीनता के प्रति आक्रोश प्रकट किया है और मानवता के स्वर्णिम भविष्य की सुखद कल्पना की है. राष्ट्रीय भावना की दृष्टि से निराला जी की "जागो फिर एक बार" कविता को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है. यह कविता उन दिनों लिखी गयी थी जब कि भारत में गांधी जी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन ज़ोरों पर चल रहा था. अंग्रेज़ों ने भारत को राजनैतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से पराधीन बना दिया था और भारतीय लोग वस्तुस्थिति पर ध्यान दिये बिना सुषुप्ति का सुख भोग रहे थे. कवि निराला ने प्रस्तुत कविता लिखकर भारत की चिर परिचित प्रसुप्त शक्तियों को झकझोरा है, जो परतंत्रता की गहरी नींद में सोयी पड़ी हैं और जिन्हें पता नहीं कि उनकी यशोगाथा के गीत पहले महासिन्धु ने गाये हैं. कवि सब से पहले भारतीयों के सामने उन महान वीर सिक्ख नेता गुरु गोविन्द सिंह का आदर्श प्रस्तुत करते हैं जिन्होंने "सवा लाख मुगलों के बराबर एक सिक्ख है" की घोषणा की थी. राष्ट्र चेतना की प्रेरणा देते हुए निराला का अदम्य स्वर इस प्रकार गूंज उठा है -

"पशु नहीं, वीर तुम
समर - शूर, क्रूर नहीं
काल चक्र में हो दबे

आज तुम राज कुंवर !"

समर-सरताज ! उपर्युक्त पंक्तियों में भारत का गौरव साकार हो उठा है. इसी रचना में निराला ने देश के पौरुष को ललकारते हुए शक्ति संपन्न होने का जो संदेश दिया, वह उनकी राष्ट्रीय भावना का अप्रतिम परिचय देता है. उनके शब्दों में गीता साकार हो उठी, भारत का शाश्वत युग-धर्म मुखर हो उठा -

"सिंही की गोद से छीनता है शिशु कौन ?
मौन भी रहती वह क्या रहते प्राण ?
किन्तु क्या ? योग्य जन जीता है
पश्चिम की उक्ति नहीं.
गीता है, गीता है
स्मरण करो बार-बार."

महाप्राण निराला की राष्ट्रीय भावना चरमोन्नति पर पहुंचती है जब कि वे भारतीय ऋषियों की अमर वाणी से स्वर मिलाकर भारतीयों की महत्ता का उद्घोष करते हैं तथा उन्हें ब्रह्मत्व की अनुभूति करा देते हैं. वे कायरता और कामपरता को नश्वर दीनभाव बताते हैं तथा भारत का ही नहीं, विश्वभार उठाने की उनकी क्षमता का संदेश देते हैं. संक्षेप में महाप्राण निराला की "जागो फिर एक बार" कविता राष्ट्रीय भावना का दस्तावेज है. इस कविता में भारत राष्ट्र के प्रति कवि की आस्था, भारतीय संस्कृति के प्रति कवि की श्रद्धा, ऋषियों के प्रति कवि का पूज्य भाव तथा भारतीय जनता की अपरिमेय शक्ति के प्रति कवि का अटूट विश्वास साकार हो उठा है. वास्तव में राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत महाकवि निराला युगचेता कलाकार हैं.

13.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न : नीचे दी गई पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

"तुम हो महानतुम सदा हो महान
हो नश्वर यह दीन भाव,
कायरता, कामपरता,
ब्रह्म हो तुम,
पदरज भर भी है नहीं,
पूरा यह विश्व-भार -"

उत्तर : महाकवि निराला छायावादी काव्य धारा के प्रतिनिधि कवि हैं. छायावादी काव्य को पलायनवादी कहने वाले समीक्षकों को मुंह तोड़ उत्तर उनकी "जागो फिर एक बार" कविता में मिलता है. इस कविता में कवि की राष्ट्रीय भावना तो प्रकट होती ही है, साथ ही कवि के ओज एवं पौरुष का पता भी चलता है. "जागो फिर एक बार" शीर्षक उद्बोधनात्मक कविता से उद्धृत प्रस्तुत अवतरण में कवि ने भारतीयों को उनकी महत्ता से अवगत कराकर देश के प्रति अपने कर्तव्य को निभाने का आह्वान दिया है.

भारतीयों में व्याप्त दीन भाव को दूर करने के उद्देश्य से कवि उनकी महानता का उद्घोष करता है और कहता है कि तुम महान हो और सदा ही रहोगे. आज तुम में व्याप्त दीन भाव कोई, स्थाई तत्व नहीं,

तात्कालिक दुर्बलता मात्र है. यह सही है कि आज तुम अपने को कायर मान बैठे हो, भोग लिप्सा के शिकार हो. लेकिन यह तुम्हारा स्थायी दुर्गुण नहीं है. वर्तमान परिस्थिति के कारण यह नश्वर दीनभाव तुम में घर कर बैठा है. इस दीनभाव के नष्ट होने में देर नहीं लगेगी. आगे कवि भारतीय ऋषियों की अमरवाणी में कहता है - हे भारतीय, जरा सोचो तो सही, तुम ब्रह्मस्वरूप हो, सर्वशक्तिमान हो. अत: तुम्हें यह दीनभाव शोभा नहीं देता. तुम्हें न केवल भारत के प्रति दायित्व ही निभाना है, अपितु पूरे विश्व का भार उठाना है. यह तुम्हारे लिए कोई कठिन कार्य नहीं है, तुम्हारे चरणों तले की धूलि के बराबर भी कठिन नहीं है.

विशेष

1] प्रस्तुत पंक्तियों द्वारा कवि ने भारतीयों में ओज एवं पौरुष भरने का प्रयास किया है.

2] अद्वैतवादी दर्शन पर कवि की आस्था यहां प्रकट होती है, जबकि वह मानव को ब्रह्म घोषित करता है. अद्वैतवादी शंकर ने यह स्पष्ट घोषित किया था कि जीव ही ब्रह्म है. अत: भारतीय आर्ष वाणी का सहारा लेकर कवि भारतीयों को अपना वास्तविक स्वरूप पहचानने का संदेश देता है.

13.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. महाप्राण निराला - गंगा प्रसाद पाण्डेय
2. हिंदी और उसके कलाकार : फूलचन्द जैन "सारंग"

******

BRAOU

इकाई 14 : जयशंकर प्रसाद की कविता : आँसू

रूपरेखा

14.1 पाठ का उद्देश्य
14.2 पाठ एवं कवि परिचय
14.3 मूलपाठ
14.4 सारांश
14.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
14.6 शब्दार्थ
14.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
14.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
14.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
14.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
14.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
14.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
14.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.1 पाठ का उद्देश्य

BRAOU

प्रस्तुत पाठ में जयशंकर प्रसाद के 'खण्ड काव्य' आंसू के कतिपय छंदों पर प्रकाश डाला गया है. इन छन्दों के अध्ययन से आप -

* 'आंसू' काव्य में वर्णित प्रेम एवं वेदना को समझ सकेंगे.
* 'आंसू' में अभिव्यक्त मानवीय करुणा, व्यथा और अंत में विश्व के प्रति हार्दिक सहानुभूति आदि मनोभावों का अध्ययन कर सकेंगे.
* महाकवि प्रसाद की कविता के वैशिष्ट्य को समझ पायेंगे.
* छायावादी काव्यधारा की विशिष्ट प्रवृत्ति वेदनानुभूति से परिचित हो पायेंगे.

14.2 पाठ एवं कवि परिचय

कवि परिचय :

छायावाद के प्रवर्तक श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक प्रतिष्ठित और समृद्ध परिवार में 30 जनवरी सन् 1890 ई. में हुआ था. इनके पिता देवीप्रसाद जी तम्बाकू का व्यापार करते थे और 'सुंघनी साहु' के नाम से प्रसिद्ध थे. यद्यपि 'प्रसाद' जी ने स्कूल की नियमित शिक्षा केवल आठवीं कक्षा तक ही प्राप्त की थी किंतु उन्होंने घर पर ही भारतीय इतिहास, दर्शन, संस्कृति, साहित्य, पुराण इत्यादि का गहन अध्ययन किया था. वे संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू और फारसी भाषाओं पर भी समान अधिकार रखते थे. प्रसाद जी का समस्त साहित्य उनकी गहन अध्ययनशीलता का ही प्रतिफलन है. प्रसाद जी ने अपनी आरंभिक रचनाएं ब्रज भाषा में लिखी लेकिन सन् 1910 ई. से उन्होंने खडीबोली में लिखना आरंभ

कर दिया. प्रसाद जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे. इसीलिए हिंदी साहित्य में कविता, नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध आदि सभी विधाओं में उन्होंने समान रूप से उच्च कोटि की रचनाएं प्रस्तुत की. प्रसाद जी की मृत्यु सन् 1937 में हुई.

प्रसाद जी की प्रमुख रचनाएं इस प्रकार हैं -

काव्य ग्रंथ : प्रेम पथिक, कानन-कुसुम, चित्राधार, महाराणा का महत्व, झरना, आंसू, लहर, कामायनी.

नाटक : करुणालय, राज्यश्री, विशाख, अजातशत्रु, जनमजेय का नागयज्ञ, कामना, स्कंदगुप्त, एक घूंट, चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी.

कहानी संग्रह : आकाशदीप, आंधी, इन्द्रजाल.

उपन्यास : कंकाल, तितली, इरावती.

निबंध : काव्यकला तथा अन्य निबंध.

इस प्रकार साहित्य की प्राय: सभी विधाओं में प्रसाद जी का योगदान अविस्मरणीय है. प्रसाद जी मूलत: प्रेम और सौंदर्य के कवि हैं, लेकिन इतिहास, संस्कृति और दर्शन में गहन रुचि के फलस्वरूप उनकी रचनाओं में देश-प्रेम, अतीत के प्रति विशेष अनुराग और भारतीय दर्शन के प्रति गहरा झुकाव भी सर्वत्र परिलक्षित होता है. 'कामायनी' प्रसाद जी का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है, इसमें शैव दर्शन के आनंदवाद की सुंदर अभिव्यंजना हुई है.

BRAOU

पाठ परिचय

'आंसू' प्रसाद जी का सर्वाधिक लोकप्रिय काव्य ग्रंथ है. 1925 में प्रकाशित इसके प्रथम संस्करण में सिर्फ 126 छंद थे. 1933 में इसका संशोधित संस्करण छपा, जिसमें 190 छंद हैं. इसमें आरंभ से अंत तक एक ही छंद है, जिसका नाम 'आनंद छंद' है.

'आंसू' काव्य में विप्रलंभ श्रृंगार के अंतर्गत प्रसाद जी के युवा जीवन की संयोग के दिनों की वे मादक और मोहक स्मृतियां संकलित हैं जो आज दुर्दिन में घनीभूत पीड़ा से ओत-प्रोत होकर आंसू बनकर बरस पड़ी है. आज कवि के करुणा से भरे हुए हृदय में उसी की विकल रागिनी बज रही है. हाहाकार स्वरों में जो वेदना गरज रही है उसकी कोई सीमा नहीं है.

जिस प्रियतम को देखकर उसका मन बहलता था आज उसी की मधुर स्मृति प्रेम की पीड़ा बनकर कवि के हृदय को हिला देती है. कवि रो-रोकर, सिसक-सिसककर अपनी करुण कहानी सुनाने लगता है लेकिन वह प्रियतम सुनकर भी असंवेदनशील होकर जानी-अनजानी करने लगती है.

प्रियतम की याद आते ही उसके शून्य हृदय में झंझा झकोरे लेने लगती है, बिजली चमकने लगती है और कवि के शून्य हृदय को देखकर वेदना घेरा डालने लगती है.

अपनी प्रियतमा का रूप सौंदर्य कवि को स्मृति पटल पर दिखाई देता है. परिणामत: वह उसे छलना सी जान पड़ती है. कवि अपने मन में महसूस करता है कि उस छलना के प्रति भी उसके मन में अटूट विश्वास है. वह उस माया की छाया को भी सत्य मानता है.

प्रसाद जी 'आंसू' काव्य में प्राकृतिक अप्रस्तुत विधान के द्वारा लौकिक प्रेम को भी अलौकिक दिव्यता प्रदान करने में सफल हो जाते हैं. अंत में प्रसाद जी की वेदना अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंचकर विश्व मंगल में परिवर्तित हो जाती है. कवि 'चिर दग्ध-दुखी वसुधा' के प्रति सहानुभूति व्यक्त करता हुआ यह अभिलाषा करता है कि उसकी वेदना जगत-जीवन के मरुस्थल में आंसू की बूंदें बनकर बरस पडे.

14.3 मूलपाठ

आँसू

1. इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?

2. मादक थी मोहमयी थी
मन बहलाने की क्रीड़ा
अब हृदय हिला देती है
वह मधुर प्रेम की पीड़ा ।

3. अवकाश भला है किसको
सुनने को करुण कथाएं
बेसुध जो अपने सुख से
जिनकी है सुप्त व्यथाएं।

4. जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति सी छायी
दुर्दिन में आंसू बनकर
वह आज बरसने आयी ।

5. रो रोकर सिसक सिसक कर
कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी ।

6. झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी नीदरमाला,
पा कर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला ।

7. पतझड़ था झाड़ खड़े थे
सूखी सी फुलवारी में
किसलय नव कुसुम बिछा कर
आये तुम इस क्यारी में ।

BRAOU

8. शशि मुख पर घूंघट डाले
अंचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आये ।

9. घन में सुंदर बिजली सी
बिजली में चपल चमक सी
आंखों में काली पुतली
पुतली में श्याम झलक सी ।

10. प्रतिमा में सजीवता सी
बस गयी सुछवि आंखों में
थी एक लकीर हृदय में
जो अलग रही लाखों में ।

11. कोमल कपोल पाली में
थी सादी स्मित रेखा
जानेगा वही कुटिलता
जिसने भौं में बल देखा ।

12. वह रूप रूप ही केवल
या रहा हृदय भी उसमें
जड़ता की सब माया थी
चैतन्य समझ कर मुझमें ।

13. लहरों में प्यास भरी है
है भंवर पात्र भी खाली
मानस का सब रस पीकर
लुढ़का दी तुमने प्याली ।

14. हीरे सा हृदय हमारा
कुचल शिरीष कोमल ने
हिम शीतल प्रणय अनल बन
अब लगा विरह से जलने ।

15. सबका निचोड़ लेकर तुम
सुख से सूखे जीवन में
बरसो प्रभात हिमकण सा
आंसू इस विश्व-सदन में ।

14.4 सारांश

1) प्रस्तुत छंद जयशंकर प्रसाद रचित 'आंसू' खण्ड-काव्य से लिया गया है. यह आंसू काव्य का पहला छंद है. 'आंसू' एक प्रेम काव्य है. कवि की प्रेमिका कवि को छोड़कर चली गई है. कवि का

BRAOU

हृदय अपनी प्रेमिका के विरह में अवसाद और दुख से भरा हुआ है. कवि उन विगत (बीते हुए) दिनों की स्मृति में आज आंसू बहा रहा है.

विशेष

अतीत में अपनी प्रेमिका के मिलन को स्मरण करते हुए कवि कहता है कि मेरे इस करुणा से भरे हृदय में अब विगत स्मृतियां वेदना के स्वरों में बज रही हैं. मेरा हृदय करुण एवं पीड़ा से पहले ही भरा था. अब उसमें हाहाकार करती हुई वेदना क्यों गर्जना करने लगी है अर्थात् उन विगत स्मृतियों को याद करते हुए मेरे हृदय में अब तीव्र वेदना का अनुभव क्यों हो रहा है ?

2) विगत में प्रिय मिलन की मादक मधुर स्मृति और प्रेम-क्रीडा आज कवि के विरही हृदय को हिला रही है. प्रस्तुत पंक्तियों द्वारा प्रसाद जी कहते हैं कि मेरी प्रेमिका की मन मोह लेने वाली सुंदर चेष्टाएं जो मेरे हृदय में मस्ती (मादकता) उत्पन्न कर देती थी, आज उन्हीं दिनों की मधुर स्मृति मेरे हृदय को पीड़ा से कंपित कर देती है. कहने का तात्पर्य यह है कि कवि आज अकेला है, उसकी प्रेमिका उसके पास नहीं है लेकिन उसके मधुर प्रेम की स्मृति उसके पास है. आज अकेलेपन में उन्हीं के मिलन की क्रीडाओं की यादें कवि की वेदना को और भी अधिक गहन करके उसके हृदय को पीड़ा पहुंचा रही हैं.

विशेष

यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि मिलन के समय प्रियतम की जो क्रीडाएं हृदय को आह्लाद और उन्माद से भर देती हैं उन्हीं क्रीडाओं की स्मृतियां वियोग में असह्य पीड़ा बनकर व्यक्ति को तड़पाती हैं.

प्रस्तुत छंद में कवि ने संयोग और वियोग के क्षणों के अंतर को स्पष्ट किया है. 'हृदय हिला देना' मुहावरे का लाक्षणिक प्रयोग उपर्युक्त पंक्तियों में किया गया है.

3) जीवन के व्यावहारिक पक्ष की चर्चा करते हुए कवि प्रसाद कहते हैं कि सभी अपने ही सुख में बेसुध हो जाते हैं, अत: उनके हृदय में दूसरों की व्यथाओं को जानने तथा उनके दुख को अनुभव करने की संवेदना शक्ति ही सुप्त हो जाती है. परिणामत: भला लोग कब दूसरों की करुण कथाएं सुनने के लिए समय निकाल सकते हैं और उनके दुख के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट कर सकते हैं.

BRAOU

विशेष

यह जीवन का व्यावहारिक सत्य है कि "जाके पांव न जाई बिंबाई । सो किमि जाने पीर पराई ।" अर्थात् दूसरे का दुख वही समझ सकता है जिसने स्वयं उस दुख का अनुभव किया हो. यहां कवि का हृदय असीम वेदना से भरा हुआ है. वह अपनी करुण गाथाएं सुनाकर अपने हृदय के बोझ को हल्का करना चाहता है लेकिन उसे ऐसा कोई व्यक्ति नहीं दिखाई देता जिसके पास इतना समय हो कि वह

उसकी करुण कथा सुनकर कवि के प्रति सहानुभूति प्रकट कर सके. क्योंकि लोग तो अपने ही सुख में पूरी तरह से लिप्त हैं.

सुप्त व्यथा में मानवीकरण और लाक्षणिकता का प्रयोग हुआ है.

4) प्रस्तुत छंद में वर्षा के समय का रूपक बांधकर प्रसाद जी 'आंसू' काव्य के सृजन के कारण का संकेत पाठकों को दे रहे हैं. जिस प्रकार मेघों से भरा आकाश वर्षा काल में जल-कणों की वर्षा करता है उसी प्रकार कवि की चेतना के आकाश में जो विगत जीवन की घनीभूत स्मृतियां स्मृति के रूप में छाई हुई थी वे आज दुर्दिन में वेदना के मेघ बन आंसुओं की वर्षा कर रही हैं.

कवि अब तक प्रश्न करता आ रहा था कि उसके हृदय में हाहाकार के स्वरों में वेदना क्यों गरज रही है ? लेकिन अब उसे इसका कारण समझ में आ गया है. जिस प्रकार आकाश में मेघ सघन होकर बरसते हैं उसी प्रकार उसके पस्तिष्क में संचित पीड़ा और विगत जीवन की अनुभूतियां स्मृतियों के रूप में घनीभूत हो गई है. जिस प्रकार वर्षा काल में मेघ बरसते हैं उसी प्रकार कवि के लिए प्रिय के वियोग के दुर्दिन वर्षा-काल के समान हो गये हैं और मस्तक में छायी स्मृति की घनीभूत पीड़ा आंसू बनकर बरस पडी है.

विशेष

प्रस्तुत छंद द्वारा स्पष्ट होता है कि 'आंसू' काव्य की रचना के पीछे कवि की असफल प्रेम कथा रही है. वियोग-वेदना के आधिक्य ने उसे व्यक्त करने के लिए बाध्य कर दिया है. जिसके परिणामस्वरूप उसकी पीड़ा 'आंसू' के रूप में प्रकट हो गई.

इस छंद में प्रसाद जी ने वर्षा का अत्यंत ही सुंदर रूपक प्रस्तुत किया है. मस्तक आकाश का प्रतीक है. दुर्दिन वर्षा-काल का प्रतीक है.

5) प्रिय की निष्ठुरतापूर्ण उपेक्षा का वर्णन करते हुए प्रसाद जी कहते हैं कि मैं रो-रोकर और सिसक-सिसक कर अपनी करुणा से भरी हुई कहानी कहता जाता हूं लेकिन तुम जानकर भी अनजान बनने का व्यवहार कर रहे हो. तुम मेरी मन की अभिलाषाओं के फूलों को नोचकर चल देते हों. तुम इतने निष्ठुर और असंवेदनशील हो कि मेरी करुण कथा सुनकर भी तुम्हारे हृदय में उसकी कोई प्रतिक्रिया नहीं होती . तुम्हारी यह उपेक्षा मेरे हृदय को और अधिक पीड़ा से भर रही है.

विशेष

'तुम सुमन नोचते.....अनजानी ।" पंक्ति पर फारसी वियोग-वर्णन का प्रभाव है. 'जानकर भी अनजान' कहकर कवि ने अपने प्रिय के स्वभाव का बडा ही सजीव चित्र अंकित किया है. प्रिय की उपेक्षा भरी भाव-भंगिमा का सुंदर चित्रण यहां किया गया है.

6) प्रस्तुत छंद द्वारा प्रसाद जी स्पष्ट करते हैं कि प्रिय के वियोग में उनका हृदय भावों की हलचल, तीव्र वेदना और उदासी से भर गया है और उनके हृदय में प्रलय की सी हलचल मच रही है. जिस प्रकार शांत और निर्मल आकाश में झंझावत से प्रताडित होकर मेघ चारों ओर से घिर कर सघन हो जाते हैं, उनके टकराने से गंभीर गर्जन होता है और बिजली चमककर वातावरण को अपनी चकाचौंध से भर देती है तथा घनघोर वर्षा होने लगती है उसी प्रकार कवि के हृदय के शून्य आकाश में प्रिय की स्मृति का झंझावत उठकर हलचल उत्पन्न कर देता है. प्रियतम के सघन केशों की मेघमाला में उसका मंद-मंद हास्य बिजली के समान आकर कौंधने लगता है. इस प्रकार कवि को शांत हृदय में स्मृतियों की यह हलचल अपना स्थायी निवास बना लेती है.

विशेष

'डेरा डालना' मुहावरे का स्मृतियों के रूप में अत्यंत ही सुंदर ढंग से प्रयोग किया गया है. प्रकृति के उपादानों द्वारा कवि ने अपने मन की व्यथा का अत्यंत ही सजीव चित्र खींचा है. 'झंझा', 'नीरदमाला', 'बिजली' आदि भावों के हलचल, वेदना और उदासी के प्रतीक हैं.

7) प्रस्तुत छंद में प्रसाद जी ने प्रियतम के आगमन से पहले नीरसता और शून्यता तथा प्रियतम के आगमन पर होनेवाली सरसता और आनंदोल्लास का वर्णन करते हुए कहा है कि तुम्हारे आने से पूर्व मेरे जीवन रूपी फुलवारी में जीवन के संघर्षों, अथवा तथा दुखों की झाड़ियां खड़ी हुई थीं. जीवन की

BRAOU

शुष्कता पतझड़ के समान थी लेकिन तुम्हारे आते ही मेरे पतझड़ के समान जीवन में बसन्त आ गया. सूखी झाड़ियों का स्थान सुकुमार पल्लवों और पुष्पों ने ले लिया, जीवन में प्रेम और उल्लास छा गया. मेरे हृदय रूपी उपवन मानो बसंत के नवीन कोंपलों और पुष्पों से सुगंधित और पल्लवित हो उठा.

विशेष

प्रस्तुत छंद में रस के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है. जीवन की शुष्कता के वर्णन के समय 'झ', 'ड', 'ख' जैसे परुष वर्णों का कवि प्रयोग करता है और प्रेम की कोमलता के वर्णन के लिए किसलय नव कुसुम जैसे कोमल एवं लालित्यपूर्ण शब्दों का.

8) प्रियतम के आगमन से कवि के जीवन में नया उल्लास सा छा गया है. प्रस्तुत छंद में इसी भाव को प्रकट करते हुए प्रसाद जी कहते हैं कि जिस प्रकार से संध्या-काल होते ही चंद्रमुखी सुंदर नारी अपने आंचल की ओट में दीपक को लेकर वातावरण को प्रकाशवान बनाती है उसी प्रकार जीवन की गोधूली अर्थात् उस समय जब कवि निराशा के अंधकार में डूबा हुआ था, प्रियतम का आकस्मिक आगमन उसके लिए कौतूहल वर्धक बन गया.

विशेष

चित्रात्मक भाषा का अत्यंत ही सजीव प्रयोग प्रस्तुत छंद में किया गया है. प्रियतमा का पुल्लिंग रूप में प्रयोग किया गया है. यह फारसी काव्यशैली का प्रभाव माना जा सकता है.

9) कवि अपनी प्रियतमा के सौंदर्य का वर्णन करते हुए कहता है कि जिस प्रकार काले बादलों में बिजली और बिजली में चंचलता छिपी हुई होती है, बिजली की यह चंचल चमक आंखों के सामने चकाचौंध उत्पन्न कर देती है. ठीक उसी प्रकार मेरे दुखों के बादलों के पीछे मेरी प्रियतमा का प्रेम और उसकी चंचलता मेरे नेत्रों में चकाचौंध उत्पन्न कर देती थी. जिस प्रकार आंखों में पुतली और पुतली में श्यामलता शोभायमान होती है उसी प्रकार मेरे प्रियतम की छवि भी अतुल और अनुपम सौंदर्य से युक्त थी.

BRAOU

विशेष

'छवि' उपमेय के लिए 'घन में सुंदर बिजली', 'बिजली में चपल चमक' आंखों में काली पुतली और पुतली से 'श्याम झलक' कई उपमान होने के कारण मालादीपक का प्रयोग अत्यंत ही सुंदर बन पड़ा है.

10) प्रस्तुत छंद में कवि प्रिय के सौंदर्य के प्रभाव का वर्णन करते हुए कहता है कि मेरी आंखों में प्रियतम का अपूर्व सौंदर्य इस प्रकार बस गया है मानो किसी सुंदर मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा हो गई हो. मूर्ति देखने में सुंदर अवश्य होती है किंतु सजीव न होने के कारण उसका सौंदर्य मूक होता है. सजीव सौंदर्य ही स्थायी प्रभाव डालने वाला होता है. प्रसाद जी आगे कहते हैं कि उनके जीवन में अनेक व्यक्ति आए और चले गए किंतु उस प्रियतम का सौंदर्य इतना अनुपम और अतुलनीय था कि उसका प्रभाव सबसे अलग और स्थायी बनकर रह गया. वह हृदय और आंखों में पत्थर पर लिखी रेखा के समान शाश्वत होकर बस गया.

विशेष

'प्रतिमा में सजीवता सी' में उपमा अलंकार का प्रयोग किया गया है.

पंत जी की समस्त रचनाओं का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट विदित होगा कि कवि-रूप में उनका अंतिम लक्ष्य मानव-मंगल है. इसके लिए साधनारत पंत पहले सौन्दर्य-प्रेमी रहे, फिर इन्हें शिवत्व की अनुभूति हुई और अंतिम चरण में ये सत्यान्वेषी बने. द्विवेदीकालीन शुष्क नीरस कविता को भावना, कल्पना एवं सौन्दर्य से युक्त बनाकर उसमें नूतन भाव-भंगिमा की रस दृष्टि करने का दायित्व पंत ने अपने कंधों पर ले लिया. सौन्दर्य-प्रिय कवि पंत ने प्रकृति की प्रत्येक हृदयतंत्री के साथ अपना रागात्मक संबंध स्थापित किया और उसे काव्य सिंहासन पर नूतन साज-सज्जा के साथ अभिसिक्त किया. ब्रज भाषा के स्थान पर खड़ी बोली को काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने तथा कोमल-कांत-पदावली से उसे निखारने-संवारने का पूरा श्रेय कविवर पंत को प्राप्त होता है.

15.3 मूलपाठ : नौका विहार

शांत, स्निग्ध ज्योत्सना उज्ज्वल.
अपलक अनंत, नीरव भू-तल.
सैकत-शय्या पर दुग्ध-धवल, तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म-विरल,
लेटी हैं श्रांत, क्लांत, निश्चल.
तापस-बाला गंगा निर्मल, शशि मुख से दीपित मृदु-करतल,
लहरें उस पर कोमल कुंतक.
गोरे अंगों पर सिहर-सिहर, लहराता तार-तरल सुंदर
चंचल अंचल-सा नीलाम्बर .
साड़ी की सिकुडन-सी जिस पर, शशि की रेशमी विभा से भर,
सिमटी हैं वर्तुल, मृदुल-लहर ॥ 1 ॥

चांदनी रात का प्रथम-प्रहर,
हम चले नाव लेकर सत्वर .
सिकता की सस्मिता-सीपी पर मोती की ज्योत्स्ना रही विचर
ला, पालें चढ़ी, उठा लंगर.
मृदु मंद-मंद, मंथर, मंथर, लघु तरणि, हंसिनी-सी सुंदर
तिर रही खोल पालों के पर.
निश्चल जल के शुचि दर्पण पर बिंबित हो रजत-पुलित निर्भर
दुहरे ऊंचे लगते क्षण भर.
कालाकंकर का राजभवन सोया जल में निश्चिंत प्रमन,
पलकों में वैभव-स्वप्न सघन ॥ 2 ॥

नौका से उठती जल-हिलोर,
हिल पड़ते नभ के ओर-छोर.
विस्फारित नयनों से निश्चय कुछ खोज रहे चल तारक दल
ज्योतित कर जल का अन्तस्तल.
उनके लघु दीपों को चंचल, अंचल की ओट किये अविरल
फिरती लहरें लुक-छिप पल-पल.
सामने शुक्र की छवि झलमल, पैरती परी-सी जल में कल,
रुपहरें कचों में ही ओझल.

BRAOU

विशेष

हीरा अत्यंत ही कठोर होता है. उसे शिरीष पुष्प से कुचलना, हिम शीतल प्रेम का अनल (अग्नि) बनकर जलाना वास्तविक विरोध न होकर विरोध का आभास देते हैं, अत: यहां विरोधाभास अलंकार है. 'प्रणय' के अनल बनने में रूपक है.

15) 'आंसू' काव्य के इस अंतिम छंद में कवि प्रसाद अपने जीवन की व्यक्तिगत पीड़ा के कारण बहने वाले आंसुओं से कहते हैं कि मेरी व्यक्तिगत वेदना से उठे हुए आंसू अब तुम समस्त मानवता को रस से सिक्त कर दो. इस विश्व की समस्त मानवता मेरे ही समान पीड़ा और व्यथाओं के भार से दबी है. मानवता का जीवन शुष्क एवं नीरस हो रहा है. जिस प्रकार प्रात:काल ओस बरस कर सूखी और संतप्त वसुधा को आर्द्र(नम) करती है अर्थात् उसे रस से सिक्त करती है, ठीक उसी प्रकार तुम भी जीवन के सार को लेकर इस समस्त संसार में अपनी करुणा और प्रेम की वर्षा कर संतप्त मानवता को शांति और शीतलता प्रदान करो.

विशेष

यह 'आंसू' काव्य का अंतिम छंद है. यहां कवि की व्यक्तिगत पीड़ा समष्टिगत पीडा में परिवर्तित हो जाती है. दिन भर सूर्य के ताप से पृथ्वी सूख जाती है लेकिन प्रात:कालीन ओस की वर्षा उसे शीतलता प्रदान करती है. उसी प्रकार समस्त विश्व के प्राणी भी व्यथा, पीडाओं और संघर्षों से संतप्त हैं. कवि अपनी करुणा के अश्रुओं द्वारा समस्त मानवता को शीतलता प्रदान करना चाहता है. यहाँ कवि की वेदना चरमोत्कर्ष पर पहुंचकर उदात्त हो जाती है. वह अश्रुओं की वर्षा से विश्व मंगल की कामना करता है. इस छंद में वेदना का उदात्तीकरण है.

14.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

'आंसू' प्रसाद जी की एक श्रेष्ठ कृति है, जिसका विषय प्रेम, विरह और सौंदर्य है. यह प्रेम, विरह और सौंदर्य लौकिकता से प्रारंभ होकर अंत में अलौकिक रूप धारण कर लेता है. व्यक्तिगत करुणा और वेदना से प्रारंभ होकर यह काव्य समष्टिगत वेदना और करुणा के उदात्त धरातल पर पहुंच जाता है. प्रसाद जी 'आंसू' काव्य में सौंदर्य के भौतिक आकर्षण की अवहेलना नहीं करते लेकिन उसे स्वीकार करते हुए भी उसे मात्र इंद्रिय सुख का साधन नहीं मानते अपितु 'आंसू' में व्यक्त प्रेम और सौंदर्य में स्थूल शरीर का वर्णन न होकर छवि के भावात्मक रूप और प्रेम का ही वर्णन सर्वत्र दिखाई देता है.

"चंचला स्नान कर आवे, चंद्रिका पर्व में जैसी ।
उस पावन तन की शोभा, आलोक मधुर थी ऐसी ।"

कवि अपने प्रेम और अपनी वेदना को केवल मानवीय धरातल तक ही प्रस्तुत करने के लिए प्रकृति के विशाल फलक का सहारा भी लेता है -

"झंझा झकोर गर्जन था, बिजली थी नीरदमाला ।
पाकर इस शून्य हृदय को सबने आ डेरा डाला ।"

व्यक्तिपरकता 'आंसू' काव्य की प्रमुख विशेषता है. प्रसाद जी ने अपनी निजी मनोभावनाओं को ही प्रस्तुत काव्य का आधार बनाया है. उन्होंने स्वयं कहा है -

BRAOU

"जो घनीभूत पीड़ा थी मस्तक में स्मृति-सी छाई ।
दुर्दिन में आंसू बनकर, वह आज बरसने आई ।"

प्रसाद जी की व्यक्तिगत वेदना अंत तक आते-आते बहुत गहरी हो जाती है. अंत में कवि स्वयं अपनी वेदना से प्रार्थना करता है कि वह दग्ध विश्व को शीतलता और मंगल प्रदान करे और उसके आंसू दु:खों से सूखे विश्व में प्रभात हिमकण बन कर बरस पडे -

"सबका निचोड़ लेकर तुम, सुख से सूखे जीवन में
बरसों प्रभात हिमकण सा, आंसू इस विश्व सदन में ।'

संयोग और सौंदर्य के प्रसंगों में प्रसाद का काव्य जहां रीतिकाल के काव्य से अधिक मधुर और आकर्षक बन गया है वहीं उसमें प्रेम और सौंदर्य का शिष्ट, सूक्ष्म और गंभीर वर्णन उसे और अधिक मर्मस्पर्शी बना देता है.

कलापक्ष की दृष्टि से प्रसाद जी की शैली लाक्षणिक है. उसमें वक्रता अधिक है. लक्षणा-शक्ति का अर्थ है जिसमें शब्दों के प्रसिद्ध अर्थ से काम न चले, उनसे कुछ विभिन्न अर्थ निकले यहीं वक्रता है. लक्षणा के तिरिक्त 'आंसू' में प्रतीकों की भी कमी नहीं है. ये प्रतीक किन्हीं विशिष्ट भावनाओं की ओर संकेत करते हैं. जैसे -

"झंझा झकोर गर्जन था, बिजली थी नीरदमाला ।
पाकर इस शून्य हृदय को, सबने आ डेरा डाला ।"

यहां झंझा (तूफान) आपत्तियों का प्रतीक है, बादल निराशा का, विद्युत आकस्मिक प्रहारों का. इस प्रकार प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग प्रसाद के काव्य में बराबर हुआ है. उक्ति की वक्रता 'आंसू' की एक और विशेषता है इसमें जो बात कही जाती है उसे साफ-साफ न कहकर कुछ रहस्यमय रूप दिया जाए या फिर उस बात में कुछ नवीनता हो, कुछ बात प्रकट हो और कुछ अस्पष्ट रह जाए. यह अनकहा काव्य को एक विशेष सौंदर्य प्रदान करता है. प्रस्तुत छंद में काव्य का यही सौंदर्य उसे विशिष्टता प्रदान कर रहा है -

"शशि मुख पर घूंघट डाले, अंचल में दीप छिपाए ।
जीवन की गोधूली में, कौतूहल से तुम आए ।"

इसमें एक तो आने वाला प्रिय रहस्यमयता लिए हुए है फिर दूसरे कथन में 'कौतूहल से तुम आए' इस पंक्ति में अपरिचित और चिर प्रतीक्षित अतिथि को देखकर प्रेमी के हृदय में आश्चर्य की भावना को अत्यंत आकर्षक ढंग से व्यक्त किया गया है.

इस प्रकार प्रसाद जी कृत 'आंसू' में ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौंदर्यमय प्रतीक विधान, वक्रता आदि के साथ उपमा और उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का भी अत्यंत सुंदर वर्णन मिलता है.

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्रसाद जी सौंदर्य और प्रेम के कवि हैं. उनका प्रेम लौकिकता से उठकर अलौकिता के धरातल पर पहुंच जाता है. 'आंसू' में प्रकृति मानव की सुखात्मक और दु:खात्मक अनुभूतियों की पृष्ठभूमि बनकर प्रस्तुत हुई है. 'आंसू' की भाषा लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता और चित्रात्मकता लिए हुए हैं. अंत में यह काव्य सुख-दुख का समन्वय कर निराशा में आशा, दुख में आनंद का संदेश देता हुआ विश्व-मंगल की भावना से भर जाता है.

BRAOU

14.6 शब्दार्थ

1)	करुणा कलित	-	करुणा से भरे हुए
	विकल रागिनी	-	व्याकुलता से भरा संगीत
	बजती	-	गूंजना, बजना
	हाहाकार	-	वेदना का अत्यधिक करुण रोदन
	असीम	-	जिसकी कोई सीमा न हो
2)	मादक	-	मस्ती उत्पन्न करनेवाली
	मोहमयी	-	मोहित करने वाली, लुभाने वाली
	प्रेम की पीड़ा	-	प्रेम में मिलने के बाद वियोग की पीड़ा
3)	अवकाश	-	समय, फुरसत
	करुण कथाएं	-	दुखभरी कहानियां
	बेसुध जो अपने सुख से	-	जो अपने ही सुख में भूले हुए हैं
	सुप्त	-	सोई हुई
	व्यथाएं	-	पीड़ाएं
4)	घनीभूत	-	सघन (मेघ से भरी हुई)
	दुर्दिन	-	बुरे दिन, संकट का समय
	स्मृति	-	याद
5)	करुण	-	करुणा (दुख) से भरी हुई
	सुमन नोचते	-	आशाओं को तोड़ते हुए यहां सुमन (पुष्प) आशाओं का प्रतीक है.
6)	झंझा	-	आंधी
	झकोर	-	झकझोरती हुई तेज हवा
	नीरदमाला	-	बादलों का समूह
	शून्य	-	आकाश, निराशा, खाली
	डेरा डाला	-	स्थायी रूप से बस जाना
	झंझा, झकोर, गर्जन, बिजली और नीरदमाला	-	भावों की हलचल, वेदना और उदासी के प्रतीक हैं.
7)	पतझड़	-	एक ऋतु का नाम, जिसमें वृक्षों से पत्ते झड़ जाते हैं
	झाड़	-	वृक्ष, पौधा
	फुलवारी	-	उपवन
	किसलय	-	कोमल पल्लव
	नव कुसुम	-	नए खिले हुए पुष्प
8)	शशिमुख	-	चन्द्रमा के समान मुख
	अंचल	-	आंचल
	दीप	-	दीपक

BRAOU

	गोधूली	-	संध्या का समय
	कौतूहल	-	जिज्ञासा जनित आश्चर्य
9)	घन	-	बादल
	चपल	-	चंचल
	श्याम	-	काला रंग
	झलक	-	परछाई, प्रतिबिम्ब
10)	प्रतिमा	-	मूर्ति
	सजीवता	-	चेतनता, जिसमें जीवन हो
	एक लकीर हृदय में	-	हृदय पर स्थायी और शाश्वत प्रभाव डालना
	सुछवि	-	सुंदर छवी
11)	कपोल पाली	-	मुख मण्डल, दोनो गाल
	स्मित	-	मुस्कान
	भौं	-	भवें
	[illegible]	-	बांकापन
12)	रुप रुप ही केवल	-	केवल बाहरी आकर्षण मात्र था
	हृदय रहा भी उसमें	-	किसी की वेदना से सहानुभूति रखने वाला हृदय
	जड़ता	-	जिसमें जीवन न हो (जड़ वस्तु)
	चैतन्य	-	जिसमें जीवन हो (प्राणी)
13)	भंवर	-	आवर्त्त
	पात्र	-	बर्तन जिसमें मदिरा आदि दी जाती है, चषक, प्याला
	मानस	-	हृदय, मान सरोवर
	रस	-	प्रेम, जल
14)	हीरे सा	-	ब्रज के समान कठोर
	शिरीष	-	एक पुष्प का नाम
	कुचला	-	मसलना
	हिम शीतल	-	बर्फ सा ठंडा
	प्रणय	-	प्रेम
	अनल	-	आग
15)	निचोड़	-	सार
	प्रभात हिमकन	-	सबेरे की ओस की बूंदें
	विश्व-सदन	-	संसार रुपी घर
	सुख से सूखे	-	सुख के बिना, दुख से भरा हुआ

14.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

14.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. 'आंसू' में भाव और शैली दोनों दृष्टियों से छायावादी काव्य का पूर्ण वैभव मिलता है' इस कथन की समीक्षा कीजिए.

BRAOU

2. 'आंसू' में मानव जीवन का व्यक्ति का समष्टि की ओर विकास भी दिखाई देता है.' इस कथन को दृष्टि में रखते हुए आंसू के जीवन दर्शन को स्पष्ट कीजिए.
3. आसू का आलंबन कौन है ? लौकिक या अलौकिक - सिद्ध कीजिए.
4. 'आंसू' एक विरह काव्य है. विवेचन कीजिए.

14.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. 'आंसू' काव्य के शिल्पगत सौंदर्य पर प्रकाश डालिए.
2. 'आंसू' काव्य के किसी एक छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
3. कवि अपनी वेदना को विश्व वेदना में क्यों परिवर्तित करना चाहता है ?
4. 'आंसू' काव्य का प्रतिपाद्य क्या है ?

14.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

14.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- 'आंसू' के स्वस्थ प्रेम, जागृत निराशा और सूक्ष्म रूप ने उसे ऐसे उच्च धरातल पर पहुंचा दिया है कि उस प्रेम को अलौकिक स्वीकार करने की इच्छा होती है - इस कथन की समीक्षा कीजिए.

उत्तर- 'आंसू' एक स्मृति काव्य है. कवि के असफल प्रेम के उद्‌गार आंसू बनकर बरसते हैं और उनका अवसान लोक मंगल में होता है. कवि के मन में प्रिय-वियोग-व्यथा की सहजता और घुमडन से काव्य का आरंभ होता है. कवि के करुणा कलित हृदय से वेदन हाहाकार करके गरजने लगती है -

"इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?"

प्रेमी अपनी करुण कथा सुनाना चाहता है, किंतु किसको इतना समय है कि उसकी व्यथापूर्ण कथा सुने, अत: उसकी वेदना सघन होकर कवि के जीवन का आधार बन जाती है. संयोगकाल की स्मृतियां उसके मानसपट पर आकर उसकी पीड़ा को और अधिक गहरा कर देती हैं. वह जानता है कि उसके प्रिय का प्रेम उसके लिए मात्र एक छलना था लेकिन फिर भी उसको अपनी प्रियतमा पर विश्वास था क्योंकि उसने उसमें कुछ सच्चाई का अनुभव किया था -

"छलना थी फिर भी मेरा उसमें विश्वास घना था
उस माया की छाया में कुछ सच्चा स्वयं बना था ।"

कवि अपने प्रिय के निष्ठुर और जड़ व्यवहार से दुखी होते हुए भी उसके अनुपम सौंदर्य का चिंतन करने से नहीं चूकता. फलत: आंसू में जगह-जगह नारी रूप-सौंदर्य के संश्लिष्ट चित्र साकार हो उठे हैं, जैसे -

"चंचलता स्नान कर आवे, चंद्रिका पर्व में जैसे ।
उस पावन-तन की शोभा, आलोक मधुर थी ऐसी ।"

BRAOU

प्रारंभ में कवि की जो वेदना असह्य थी, अंत में कवि उससे समझौता कर लेता है. उसकी वेदना विश्व मंदिर में किरणों की माला पहने तिल-तिल कर सतत जलते हुए अपना प्रकाश फैलाती है. आगे वह अपनी वेदना से आग्रह करता है कि वह कल्याणी शीतल ज्वाला बनकर इस संसार को मंगलमय प्रकाश दें. इस प्रकार कवि की वेदना उसे जीवन से निराश नहीं करती और अंत में वह समरसता के सिद्धांत में आस्था रखकर सुख-दुख का समन्वय करता है.

"मानव जीवन वेदी पर, परिणय है विरह-मिलन का
दुख-सुख दोनों नाचेंगे, है खेल आंख का, मन का ।"

इस प्रकार यद्यपि 'आंसू' की रचना का मूल आधार वैयक्तिक दुख और विषाद की अनुभूतियां हैं, तथापि कवि ने उन्हें उदात्त शैली में प्रकट करके 'आंसू' काव्य को सार्वजनीन और सार्वभौमिक बना दिया है. इन्हीं विशेषताओं के कारण 'आंसू' में लौकिक प्रेम परिलक्षित होते हुए भी उस प्रेम को अलौकिक स्वीकार करने की इच्छा होती है.

14.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- निम्नलिखित छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -

"जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति सी छायी
दुर्दिन में आंसू बनकर
वह आज बरसने आयी ।"

उत्तर- प्रस्तुत छंद 'आंसू' काव्य से लिया गया है. इसके लेखक छायावाद के प्रवर्तक श्री जयशंकर प्रसाद जी हैं. प्रस्तुत छंद में वर्षा के समय का रूपक बांधकर प्रसाद जी ने 'आंसू' काव्य सृजन के कारण को बतलाया है.

भावार्थ- कवि कहता है कि जिस प्रकार मेघ से भरा आकाश वर्षाकाल में जल-कणों की वर्षा करता है उसी प्रकार कवि की चेतना के आकाश में जो विगत जीवन की घनीभूत स्मृतियां छायी हुई थीं वे आज दुर्दिन में वेदना के मेघ बन आंसुओं की वर्षा कर रही हैं.

कवि अब तक प्रश्न करता आ रहा था कि उसके हृदय में हाहाकार स्वरों में वेदना क्यों गरज रही है, अब उसे इसका कारण समझ में आ गया है. जिस प्रकार आकाश में मेघ सघन होकर बरसते हैं उसी प्रकार उसके मस्तिष्क में भी संचित पीड़ा और विगत प्रेम की अनुभूतियां भी स्मृति के रूप में घनीभूत हो गई हैं. जिस प्रकार वर्षाकाल में मेघ बरसते हैं उसी प्रकार कवि के लिए प्रिय के वियोग के कारण दिन दुर्दिन बन गया है. यह दुर्दिन वर्षाकाल-सा हो गया है और उसके मस्तक में छायी स्मृति की घनीभूत पीड़ा आंसू बनकर बरस पड़ी है.

<u>विशेष</u>

प्रस्तुत छंद द्वारा स्पष्ट होता है कि 'आंसू' काव्य की रचना का आलंबन कवि के असफल प्रेम की कथा रही है. वियोग वेदना के आधिक्य ने कवि को अपने दु:ख को अभिव्यक्त करने के लिए बाध्य कर दिया है जिसके परिणामस्वरूप कवि की पीडा 'आंसू' के रूप में प्रकट हो गई है.

BRAOU

इस छंद में प्रसाद जी ने वर्षा का अत्यंत ही सुंदर रूपक प्रस्तुत किया है. मस्तक आकाश का प्रतीक है, दुर्दिन वर्षाकाल का प्रतीक है.

14.9 कुछ उपयुगी पुस्तकें

1. प्रसाद का काव्य : प्रेम शंकर
2. प्रसाद की काव्य प्रतिभा : डॉ. दुर्गाप्रसाद मिश्र
3. हिंदी साहित्य के विविध वाद : द्वारकादास मीतल

BRAOU

इकाई 15 : नौका विहार - सुमित्रानंदन पंत

रूपरेखा

15.1 पाठ का उद्देश्य
15.2 पाठ एवं कवि परिचय
15.3 मूलपाठ
15.4 सारांश
15.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
15.6 शब्दार्थ
15.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
15.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
15.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
15.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
15.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
15.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
15.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में छायावाद के प्रमुख कवि सुमित्रानंदन पंत की काव्य कृति "गुंजन" में संग्रहीत कविता "नौका विहार" पर प्रकाश डाला गया है. इस पाठ के अध्ययन से आप -

* कवि की कल्पना का अंदाज लगा सकेंगे.
* प्रकृति-चित्रण पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* कवि के मनोभावों को समझ सकेंगे.
* कवि के संदेश पर विचार कर सकेंगे.

BRAOU

15.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

"गुंजन" में संग्रहीत प्रस्तुत "नौका विहार" कविता भाव एवं कला पक्ष की दृष्टि से पंत जी की प्रतिनिधि रचनाओं में से है. सन् 1930 ई. में पंत जी कालाकंकर के राजा अवधेश सिंह के छोटे भाई कुंवर सिंह के सम्पर्क में आये और दोनों में घनिष्ट मित्रता हो गयी. तत्पश्चात् उनके अनुरोध पर पंत ने सन् 1930 से सन् 1933 तक कालाकंकर में कुंवर सिंह के अतिथ्य में अपना जीवन बिताया. पंत ने "नौका विहार" की रचना इसी काल में की. प्रकृति का सूक्ष्म-निरीक्षण, ऊंची कल्पना विलास, जड़ प्रकृति में मानवीय भावनाओं का आरोप, दार्शनिक चिंतन, सुकोमल और सुंदर शब्द चयन, चित्रात्मक भाषा शैली, लाक्षणिक प्रयोग तथा संश्लिष्ट भाव बिंबों की अवतरण से युक्त, यह कविता, आधुनिक हिंदी काव्य की अक्षय निधि है और पंत के कवि व्यक्तित्व की द्योतक भी.

कवि परिचय

हिंदी में छायावादी काव्यधारा के परिपोषक कवियों में सुमित्रानंदन पंत जी का अप्रतिम स्थान है. लगभग साठ वर्ष तक हिंदी भारती की सेवा में अनवरत तल्लीन इन कवि-साधक का जन्म सन् 1900 ई. को हिमालय के अंचल में स्थित अल्मोडा के कूर्मांचल प्रदेश के कौसानी गांव में हुआ. इनके पिता गंगादत्त पंत तथा माता सरस्वती देवी थीं. पंत जी के जन्म के छः घंटे के बाद माता का स्वर्गवास हो गया था, अतः इनका पालन-पोषण बुआ के द्वारा हुआ. माता की ममतामयी गोद से वंचित बालक सुमित्रानंदन का ध्यान प्रकृति-माता की ओर अनायास आकृष्ट हुआ और प्रकृति से उन्होंने काव्य प्रेरणा प्राप्त की.

प्रारंभिक शिक्षा स्थानिक सरकारी स्कूल में पूरी करके पंत जी ने काशी के जयनारायण हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा पास की. बाल्यकाल में ही कविता की ओर इनकी विशेष अभिरुचि रही. कालिदास, मैथिलीशरण गुप्त, सरोजनी नायडू, रवींद्रनाथ ठाकुर आदि की कविताएं ये बड़े ध्यान से पढ़ते थे और उनका अनुकरण भी किया करते थे. मैट्रिक के बाद इलाहाबाद के म्योर सेण्ट्रल कॉलेज में ये भर्ती हुए और 1921 में गांधी जी के असहयोग आंदोलन से प्रेरित होकर इन्होंने पढ़ाई छोड़ दी. फिर अल्मोड़ा, कालाकंकर तथा इलाहाबाद में इनका जीवन व्यतीत होता रहा. सन् 1945-46 में ये पाण्डिचेरी के अरविन्द आश्रम में रहे और अरविन्द के योगनिष्ठ जीवन से अत्यंत प्रभावित हुए. सन् 1950 से 1957 तक पंत जी का आकाशवाणी से निकट संपर्क रहा.

पंत जी को कई सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त हुए. इनकी साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष्य में राष्ट्रपति ने इन्हें "पद्मभूषण" उपाधि से सम्मानित किया था. विक्रम विश्वविद्यालय ने इन्हें डी.लिट. की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया. "कला और बूढ़ा चाँद" पर सन् 1961 में साहित्य अकादमी पुरस्कार, लोकायतन महाकाव्य पर सन् 1964 में सोवियत भूमि नेहरु-पुरस्कार तथा "चिदम्बरा" काव्य संकलन पर सन् 1968 में भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुए.

सन् 1977 में पंत जी का स्वर्गवास हुआ.

पंत जी का कवि व्यक्तित्व अतिशय महत्वपूर्ण रहा. अपनी दीर्घ कालीन साहित्य-साधना में पंत जी का संवेदनशील कवि व्यक्तित्व कई विचारधाराओं, राजनैतिक, सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होता गया और उनकी अभिव्यक्ति के प्रयास में इनकी कविता ने कई मोड़ लिये. एक कवि के रूप में पंत जी अत्यंत प्रगतिशील एवं प्रयोगशील रहे हैं. छायावादी युग में [1918/1936] सौन्दर्य के उपासक रहे. भाषा एवं भाव में सौन्दर्य भरते हुए इस काल में "वीणा", "ग्रंथि", "पल्लव" और "गुंजन" की रचना हुई. इस बीच पंत जी ने कार्लमार्क्स का गहन अध्ययन किया और फलतः ये प्रगतिवादी [1936/1944] बने. "युगांत", "युगवाणी" एवं "ग्राम्या" में पंत जी का प्रगतिवादी कवि व्यक्तित्व स्पष्टतया परिलक्षित होता है. मानव जीवन की मंगलाशा से प्रेरित कवि का व्यक्तित्व मार्क्स के एकांगी दृष्टिकोण पर चिर आस्था नहीं रख सका. योगिराज अरविंद के जीवनदर्शन ने पंत को स्थूल भौतिकवाद से जल्दी ही अलग किया. फलतः अध्यात्मवादी [1945/1946] बनकर पंत अरविंद के सिद्धांतों को अपने ढंग से वाणी देते रहे. "स्वर्णकिरण", "स्वर्णधूलि", "उत्तरा", "युगपथ", "सौवर्ण", "चिदम्बरा", "लोकायतन", "अमिता", "वाणी", "कला और बूढ़ा चांद", "पौ फटने के पहले", "शशि की तरी", "आस्था", "समाधिता" तथा "सत्यकाम" आदि पंत जी की रचनाएं हैं.

BRAOU

11) प्रस्तुत छंद में प्रसाद जी प्रिय के कपोलों पर फैलने वाले तरल मंद हास्य तथा साथ ही भौहों की वक्रता और उसके प्रभाव का वर्णन करते हुए कहते हैं कि प्रिय की सरलता और कुटिलता दोनों ही प्रभावित करने वाली हैं. यद्यपि प्रिय के कपोलों पर फैली हुई मंद-मंद मुस्कराहट उसकी सरलता और भोलेपन को प्रकट करती है लेकिन उसमें कुटिलता भी है, उसे वहीं जान सकता है जिसने उसकी भौहों के बंकिम रूप को देखा हो.

विशेष

कवि ने प्रेमिका के सरल एवं कुटिल दोनों परस्पर विरोधी भावों को बडी सूक्ष्मता के साथ प्रस्तुत किया है. जहां मंद-मंद सरल मुस्कराहट चरित्र की सरलता व भोलेपन को प्रकट करती है वहीं भौंवों का तिरछापन हृदय की कुटिलता एवं कठोरता को भी प्रकट करता है.

12) कवि अपने प्रियतम पर आक्षेप लगाते हुए कहता है कि क्या उसमें केवल बाहरी सौंदर्य ही था ? क्या उसमें किसी की वेदना और पीड़ा के प्रति संवेदनशीलता अनुभव करने वाला हृदय नहीं था ? प्रियतमा से अपने प्रेम का प्रत्युत्तर न पाने से निराश होकर कवि यह सोचता है कि कवि जिसे मानवीय संवेदना से युक्त कोमल हृदय समझ रहा था. वह शायद भीतर से जड़ हो चुका था क्योंकि कवि की वेदना और पीड़ा को देखकर भी उसका निष्ठुर बने रहना जड़ता का ही तो परिचायक है.

विशेष

बाहरी सौंदर्य से अधिक हृदय का सौंदर्य अर्थात् संवेदनशीलता अधिक महत्वपूर्ण हैं, अन्यथा जड़ वस्तु और चेतनशील प्राणी में कोई अंतर नहीं. कवि की प्रेयसी की निष्ठुरता के माध्यम से यह भाव प्रकट किया गया है. विरोधाभास का सुंदर प्रयोग यहां द्रष्टव्य है.

13) प्रिय की निर्ममता और स्वार्थपरता को प्रकट करते हुए कवि कहता है कि प्रिय तुम निष्ठुर बन कर मुझे छोड़कर चले गए. तुम्हें देखने के लिए हृदय में अभिलाषाओं की लहरें उठ रही हैं लेकिन तुमने मेरे हृदय रूपी मानसरोवर के संपूर्ण प्रेम रस को पीकर उसे उसकी लहरों और भंवरों से भी उसे खाली कर दिया है. अब मेरे इस विरह से व्याकुल हृदय में प्रेम की तरंगें और भवरें नहीं उठ पाती हैं. तुमने जिस जीवन प्याली से प्रेम रूपी मदिरा का पान किया था उसका संपूर्ण पान करके उसे ठोकर मारकर तुमने दूर फेंक दिया है.

विशेष

यहां कवि ने प्रिय की स्वार्थपरता और निर्ममता का अत्यंत ही सजीव चित्र अंकित किया है. 'लहरों में प्यास भरी है' पंक्ति में विरोधाभास और मानवीकरण अलंकार हैं.

14) प्रिय की निष्ठुरता का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि मेरे प्रिय का स्वभाव अत्यंत कोमल और ममता से भरा हुआ था लेकिन आज वह निष्ठुर और कठोर हो गया है. हमारा हृदय वज्र (हीरे) के समान कठोर था अर्थात् वह कठोर से कठोर आघात सहन करने में सक्षम था किंतु कितने आश्चर्य की बात है कि शिरीष पुष्प के समान कोमल प्रियतम ने हीरे के सदृश्य कठोर हृदय को कुचल दिया. प्रिय का जो प्रेम हिम (बर्फ़) के समान शीतल और ठंडक प्रदान करने वाला था, वहीं अब वियोग की ज्वाला बन हृदय को जला रहा है अर्थात् मिलन के समय जो प्रेम हिम के समान शीतलता प्रदान करता था वह विरह में अंगारे बरसा रहा है.

BRAOU

लहरों के घूंघट से झुक-झुक दशमी का शशि निज तिर्यक-मुख
दिखलाता, मुग्ध-सा रुक-रुक ॥ 3 ॥

अब पहुंची चपला बीच-धार,
छिप गया चांदनी का कगार.
दो बांहों-से दूरस्थ तीर धारा का कृश कोमल शरीर
आलिंगन करने को अधीर,
अति दूर क्षितिज पर विटप माल लगती भू-रेखा सी अराल,
अपलक नभ नील नयन विशाल,
मां के उर पर शिशु-सा, समीप, सोया धारा में एक द्वीप,
उर्मिला प्रवाह को कर प्रतीप,
वह कौन विहंग ? क्या विकल लोक उड़ता, हरने निज विरह शोक ?
छाया की कोकी को विलोक ॥ 4 ॥

पतवार घुमा, अब प्रतनु भार
नौका घूमी विपरीत धार.
डाडों के चल करतल प्रसार, भर-भर मुक्ताफल फेन-स्फार,
बिखराती जल में तार-हार.
चांदी के सांपों सी रलमल नाचती रश्मियां जल में चल
रेखाओं सी खिंच तरल-सरल.
लहरों की लतिका में खिल, सौ-सौ शशि, सौ-सौ उडु झिलमिल
फैले फूलें जल में फेनिल.
अभ उथला सरिता का प्रवाह, लग्गी से ले ले सहज थाह
हम बड़े घाट को सहोत्साह ॥ 5 ॥

ज्यों-ज्यों लगती है नाव पार
उर में आलोकित शत विचार
इस धारा सा ही जग का क्रम, शाश्वत इस जीवन का उद्गम,
शाश्वत है गति, शाश्वत संगम.
शाश्वत नभ का नीला विकास,
शाश्वत शशि का रजत ह्रास
शाश्वत लघु लहरों का विलास.
हे जग जीवन के कर्णधार. चिर जन्म-मरण के आर-पार
शाश्वत जीवन-नौका-विहार
मैं भूल गया अस्तित्व ज्ञान, जीवन का यह शाश्वत प्रमाण
करता मुझको अमरत्व प्रदान ॥ 6 ॥

15.4 सारांश

1. "नौका विहार" पंत जी की वर्णनात्मक कविता है, जो प्राकृतिक पृष्ठभूमि के साथ आरंभ होती है. चांदनी रात थी. संपूर्ण वातावरण शांत, स्निग्ध एवं शुभ्र चांदनी से प्रोज्वल था. आकाश मेघरहित

BRAOU

था और संपूर्ण पृथ्वी में नीरवता छायी हुई थी. ग्रीष्म के कारण गंगा की धारा पतली थी. दोनों तट बालुका पूर्ण थे और वहां चांदनी छायी हुई थी. कवि की कल्पना है कि दूधिया चांदनी से स्निग्ध एवं धवल सैकत रूपी शय्या पर ग्रीष्म के कारण कृशकाया गंगा थकी हुई, खिन्न, क्लांत एवं निश्चेष्ट लेटी हुई है. यह गंगा एक तापस बाला है. वह निर्मलता एवं पावनता की प्रतिमूर्ति है जोकि अपने शशिमुख को करतल में धरे चिंताग्रस्त पड़ी हुई है.

"नौका विहार" तथा "चांदनी" दोनों कविताओं में क्रमश: गंगा और चांदनी को अपने मुख को करतल में धरे बैठा चित्रित किया गया है, जो संभवत: पंत जी पर कालिदास की शकुंतला का प्रभाव है. लहरें ही उसके उर पर बिखरे पड़े कोमल कुंतल हैं. तारों भरा नीलाकाश गंगा के लहरीले जल में प्रतिबिंबित हो रहा है. वही उसके गोरे अंगों पर सिहराता चंचल नीलांचल-सा दिखाई देता है. चंद्रमा की धवल ज्योति से आलोकित वर्तुल मृदुल लहर गंगा की साड़ी की सिकुड़न-सी दिखाई देती है.

अलंकार : समासोक्ति, उपमा और श्लेष.

2. चांदनी रात का पहला प्रहर था. हम नाव लेकर तुरंत निकल पड़े. वहां मोती के समान द्युतिमय चांदनी छिटकी हुई थी. नाव पर पालें चढ़ी और उसका लंगर उठा. नाव गंगा की जल धारा में गतिशील हुई. मृदु मंद-मंद मंथर-मंथर गति से पालों के पंख पसार कर तैरती छोटी नाव एक सुंदर हंसिनी-सी दिखाई देने लगी. निश्चल जल के स्वच्छ दर्पण पर चांदनी से ज्योतित कगारे प्रतिबिंबित हो रहे थे, जिस कारण वे कगारे दुहरे ऊंचे लग रहे थे. नदी के तट पर बसा कालाकंकर का राजभवन भी जल में प्रतिबिंबित हो रहा था. उसे देखकर लगता था कि कालाकंकर राजभवन अपने विगत वैभव के स्वप्नों को पलकों में समाये गंगा के जल में निश्चिंत एवं सानंद सो रहा है.

अलंकार : परंपरित रूपक, निरंग रूपक, ध्वन्यर्थ व्यंजना, उपमा, मानवीकरण और वृत्यानुप्रास.

3. नौका की गति से गंगा का जल तरंगित हो उठा. फलत: जल में प्रतिबिंबित आकाश भी एक छोर से दूसरे छोर तक चंचल होने लगा. आकाश के प्रोज्वल तारे जल में प्रतिबिंबित हैं. लहरों के उठने से चंचल हो वे मशालों की प्रतीति कराते हैं. उस पर कवि की कल्पना है कि तारकदल जल के अंतस्तल को ज्योतित कर विस्फारित नयनों से अपनी खोयी हुई किसी चीज़ को खोज निकालने में व्यस्त है. तभी लहरें उठती हैं और तारों के दीपक लहरों में कभी प्रकट होते हैं तो कभी अदृश्य हो जाते हैं. इन दीपकों को बुझाने से बचाने के लिए लहरें पल-पल उन्हें अपने अंचल की ओट में छिपा लेती हैं. दैनिक जीवन में भी हम देखते हैं कि जब कभी कोई चीज़ रात के अंधेरे में दिखाई नहीं देती तब घर की स्त्रियां दीप जलाकर उसे ढूंढ़ निकालने का प्रयत्न करती हैं. कभी-कभी हवा के झोंकों से जब दीप के बुझ जाने की आशंका होती है तब उसे अंचल की ओट किये बुझने से बचा लेती हैं. नौका विहार करते समय कवि की दृष्टि सामने आकाश में जगमगाते शुक्र नक्षत्र पर पड़ती है. अब नीचे जल में देखा तो उसकी छाया जल में बिंबित थी. वही जल की तरंगों में पड़कर सुंदर परी-सी तैर रही हैं. तैरते समय उसके मुख से पहले केशों में ओझल करती अलकें हैं. आकाश में उदित दशमी का शशि भी जल में प्रतिबिंबित है. लहरें उसके घूंघट हैं, जिनसे झुक-झुक और मुग्धा नायिका के समान रुक-रुक कर वह अपना तिर्यक मुख दिखलाता है.

अलंकार : मानवीकरण, समासोक्ति, उपमा, रूपाकतिशयोक्ति, रूपक वीप्सा.

4. चंचल गति से आगे बढ़ती नौका अब नदी की मंझदार में पहुंची. अब चांदनी से धवल नदी के कगारे आंखों से ओझल हो गए. कवि बहुत दूर तक अपनी दृष्टि फैलाता है तो उसे दूर पर धारा की

कालाकंकर	-	एक छोटी रियासत का नाम जहां उन दिनों कवि पंत जी रह रहे थे.
प्रमन	-	हर्षित
पलकों में वैभव	-	अपनी गरिमा महिमा का
स्वप्न सघन	-	स्वप्न देखता हुआ
जल-हिलोर	-	जल की तरंगे
ओर-छोर	-	दिशाएं, सिरे
विस्फारित नयन	-	पूर्णतया खुली आंखें [आंखें फाड़-फाड़ कर]
चल तारक दल	-	जगमगाते नक्षत्र समूह
ज्योतित कर	-	प्रकाशित कर
अंतस्तल	-	नीचे का भाग
अविरल	-	लगातार
झलमल	-	चमक-दमक
पैरना	-	तैरना
परी-सी	-	अप्सरा के समान
जल में कल	-	स्वच्छ स्फटिक [सुन्दर] जल में
रुपहरे कच	-	शुभ्र [श्वेत] बाल, यहां चांदनी से शुभ्र बनी लहरें
तिर्यक	-	तिरछा [डेढ़ा]
मुग्धा	-	नायिका का एक भेद. स्वकीया या परकीया वह नायिका जो यौवन में पदार्पण कर चुकी हो, लज्जाशील हो तथा रति-भावना से परिचित हो रही हो.
चपला	-	लहरों से चंचल नाव
कगार	-	नदी का ऊंचा तट
अधीर	-	चंचल या व्याकुल
विटप माल	-	वृक्षों की पंक्ति
अराल	-	टेढ़ी
उर्मिला प्रवाह	-	लहरों से युक्त नदी की धारा
प्रतीप	-	टेढ़ा [वक्र]
क्या विकल कोक उड़ता हरने निज विरह शोक-	-	कवि-समय के अनुसार संध्या होते ही कोक और कोकी नदी के अलग-अलग तटों पर रह जाते हैं और रात भर उनका मिलन नहीं होता और फलत: विरह दु:ख सहते रहते हैं.दोनों रात भर समागम के लिए विकल रहते हैं
प्रतनु भार	-	नौका का वजन हल्का हो गया
करतल	-	हथेली
मुक्ताफल	-	मोती
फेन स्फार	-	प्रचुर फेन
तार हार	-	तारों की माला
उथला	-	कम गहरा
सहोत्साह	-	उत्साह के साथ
उर में अलोकित		

BRAOU

शत विचार	-	मन में कई विचार उत्पन्न होने लगे
जीवन	-	जल, ज़िन्दगी
संगम	-	मिलन
शशि का रजत ह्रास	-	शुभ्र चांदनी
कर्णधार	-	नाविक [यहां ईश्वर की ओर संकेत]
शाश्वत	-	चिरन्तन

15.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

15.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. "नौका विहार" कविता में सुमित्रानंदन पंत ने प्रकृति का मानवीकरण बहुत ही सुंदर ढंग से किया है. इस कथन की समीक्षा कीजिए.
2. "नौका विहार" कविता में प्रकृति चित्रण पर प्रकाश डालिए.

15.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित पाठ के किन्हीं चार पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए.
2. "नौका विहार" कविता में कवि सुमित्रानंदन पंत की कल्पना शक्ति को स्पष्ट कीजिए.
3. सुमित्रानंदन पंत ने "नौका विहार" कविता द्वारा क्या संदेश दिया है ? स्पष्ट कीजिए.

15.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

15.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : "नौका विहार" में कवि सुमित्रानंदन पंत ने प्रकृति का मानवीकरण बहुत ही सुंदर ढंग से किया है. स्पष्ट कीजिए.

उत्तर : जड़ प्रकृति में मानवीय भावनाओं के आरोपण की साधारण प्रवृत्ति को मानवीकरण कहा जाता है. सब वस्तु जीवित हैं. सब वस्तु मन से युक्त हैं तथा सब वस्तुएं राग-द्वेष आदि मानव-गुणों से संपन्न हैं, इसी प्रवृत्ति के रूपांतर हैं. अंग्रेज़ी में इसी को "पेरिसोनिफिकेशन" की संज्ञा दी जाती है. साधारण व्यक्ति के लिए यह बाह्य प्रकृति जड़ होती है, किंतु सर्वचेतनावादी कवि या कलाकार की दृष्टि में यह संपूर्ण है और सब में एक ही चेतना का विलास है. हिंदी के छायावादी कवियों ने प्रकृति के प्रति इस नूतन दृष्टिकोण को अपनाया. स्थूल प्रकृति के अनेक व्यापारों को उन्होंने अंतर्जगत की प्रतिकृति माना है.

कहना न होगा कि हिंदी साहित्य में पंत मानवीकरण के लिए पर्याप्त प्रसिद्ध हैं. उन्होंने प्रकृति की जड़ वस्तुओं में विविध मानवीय भावनाओं एवं चेष्टओं का आरोप करके अपने काव्य में नया सौन्दर्य भर दिया. उनकी प्रसिद्ध कविता "नौका विहार" मानवीकरण की इस प्रवृत्ति का श्रेष्ठ उदाहरण है.

"नौका विहार", में सैकत-शय्या पर दुग्ध धवल तन्वंगी गंगा, जो ग्रीष्म विरल हो लेटी है, तापस बाला के रूप में चित्रित है. उसका मृदु-करतल शशि मुख से दीपित है. लहरें जो उठ रही हैं, वे ही कुंतल हैं.

BRAOU

उसका गोरा शरीर है. यहाँ कवि चंचल नीलांचल, तिर्यक दृष्टि साड़ी की सिकुड़न आदि का भी दर्शन करवाया है -

"गोरे अंगों पर सिहर-सिहर, लहराता तार-तरल सुन्दर
चंचल अंचल-सा नीलांबर
साड़ी की सिकुड़न-सी जिस पर शशि की रेशमी विभा से भर
सिमटी है वर्तुल, मृदुल लहर."

विस्फारित नयनों से जल के अंतस्तल को ज्योतित कर कुछ खोज रहे तारकदल, आंचल की ओट किये लघु दीपों को बुझने से बचाती फिरती लहरें, लहरों के घूंघट से झुक-झुक कर अपना तिर्यक मुख दिखाता दशमी का शशि, जलधारा को गलबांही देने के लिए विकल दूरस्त तीर, मां के उर पर शिशु-सा धारा में सोया द्वीप आदि पंत जी की मानवीकरण की क्षमता के सुंदर उदाहरण हैं. कालाकंकर के राजभवन की नींद में वैभव-स्वप्न देखते पुरुष के रूप में कल्पना अत्यंत कमनीय है -

"कालाकंकर का राजभवन सोया जल में निश्चिंत, प्रमन
पलकों पर वैभव-स्वप्न सघन.
फेनों के मुक्ताफल को करतल में भरकर घूमती चपला नौका, रलमल
नाचती रश्मियां, अपलक नभ सब मानवीय चेष्टाओं से युक्त हैं."

सारांश यह है कि कविवर पंत जी कभी प्रकृति का नारी रूप में चित्रण करके उसके रूप, गुण, धुति, गति, मुक्ता, म्लानता को दिखाते हैं, कभी उसका लज्जा-वेष्टित सौन्दर्य-दर्शन करते हैं. कहीं वे प्राकृतिक वस्तुओं में एक दूसरे के प्रति आकर्षण और उस आकर्षण से प्रेरित कामचेष्टाएं दिखाते हैं, तो कभी उनके वात्सल्य की अभिव्यक्ति करते हैं. कभी प्रकृति का मानवीकरण कर उसको सांस्कृतिक सुषमा से मण्डित करते हैं. इस प्रकार "नौका विहार" कविता में मानवीकरण के एक से एक सुंदर चित्र मिलते हैं. इन चित्रों से कविता में चारुता एवं भव्यता आ गई है. अत: "नौका विहार" कविता मानवीकरण की दृष्टि से पंत जी की प्रतिनिधि रचना है और यह कविता उन्हें मानवीकरण का कवि सिद्ध करती है.

BRAOU

15.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न : नीचे दी गई पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए.

"हे जग जीवन के कर्णधार चिर जन्म-मरण के आर-पार
शाश्वत जीवन-नौका-विहार.
मैं भूल गया अस्तित्व ज्ञान, जीवन का यह शाश्वत प्रमाण,
करता मुझको अमरत्व-दान."

उत्तर : सन्दर्भ : कविवर "सुमित्रानंदन पंत" की "नौका विहार" कविता छायावादी काव्यधारा की समस्त विशेषताओं से परिपूर्ण है. प्रस्तुत पंक्तियां "नौका विहार" कविता से उद्धृत हैं. कवि एक चांदनी रात में गंगा में नौका विहार करते रहे. नौका विहार की समाप्ति पर नाव के किनारे की ओर बढ़ते समय कवि के मन में कई दार्शनिक विचार अंकुरित होने लगे. उन्हें जीवन की चिरंतनता का आभास मिला, जिसकी यहां अभिव्यक्ति हुई है.

व्याख्या : जीवन की अनंतता का आभास मिलते ही कवि जीवन के कर्णधार भगवान का स्मरण करते हुए कहते हैं - हे जीवन के संचालक भगवान ! नौका विहार से मुझे जीवन की अमरता का संदेश प्राप्त हुआ है. नौका नदी के दो कगारों के बीच गतिशील रहती है. वह आर-पार घूमती रहती है. यही बात जीवन के संबंध में भी सत्य है. भगवान जीवन रूपी नौका के कर्णधार हैं. यह जीवन नौका भी जन्म और मृत्यु नामक दो कगारों के बीच सदा घूमती रहती है. इसकी गति कभी रुकती नहीं, यह सदा गतिशील है. मैं जीवन के अस्तित्व का ज्ञान खो बैठा था, आज नौका विहार ने उस विस्तृत ज्ञान का स्मरण दिलाया है. नौका विहार से मुझे जीवन की चिरंतनता, शाश्वतता एवं अमरता का प्रमाण प्राप्त हुआ. आज मुझे विदित हुआ कि मेरा जीवन अमर है.

टिप्पणी : कवि पंत जी पर भारतीय अद्वैतदर्शन के आत्मा की अमरता का प्रभाव यहां स्पष्ट परिलक्षित होता है. शंकराचार्य ने आत्मा की अमरता का प्रतिपादन करते हुए पुनर्जन्मवाद को प्रश्रय दिया है. उन्होंने लिखा है - "पुनरपि जननं, पुनरपि मरणं, पुनरपि जननी जठरे शयनं."

15.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. सुमित्रानंदन पंत - डॉ. नगेंद्र
2. छायावाद और आत्माभिव्यक्ति [पंत का भाग] - डॉ. शशि मुदिराज
3. आधुनिक हिंदी काव्य में प्रेम और सौन्दर्य भावना - डॉ. रामेश्वरलाल "तरुण"

******

BRAOU

इकाई 16 : महादेवी वर्मा की कविता : मधुर मधुर मेरे दीपक जल व प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन

रूपरेखा

16.1 पाठ का उद्देश्य
16.2 पाठ एवं कवयित्री परिचय
16.3 मूल पाठ
16.4 सारांश
16.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
16.6 शब्दार्थ
16.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
16.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
16.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
16.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
16.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
16.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
16.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

16.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में छायावाद युग की प्रमुख कवयित्री महादेवी वर्मा का सुप्रसिद्ध गीत "मधुर मधुर मेरे दीपक जल" एवं "प्रिय ! सान्ध्य गगन मेरा जीवन ! ....." को प्रस्तुत किया जा रहा है. इस पाठ के अध्ययन से आप -

* जीवन के प्रति महादेवी के दृष्टिकोण से परिचित होंगे.
* जीवन को दीपक के रूप में चित्रांकित करने वाले बिम्ब की कल्पना से परिचित होंगे.
* महादेवी के काव्य की शिल्पगत विशेषताओं से परिचित होंगे.
* महादेवी के प्रकृति-चित्रण की विशेषता से परिचय प्राप्त करेंगे.
* साधनायुक्त जीवन की सार्थकता पर प्रकाश डाल पायेंगे.

BRAOU

16.2 पाठ एवं कवयित्री परिचय

पाठ परिचय

प्रस्तुत पाठ में महादेवी जी के गीत "मधुर-मधुर मेरे दीपक जल" शीर्षक महादेवी द्वारा दिया गया शीर्षक नहीं है. अध्ययन की सुविधा के लिए कविता की पहली पंक्तियों के आधार पर इसका शीर्षक चुना गया है. इस कविता में "दीप" बिम्ब के माध्यम से साधनायुक्त जीवन की सार्थकता पर प्रकाश डाला गया है. स्वयं जलकर प्रकाश-दान दीप करता है, उसी प्रकार स्वयं दुख झेलकर भी मनुष्य जीवन के सद्भावना रूपी आलोक से संसार को भर देना चाहिए.

कवयित्री-परिचय

छायावादी-युग की प्रमुख कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के फरूखाबाद जिले में सन् 1907 में हुआ. एक ओर साधना-पूत, आस्तिक और भावुक माता और दूसरी ओर सब प्रकार की साम्प्रदायिकता से दूर कर्मनिष्ठ दार्शनिक पिता के संस्कारों से महादेवी के व्यक्तित्व को एक विशिष्ट रूप मिला है. उनका विवाह बचपन में ही संपन्न हो गया था. उनका यह विवाह सफल नहीं रहा. पिता ने शिक्षा के प्रति उनकी रुचि पर ध्यान देते हुए अध्ययन का मार्ग प्रशस्त किया. महादेवी ने संस्कृत एवं दर्शन-विषय से इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. किया. बाद में अध्यापन का कार्य स्वीकार किया. इनके प्रयत्नों के फलस्वरूप 'प्रयाग महिला विद्यापीठ' की स्थापना हुई और अनेक वर्ष वहां उन्होंने प्राचार्या का पदभार संभाला. नारी-शिक्षा के क्षेत्र में यह उनका अपूर्व योगदान रहा.

शैशव काल से ही कविता के प्रति महादेवी का विशेष आकर्षण रहा. मां की प्रेरणा से कविता लिखना उन्होंने प्रारंभ किया. 'नीहार' उनका पहला काव्य-संग्रह है. उसके बाद क्रमश: 'रश्मि', 'नीरजा', 'सान्ध्य-गीत' एवं 'दीपशिखा' काव्य संकलनों का प्रकाशन हुआ. नीहार, रश्मि, नीरजा एवं सान्ध्य गीत काव्यों में संकलित कविताओं का 'यामा' के नाम से पुन: प्रकाशन हुआ. इनकी प्रमुख गद्य रचनाएं हैं - अतीत के चलचित्र, पथ के साथी, स्मृति की रेखाएं, श्रृंखला की कड़ियां, क्षणदा, साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध आदि. निबंध एवं रेखाचित्र के क्षेत्र में आपका अपना एक विशिष्ट स्थान है. सप्तपर्णा में महादेवी की काव्यानुवाद की क्षमता का परिचय मिलता है. इसमें वैदिक-ऋचाओं, संस्कृत काव्य के अंशों का अनुवाद उन्होंने प्रस्तुत किया है. महादेवी ने 'चांद' पत्रिका का संपादन भी किया.

भारत सरकार ने महादेवी की साहित्यिक सेवाओं के लिए 'पद्मभूषण' की उपाधि से उन्हें विभूषित किया. 1982 में 'यामा' पर ज्ञानपीठ का साहित्यिक पुरस्कार उन्हें प्राप्त हुआ. उत्तर प्रदेश से भारत-भारती पुरस्कार भी उन्हें मिला.

छायावादी कवयित्री महादेवी में रहस्यवादी प्रकृति अधिक मिलती है. परमात्मा उनका प्रिय है. विरहिणी आत्मा की प्रणय-भावना, विरह वेदना एवं तीव्र प्रतीक्ष के अनेक मधुर गीत साक्षी हैं. प्रस्तुत पाठ में जीवन दीप को साधना पथ पर निरंतर प्रज्ज्वलित होने की आकांक्षा कवयित्री ने व्यक्त की है क्योंकि उसी पथ से गुजरकर ही परम-प्रिय से मिलने की संभावना है.

BRAOU

16.3 मूलपाठ

मधुर मधुर मेरे दीपक जल

मधुर मधुर मेरे दीपक जल !

युग युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल,
प्रियतम का पथ आलोकित कर !

सौरभ फैला विपुल धूप बन,
मृदुल मोम सा घुल रे मृदु तन,
दे प्रकाश का सिंधु अपरिमित,
तेरे जीवन का अणु गल गल !
पुलक पुलक मेरे दीपक जल !

सारे शीतल कोमल नूतन,
मांग रहे तुझसे ज्वाला-कण
विश्व-शलभ सिर धुन कहता 'मैं
हाय न जल पाया तुझ में मिल' !
सिहर सिहर मेरे दीपक जल !

जलते नभ में देख असंख्यक,
स्नेहहीन नित कितने दीपक,
जलमय सागर का उर जलता,
विद्युत ले घिरता है बादल !
विहंस विहंस मेरे दीपक जल !

द्रुम के अंग हरित कोमलतम,
ज्वाला को करते हृदयंगम,
वसुधा के जड़ अंतर में भी,
बंदी है तापों की हलचल !
बिखर बिखर मेरे दीपक जल !

प्रिय ! सान्ध्य गगन मेरा जीवन !

प्रिय ! सान्ध्य गगन
मेरा जीवन !

यह क्षितिज बना धुंधला विराग,
नव अरुण अरुण मेरा सुहाग,
छाया सी काया वीतराग,
सुधिभीने स्वप्न रंगीले घन !

साधों का आज सुनहलापन,
घिरता विषाद का तिमिर सघन,
सन्ध्या का नभ से मूक मिलन -
यह अश्रुमती हंसती चितवन !

लाता भर श्वासों का समीर,
जग से स्मृतियों का गंध धीर,
सुरभित है जीवन-मृत्यु-तीर,
रोमों में पुलकित कैरव-वन !

अब आदि अंत दोनों मिलते,
रजनी-दिन-परिणय से खिलते,
आंसू मिस हिम के कण ढुलते,
ध्रुव आज बना स्मृति का चल क्षण !

इच्छाओं के सोने से शर,
किरणों से द्रुत झीने सुंदर,

BRAOU

सूने असीम नभ में चुमकर -
बन बन आते नक्षत्र-सुमन !

घर आज चले सुख-दुःख-विहग !
तम पोंछ रहा मेरा अग जग,
छिप आज चला वह चित्रित मग,
उतरो अब पलकों में पाहुन !

16.4 सारांश

मधुर मधुर मेरे दीपक जल

मधुर मधुर.....आलोकित कर ।

इन पंक्तियों में महादेवी जी अपने जीवन को दीपक के रूप में कल्पित करती है. उसे संबोधित करते हुए कहती है - मेरे जीवन दीप ! तुम सदा प्रसन्नतापूर्वक जलते रहो. प्रत्येक क्षण, प्रत्येक पल, प्रत्येक दिन, युगों-युगों तक जलते रहो और अपने प्रियतम का पथ प्रकाशयुक्त करो. (यहां महादेवी अपने जीवन-दीप को निरंतर इसलिए प्रज्ज्वलित रखना चाहती है कि प्रियतम का मार्ग निरंतर आलोक से भर जाए. यहीं प्रेम की तीव्र आत्म-ज्ञान की भावना झलकती है).

विशेष

जीवन-दीप - रूपक अलंकार.
मधुर-मधुर पुनरुक्ति के कारण काव्य-सौंदर्य

सौरभ फैला.....दीपक जल ।

अपने जीवन दीप को संबोधित करते हुए प्रस्तुत पंक्तियों में महादेवी कहती है कि - हे मेरे मन रूपी दीपक ! तू धूप बत्ती के समान अपना पूरा सुगंधित धूप फैला और कोमल मोम के समान घुल जा. तुम अपने जीवन को इस प्रकार गला दे कि तेरे आंसू प्रकाश का अपरिसीम सागर बन जायें और सारे सारे संसार के अंधकार को मिटा दे. तू प्रसन्न होकर जलता जा.

विशेष

मृदुल मोम-सा - उपमा अलंकार.

सारे शीतल कोमल नूतन.....दीपक जल ।

उपरोक्त पंक्तियों में महादेवी जी कहती हैं कि - हे मेरे जीवन-दीप ! संसार के सारे नूतन, कोमल एवं शीतल पदार्थ तुझ से ज्वाला-कण (उष्णता) की अपेक्षा कर रहे हैं. उन्हें तेरे द्वारा ज्वाला पाकर ही प्रकाश पाने की आवश्यकता है. संसार रूपी शलभ भी सिर धुन-धुन कर कह रहा है - "मैं अभागा हूं जो तेरे साथ मिलकर प्रकाश-दान देते हुए जल नहीं सका." (क्योंकि शलभ जलता है तो क्षण भर में राख हो जाता है). हे मेरे जीवन-दीप ! तू अपने सौभाग्य पर पुलकित होकर जलता रह !

विशेष

अपने जीवन को दूसरों के काम आने की सार्थकता के प्रति कवयित्री का संकेत है. विश्व-शलभ - रूपक.

BRAOU

जलते नभ में.....दीपक जल ।

आकाश में अगणित तारे रूपी दीपकों की ओर संकेत करते हुए महादेवी कहती है कि - मेरे जीवन-दीप तू देख ! आकाश में अगणित तारे नित्यप्रति जलते रहते हैं, जो स्नेह हीन हैं (जिनमें तेल नहीं है, दूसरा अर्थ है जिनको कभी प्यार नहीं मिला) जल से भरा हुआ सागर का अंतर भी जलता रहता है (अपने अंदर बिजली को समेट कर बादल घिर आते हैं और सारे संसार को अपने स्नेह से आर्द्र कर देते हैं.) प्रकृति में भी आत्मदान की ही प्रकृति है. तुम्हारे समान और भी हैं. इसलिए तू प्रसन्न चित्त जलता रह.

द्रुम के अंग.....दीपक जल ।

मेरे जीवन-दीप ! वृक्षों के हरे और नितांत कोमल अंगों में भी अग्नि अंतर्निहित है. पृथ्वी के चेतनाहीन (जड़) अंतर में भी असंख्य तापों की हलचल छिपी है. मेरे जीवन दीप ! तू जलकर प्रकाश को निखारता जा.

विशेष

वृक्षों में अग्नि है, पृथ्वी में ताप है. तुम अपने अंदर की आग को प्रकाश में निखराते चल. इसको अंदर ही समेटने से लाभ नहीं. बिखराने से दूसरों का पथ प्रशस्त होता है.

मेरी निश्वासों.....दीपक जल ।

इन पंक्तियों में कवयित्री कहती हैं कि - मेरे सुंदर जीवन दीपक ! प्रिय से विरह के कारण मेरे हृदय से बड़े दीर्घ निश्वास निकल रहे हैं. तू यह भय न करना कि तू मेरी आहों की वायु से बुझ जायेगा. मैं अपनी कोमल व चंचल पलकों से तुझे आंचल की ओट में छिपा लेती हूं. तू अपनी स्वाभाविक गति से जलता रह.

विशेष

व्यक्तिगत पीड़ा को साधना के पथ का अवरोध न बनने देने की कवयित्री की आकांक्षा व्यक्त होती है.

सीमा ही लघुता का.....दीपक जल ।

प्रस्तुत पंक्तियों में कवयित्री कहती है कि मेरे जीवन-दीप ! जीवन का अस्तित्व ही लघु है, छोटा है, यही उसकी सीमा है. सीमा और असीम का यह खेल अनादि है, इसमें घड़ियां गिनने की आवश्यकता नहीं है, तू जलता रह. मैं अपनी आंखें रूपी कभी न समाप्त होने वाले कोषों से (खजानों से) तुझ में निरंतर अपने आंसुओं का जल भरती रहूंगी. तू सदा जलता रह और सजल बना रह (करुणायुक्त जलता रह).

विशेष

यहां जीवन-दीप में तेल के स्थान पर स्नेह-जल भरना कहकर महादेवी ने करुण भावना के प्रति संकेत किया है.

तम असीम.....दीपक जल ।

इन पंक्तियों में महादेवी जी कहते हैं कि - मेरे जीवन दीप ! अंधकार की असीमता से तू निराश न हो. यदि अंधकार सीमाहीन है तो तुझमें भी सदा रहने वाला शाश्वत प्रकाश है. अंधकार और प्रकाश का यह नित्य नूतन खेल है. तू निरंतर इसे खेलता रह. तम के अणु-अणु में जिस प्रकार के विद्युत के कण

BRAOU

रहते हैं उसी प्रकार अपने प्रकाश की किरणों से अंधकार में न मिटने वाले चित्र अंकित करता चल. हे मेरे सरल दीपक ! तू जलता रह.

विशेष

जीवन-दीप के बहाने छोटे से जीवन के अस्तित्व की सार्थकता का जयघोष किया गया है.

तू जल-जल.....दीपक जल ।

प्रस्तुत पंक्तियों द्वारा कवयित्री कहती है कि - हे मेरे जीवन-दीप ! तू ज्यों-ज्यों जल-जल कर क्षीण होता जायेगा (जीवन साधना में अग्रसर होते हुए चरम सीमा को प्राप्त करता जायेगा) वह छलनामय निर्मोही प्रिय भी उतना ही तेरे समीप आता जाएगा. अंत में तू अपने प्रिय से मिल जायेगा. तब तुम्हारा प्रकाश और अंधकार का, असीम और सीमा का खेल समाप्त हो जायेगा. उस समय तू अपने अस्तित्व को सर्वथा प्रिय में विलीन कर जाना और प्रिय के उज्ज्वल स्मित में धुलकर खिल जाना. तब तक उस मोहक प्रतीक्षा में हे मेरे जीवन दीप ! तू जलता रह. प्रियतम का पथ आलोकित कर.

प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन

प्रिय सान्ध्य गगन.....रंगीले धन ।

प्रियतम को संबोधित कर तथा अपने जीवन की व्याख्या करते हुए महादेवी कहती हैं कि - हे प्रियतम ! मेरा जीवन सांध्यकालीन आकाश के समान है. जिस प्रकार संध्या के समय क्षितिज में धुंधलापन छा जाता है, उसी प्रकार मेरे मन में वैराग्य की भावनाएं छा रही हैं. सन्ध्या के समय आकाश में नई अरुण कांति छा जाती है, उसी प्रकार मेरे जीवन में भी सुहाग की अरुण कांति भरी हुई है. सन्ध्या के समय छाया मलिन पड़ जाती है, उसी प्रकार मेरा शरीर भी सन्ध्याकालीन छाया के समान उदासी से भर रहा है. सन्ध्या के समय जिस प्रकार रंग-बिरंगे बादल छा जाते हैं, उसी प्रकार मेरा जीवन स्मृतियों से सुरभित एवं रंगीन स्वप्नों से भर गया है.

विशेष

1. यहां जीवन को 'सान्ध्य-गगन' कहकर महादेवी ने उसमें अपने वैयक्तिक जीवन की भावपूर्ण झांकी प्रस्तुत की है.
2. यहीं महादेवी ने प्रकृति को स्वयं पर आरोपित किया है.
3. सान्ध्य गगन मेरा जीवन - रूपक.
   छाया-सी काया - उपमा.

सांझों का आज सुनहलापन.....हंसती चितवन !

अपने जीवन को सान्ध्य-गगन कहते हुए महादेवी कहती हैं कि - जिस प्रकार सन्ध्या के समय आकाश में लालिमा रहती है, उसी प्रकार मेरे जीवन में कामनाओं और इच्छाओं की सुनहली आभा है. सन्ध्या समय धीरे-धीरे आकाश में घना अंधकार छाने लगता है, मेरे जीवन में वेदना के रूप में वही अंधकार है. सन्ध्या आकाश दोनों का मूक मिलन है, उसी प्रकार मेरा भी उस असीम प्रिय से मूक मिलन है. मेरी दृष्टि में आंसू भी हैं और मुस्कान भी हैं.

विशेष

सुख और दुख की मिली-जुली अनुभूति का सरस चित्रण प्रस्तुत पंक्तियों में है.

BRAOU

लता भर.....कैरव वन ।

प्रस्तुत पंक्तियों में कवयित्री कहती हैं कि सन्ध्या के समय पवन पुष्पों की सुगंध को इधर-उधर बिखेरते हुए चलता है, उसी प्रकार मेरे जीवन में सांसें वायु के रूप में सुखर स्मृतियों की सुरभि को इधर-उधर बिखेरती हैं. नदी के किनारे सन्ध्या-समय सुरभि से भर जाते हैं और कुमुदिनियों का वन विकसित हो उठता है, उसी प्रकार मेरे जीवन में भी जीवन और मृत्यु रूपी दोनों किनारे स्मृतियों की गंध से सुगंधित हैं और मेरा रोमांच ही कुमुदिनियों का प्रफुल्लित होना है.

विशेष

यहां महादेवी ने प्रकृति के साथ अपनी अनुभूतियों के तादात्म्य की स्थिति का चित्रण किया है.

अब आदि अंत.....चल क्षण ।

इन पंक्तियों में महादेवी जी कहती हैं कि - सन्ध्या समय रात्रि और दिन मिलते हैं (इसको महादेवी आदि और अंत के मिलन के रूप में देखती है). रात्रि और दिन दोनों परस्पर प्रेमावेश में प्रसन्न होकर खिल उठते हैं, ओस की बूंद गिरती हैं और उस समय की स्मृति का अस्थिर क्षण भी अपने में नित्य या शाश्वत बन उठता है. उसी प्रकार मेरे जीवन में आदि-अंत (जीवन के दो छोर) मिलें ऐसी अनुभूति होती है. मन में प्रेम की भावना फूल बनकर खिलती है, ओस की बूंदों की तरह मेरे जीवन मेंभी ऑसुओं का साम्राज्य है और इस प्रकार मेरा यह जीवन अशाश्वत एवं नाशवान् होते हुए भी नित्य एवं शाश्वत बना है. महादेवी के लिए जीवन भी सत्य ही है.

विशेष

इन पंक्तियों में महादेवी का जीवन के प्रति दृष्टिकोण स्पष्ट होता है.

इच्छाओं के.....नक्षत्र सुमन ।

सन्ध्याकालीन स्वर्णिम किरणें हैं और जीवन में सन्ध्या की सुनहली किरणों के समान हमारी इच्छाएं हैं. यहां महादेवी कल्पना करती हैं कि इच्छा रूपी बाण जिनका वेग किरणों से भी अधिक है, वे जब सूने आकाश में चुभ-चुभ कर नक्षत्र रूपी फूलों के समान प्रकट हो रहे हैं. मेरे जीवन में भी कामनाओं के शरों से बिंधे हुए सुख रूपी सुमन हैं.

विशेष

इन पंक्तियों में रूपक का काव्य-सौंदर्य अनुपम है.

घर आज चले.....पलकों में पाहुन ।

सन्ध्या ढल रही है. पक्षी अपने-अपने नीडों की ओर लौट रहे हैं. चारों तरफ अंधकार छाने लगता है, पश्चिम का आकाश, जो अब तक रंगों से भरा था, छिप गया. महादेवी कहती हैं कि उसी प्रकार मेरा जीवन सुख-दुख रूपी पक्षियों से भरा है, जो मेरे जीवन में ही छिप रहे हैं, मन में वेदना रूपी अंधकार छा रहा है. जीवन की इच्छाएं समाप्त होती जा रही हैं. महादेवी अपने प्रियतम से कहती हैं कि हे पाहुन ! अब तुम मेरी पलकों में उतर आओ.

विशेष

सुख-दुख -विहग - अमूर्त का मूर्त चित्रण.

16.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

मधुर मधुर मेरे दीपक जल

सूर्य के आतप (धूप) से तप-तप कर धरती शस्यश्यामला बनती है, आग में जलकर ही धूप बत्ती में सुगंध आती है. अग्नि में तप्त होने पर ही लोहा भी कोमलता को पाता है, घट प्रयोजन रहित होता है, आग में पकाये जाने पर ही जल भरने योग्य हो जाता है. लकडी भस्म होकर ही विभूति बनकर मस्तक पर धारण करने योग्य बनती है, सिर काटने पर ही बाती का प्रकाश बढ़ता है. अपने अंदर बढ़वानल को समेटकर ही समुद्र अपनी मर्यादा में रहता है. दु:ख की ज्वाला में गलने पर ही मनुष्य की कठोरता दूर होती है और वह संवेदनशील एवं पर-दु:खकातर होता है. इसलिए महादेवी अपने जीवन को मधुर-मधुर जलने के लिए कहती है.

आसमान में तारों के रूप में असंख्य स्नेहहीन दीपक जलते रहते हैं. बादल विद्युत से घिरा रहता है, जलमय सागर का उर जलता है तथा धरती के जड़ अंतर में भी तापों की हलचल बंदी रहती है.

दीपक का जलना, शलभ का मर मिटना और बादलों का बरसना आदि दृष्टांतों द्वारा महादेवी ने एक प्रकार से फलासक्ति रहित कर्मयोग का संदेश दिया है. परंतु इसे किसी सिद्धांत के रूप में नहीं, काव्य का सरस विषय बनाकर प्रस्तुत किया है. जीवन-रूपी साधना की परिणति परमात्मा में विलीन होना ही है. इसी को 'दीप' बिम्ब के माध्यम से कवयित्री ने काव्यमय अभिव्यक्ति की है.

प्रिय ! सान्ध्य गगन मेरा जीवन !

ईश्वर प्राप्ति के लिए प्रकृति साधना भूमि है और शरीर साधना यंत्र है - साधक भक्त ने यह जानते हुए भी दोनों को ब्रह्म-प्राप्ति में बाधक माना है. आत्मा और परमात्मा के मिलन में प्रकृति एवं शरीर का व्यवधान बीच में से उठ जाता, तो ही इसे संभव मानते हैं. महादेवी को प्रकृति से आत्मीयता है. प्रकृति उनके लिए इसलिए प्रिय है कि उसी के माध्यम से उन्होंने प्रियतम की झलक पायी है. महादेवी के गीतों में प्रकृति के चित्रों में प्रियतम की छवि ही दिखाई देती है. उनकी दृष्टि में सारी सृष्टि ब्रह्म के स्नेह में आकुल और मगन है. अत: इन्हीं रूपों में उसका हमारे सामने आना स्वाभाविक है इन भावों की व्यंजना और आरोप इनकी कविताओं का सौंदर्य है.

प्रस्तुत कविता की एक ओर विशेषता यह है कि प्रकृति में अपना जीवन आरोपित करते हुए कवयित्री ने प्रकृति से अपनी अभिन्नता स्थापित की है. यहां इस कविता में प्रकृति और महादेवी में तादात्म्य की भावना है.

प्रकृति पर अपनी भावनाओं को आरोपित कर इस प्रकार प्रकृति के साथ एकात्मकता स्थापित करने की अनुभूति की यह विशिष्ट प्रवृत्ति महादेवी में लक्षित होती है. इस प्रकार की कविताओं में "मैं नीर भरी दुख की बदली....." आदि कविताएं विशिष्ट एवं उल्लेखनीय हैं.

16.6 शब्दार्थ

मधुर मधुर मेरे दीपक जल

आलोकित प्रकाशित

BRAOU

विपुल	-	बहुत, अधिक
अपरिमित	-	जिसकी कोई सीमा नहीं, बहुत मात्रा में
द्रुतता	-	शीघ्रता से
नित	-	नित्य, हमेशा
अंतर	-	हृदय
क्षय	-	क्षीण

प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन

क्षितिज	-	वह स्थान जहां धरती और आकाश मिले हुए दिखाई देते हैं, दृष्टिसीमा
वीतराग	-	वासनारहित, इच्छाहीन, शांत
साध	-	कामना, इच्छा, अच्छा, भला, उत्तम
तिमिर	-	अंधकार
चितवन	-	स्त्री किसी की ओर देखने का ढंग, दृष्टि, कटाक्ष
कैरव-वन	-	कुमुद वन, श्वेत कमल वन
द्रुत	-	शीघ्रतायुक्त, तीव्र गतिवाला, तेज
तम	-	अंधकार
मग	-	रास्ता, मार्ग
पाहुन	-	अतिथि, मेहमान

16.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

16.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. 'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल' कविता का सारांश लिखिए.
2. महादेवी के काव्य विकास का संक्षिप्त परिचय देते हुए प्रस्तुत कविता की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए.
3. 'प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन' कविता का सारांश लिखिए.
4. महादेवी के काव्य के भाव-पक्ष पर प्रकाश डालिए.

16.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. "मधुर मधुर मेरे दीपक जल" कविता के किन्हीं चार पंक्तियों के भावगत सौंदर्य पर विचार कीजिए.
2. "मधुर मधुर मेरे दीपक जल" कविता के शिल्पगत सौंदर्य पर संक्षिप्त प्रकाश डालिये.
3. महादेवी के काव्य के कलापक्ष पर प्रकाश डालिए.
4. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
   "इच्छाओं के.....आते नक्षत्र सुमन ।"

BRAOU

16.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

16.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- "मधुर मधुर मेरे दीपक जल" कविता का सारांश लिखिए.

उत्तर- महादेवी इस कविता में अपने जीवन को दीपक के रूप में कल्पना करती है. उसे संबोधित करती हुई कहती है कि हे ! मेरे जीवन दीप ! तू सदा प्रसन्नतापूर्वक जलता रह. प्रत्येक क्षण, प्रत्येक पल, युग-युगों तक जलते हुए अपने प्रियतम के मार्ग को प्रकाशयुक्त कर. तू धूप-बत्ती के समान अपना सुगंधित धूप फैलाते हुए जलता रह. तेरे आंसू प्रकाश का अपरिसीम सागर बन जाए और सारे संसार के अंधकार को मिटा दे. संसार के सारे नूतन, कोमल एवं शीतल पदार्थ तुझ से ज्वालाकण मांग रहे हैं. उनको तुम्हारे प्रकाश की आवश्यकता है. हे मेरे जीवन-दीप ! आकाश में अगणित तारे नित्य जलते रहते हैं, जो स्नेहहीन हैं, जिनको कभी प्यार नहीं मिला. पृथ्वी के चेतनाहीन जड़ अंतर में भी असंख्य तापों की हल-चल छिपी है. तू यह भय नहीं करना, तू मेरी आहों की वायु से बुझ जायेगा. मैं अपनी कोमल और चंचल पलकों रूपी आंचल की ओट में तुम्हें छिपा लूंगी. तू अपनी स्वाभाविक गति से जलता रह. मैं अपनी आंखें रूपी कभी न समाप्त होने वाले कोषों से तुझ में निरंतर अपने आंसुओं का जल भरती रहूंगी. तू सदा जलता रह और सजल बना रह. अंधकार और प्रकाश का यह नित्य नूतन खेल है, तू निरंतर इसे खेलता रह. इस खेल के अंत में तू अपने प्रिय से मिल जायेगा. तब तुम्हारा प्रकाश और अंधकार का, असीम और सीमा का खेल समाप्त हो जायेगा. इस मोहक प्रतीक्षा में तू जलता रह. आने वाले प्रियतम का पथ आलोकित करते रह. जीवन रूपी साधना की परिणति परमात्मा में विलीन होना ही है. इसलिए दीप बिम्ब के माध्यम से लेखिका ने सशक्त काव्यमय अभिव्यक्ति की है.

प्रश्न- "प्रिय सांध्य गगन मेरा जीवन" कविता का सारांश लिखिए.

उत्तर- महादेवी 'प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन' - कविता में प्रकृति पर अपने जीवन को आरोपित करती है. प्रियतम को संबोधित कर अपने जीवन की व्याख्या करते हुए वे कहती हैं कि प्रियतम ! मेरा जीवन सान्ध्यकालीन आकाश के समान है. जिस प्रकार सन्ध्या के समय क्षितिज में धुंधलापन छा जाता है, उसी प्रकार मेरे मन रूपी क्षितिज पर वैराग्य की भावनाएं छा रही हैं. सन्ध्या समय आकाश में नई अरुण कांति छा जाती है, उसी प्रकार मेरा जीवन भी सुहाग की अरुण कांति से भरा हुआ है. सन्ध्या के समय छाया मलिन पड़ जाती है, उसी प्रकार मेरा शरीर भी सन्ध्याकालीन छाया के समान उदासी की साया से भर रहा है. सन्ध्या समय के रंग-बिरंगे बादलों के समान मेरा जीवन भी रंगीन एवं सुरभित स्वप्नों से भर गया है. आकाश की लालिमा के समान मेरे जीवन में कामनाओं और इच्छाओं की सुनहली आभा है. धीरे-धीरे जिस प्रकार आकाश में घना अंधकार छाने लगता है, उसी प्रकार मेरे जीवन में भी वेदना रूपी अंधकार छाने लगता है. सन्ध्या से आकाश का मूक मिलन है, उसी प्रकार मेरा भी उस असीम प्रिय से मूक मिलन है. मेरी दृष्टि में (आंखों में) आंसू भी हैं, मुस्कान भी है. फूलों की सुरभि के समान मेरी सांसों में सुखद स्मृतियों की सुरभि है. नदियों में कुमुदिनियाँ प्रफुल्लित होती हैं और मेरा शरीर रोमांच (पुलक) रूपी कुमुदिनियों से सुगंधित है. सन्ध्या समय रात्रि और दिन प्रेमावेश में प्रसन्न होकर खिल उठते हैं तो ओस की बूंदें गिरती हैं तो उस समय स्मृति के अस्थिर क्षण भी शाश्वत

BRAOU

बन उठते हैं. इच्छाएं रूपी सुनहली किरणें बाजों के समान आकाश में चुभ-चुभ कर नक्षत्र रूपी फूलों के समान प्रकट होते हैं. मेरे जीवन में भी कामनाओं के शरों से बिंधे हुए सुख रूपी सुमन है.
सन्ध्या ढल रही है. पक्षी अपने-अपने नीडों की ओर लौट रहे हैं. मन में वेदना का अंधकार छा रहा है. मेरे मन रूपी आकाश से सुख-दुख रूपी जो पक्षी चहक रहे हैं वे अब शांत हो गये हैं. हे पाहुन ! अब तुम मेरी पलकों में उतर आओ.

इस प्रकार प्रस्तुत कविता में कवयित्री की अनुभूति एवं कल्पना, प्रकृति के कोमल चित्रण में परिलक्षित होती है.

16.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -
"तू जल-जल.....दीपक जल ।"

उत्तर- प्रस्तुत पंक्तियां महादेवी की कविता "मधुर-मधुर मेरे दीपक जल" से उद्धृत हैं.

महादेवी कहती है - हे मेरे जीवन-दीप ! तू ज्यों-ज्यों जल जलकर क्षीण होता जायेगा (जीवन साधना में अग्रसर होते हुए चरम सीमा को प्राप्त करता जायेगा) वह रहस्यमय निर्मोही प्रिय भी उतना ही तेरे समीप आता जायेगा. अंत में तू अपने प्रिय से मिल जायेगा. तब तुम्हारा प्रकाश और अंधकार का खेल समाप्त हो जायेगा. उस समय तू अपने अस्तित्व को सर्वथा प्रिय में विलीन कर जाना और प्रिय की उज्ज्वल हंसी में घुलकर खिल जाना. तब तक उस प्रियतम की प्रतीक्षा में मेरे जीवन-दीप, तू जलता रह. प्रियतम का पथ निरंतर आलोकित करता रह.

इस कविता में महादेवी ने एक प्रकार से फलासक्ति रहित कर्म-योग का संदेश दिया है. किंतु सिद्धांत के रूप में न होकर काव्य के सरस रूप में दिया है. स्वार्थ रहित साधना के मार्ग पर जाने वालों को ही परमात्मा सुलभ हैं. इसलिए अपने जीवन को दीप के समान निरंतर प्रज्ज्वलित रहने का अनुरोध कवयित्री करती है.

प्रश्न- निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
"इच्छाओं के .....नक्षत्र सुमन ।"

उत्तर- प्रस्तुत कविता की पंक्तियाँ महादेवी की रचना "प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन" कविता से ली गई हैं. यह कविता 'सान्ध्य गीत' संकलन में संकलित है. नीहार, रश्मि, नीरजा एवं सान्ध्यगीत कविता संकलनों को बाद में 'यामा' के नाम से सचित्र प्रकाशित किया गया है. 'यामा' पर महादेवी को ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ है.

प्रस्तुत पंक्तियों में रूपक के आधार पर महादेवी ने अपने भावों की सुंदर अभिव्यक्ति की है. सान्ध्यकालीन स्वर्णिम किरणें हैं और जीवन में सुनहली किरणों के समान इच्छाएं हैं. यहां कवयित्री कल्पना करती है कि इच्छाएं रूपी बाण जिनके वेग से सूने आकाश में नक्षत्र रूपी सुमन खिलते हैं. मेरे जीवन में भी कामनाओं के शरों से बिंधे हुए सुख रूपी सुमन हैं.

विशेष

1. रूपक अलंकार का सौंदर्य है.
2. छायावाद की लाक्षणिक शैली का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत पंक्तियां हैं.

16.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. महादेवी - शचीरानी गुर्टू
2. महादेवी की काव्य-साधना - विश्वंभर मानव
3. महादेवी : चिंतन व कला - इन्द्रनाथ मदान
4. महादेवी : विचार एवं व्यक्तित्व - शिवचन्दु नागर
5. महादेवी वर्मा : एक अध्ययन - ललित अरोडा.

******

BRAOU

इकाई 17 : माखनलाल चतुर्वेदी की कविता : कैदी और कोकिला

रूपरेखा

17.1 पाठ का उद्देश्य
17.2 पाठ एवं कवि परिचय
17.3 मूल पाठ
17.4 सारांश
17.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
17.6 शब्दार्थ
17.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
17.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
17.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
17.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
17.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
17.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
17.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

17.1 पाठ का उद्देश्य

यहां माखनलाल चतुर्वेदी की देशप्रेम से ओत-प्रोत कविता "कैदी और कोकिला" उद्धृत है. इस कविता के अध्ययन से आप -

* स्वतंत्रता-पूर्व भारत की स्थिति को जान सकेंगे.
* आधुनिक युगीन भारत पर अंग्रेजों की शासन-व्यवस्था को जान सकेंगे.
* भारतीय मुक्ति-आंदोलन की गरिमा को समझ सकेंगे.
* कवि के राष्ट्रीय-प्रेम एवं स्वातंत्र्य चेतना को समझ पायेंगे.

BRAOU

17.2 कविता एवं कवि का परिचय

कवि परिचय

आधुनिक हिंदी काव्यधारा में स्वातंत्र्य चेतना का सार मुखरित करनेवाले कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी अग्रगण्य रहे हैं. उन्हें "एक भारतीय आत्मा" के नाम से भी संबोधित किया जाता है. माखनलाल का जन्म 4 अप्रैल, 1889 को मध्य-प्रदेश के "बावई" नामक गांव में हुआ था. साधारण परिवार में जन्म लेने के कारण उन्हें बचपन में दैन्य और दारिद्रता से जूझना पडा. स्वभाव से धैर्यवान और साहसी होने के कारण वे अपना जीवन-मार्ग स्वयं बनाने में कार्यरत रहने लगे. उनका परिवार राधावल्लभ संप्रदाय का अनुयायी होने से माखनलाल पर भी इसका स्वाभाविक प्रभाव पडा. प्राथमिक-शिक्षा समाप्त करने पर उन्होंने घर पर ही संस्कृत एवं अन्य भारतीय भाषाओं का स्वाध्याय किया. 15 वर्ष की अवस्था में ही उनका विवाह हुआ. उसके एक वर्ष बाद ही आपने बारह रुपये मासिक वेतन पर अध्यापन-कार्य आरंभ किया. आपको संस्कृत, मराठी, गुजराती और अंग्रेजी भाषा एवं साहित्य का विशेष ज्ञान था. आप स्वतंत्रता सेनानी भी थे.

आगे चलकर आपने सन् 1913 में "प्रभा" पत्रिका का संपादन प्रारंभ किया. इन्हीं दिनों उनका परिचय गणेश शंकर "विद्यार्थी" से हुआ. गणेश शंकर जी के देश-प्रेम और विचारों का इन पर बहुत गहरा प्रभाव पडा. सन् 1918 में आपने "कृष्णार्जुन युद्ध" नामक नाटक की रचना की. सन् 1919 में आपने जबलपुर से "कर्मवीर" पत्रिका का प्रकाशन किया. स्वातंत्र्य-सेनानी होने के कारण 12 मई, 1921 को राजद्रोह के अपराध में वे गिरफ्तार हो गये. सन् 1922 में आपको कारागार से मुक्ति मिली. सन् 1924 में गणेश शंकर विद्यार्थी की गिरफ़्तारी के बाद आपने "प्रताप" का संपादकीय कार्यभार संभाला. आगे 1927 में आपको भरतपुर के संपादक-सम्मेलन में अध्यक्ष बनाया गया. इसी तरह 1943 में हिंदी साहितय सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में आपका सम्मान किया गया. इसके एक वर्ष पूर्व ही सन् 1942 में आपने "हिमकिरीटिनी" और "साहित्य-देवता" इत्यादि रचनाओं को प्रकाशित किया. सन् 1948 में "हिम तरंगिनी" एवं 1952 में "माता" काव्य-ग्रंथ प्रकाशित हुए. माखनलाल चतुर्वेदी की मृत्यु सन् 1968 में हुई.

माखनलाल चतुर्वेदी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे. संपादक, कवि, नाटककार और देशप्रेम की सेवाओं से ओत-प्रोत उनके कवि-रूपी व्यक्तित्व का प्रारंभ भक्ति-भाव से हुआ. उन दिनों छायावादी काव्य-प्रवृत्ति की रचनायें होती थी. छायावादी कविताओं में विराट की भावना, आध्यात्मिक रहस्य की धारा एवं किसी अज्ञात असीम प्रियतम के साथ ससीम आत्मा का प्रणय-निवेदन रहा. उसी तरह प्रकृति और आध्यात्मिक रहस्य का नया आलोक छायावादी कवियों की जीवन-दृष्टि का आधार रहा. माखनलाल की प्रारंभिक रचनाओं में इसकी पुट अवश्य है, किंतु उसका रूप भिन्न रहा है. उनकी भक्तिपरक रहस्य भावना सगुण भक्ति के साथ एक अजीब समन्वय निर्मित करती है. उनका ईश्वर इतना भी निराकार नहीं है, जिसे नाना नाम व रूप देकर उपलब्ध न किया जा सके. उनकी कविताओं का प्रियतम भी इतना अज्ञात नहीं, जो प्रणय-वेदनाओं में अपनी व्यथाओं को व्यक्त करता रहे. यही कारण है कि उनकी रचनाओं में छायावादी वैयक्तिकता का एकांतिक स्वर तीव्र जान नहीं पडता. उनकी परवर्ती रचनाओं में वैयक्तिकता ने समष्टि का रूप धारण किया है और वे राष्ट्रीय-प्रेम के ज्वालामुखी बनकर उभर आये हैं. राष्ट्रीय अध:पतन से उत्पन्न ग्लानि से कवि मन के स्वर अत्यंत उग्र बन पडे हैं. "कैदी और कोकिला" के पीछे जो राष्ट्रीयता का स्वरूप मुखर कर आया है, वह कवि मन के सच्चे राष्ट्र प्रेम का ज्वलंत उदाहरण है.

BRAOU

पाठ-परिचय

प्रस्तुत कविता "कैदी और कोकिला" के माध्यम से कवि ने स्वतंत्रतापूर्व भारत देश की स्थिति का परिचय दिया है. अंग्रेजी शासन-व्यवस्था में अन्याय, शोषण और अत्याचारों का आधिक्य रहा. इसके विरोध में स्वर उठानेवालों को देशद्रोह के अपराध में बंदी बनाया गया. उन पर मुकदमें चलाये गये. कवि को भी स्वतंत्रता-सेनानी के रूप में बंदी बनाया गया. ऐसी स्थिति में कवि कोमल स्वर एवं वाणी की कोकिला को संबोधित करते हुए अपने मन की चेतना को व्यक्त करता है. इसमें अंग्रेजों की शोषण-नीति का कडा विरोध एवं देशवासियों को स्वतंत्रता हेतु आह्वान के भाव निहित हैं.

17.3 मूलपाठ

कैदी और कोकिला

"क्या गाती हो ? क्यों रह-रह जाती हो ? कोकिल बोल तो ?
क्या लाती हो ? सन्देशा किसका है ? कोकिल, बोल तो ?

ऊंची काली दीवारों के घेरे में,
डाकू, चोरों, बटमारों के डेरे में,
जीने को देते नहीं पेट भर खाना,
मरने भी देते नहीं तडप रह जाना,

जीवन पर अब दिन-रात कडा पहरा है,
शासन है या तम का प्रभाव गहरा है ।
हिमकर निराश कर गया, रात भी काली,
इस समय कालिमामयी जगी क्यूं आली ?

क्यूं हुक पडी ? वेदना बोझवाली-सी कोकिल, बोल तो ?
क्या लूटा ? मृदुल वैभव की रखवाली-सी कोकिल, बोल तो ?

बंदी सोते हैं, है घर्घर श्वासों का,
दिन के दुख का रोना है, नि:श्वासों का,
अथवा स्वर है लोहे के दरवाजों का,
बूटों का या संत्री की आवाजों का,

या करते गिननेवाले हा-हा कार,
सारी रातों है, एक, दो, तीन, चार,
मेरे आंसू की भरी उभय जब प्याली,
बेसुरा ! (मधुर) क्यों गाने आयी आली ?

क्यों हुई बावली, अर्द्धरात्रि को चीखी कोकिल, बोल तो ?
किस दावानल की ज्वालायें हैं दिखी कोकिल, बोल तो ?

क्या देख न सकती जंजीरों का गहना ?
हथकडियां क्यों ? यह ब्रिटीश राज का गहना !
मिट्टी पर ! अंगुलियों ने लिक्खे गाने !
कोल्हू की चरमर-चूं जीवन की तानें !

हूं मोट खींचता लगा पेट पर जुआ ।
खाली करता हूं ब्रिटीश अकड़ का कुआं ।
दिन में मत करुणा जगे, रुलानेवाली,
इसलिए रात में गजब ढा रही आली ?

इस शांत समय में अंधकार को भेद, रो रही क्यों हो कोकिल, बोल तो ?
चुपचाप, मधुर विद्रोह-बीज इस भांति हो रही क्यों हो ? कोकिल, बोल तो ?"

17.4 सारांश

माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा लिखित यह कविता देशप्रेम से ओत-प्रोत है. कवि स्वतंत्रता सेनानी भी थे, जिस कारण सन् 1921 में उन्हें राजद्रोह के आरोप में बंदी बनाया गया था. बंदी-गृह में रहते समय

उन्हें कोकिला के स्वर सुनाई पडते थे. इन्हें सुनकर उनके मन का गुबार उबल पडा और कोकिला को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि -

"हे कोकिल, तुम क्या गाती हो और क्यों रह-रह जाती हो ? कह दो ! अपने स्वर में तुम किसका और कौन-सा संदेशा ले आती हो ? बता दो ! मैं इन दिनों जेल की ऊंची काली दीवारों के घेरे में बंद हूं. डाकू, चोर और जेब-कतरों के जमघट में मुझे यहां रखा गया है. जीवित रहने के लिए यहां पेट भर भोजन भी नहीं दिया जाता और मरने भी नहीं दिया जाता. इस कारण भूख और पीडा से तडप-तडप कर चुप रहना पड़ता है.

हे कोकिल, अब दिन-रात मेरी गतिविधियों पर कडा पहरा लगा रहता है. यह कैसी शासन व्यवस्था है, जहां अन्याय और शोषण का ही गहरा प्रभाव है. दिन का सूर्य भी हमें निराश कर गया और अब की रात भी प्रशासन की तरह कालिमा ओढ़े आई है. ऐसे समय, हे सखि, तुम जाकर हमें जगाने क्यों आई हो ? क्या वेदनाओं के बोझ से तुम्हारे हृदय में पीडा की हूक उठ रही है. या तुम्हारा मृदुल वैभव लुट गया ? जिसकी रक्षा तुम करती आ रही हो !

इस आधी रात के समय सारे बंदी खुर्राटे भर कर सो रहे हैं. अपने दुर्दिनों के दु:खों का रोना मेरी निश्वासों से निकल रहा है. कहीं जेल के लोहे के दरवाजे खोलने और समेटने के स्वर आ रहे हैं और कहीं पहरेदारों के चलने से उनके बूटों की आवाजें गूंज रही हैं. कहीं उन बंदियों के हा-हा कार के स्वर आ रहे हैं, जो एक, दो, तीन और चार की गिनती से अपनी सजा की अवधि काट रहे हैं. मेरी आंखें भी भर आई हैं और ऐसे वातावरण में हे सखि, तुम अपना बेसुरा गीत क्यों गा रही हो ?

हे कोकिल, इस अर्द्ध रात्री के समय बावली होकर तुम क्यों चीख रही हो ? तुम्हें कौन-सी अग्नि-ज्वालाएं दिखी, जिससे अपने होश खोकर तुम चीख रही हो ?

क्या तुम मेरे हाथों में जंजीरों के गहने देख नहीं सकती ? ये हथकडियां नहीं, ब्रिटीश साम्राज्य के द्वारा भारतवासियों को पहनाये हुए गहने हैं. अपनी भारतमाता की स्वतंत्रता चाहनेवाले उसके वीर पुत्र हम, इस समय मिट्टी पर उंगलियों से अपने जीवन के गीत लिख रहे हैं और कोल्हू पर चरमर चलनेवाले बैल की तरह भीतर ही भीतर कुढ़ रहे हैं.

ऐसी अवस्था में भी मेरा उत्साह और देशप्रेम कम नहीं हुआ है. मैं अपने पेट पर मोट का जुआ लगाकर मोट खींच रहा हूं और अंग्रेज सरकार की अकड और गर्व का कुंआ खाली कर रहा हूं. हे कोकिल, दिन में करुणा जगाकर रुला न सकी और इसीलिए, इस आधी रात में चीख-चीख कर क्यों गजब ढा रही हो ?

हे कोकिल, इस शांत समय में अंधकार को भेदकर क्यों रो रही हो ? अपनी आवाज से चुप-चाप विद्रोह के बीज क्यों बो रही हो ? बता दो."

17.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

आधुनिक हिंदी काव्य की राष्ट्रीय काव्यधारा में माखनलाल चतुर्वेदी का काव्यस्वर अग्रगण्य सिद्ध हुआ है. जीवन के आरंभ से ही अर्थाभाव एवं अनेक कष्टों का सामना करने के कारण उनका व्यक्तित्व संघर्षशील और क्रांतियुक्त बना. गांधी जी के व्यक्तित्व से प्रेरणा पाकर वे स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भाग लेते रहे. इसी कारण उन्हें जेल जाना पडा अंग्रेज सरकार की शोषण नीति तथा भारतीयों के प्रति

BRAOU

शासन का दुर्व्यवहार उनकी 'कैदी और कोकिला" कविता में आग और बारूद के स्वरुप में व्यक्त हुआ है. इसीलिए भारतवासियों को दुखों, अभावों, पीडाओं, अन्यायों एवं शोषण नीति से मुक्ति दिलाने के लिए उन्होंने त्याग, उत्सर्ग और समर्पण के स्वर मुखरित किये.

माखनलाल चतुर्वेदी सृजनात्मक एवं बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति थे. आजीवन कारावास में रहते और लिखते रहे. अपनी गहरी अनुभूतियों, देशप्रेम और प्रौढ़-विचारों को उन्होंने काव्य और गद्य दोनों में अभिव्यक्ति दी. "कैदा और कोकिला" कविता में तत्कालीन देश की परिस्थितियाँ प्रतिबिंबित हुई हैं. लेखक का यह विश्वास था कि स्वाधीनता संग्राम की सफलता संघर्ष, त्याग, उत्सर्ग एवं क्रांति से ही संभव है.

माखनलाल मूलत: प्रेम के कवि रहे हैं. उनका यह प्रेम चार रूपों में व्यक्त हुआ है - राष्ट्र प्रेम, व्यक्तिगत-प्रेम, प्रकृति-प्रेम और आध्यात्मिक-प्रेम. इन चारों में राष्ट्रप्रेम ही अधिक मुखरित हुआ है. इसीलिए इनकी कविताओं में ओज, आवेग और उत्साह के भाव तीव्र हैं. उनकी तीव्र ओजस्वी वाणी ने देश की युवा-शक्ति में राष्ट्रीय-चेतना की चिनगारियां भर दी. इसीलिए उन्हें "एक भारतीय आत्मा" के उपनाम से संबोधित किया जाता है.

17.6 शब्दार्थ

सन्देशा	-	संदेश
ऊंची काली दीवारें	-	जेल की ऊंची दीवारें
डेरे में	-	जमघट में
बटमारों	-	जेब कतरें
तम	-	अंधेरा या अन्याय
हिमकर	-	सूर्य
कालियामयी	-	काल बनकर
हूक	-	व्यथा या पीडा
संत्री	-	जेल के पहरेदार
उभय	-	दोनों
बावली	-	पगली
दावानल	-	जंगल में लगनेवाली आग
अकड	-	गर्व या शोषण

17.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

17.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. "कैदी और कोकिला" कविता में कवि ने देशप्रेम की चेतना किस प्रकार व्यक्त की है ? स्पष्ट कीजिए.
2. "कैदी और कोकिला" कविता का सारांश लिखकर उसकी विशेषतायें बताइये.
3. "कैदी और कोकिला" कविता में कवि ने अंग्रेजी-सत्ता की शोषण-नीति का चित्रण किया है" - सप्रमाण सिद्ध कीजिए.
4. "कैदी और कोकिला" कविता के माध्यम से कवि ने समकालीन युवा-पीढ़ी में क्रांति की ज्वाला प्रज्वलित की है" सिद्ध कीजिए.

BRAOU

17.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित कविता के आधार पर माखनलाल चतुर्वेदी के देशप्रेम को स्पश्ट कीजिए.
2. "कैदी और कोकिला" कविता में कवि ने भारतवासियों की किस स्थिति का वर्णन किया है ?
3. "कैदी और कोकिला" कविता के अनुसार अंग्रेज भारतवासियों का शोषण किस तरह करते थे ?
4. पठित कविता के अनुसार बताइये कि कैदी के साथ कैसा व्यवहार किया जाता था ?
5. नीचे लिखे पद्यांश का भावार्थ लिखिये -

"क्या देख न सकती जंजीरों का गहना ?
हथकडियां क्यों ? यह ब्रिटीश राज्य का गहना,
मिट्टी पर ! अंगुलियों ने लिक्खे गाने ।
कोल्हू की चरमर - चूं जीवन की तानें !"

17.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

17.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- "कैदी और कोकिला" कविता में कवि ने देश प्रेम की चेतना किस प्रकार व्यक्त की है ? स्पष्ट कीजिए.

उत्तर- माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा विरचित कविता "कैदी और कोकिला" तत्कालीन भारतीय स्थितियों एवं दशाओं का ज्वलंत चित्रण है. पराधीन भारत देश में ब्रिटीश शासन-प्रणाली, शोषण-नीति और भारतीयों की व्याकुल अवस्था का शब्द-चित्र कवि की देशप्रेमयुक्त चेतनापूर्ण प्रतिभा का अनुपम लेखा है - प्रस्तुत कविता. विदेशी सत्ता ने अपनी नीति से भारतीय मानव-समाज को आतंकित कर रखा था. इसी के विरोध में समाज-सुधार एवं स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु आंदोलन जोर पकड रहा था. कवि माखनलाल भी स्वतंत्रता सेनानी थे. आंदोलनों में सक्रिय भाग लेने के कारण इन पर राजद्रोह का अपराध लगाया गया और इन्हें बंदी बनाकर जेल में रखा गया. बंदी-गृह में इन्हें और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों को ऐसे सथान पर रखा गया, जहां डाकू, चोर और जेब-कतरें जैसे अपराधियों को रखा गया था. अपना सर्वस्वत्यागकर देश सेवा एवं मातृभूमि को स्वतंत्र करने के लिए प्राणों को उत्सर्ग करनेवालों की स्थिति समाज-विरोधी-तत्वों के समकक्ष मानी गई थी. यहां जल-भोजन, बोलने-लिखने पर भी प्रतिबंध था. इसी कारण कवि का मन विद्रोह कर उठा और अपने मन की व्यथा को उसने कोकिला के माध्यम से व्यक्त कर दिया.

माखनलाल जी की चेतना तत्कालीन भारतवासियों की दयनीय स्थिति पर विक्षुब्ध थी. वे स्वाभिमानी थे. देशप्रेम की चेतना से पूर्णरूपेण प्रभावित थे. लिखने पर प्रतिबंध था. इसीलिए कवि ने "फूल की चाह" कविता में फूल की अपूर्ण इच्छा प्रकट की और इस "कैदी और कोकिला" कविता द्वारा कोकिला जैसी सुमधुर पक्षि के मुख से स्वतंत्रता का बिगुल बजाया. कोयल की आवाज चिंगारी बनकर ज्वालामुखी का कार्य कर गई. भारतवासियों के मन-मस्तिष्क में देशप्रेम की चेतना जगा गई. राजद्रोह के अपराध में बंदी यह स्वतंत्रता सेनानी अपार कष्ट, यातनाओं और अत्याचारों को सहकर भी अपने

BRAOU

अपूर्व साहस का परिचय देता है एवं अंग्रेज सरकार की अकड का कुंआ रिक्त करने को आमादा होता है. कवि के अनुसार यह अत्याचारी सत्ता शरीर को नष्ट कर सकती है, हमारी आत्मा को नहीं स्वाधीनता की आकांक्षा को नहीं , मातृभूमि के प्रेम को नहीं. यही कारण है कि माखनलाल को "एक भारतीय आत्मा" कहा गया है. कवि की पंक्तियों में तत्कालीन स्थिति एवं अवस्थाओं की सत्यता के साथ विदेशी सत्ता के प्रति विद्रोह और क्रांति की ज्वालायें प्रस्फुटित हुई हैं.

17.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- नीचे लिखे पद्यांश की संदर्भ-सहित व्याख्या कीजिए -

"क्या देख न सकती जंजीरों का गहना ?
हथकडियां क्यों ? यह ब्रिटीश राज का गहना !
मिट्टी पर ! अंगुलियों ने लिक्खे गाने,
कोल्हू की चरमर-चूं जीवन की तानें !"

उत्तर- यह पद्यांश "कैदी और कोकिला" कविता से लिया गया है. इसे "माखनलाल चतुर्वेदी" ने लिखा है.

आधुनिक हिंदी-काव्य में राष्ट्रीय काव्यधारा का अपना एक विशेष स्थान रहा है. पराधीन देश में विदेशी-सत्ता की शोषण-नीति ने भारतीय जीवन को झकझोर दिया था. हमारी सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थक व्यवस्थाएं तितर-बितर हो रही थी. सारा भारतीय जन-मानस आतंकित था. ऐसे समय देश-स्वातंत्र्य के लिए आंदोलन करनेवाले स्वतंत्रता सेनानियों को अंग्रेज सरकार ने राजद्रोह के अपराध में बंदी बनाकर जेल में रखा. कवि माखनलाल भी बंदी बनाये गये. बंदी-गृह में रहकर उनकी आत्मा देशप्रेम की चेतना से स्फुरित हुई और कोकिला के माध्यम से उनके स्वर फूट पडे.

कवि ने कोकिला को संबोधित कर पूछा कि - हे कोकिल, इस शांत अर्द्धरात्री के समय तुम किस वेदना के कारण चीख रही हो ? कौन-सी व्यथा तुम्हें व्याकुल बना रही है, जिससे कि तुम अपने स्वरों से विद्रोह के बीज बो रही हो ? इस पद्यांश में कवि कोकिला से पूछता है कि - "क्या तुम मुझे जंजीरों में जकडा हुआ नहीं देख सकती ? ये हथकडियां तो ब्रिटीश सरकार द्वारा दिया हुआ एक गहना है. हे सखि, मैं अनंत यातनायें सहकर भी अंग्रेज सरकार की अकड़ का कुंआ रिक्त कर रहा हूं."

इस कविता में कवि के अपूर्व साहस एवं देश-प्रेम के लिए उत्सर्ग होने के भावों का परिचय पाठकों को मिलता है.

17.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. हिम किरीटिनी : माखनलाल चतुर्वेदी
2. राष्ट्रीयता के कवि माखनलाल : राजनाथ शर्मा
3. साहित्यिक निबंध : प्रो. शिवकुमार शर्मा
4. माखनलाल चतुर्वेदी : एक अध्ययन : रामाधार शर्मा
5. माखनलाल चतुर्वेदी : जीवनी : ऋषि जैमिनी कौशिक बरुआ

******

BRAOU

इकाई 18 : भगवतीचरण वर्मा की कविता : हम दीवानों की क्या हस्ती

रूपरेखा

18.1 पाठ का उद्देश्य
18.2 पाठ एवं कवि परिचय
18.3 मूल पाठ
18.4 सारांश
18.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
18.6 शब्दार्थ
18.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
18.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
18.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
18.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
18.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
18.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
18.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

18.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में उत्तर छायावाद के महत्वपूर्ण कवि श्री भगवतीचरण वर्मा की प्रसिद्ध कविता "हम दीवानों की क्या-हस्ती" पर प्रकाश डाला गया है. इस कविता के अध्ययन से आप -

* नवयुवकों के मनोभावों पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* मानव जीवन में परिलक्षित सुख-दुख पर विचार कर सकेंगे.
* गीतकार की भावनाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* सन् 1929 में लिखे गये इस गीत के द्वारा तत्कालीन भारतीय नवयुवकों की भावनाओं से परिचित हो सकेंगे.

BRAOU

18.2 पाठ एवं कवि परिचय

कवि परिचय

श्री भगवतीचरण वर्मा का जन्म सन् 1903 ई. में उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के शम्मीपुर तहसील में हुआ था. उनके पिता प्रतिष्ठित जमींदार व वकील थे. पांच वर्ष की अवस्था में ही उनके पिता की मृत्यु हो गई. 1928 में बी.ए., एल.एल.बी. उत्तीर्ण करके वकालत करने लगे. तभी से उन्होंने लेखन कार्य का शुभारंभ किया और जीवनपर्यन्त लिखते रहे. अनेक पत्र-पत्रिकाओं का उन्होंने संपादन किया. उनके 'चित्रलेखा' उपन्यास पर दो बार फिल्म बनी. इन्हें भारत सरकार ने पद्‌भूषण की उपाधि से अलंकृत किया तथा वे साहित्य अकादमी द्वारा भी पुरस्कृत किए गए. सन् 1981 में इनका देहान्त हो गया.

उत्तर छायावादी कवियों में भगवतीचरण वर्मा को विशिष्ट स्थान प्राप्त है. उपन्यासकार के रूप में वे अधिक प्रसिद्ध रहे. समय-समय पर उन्होंने अपने दृष्टिकोण एवं विचारधारा को बदला. प्रेमपरक रचनाएं लिखते हुए वे विप्लव, संघर्ष और तूफानी भावनाओं तक आ गए. वर्मा जी की रचनाओं में वैयक्तिकता का प्रबल आग्रह दिखाई देता है. उनकी प्रेम संबंधी रचनाएं सतही हैं लेकिन वर्मा जी का विशेष महत्व उनकी यथार्थपरक रचनाओं के कारण हैं. वे अराजकता का अह्वान करते हैं इसी कारण उनकी वाणी बड़ी ओजमयी है.

वर्मा जी कृत 'भैसागाड़ी' रचना प्रसिद्ध है. जीवन की असफलता और पीडित वर्ग के जीवन की वेदना को चित्रांकित करने में उन्हें विशेष सफलता प्राप्त हुई है. प्रस्तुत कविता कवि के सामाजिक सरोकार को प्रकट करती है. भगवतीचरण वर्मा उत्तर छायावाद के महत्वपूर्ण कवि हैं. उन्हें वैयक्तिक भावनाओं और प्रगतिशील विचारधारा दोनों के लिए स्मरण रखा जा सकता है.

रचनाएं

काव्य : मधुकण, प्रेम-संगीत, मानव, एक दिन, विस्मृति के फूल, रंगों से मोह आदि.
उपन्यास : पतन, चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढे-मेढे रास्ते, आखरी दांव, अपने खिलौने, रेखा आदि.
कहानी संग्रह : इन्स्टालमेंट, दो बांके आदि.
नाटक : बुझता दीपक

पाठ परिचय

प्रस्तुत पाठ में नवयुवकों की मानसिकता का वर्णन किया गया है. यह गीत श्री भगवतीचरण वर्मा द्वारा रचित काव्य-संग्रह 'प्रेम-संगीत' से लिया गया है. यह रचना सन् 1929 में रची गई थी. उस समय वर्मा जी स्वयं 26 वर्ष के मस्ती और उत्साह से भरे नवयुवक थे उस समय भारतीय नवयुवकों में देश के लिए 'कुछ कर गुजरने' और 'मर मिटने' की प्रबल भावना थी. प्रस्तुत कविता में वर्मा जी ने नवयुवकों के अदम्य उत्साह के साथ-साथ देश के लिए कुछ भी कर गुजरने की प्रबल आकांक्षा को अत्यंत मस्ती भरे अंदाज में प्रस्तुत किया है.

BRAOU

18.3 मूलपाठ

हम दीवानों की क्या हस्ती

हम दीवानों की क्या हस्ती,
हैं आज यहां कल वहां चले,
मस्ती का आलम साथ चला,
हम धूल उडाते जहां चले,

आये बन कर उल्लास अभी
आंसू बन कर बह चले अभी ।।1।।

सब कहते ही रह गये, अरे,
तुम कैसे आये कहां चले ?
किस ओर चले यह मत पूछो
चलना है, बस इसलिए चले

जग से उसका कुछ लिये चले,
जग को अपना कुछ दिये चले,

दो बात कही दो बात सुनी
कुछ हंसे और फिर कुछ रोये ।।2।।

छक कर सुख-दु:ख की घूंटों को
हम एक भाव से पिये चले
हम भिखमंगों की दुनिया में
स्वच्छंद लुटाकर प्यार चले,
हम एक निशानी-सी उर पर
ले असफलता का भार चले ।

हम मान रहित अपमान रहित
जी भर कर खुल कर खेल चुके ।।3।।

हम हंसते-हंसते आज पं
प्राणों की बाजी हर चले ।
हम भला-बुरा सब भूल चुके
नत मस्तक हो मुख मोड़ चले,
अभिशाप उठाकर होठों पर
वरदान दृगों से छोड़ चले,
अब अपना और पराया क्या ?
आबाद रहे रुकने वाले.

हम स्वयं बंधे थे और स्वयं
हम अपने बंधन तोड़ चले ।।4।।

BRAOU

18.4 सारांश

1) कवि नवयुवकों के अदम्य उत्साह से संचारित होकर कहते हैं कि हम दीवानों का अस्तित्व ही क्या है ? हम आज यहां हैं तो कल कहीं और चले जाएंगे. हम सदैव एक मस्ती अर्थात् चिंतारहित वातावरण को अपने साथ लेकर चलते हैं. कहीं पर तो हम उल्लास अर्थात् प्रसन्नता बनकर आते हैं और कहीं मानवता के लिए आंसू भी बहाते हैं, हमने एक जगह टिक कर रहना नहीं सीखा. सभी लोग हमारी यायावरी प्रवृत्ति को देखकर कहते ही रह जाते हैं कि तुम आए कैसे और तुरंत ही कहां जा रहे हो ?

विशेष

कवि ने यहां नवजवानों की मस्ती भरी मनोवृत्ति का संकेत किया है. ये नवयुवक देश के लिए कुछ भी करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं. सब कुछ करने की अदम्य आकांक्षा के साथ ही ये भावुक नवयुवक इतने संवेदनशील हैं कि किसी का दुख वे सहन नहीं कर पाते और दूसरों के दुख में दुखी होकर आंसू भी बहाते हैं.

2) नवयुवकों की यायावरी वृत्ति की ओर संकेत करते हुए कवि कहते हैं कि हम एक जगह टिक कर नहीं रहते. आज यहां तो कल कहीं और. सभी कहते ही रह जाते हैं कि तुम आए कहां से और जा कहां रहे हो ? हमारा लक्ष्य तो जीवन में आगे बढ़ना है अत: हमें तो चलना है और इसीलिए हम चल रहे हैं. यह जीवन आदान-प्रदान कर टिका है, हमने इस देश से कुछ लिया है तो हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि इस देश को कुछ दें. हम लोगों के सुख-दुख में अपना पूर्ण सहयोग देते हैं इसीलिए कुछ अपनी कहते हैं और कुछ दूसरों की भी सुनते हैं. किसी की खुशी देखकर हंसते हैं और दुखीजनों के आंसू देखकर रोते भी हैं अर्थात् दुखी होते हैं.

विशेष

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि स्पष्ट करते हैं कि देश और समाज का कल्याण सुख-दुख बांटने में है और नवयुवकों का कर्तव्य है कि वे देश से कुछ ग्रहण करते हैं तो बदले में कुछ दें.

3) जीवन में सुख और दुख को समभाव से ग्रहण करने की प्रेरणा देते हुए नवयुवक कहते हैं. हमने जिस शिक्षा के साथ जीवन के सुखों का अनुभव लिया है उतनी ही शिक्षा के साथ जीवन के दुखों को भी स्वीकारा है. हमारे लिए सुख और दुख दोनों ही समान हैं. इस संसार में जो लोग प्रेम का अनमोल दान नहीं दे सकते उन्हें वे भिखारी समझते हैं और कहते हैं कि हम भिखारियों की दुनिया में अपना अनमोल स्वच्छंद प्रेम पूरे उदारभाव से लुटाते रहे हैं. इस संसार में सुख की अपेक्षा दुख अधिक है, नवयुवकों को इसका गहरा संताप है कि वे संसार को पूर्णरूप से दुखों से मुक्त नहीं कर सके और इसी असफलता का बोझ अपने हृदय पर लेकर वे चले.

जिस प्रकार नवयुवक सुख-दुख से निर्लिप्त हैं उसी प्रकार वे मान और अपमान से भी मुक्त हैं. जीवन को एक क्रीडास्थली मानते हुए वे मात्र कर्म करना ही अपना कर्तव्य मानते हैं. इसीलिए वे कहते हैं कि हम यहां पर जी भर कर खेल चुके.

4) इस देश के लिए अपना सर्वस्व अर्पित करने के लिए कटिबद्ध देश के नवयुवक इन पंक्तियों द्वारा कहते हैं कि हम हंसते-हंसते देश के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने के लिए तत्पर हैं. आगे वे कहते हैं कि हम न केवल अपने प्राणों को उत्सर्ग करने के लिए तत्पर हैं अपितु हम अपने अहं को भी पूरी तरह से विसर्जित कर चुके हैं, इसीलिए वे कहते हैं कि अगर किसी ने हमारे साथ भला किया हो अथवा किसी ने बुरा व्यवहार किया हो, हम सब कुछ भूल चुके हैं. हमने जीवन के मधुर और कटु दोनों प्रकार के अनुभवों को अपना सिर झुकाकर स्वीकार कर लिया. हमने संसार से प्राप्त अभिशाप नतमस्तक होकर स्वीकार किए और बदले में अपनी आंखों से वरदान देकर विदा ले ली. हमारे लिए कोई अपना नहीं और कोई पराया नहीं है. हमारी तो यही आकांक्षा है कि जो भी इस संसार में हैं वे आबाद रहें, फले-फूले. हम स्वयं ही उनके प्रेम में बंध गए थे और आज स्वयं ही उस बंधन को तोड़कर आगे का मार्ग प्रशस्त करने के लिए जा रहे हैं.

विशेष

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि नवयुवकों के माध्यम से यह संदेश देना चाहते हैं कि जीवन को उसकी संपूर्णता में स्वीकार करके सुख-दुख को समभाव से ग्रहण करते हुए अपना मार्ग प्रशस्त करना ही नवयुवकों के जीवन का लक्ष्य है. उन्हें निष्काम भाव से बिना किसी भेदभाव के मानवता के कल्याण के लिए कार्य करते रहना चाहिए.

BRAOU

18.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

भगवतीचरण वर्मा की काव्य यात्रा छायावादी काव्य से होते हुए छायावादोत्तर काव्य तक चली. यद्यपि उनकी कविता में आध्यात्मिकता एवं दार्शनिकता का पुट नहीं मिलता तथापि उनकी कविता में जीवन के रहस्य और जीवन के यथार्थ का बहुत व्यापकता से उद्‌घाटन हुआ है. जीवन को अपने समग्र रूप में यथावत स्वीकार करने का संदेश उन्होंने प्रस्तुत कविता में नवयुवकों के माध्यम से दिया है. यद्यपि प्रस्तुत कविता में जीवन के आतंककारी रौद्र रूप के दर्शन नहीं होते जो कि भगवतीचरण वर्मा की विशेषता है लेकिन नवयुवकों का उदम्य उत्साह और मस्ती पूरे उन्मेष के साथ सजीव हो उठी है.

प्रस्तुत कविता में परतंत्र भारत के नवयुवकों का एक आदर्शवादी स्वरूप दृष्टिगोचर होता है जो कि उस युग की मांग थी. ऐसे समय में देश की युवा-पीढ़ी का यह कर्तव्य था कि वे देश एवं समाज के कल्याण के लिए अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर दें. इस कविता में भी नवयुवकों का समाज से बिना किसी अपेक्षा के मात्र अपने कर्तव्य का पालन करने का संदेश उभरता है. आधुनिक भौतिकवादी युग में निस्वार्थ प्रेम मात्र कल्पना बन कर रह गया है ऐसे में युवक स्पष्ट रूप से घोषणा करते हैं कि हम भिखमंगों की दुनिया में स्वछंद लुटाकर प्यार चले. कवि ने 'भिखमंगे' शब्द का प्रयोग इसीलिए ही किया है. भिखारी मात्र लेना जानता है, वह किसी को कुछ दे नहीं सकता. अत: इस संसार में प्रेम अत्यंत दुर्लभ वस्तु बन गया है, जिसे ये युवक बिना किसी बंधन के सभी पर लुटाना चाहते हैं.

18.6 शब्दार्थ

दीवानों	-	मन-मौजियों, अपने मन की करनेवालों
छककर	-	पूरी तरह तृप्त होकर
स्वच्छन्द	-	स्वतंत्रता से, निर्बाध
मान	-	सम्मान, आदर
दृग	-	नेत्र
हस्ती	-	औकात

BRAOU

18.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

18.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. भगवतीचरण वर्मा के गीत 'हम दीवानों की क्या हस्ती' के भावों को अपने शब्दों में लिखिए.
2. 'हम दीवानों की क्या हस्ती' कविता में ओज और उत्साह के साथ-साथ कवि का जीवन-दर्शन भी प्रगट हुआ है, पठित कविता के आधार पर समझाइए.

18.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -
   i) जिस ओर चले.....कुछ रोये ।
   ii) हम भला बुरा.....तोड चले ।

2. भगवतीचरण वर्मा के गीतों में युवा-पीढ़ी के मनोबल की ऊंचाई प्रकट हुई है, स्पष्ट कीजिए.

18.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

18.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- "हम दीवानों की क्या हस्ती' में ओज और उत्साह के साथ-साथ कवि का जीवन दर्शन भी प्रगट हुआ है", पठित कविता के आधार पर समझाइए.

उत्तर- भगवतीचरण वर्मा उत्तर छायावादी काव्यधारा के प्रमुख कवि रहे हैं. यद्यपि समय-समय पर उनकी विचारधारा में परिवर्तन होता रहा है लेकिन देश व समाज के प्रति वर्मा जी की प्रतिबद्धता में कोई परिवर्तन नहीं आया. प्रस्तुत कविता 'हम दीवानों की क्या हस्ती' में कवि ने भारतीय युवा-पीढ़ी के उल्लास और उत्साह के साथ यह भी दिखाने का प्रयास किया है कि देश व समाज के कल्याण के लिए ये नवयुवक अपना सर्वस्व समर्पित करने के लिए सदैव तत्पर हैं. एक ओर तो कवि ने उनकी मस्ती और बेफिक्री का चित्रण किया है लेकिन दूसरी ओर वे अपने कर्तव्य के प्रति पूर्ण रूप से सजग भी हैं -

"जग से उसका कुछ लिए चले ।
जग को अपना कुछ दिए चले ।"

इस संसार में सबसे दुर्लभ वस्तु है किसी को निस्वार्थ प्यार देना. अत: नवयुवक कहते हैं -

"हम भिखमंगों की दुनिया में
स्वच्छन्द लुटाकर प्यार चले ।"

गीता में कृष्ण का उपदेश है फल की चिन्ता मत करो, कर्म करते रहो तथा सुख-दुख को समान भाव से ग्रहण करो. यहां कवि नवयुवकों के माध्यम से अपने पाठकों को यही प्रेरणा देता है -

"छक कर सुख-दुख की घूंटों को
हम एक भाव से पिये चले ।"

अपने मान-अपमान की चिन्ता उसे होती है जिसमें अहंकार होता है. जीवन को अपनी समग्रता में स्वीकार करने के साथ नवयुवक अपने मान-अपमान की चिन्ता किए बिना देश का कल्याण करना चाहते हैं -

"हम मान रहित अपमान रहित
जी भर कर खुल कर खेल चुके ।।"

यद्यपि भगवतीचरण वर्मा के काव्य में छायावाद की दार्शनिकता कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती लेकिन सामाजिक यथार्थ और समाज-कल्याण की भावना के परिप्रेक्ष्य में उनका जीवन-दर्शन अवश्य ही स्पष्ट होता है, अत: नवयुवक कहते हैं -

"हम भला-बुरा सब भूल चुके,
नत मस्तक हो मुख मोड़ चले,
अभिशाप उठाकर होठों पर

BRAOU

वरदान दृगों से छोड़ चले ।"

जीवन में अभिशापों को हंसकर स्वीकार करना और बदले में वरदान दे देना इससे युवा-पीढ़ी का समाज के प्रति निस्वार्थ प्रेम ही झलकता है. आगे फिर युवक कहते हैं कि इस समाज में उनके लिए अपना-पराया कोई नहीं है. उन्होंने स्वयं इस जीवन को स्वीकार किया था और स्वयं ही वे इसे छोड़कर जा रहे हैं. कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य अपने जीवन में किसी के लिए कुछ करता है तो उसे अपना मानकर ही करता है और इस अपनत्व के कारण सहज ही मोह या लगाव उत्पन्न हो जाता है लेकिन अपने पराए के भाव से ऊपर उठकर और बिना किसी मोह और फल की आशा से समाज कल्याण की भावना का संदेश नवयुवकों के माध्यम से भगवतीचरण वर्मा ने प्रस्तुत गीत द्वारा दिया है.

अत: प्रस्तुत कविता में नवयुवकों के माध्यम से भगवतीचरण वर्मा ने न केवल ओज और उत्साह अपितु अपने जीवन-दर्शन की भी व्याख्या की है.

18.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न- निम्नलिखित पंक्तियों की संदर्भ-सहित व्याख्या कीजिए -

"छक कर सुख-दुख की घूंटों को
हम एक भाव से पिये चले ।
हम भिखमंगों की दुनिया में
स्वच्छंद लुटाकर प्यार चले ।"

उत्तर- प्रस्तुत पंक्तियां श्री भगवतीचरण वर्मा द्वारा रचित कविता 'हम दीवानों की क्या हस्ती' से ली गई हैं. प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने भारतीय नवयुवकों के उल्लास और उत्साह के साथ यह भी दिखाने का प्रयास किया है कि वे सुख और दुख को समान भाव से ग्रहण कर संसार में प्रेम और भाईचारे की भावना का संचार करना चाहते हैं. सुख और दुख को समान भाव से ग्रहण कर नवयुवक कहते हैं कि हमने जिस शिद्दत के साथ जीवन के सुखों का अनुभव किया है उतनी ही शिद्दत के साथ जीवन के दुखों को भी स्वीकार करते हैं. इस संसार में जो लोग प्रेम का अनमोल दान नहीं दे सकते उन्हें वे भिखारी समझते हैं. वे कहते हैं कि हम भिखारियों की दुनियां में अपना अनमोल स्वच्छन्द प्रेम पूरे उदार भाव से लुटाना चाहते हैं.

विशेष

प्रस्तुत पंक्तियों में नवयुवकों के उत्साह के साथ समाज के प्रति उनके उत्तरदायित्व और जीवन मूल्यों को भी स्पष्ट किया गया है.

18.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. **मधुकण : भगवतीचरण वर्मा**
2. **प्रेम-संगीत : भगवतीचरण वर्मा**

******

BRAOU

इकाई 19 : हरिवंशराय बच्चन की कविता : मधुशाला

रूपरेखा

19.1 पाठ का उद्देश्य
19.2 पाठ एवं कवि परिचय
19.3 मूलपाठ
19.4 सारांश
19.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
19.6 शब्दार्थ
19.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
19.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
19.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
19.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
19.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
19.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
19.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

19.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में हरिवंशराय बच्चन द्वारा रचित 'मधुशाला' काव्य के छन्दों पर प्रकाश डाला गया है. इन छन्दों के अध्ययन से आप -

* 'मधुशाला' में वर्णित कवि की दार्शनिक विचारधारा से परिचित हो सकेंगे.
* 'मधुशाला' छन्दों के माध्यम से जीवन के प्रति कवि के दृष्टिकोण को समझ सकेंगे.
* हिंदी काव्य के हालावादी आंदोलन से परिचित हो सकेंगे.

BRAOU

19.2 पाठ एवं कवि परिचय

कवि परिचय

श्री हरिवंशराय बच्चन का जन्म 27 नवंबर, सन् 1907 ई. को प्रयाग में हुआ. इनकी प्रारंभिक शिक्षा उर्दू माध्यम से हुई किंतु आगे चलकर इन्होंने हिंदी माध्यम से अध्ययन किया. प्रयाग विश्वविद्यालय से अंग्रेजी एम.ए. में प्रवेश लेने के बाद तत्कालीन असहयोग आंदोलन में भाग लेने के कारण बीच में ही अध्ययन छोड़ दिया. फिर 1934 ई. में पुन: प्रवेश लेकर प्रयाग विश्वविद्यालय से ही अंग्रेजी एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा वहीं अंग्रेजी के प्राध्यापक नियुक्त हुए. 1954 ई. में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से कवि ईट्स पर शोध कार्य करके पीएच.डी. उपाधी प्राप्त की. 1955 में भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिंदी के विशेषज्ञ नियुक्त हुए. सन् 1966 में राज्यसभा के सदस्य मनोनीत हुए.

श्री हरिवंशराय बच्चन जी ने लगभग तीस से ऊपर ग्रंथों की रचना की है.उनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं -

काव्य संकलन - मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा-निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल-अंतर, सतरंगिनी, मिलन यामिनी, प्रणय-पत्रिका, हलाहल, बंगाल का अकाल, सूत की माला, खादी के फूल, आरती और अंगारे, बुद्ध और नाचघर, त्रिभंगिमा, चार खेमे चौंसठ खूंटे आदि. बच्चन जी ने उमर खैयाम की रुबाइयों का भी हिंदी में सफल अनुवाद किया है.

गद्य संकलन - नये-पुराने झरोखे, क्या भूलूं, क्या याद करूं, नीड़ का निर्माण फिर, बसेरे से दूर.

बच्चन जी की मूल प्रवृत्ति गीतकार की रही है. गीतों के लिए जिस कोमल एवं सरल सीधी भाषा की आवश्यकता होती है, वह बच्चन जी के काव्य में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है. बच्चन जी अपने समय के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि के रूप में रहे हैं. उमर खैयाम की रुबाइयों से प्रभावित होकर हिंदी में उन्होंने 'हालावाद' का प्रवर्तन किया, मधुशाला में उन्होंने ईश्वर प्राप्ति का एक मार्ग यह भी बताया है कि साधक उस ईश्वर की प्रेम रूपी मदिरा का पान करें. मधुशाला, प्याला, मदिरा से कवि का यह तात्पर्य कतई नहीं है कि वह शराब या सुरा की बात कर रहा है. 'मधुशाला' में वर्णित प्याला, साक़ी, मदिरा, अंगूर' आदि शब्दों को कवि ने विभिन्न प्रतिकार्थों में प्रयुक्त किया है.

पाठ परिचय

कवि कहता है मैंने कि भावुकता रूपी अंगूरों की बेल से, कल्पना रूपी जिस हाला को निचोड़ा है और स्वयं साक़ी के रूप में उसको कविता रूपी प्याले में भरकर जनता के सामने प्रस्तुत कर दिया है. इसे पीने वाले चाहे लाखों की संख्या में क्यों न हों, किंतु उसका (जाम) कभी भी खाली न होगा. इसी क्रम में वे आगे कहते हैं कि मेरी पुस्तक ही मेरी मधुशाला है और इसे पीनेवाले मेरे पाठक हैं. अपने कल्पना रूपी हाथों से मैं इसे स्वयं भी पीता रहता हूं अत: मैं स्वयं ही साक़ी (शराब देने वाला) भी हूं और स्वयं ही इसे पीनेवाला भी हूं. शराबघर (मधुशाला) में जाने वाले इस दुविधा में पड़े रहते हैं कि वे किस रास्ते से जाएं किंतु कवि उन्हें परामर्श देता है कि 'राह पकड़ तू एक चला चल, पा जाएगा मधुशाला.'

वस्तुत: बच्चन जी जीवन के कवि हैं. उन्होंने उमर खैय्याम से 'हाला', 'प्याला', 'साक़ी' के प्रतीक अवश्य लिए हैं किंतु कल्पना, विचार, भाव योजना उनकी अपनी है. उमर खैय्याम के काव्य में जीवन निराशा और मृत्यु के भय से पीड़ित हैं, उनकी मनोवृत्ति जीवन की क्षण भंगुरता पर टिकी है जबकि बच्चन की काव्य चेतना जीवन की मादकता लेकर विराट का पावन स्पर्श और आलिंगन करती हुई दीखती है. अत: बच्चन जी का जीवन दर्शन शाश्वत जीवन पर आधारित है.

19.3 मूलपाठ

मधुशाला

1. भावुकता अंगूर लता से
खींच कल्पना की हाला,
कवि साक़ी बनकर आया है
भरकर कविता का प्याला,

कभी न कणभर खाली होगा,
लाख पिएं, दो लाख पिएं ।
पाठकगण हैं पीनेवाले,
पुस्तक मेरी मधुशाला ।

BRAOU

मधुर भावनाओं की सुमधुर
नित्य बनाता हूं हाला,
भरता हूं इस मधु से अपने
अन्तर का प्यासा प्याला,

उठा कल्पना के हाथों से
स्वयं उसे पी जाता हूं,
अपने ही में हूं मैं साक़ी
पीने वाला मधुशाला ।

मदिरालय जाने को घर से
चलता है पीनेवाला,
'किस पथ से जाऊं ?' असमंजस
में है वह भोलाभाला ।

अलग-अलग पथ बतलाते सब
पर मैं यह बतलाता हूं -
'राह पकड़ तू एक चला चल,
पा जाएगा मधुशाला ।

मुख से लू अविरत कहता जा
मधु, मदिरा मादक हाला,
हाथों में अनुभव करता जा
एक ललित कल्पित प्याला,

ध्यान किए जा मन में सुमधुर,
सुखकर, सुंदर साक़ी का
और बढ़ा चल, पथिक, न तुझको
दूर लगेगी मधुशाला ।

मदिरा पीने की अभिलाषा
ही बन जाए जब हाला,
अधरों की आतुरता में ही
जब आभासित हो प्याला,

बने ध्यान ही करते-करते
जब साक़ी साकार, सखे
रहे न हाला, प्याला साक़ी,
तुझे मिलेगी मधुशाला ।

सुन, कलकल छलछल मधु
घट से गिरती प्यालों में हाला,
सुन, रुनझुन रुनझुन चल
वितरण करती मधु साक़ीबाला,

BRAOU

बस आ पहुंचे, दूर नहीं कुछ
चार क़दम अब चलना है,
चहक रहे, सुन पीनेवाले,
महक रही, ले मधुशाला ।

जल तरंग बजता, जब चुंबन
करता प्याले को प्याला,
वीणा झंकृत होती, चलती
जब रुनझुन साक़ीबाला,

डांट-डपट मधुविक्रेता की
ध्वनित परवावज करती है,
मधुरव से मधु की मादकता
और बढ़ाती मधुशाला ।

19.4 सारांश

प्रस्तुत पंक्तियां श्री हरिवंशराय बच्चन द्वारा रचित 'मधुशाला' काव्य की प्रारंभिक पंक्तियां हैं. कवि इन पंक्तियों द्वारा यह स्पष्ट करते हैं कि वास्तव में वे जिस मधुशाला की बात कर रहे हैं वह उनकी पुस्तक रूपी 'मधुशाला' है और वे जिन पीनेवालों की चर्चा कर रहे हैं वे उनके पाठक गण हैं.

कवि कहता है कि मैंने भावनाओं रूपी अंगूर की बेल (लता) से कल्पना रूपी शराब बनाई है और मैं स्वयं साक़ी बनकर (शराब का प्याला देने वाला) इस कविता रूपी प्याले को अपने पाठकों के सम्मुख पेश कर रहा हूं.

मेरी कविता रूपी प्याले में भरी हुई शराब ऐसी है कि इसे पीनेवाले चाहे लाख या दो लाख व्यक्ति ही क्यों न हों, किंतु यह प्याला ज्यों का त्यों भरा रहेगा, इसका एक कण भी कभी खाली नहीं होगा. कवि के कहने का तात्पर्य यह है कि इस पुस्तक 'मधुशाला' की कविताओं की मधुरिमा एवं मादकता ज्यों की त्यों बनी रहेगी. कवि यह भी स्पष्ट कर देता है कि इस कविता रूपी शराब को पीनेवाले उसके पाठक गण हैं.

BRAOU

विशेष

बच्चन जी ने 'मधुशाला' के प्रारंभ में ही यह स्पष्ट कर दिया है कि मधुशाला से उनका तात्पर्य शराबख़ाने से क़तई नहीं है. यद्यपि उन्होंने प्रतीक वही लिए हैं जो शराबख़ाने और शराब बनाने और पीने तथा पिलानेवालों के काम आते हैं. वे प्रतीक इस प्रकार हैं - 1. शराब के उपकरण - कविता के उपकरण, 2. अंगूर की बेल - कवि की भावुकता, 3. शराब या हाला - कवि की कल्पना, 4. साक़ी - कवि, 5. जाम या प्याला - काव्यकृति के छंद, 6. पीनेवाले - पाठकगण, 7. मधुशाला - काव्य कृति.

2. काव्यरूपी मधुशाला की रचना प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए बच्चन जी कहते हैं कि अपनी सुमधुर भावनाओं से मैं प्रतिदिन कविता रूपी हाला का निर्माण करता हूं और इस शराब से अपने हृदय के प्यासे प्याले को भरता रहता हूं. जब मेरी भावनाओं रूपी हाला से प्याला भर जाता है तो उसे

कल्पनारूपी हाथों से उठाकर मैं स्वयं ही पी जाता हूं. मैं स्वयं ही इस मधुशाला (शराब घर) का साक़ी (शराब देने वाला) हूं और स्वयं ही इसे पीने वाला शराबी भी हूं.

विशेष

कवि ने प्रस्तुत छन्द में तीन क्रियाओं का वर्णन किया है -

1 'मधुर भावनाओं की सुमधुर, नित्य बनाता हूं हाला.'
2 भरता हूं इस मधु से अपने अंतर का प्यासा प्याला.'
3 उठा कल्पना के हाथों से स्वयं ही इसे पी जाता हूं.

अर्थात् कवि अपने जीवनानुभवों और भावनाओं के द्वारा अपने काव्य की नित्य रचना करता है. फिर अपनी ही रची हुई रचना उसके हृदय में तृप्ति का अहसास भरती है और अंत में वह स्वयं ही अपनी रचना का पहला पाठक होता है. इसीलिए कवि अंत में कहता है कि 'अपने ही में हूं मैं साक़ी पीने वाला मधुशाला.' इन पंक्तियों के द्वारा बच्चन जी ने काव्य की रचना-प्रक्रिया पर प्रकाश डाला है.

3. मदिरालय को ईश्वर का प्रतीक सिद्ध करते हुए बच्चन जी कहते हैं कि मधुशाला या शराबघर जाने के लिए पीने वाला घर से तो निकलता है लेकिन वह दुविधा में पड़ जाता है क्योंकि मदिरालय अर्थात् ईश्वर के द्वार पर जाने के कई रास्ते हैं वह किस रास्ते से जाएं यही उसके असमंजस का कारण है. कवि कहता है कि सभी लोग तुझे अलग-अलग रास्ते बतलायेंगे लेकिन मैं उसे मात्र एक ही रास्ता बतलाना चाहता हूं कि तू किसी भी एक रास्ते को अपनाकर उसी पर आगे बढ़ता चल और अंत में तू मधुशाला पा ही जाएगा.

विशेष

यहां मदिरालय से कवि का तात्पर्य ईश्वर के द्वार तक पहुंचना है. अलग-अलग पथ बतलाने से कवि का तात्पर्य भिन्न-भिन्न साधना मार्ग हैं और 'एक राह पकड़' से कवि का तात्पर्य है कि प्रेम का मार्ग एक ही होता है . साधक उसी एक प्रेम के मार्ग से ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है. साधना के मार्ग चाहे कितने ही भिन्न क्यों न हों लक्ष्य तो ईश्वर को प्राप्त करना है और उसके लिए एक ही मार्ग है वह है प्रेम का मार्ग.

4. साधक के सम्मुख मधु, साक़ी, मादक हाला का काल्पनिक चित्र खींचते हुए कवि कहता है कि मधुशाला की ओर जाने वाले साधक, तू लगातार अपने मुख से उस मस्त कर देने वाली मदिरा का स्मरण करता जा. साथ ही उसी मादकता के साथ तू यह भी कल्पना कर कि तेरे हाथों में मदिरा से भरा हुआ सुंदर प्याला भी है. यही नहीं तू रूपसी सुंदर साक़ी बाला और उसके सुमधुर कण्ठ तथा उसकी सुखदायक बातों के ध्यान में भी डूब जा. इन मधुर कल्पनाओं में डूबा हुआ तू निरंतर आगे बढ़ता चल इससे तुझे मधुशाला दूर नहीं लगेगी.

विशेष

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने मधुशाला तक पहुंचने अर्थात् साधक के ईश्वर तक पहुंचने के मार्ग की दूरी को ईश्वर के ध्यान में ही निमग्न रहते हुए तय करने का सुगम सरल मार्ग बतलाया है. प्रेम और सौंदर्य की कल्पना मन में उल्लास भर देती है और यदि साधक उसकी कल्पना करते हुए साधना के मार्ग को तय करे तो ये मधुर कल्पनाएं मार्ग की कठिनाइयों का अहसास नहीं होने देती.

5. सुरापान के इच्छुक साधक को संबोधित करते हुए कवि बच्चन कहते हैं कि जब ईश्वर का प्रेम प्राप्त करने की इच्छा अर्थात् मदिरा पीने की इच्छा ही शराब बन जाए, जब होंठ उस मदिरा को पीने की लालसा में ही यह आभास करने लगे कि प्याला होठों से लगा हुआ है. जब साक़ीबाला का ध्यान करते ही शराबी को यह महसूस होने लगे कि वह साकार रूप में सामने ही है तब साधक शराब, प्याला और साक़ी को भूल जाता है और उसे मधुशाला की प्राप्ति हो जाती है.

विशेष

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने मधुशाला को एक रहस्यमयी अनुभूति में परिणत करने का प्रयास किया है, जैसे -

1. जब शराब पीने की इच्छा इतनी तीव्र हो जाए कि वह इच्छा ही शराब की तरह मादक हो अर्थात् प्रिय से मिलने की इच्छा ही मादकता उत्पन्न कर दें.
2. जब सुरापान के लिए व्याकुल होठों को यह आभास होने लगे कि उनसे जाम लगा हुआ है.
3. जब किसी सुंदर साक़ी का ध्यान करते हुए ऐसा लगने लगे कि वह साक्षात् सामने खड़ी हो.
4. यदि उपर्युक्त तीनों स्थितियां साधक अनुभव करेगा तो उनका परिणाम यह निकलेगा कि न हाला होगा, न प्याला और न साक़ी, सभी का अंतर मिट जाएगा और साधक मधुशाला को प्राप्त कर लेगा.

6. 'मधुशाला' की ओर जाने वाले यात्री को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हुए कवि कहता है कि तू अब मधुशाला के समीप आ पहुंचा है. इसका प्रमाण यह है कि सुन तुझे कलकल छलछल करती हुई शराब के ढलने की आवाज आ रही है. साक़ीबाला घड़ों से प्यालों में शराब डाल रही है. तुझे उस साक़ीबाला के घुंघरुओं की रुनझुन-रुनझुन भी सुनाई देगी जो पीनेवालों के जामों में सुरा का वितरण कर रही है. तुम यह समझ लो कि अब तुम मधुशाला तक आ ही पहुंचे हो, अब वह मात्र चार कदम की दूरी पर ही रह गई है. यदि तुम ध्यान से सुनोगे तो तुम्हें पीने वालों के चहकने की आवाज ही नहीं, बल्कि सुरा की महक की भनक भी लगेगी.

DRAOU

विशेष

शराब पात्र (बरतन) के रूप में सुराही का प्रयोग मिलता है, घड़े का नहीं. बच्चन जी ने यहां घट (घड़े) शब्द का प्रयोग किया है जो असंगत लगता है. कलकल, छलछल के रूप में ढाली जाती हुई मदिरा का कवि ने बहुत सुंदर ध्वनि-चित्र प्रस्तुत किया है.

7. 'मधुशाला' के भीतरी दृश्य को चित्रित करते हुए कवि बच्चन कहते हैं कि जब एक प्याला दूसरे प्याले से टकराता है तो मानों ऐसा लगता है कि दोनों प्याले एक दूसरे का चुंबन ले रहे हों और उन प्यालों की टकराहट में कवि को ऐसा लगता है मानों जलतरंग बज रहा हो. जब मदिरा बांटती हुई साक़ीबाला चलती है तो उसके पैरों में बंधे घुंघरुओं से जो ध्वनि निकलती है वह ऐसी लगती है मानों कहीं वीणा झंकृत हो रही हो. यहां तक कि शराब बेचने वाले की डांट-डपट भी मानो ऐसी लगती है जैसे मृदंग बज रहा हो. इस प्रकार मधुशाला में भिन्न-भिन्न प्रकार की मधुर ध्वनियां मदिरा की मादकता को और भी अधिक बढ़ा देती हैं.

विशेष

प्रस्तुत छन्द में कवि ने मधुशाला पर संगीतात्मकता का सुंदर आरोप किया है. रूपक अलंकार का जो सुंदर प्रयोग किया गया है वह द्रष्टव्य है.

19.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

श्री हरिवंशराय बच्चन हिंदी साहित्य में हालावाद के प्रवर्तक माने जाते हैं. बच्चन जी ने 'मधुशाला' की रचना 1933-34 ई. में की थी. यह समय छायावाद के ह्रास तथा प्रगतिवाद के प्रारंभिक उत्थान का समय था. यह सर्वविदित है कि 'मधुशाला' की प्रेरणा का श्रेय उमर खैय्याम को है. बच्चन जी ने 1933 में फिट्जराल्ड की 'रुबाइयात उमर खैय्याम' का हिंदी में अनुवाद किया था. उसी समय उन्हें हाला, प्याला और मधुशाला के वे प्रतीक मिले जो 'मधुशाला' की रचना में सहायक सिद्ध हुए. बच्चन जी का कथन है कि "उमर खैय्याम ने रूप, रंग, रस की एक नई दुनिया ही मेरे आगे नहीं उपस्थित की, उसने भावना, विचार और कल्पना के सर्वथा नये आयाम मेरे लिए खोल दिए. उसने जगत, नियति और प्रकृति को सामने लाकर मुझे अकेला खड़ा कर दिया. मेरी बात को उसने तान में बदल दी, अब तक मैं लिख रहा था अब गाने लगा. खैय्याम से जो प्रतीक मुझे मिले थे उनसे अपने को व्यक्त करने में मुझे बड़ी सहायता मिली."

यद्यपि 'मधुशाला' के रचने में उमर खैय्याम बच्चन जी के प्रेरणास्रोत अवश्य रहे हैं लेकिन 'मधुशाला' में व्यक्त जीवन दर्शन बच्चन का मौलिक जीवन दर्शन है. खैयाम जहां संसार की असारता, निराशावाद, क्षणभंगुर जीवन में अधिक से अधिक सुख भोग, शराब की तारीफ आदि की बात करते हैं वहीं बच्चन जी आशावाद और इस सांसारिक जीवन को सुंदर और सुखमय बनाने की प्रेरणा देते हैं. विश्व मंगल की कामना का जो स्वर बच्चन जी में है वह उमर खैयाम में नहीं है, जैसे -

"मेरी तृष्णा तो मूर्तिमती
परिपूर्ण विश्व की आकांक्षा
मानव अशांति मानव स्वप्नों
के गान ही तो गाता हूं
गाऊंगा जब तक एक नहीं
होकर मिलते संघर्श-प्रणय"

यही नहीं बच्चन कृत 'मधुशाला' अपने पाठकों को एक ऐसा संदेश देती है जो धर्म के संकीर्ण दायरे से दूर मानव के परस्पर विशुद्ध प्रेम पर आधारित है -

"धर्म ग्रंथ सब जला चुकी है
जिसके अंतर की ज्वाला
मंदिर, मस्जिद, गिरजे - सबको
तोड़ चुका जो मतवाला,

पंडित, मोमिन, पादरियों के
फंदों को जो काट चुका,
कर सकती है आज उसी का
स्वागत मेरी मधुशाला ।"

वे यह मानते हैं कि ये मंदिर-मस्जिद ही हैं जो मनुष्य की मनुष्य से दूरी उत्पन्न करते हैं और उनमें मेल मधुशाला ही करवा सकती है -

"दोनों रहते एक न जब तक
मंदिर-मस्जिद में जाते,
लड़वाते हैं मंदिर-मस्जिद,
मेल कराती मधुशाला ।"

यही नहीं वे समाज में फैली छुआ-छूत और जाति-भेद की भावना को भी मधुशाला द्वारा दूर करने का संदेश देते हैं -

"कभी नहीं सुन पड़ता उसने छू दी मेरी हाला,
कभी नहीं - इसने हा जूठाकर डाला मेरा प्याला
भूसुर भंगी सभी यहां पर साथ बैठकर पीते हैं,
सौ सुधारकों का करती है काम अकेले मधुशाला ।'

शिल्प की दृष्टि से 'मधुशाला' की भाषा सादगी लिए हुए सीधी व सरल है. बच्चन जी की भाषा में व्यर्थ पांडित्य प्रदर्शन का मोह नहीं है. बच्चन जी की प्रवृत्ति कविता की अपेक्षा गीत लिखने की ओर सहज रूप से रही है. गीति काव्य में जिस कोमल और मधुर पदावली की आवश्यकता होती है वह 'मधुशाला' में हमें सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है. अंत में पंत जी के शब्दों में कहा जाए तो "उनकी 'मधुशाला' प्यासे पाठकों को अक्षय जीवन चेतना की अमिट आशा उल्लास भरी मदिरा पिलाकर उनके प्राणों में नवीन जीवन का संचार करने में सफल होती है."

19.6 शब्दार्थ

1.	भावुकता	-	भावनाएं
	लता	-	बेल
	खींच	-	खींचना (बनाना), अंगूर से शराब बनाई जाती है.
	हाला	-	शराब
	साक़ी	-	वह स्त्री या पुरुष जो शराब का जाम लेकर आता है.
	मधुशाला	-	शराबघर, मदिरालय
2.	मधुर	-	मीठी
	सुमधुर	-	बहुत अधिक मीठी
	नित्य	-	रोज़, प्रत्येक दिन
	मधु	-	शराब
	अंतर	-	हृदय
3.	मदिरालय	-	शराब घर
	पथ	-	रास्ता, मार्ग
	असमंजस	-	दुविधा, उधेड़बुन
	राह	-	रास्ता

BRAOU

4. मुख - मुंह
अविरत - लगातार
मादक - मस्त कर देने वाली, नशीली
अनुभव - महसूस करना
ललित - सुंदर
पथिक - मुसाफिर

5. अभिलाषा - इच्छा, आकांक्षा
अधरों - होठों
आतुरता - व्याकुलता, बेचैनी
आभासित - झलक मिलना, आभास होना
साकार - जिसका आकार हो, साक्षात् दिखाई देना

6. मधु - शराब
घट - घड़ा
वितरण - बांटना
चहक रहे - खुश हो रहे
महक - खुशबू आ रही है

7. जलतरंग - संगीत का एक वाद्य
चुंबन - चूमना
झंकृत - बजना
मधु विक्रेता - शराब बेचने वाला
ध्वनित - बजती, आवाज़ करती
परवावज - मृदंग
मधुरव - मीठी आवाज
मादकता - मस्ती, नशीली

BRAOU

19.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

19.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. पठित छंदों के आधार पर बच्चन जी की 'मधुशाला' का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए.
2. 'यद्यपि 'मधुशाला' काव्य रचने में प्रेरणा उमर खैय्याम की थी लेकिन मधुशाला में व्यक्त जीवन दर्शन बच्चन जी का अपना था.' - सिद्ध कीजिए.
3. हरिवंशराय बच्चन जी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए.

19.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. किसी एक छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -
"मधुर भावनाओं की सुमधुर
नित्य बनाता हूं हाला,

भरता हूं इस मधु से अपने
अन्तर का प्यासा प्याला ।"

2. कवि की कविता का प्याला कभी भी खाली क्यों न होगा ? पठित छन्द के आधार पर स्पष्ट कीजिए.

3. मधुशाला काव्य सृजन की प्रेरणा पर प्रकाश डालिए.

19.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

19.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- 'मधुशाला' का मूल प्रतिपाद्य क्या है ? पठित पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए.

उत्तर- बच्चन जी की 'मधुशाला' अपने समय की सर्वाधिक लोकप्रिय कृति रही है. इसका रचनाकाल 1933-34 के आस-पास है. इससे पहले 1933 में बच्चन जी फिट्ज़राल्ड की रुबाइयात उमर खैयाम का हिंदी में अनुवाद कर चुके थे. बच्चन जी ने मधुशाला लिखने की प्रेरणा उमर खैयाम से प्राप्त की थी लेकिन इस काव्य में व्यक्त जीवन-दर्शन उनका अपना था.

बच्चन जी जीवन के यथार्थ से जूझते हुए एक संघर्षरत व्यक्ति थे. जीवन और जगत के प्रति उनका दृष्टिकोण मधुशाला तक इतना दृढ़ नहीं हो पाया था कि उसमें कुछ पूर्वाग्रह हो. वे सुखमय भविष्य के स्वप्न देखते थे और उन्हें पूर्ण करने का उनमें अदम्य उत्साह भी था. इसलिए उनकी मधुशाला में हमें कहीं भी निराशा और पलायन के दर्शन नहीं होते बल्कि वे तो बार-बार आस्था और विश्वास की पुरजोर वकालत करते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं -

"मदिरालय जाने को घर से चलता है पीनेवाला
किस पथ से जाऊं असमंजस में है यह भोलाभाला
अलग-अलग पथ बतलाते सब पर मैं यह बतलाता हूं
राह पकड़ तू एक चला चल पा जाएगा मधुशाला ।"

बच्चन जी की "मधुशाला" न केवल आशा और विश्वास का संचार करती है बल्कि उसमें लोक-कल्याण और विश्व मंगल की भावना भी कूट-कूटकर भरी हुई है. हिंदू-मुस्लिम एकता के प्रचार की दृष्टि से उनकी यह रुबाई बहुत प्रसिद्ध है -

"मुसलमान हो हिंदू हैं दो एक मगर उनका प्याला
एक मगर उनका मदिरालय एक मगर उनकी हाला ।
दोनों एक न जब तक मंदिर मस्जिद में जाते,
लड़वाते हैं मंदिर-मस्जिद मेल कराती मधुशाला ।"

पाखंडी धर्मात्माओं पर उनका व्यंग्य बरबस ही क्रांतिकारी कवि कबीर की याद दिला देता है -

"वली नफ़ीरी और नमाजी भूल गया अल्लाताला
पंडित अपनी पोथी भूला साधू भूल गया माला ।"

यही नहीं उनकी मधुशाला किसी जाति-पांती के भेदभाव को भी नहीं मानती, न ही छुआछूत और जूठन इत्यादि में उसका विश्वास है -

BRAOU

"कभी नहीं सुन पड़ता उसने छू दी मेरी हाला,
कभी नहीं इसने हा जूठाकर डाला मेरा प्याला ।
भूसुर भंगी सभी यहां पर साथ बैठकर पीते हैं,
सौ सुधारकों का करती है काम अकेली मधुशाला ।"

बच्चन जी वस्तुत: जीवन के रस और गंध के कवि हैं. मधुशाला में जहां लोक कल्याण और विश्व मंगल की भावना की अभिव्यक्ति हुई है वहीं उसमें ईश्वर के प्रति प्रेम और सौंदर्य की भी कमी नहीं है. इसी कारण मधुशाला में विशुद्ध आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति का प्रयास भी मिलता है 'दिन को होली, रात दिवाली, रोज मनाती मधुशाला.' 'मधुशाला' में अधिकांशत: इसी आध्यात्मिक मिलन की खुमारी छायी हुई है. लौकिक भावनाओं के साथ-साथ कवि की मधुशाला 'मधुरव से मधु की मादकता बढ़ाती है, पाठकों, श्रोताओं को पीड़ा में आनंद लोक का सुखद स्मरण कराती है.

19.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न- निम्नलिखित छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -

"भावुकता अंगूर लता से
खींच कल्पना की हाला,
कवि साक़ी बनकर आया है
भरकर कविता का प्याला,

कभी न कणभर खाली होगा
लाख पिएं, दो लाख पिएं
पाठकगण है पीने वाले
पुस्तक मेरी मधुशाला ।"

BRAOU

उत्तर- संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां श्री हरिवंशराय बच्चन द्वारा रचित 'मधुशाला' की प्रारंभिक पंक्तियां हैं. इन पंक्तियों में उन्होंने यह भाव व्यक्त किया है कि मैं जिस मधुशाला की बात कर रहा हूं वह मदिरालय न होकर मेरी पुस्तक रूपी मधुशाला है और मैं जिन पीनेवालों की चर्चा कर रहा हूं, वे मेरे पाठकगण हैं.

भावार्थ : कवि बच्चन कहते हैं कि मैंने भावनारूपी अंगूर की बेल से कल्पनारूपी शराब खींची है और मैं स्वयं साक़ी बनकर इस कवितारूपी प्याले को अपने पाठकों के सम्मुख पेश कर रहा हूं. मेरी कवितारूपी प्याले में भरी हुई शराब ऐसी है कि इसे पीने वाले चाहे लाख हो या दो लाख, यह प्याला ज्यों का त्यों भरा रहेगा. इसका एक कण भी कभी खाली नहीं होगा. कहने का तात्पर्य यह है कि 'मधुशाला' की कविताओं की मादकता ज्यों की त्यों बनी रहेगी. कवि यह भी स्पष्ट करता है कि इस कवितारूपी शराब को पीने वाले उसके पाठकगण ही हैं.

<u>विशेष</u>

यहां कवि ने प्रारंभ में ही स्पष्ट कर दिया है कि 'मधुशाला' से उनका तात्पर्य शराबखाने से कतई नहीं है यद्यपि प्रतीक उन्होंने वही लिए हैं जो शराब बनाने, पीने तथा पिलानेवालों के काम आते हैं.

19.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व सं. बांके बिहारी भटनागर
2. बच्चन निकट से : सं. अजित कुमार, ओंकारनाथ श्री वास्तव
3. बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व : जीवन प्रकाश जोशी

******

BRAOU

इकाई 20 : दिनकर की विता : पाटलीपुत्र की गंगा से

रूपरेखा

20.1 पाठ का उद्देश्य
20.2 पाठ एवं कवि परिचय
20.3 मूलपाठ
20.4 सारांश
20.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
20.6 शब्दार्थ
20.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
20.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
20.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
20.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
20.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
20.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
20.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

20.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में राष्ट्रकवि रामधारी सिंह "दिनकर" की ओजस्वी कविता "पाटलीपुत्र की गंगा से" पर प्रकाश डाला गया है. इस कविता के अध्ययन से आप -

* स्वतंत्रता-पूर्व भारत की दशा को समझ सकेंगे.
* भारत के अतीत के गौरव को जान सकेंगे.
* देश की स्वतंत्रता हेतु कवि के भाव विचारों को समझ सकेंगे.
* देश-प्रेम पर कवि का दृष्टिकोण समझ सकेंगे.

20.2 पाठ एवं कवि परिचय

कवि परिचय

आधुनिक हिंदी काव्यधारा में देश-प्रेम एवं अतीत के गौरवयुक्त सांस्कृतिक भाव-विचारों से ओत-प्रोत कवियों में रामधारी सिंह "दिनकर" की गणना होती है. इनका जन्म सन् 1865 को बिहार के मुंगेर जिले के सिमरयाघाट नामक गांव में हुआ. बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के होने के कारण इनकी शिक्षा विशेष दृष्टिकोण से सफल हुई. आप मुजफरपुर के पोस्ट ग्रेज्युयेट कॉलेज में प्राध्यापक बने. पश्चात् सब-रजिस्ट्रार का कार्य किया. आपने आकाशवाणी में भी कार्य किया. आगे चलकर अपनी महान् हिंदी-सेवा के कारण ये राज्यसभा के मनोनीत सदस्य बनाये गये. पर इन्हें राजनीति में रुचि नहीं थी. इसीलिए राजनीति का क्षेत्र इन्होंने छोड दिया और साहित्य-साधना में लगे रहे. आगे चलकर आपको भागलपुर विश्व विद्यालय का उपकुलपति बनाया गया. भारत सरकार ने इन्हें "राष्ट्रकवि" एवं "पद्मभूषण" का गौरव देकर सम्मानित किया.

BRAOU

देश के स्वतंत्रता आंदोलन में दिनकर का सक्रिय एवं सराहनीय योगदान रहा है. सन् 1921 के असहयोग आंदोलन में आप अग्रगण्य रहे. इनका स्वर्गवास सन् 1974 को हुआ.

दिनकर छायावादी काव्यधारा के समय से ही कवितायें करते रहे. स्वभाव से ही राष्ट्रीय-सांस्कृतिक भाव-विचारों से ओत-प्रोत होने के कारण देश-प्रेम की ओजस्विता उनके काव्य का मूल प्राण बन गई. स्वतंत्रता आंदोलनों के दिनों दिनकर ने देशवासियों को भारत के अतीत गौरव की बुलन्द वाणी सुनाकर स्वातंत्र्य-संग्राम के लिए प्रेरित किया. उनके विचारानुसार हमारा अतीत गौरवशाली और समृद्ध रहा है. हम उसी को स्मरण करते हुए भविष्य के लिए सचेत और उद्‌बुद्ध रहे तो निस्संदेह हमारे देश का भविष्य अत्यंत उज्वल हो सकता है. उनकी कविताओं में अन्याय, दमन और शोषण के विरोध में क्रांति का आह्वान दृष्टिगत होता है.

रेणुका, हुंकार, रसवंती, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, द्वंद्व गीत, सामधेनी, बापू, मगध महिमा, इतिहास के आंसू, दिल्ली, नीलकुसुम, चक्रपाल, परशुराम की प्रतीक्षा और उर्वशी दिनकर के प्रसिद्ध काव्य हैं. संस्कृति के चार अध्याय, मिट्टी की ओर, रेती के फूल, अर्द्धनारीश्वर उनके प्रमुख गद्य कृतियां हैं.

20.3 पाठ का उद्देश्य

पाठ-परिचय

प्रस्तुत कविता "पाटलीपुत्र की गंगा से" के माध्यम से कवि दिनकर ने समूचे देश को सचेत किया है. आज़ादी के पूर्व लिखी होने के कारण इसमें देश-प्रेम एवं भारत देश के अतीत का गौरव कूट-कूट कर भरा है. कविता में वर्णित पाटलीपुत्र गंगा के सौंदर्य-सुषमा का आधार ही नहीं, अपितु पौरुष का पूंजीभूत क्रांति-ज्वाल है. कविता का प्रत्येक स्वर इस बात का प्रमाण है कि, कवि का मन परतंत्र देश की दशा से पूर्णरूपेण विक्षुब्ध है.

"पाटलीपुत्र की गंगा से" दिनकर की अत्यंत प्रसिद्ध कविता है. राष्ट्रप्रेम की भावभूमि पर प्रतिष्ठित यह कविता त्याग, बलिदान और देश की चेतना से परिपूर्ण है.

BRAOU

20.3 मूलपाठ : "पाटलीपुत्र की गंगा से"

संध्या के इस मलिन सेज पर
गंगे ! किस विषाद के संग
सिसक-सिसककर सुला रही तू
अपने मन की मृदुल उमंग ?

उमड रही आकुल अंतर में
कैसी यह वेदना अथाह
किस पीडा के गहन भार से
निश्चल-सा पड गया प्रवाह ।

मानस के इस मौन मुकुल में
सजनी कौन-सी व्यथा अपार
बनकर गंध अनिल में मिल
जाने को खोज रही लघु द्वार ।

चल अतीत की रंगभूमि में
स्मृति के पंखों पर चढ़ अनजान
विकल चित्त सुनती तू अपने
चन्द्रगुप्त का क्या जय-गान ।

घूम रहा पलकों के भीतर
स्वप्नों-सा गत विभव विराट
आता है क्या याद ? मगध का
सुरसरि ! वह अशोक सम्राट !

सन्यासिनी-समान विजन में
कर-कर गत विभूति का ध्यान,
रो-रोकर गा रही देवि ! क्या
गुप्त वंश का गौरव गान ।

गूंज रहे तेरे इस तट पर
गंगे ! गौतम के उपदेश,
ध्वनित हो रहे इन लहरों में
देवी ! अहिंसा के संदेश ।

20.4 सारांश

यह दिनकर की राष्ट्रीय-चेतनायुक्त भावनाओं से ओत-प्रोत कविता है. पाटलीपुत्र के निकट से बहनेवाली गंगा को देखकर कवि के मन में देश का अतीत जाग उठता है और देशवासियों में देशप्रेम की चेतना जगाने हेतु वह गंगा से कहता है कि -

हे गंगे, इस संध्या रूपी मलिन सेज पर तुम किस विषाद के साथ अपनी कोमल उमंगों को रो-रो सिसक-सिसक कर सुला रही हो ? तुम्हारे व्याकुल मन में यह कैसी गहरी वेदना उमड़ रही है ? जिसकी पीड़ा के गहन-भार से तुम्हारा प्रवाह निश्चल-सा पड़ गया है ?

हे सजनी, तुम्हारे हृदय के इस मौन पुष्प में कौन-सी गहरी अपार व्यथा निहित है, जो अग्नि की ज्वालायें बनकर व्यक्त होने का मार्ग खोज रही है ?

हे गंगे ! स्मृतियों के अनजाने पंखों पर चढ़कर अतीत की रंगभूमि पर चलो. क्या तुम अपने व्याकुल चित्त से अपने ही वीरपुत्र चन्द्रगुप्त का जय-गान सुनती हो ? क्या तुम्हारी पलकों में व्यतीत विराट के वैभव का स्वप्न उभर कर आता है ? उसी तरह, क्या तुम्हें मगध का वह अशोक सम्राट याद आता है, जिसने अपने देश का गौरव बढ़ाया था ?

हे गंगे ! तुम्हें देखकर ऐसा लगता है कि, आज इस परतंत्र देश की स्थिति एवं देशवासियों की दशा को परखकर तुम निर्जन में सन्यासिनी के समान ध्यान लगाये बैठी हो और अपने विगत वैभव का स्मरण कर रो-रो कर गुप्त-वंश के शासन का गौरव-गान कर रही हो.

हे गंगे ! तुम्हारे इस तट पर महात्मा गौतम बुद्ध के उपदेश गूंज रहे हैं और हे देवी ! तुम्हारी इन लहरों में अहिंसा के संदेश भी प्रतिध्वनित हो रहे हैं.

BRAOU

20.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' की कविता "पाटलीपुत्र की गंगा से" अत्यंत लोकप्रिय है. कवि ने इसे सन् 1931 में लिखा है. इन दिनों देश को स्वतंत्र करने की कामना प्रबल हो रही थी. देशभर के युवक स्वतंत्रता आंदोलन में अग्रसर थे. आवेश और आक्रोश से युक्त दिनकर का युवा मन उस समय क्रांति की ओर झुकता हुआ नजर आता है. फिर भी मन के आक्रोश को दबा कर दिनकर ने संयम को अपनाया और अनन्त भारत के अतीत वैभव एवं गौरव के शब्द-चित्र उतारे. इस कविता के स्वरों के माध्यम से कवि ने उस समय के भारतीयों के मन में देशभक्ति के बीज बोने का प्रयत्न किया है. इसमें भारत की अनेक विभूतियों की भव्यता साकार हो उठी है.

भारतवासियों के आध्यात्मिक और भौतिक जीवन में, भावनाओं और कल्पनाओं तथा संवेदनाओं और संवेगों में गंगा भव्यता और पवित्रता का प्रतीक रही है. देश के इतिहास एवं गौरव से इसका अटूट संबंध रहा है. अनेक वीरों की विजयों और पराजयों को इसने देखा है. इसीलिए कवि ने गंगा को अपनी व्यथित गाथा सुनाई है और देशवासियों के मन-मस्तिष्क में देशप्रेम की चेतना जगाने हेतु गंगा को ही अपने भा[illegible] विचारों का माध्यम बनाया है.

पारतंत्रता की श्रृंखलाओं में जडित अपने देश की स्थिति को देखकर कवि का मन व्याकुल होता है और संवेदनाओं के आक्रोश से गंगा से वह निवेदन करता है कि, हे गंगे ! भारतवासियों को अतीत का गौरव सुना दे और एक ऐसा मंत्र फूंक दे, जिससे कि सारा देश जाग उठे और स्वतंत्रता के नारे गूंज उठे. यही कारण है कि देशप्रेम की चेतना से यह कविता ओत-प्रोत है.

20.6 शब्दार्थ

विषाद	-	दुख
मृदुल	-	कोमल, मीठा
आकुल	-	व्याकुल
मलिन	-	मैला
अथाह	-	गहरी
अनिल	-	आग
स्मृति	-	याद
सेज	-	बिछौना
विकल-चित्त	-	व्याकुल हृदय
ध्वनित	-	गूंजित
निश्चल	-	स्थिर
मानस	-	हृदय
अतीत	-	बीता समय
विभव	-	वैभव
सुरसरि	-	गंगा
विजन	-	निर्जन
विभूति	-	वैभव

BRAOU

तट - किनारा

20.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

20.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. "पाटलीपुत्र की गंगा से" कविता में कवि ने भारत की प्राचीन गरिमा का चित्रण किस प्रकार किया है?
2. "पाटलीपुत्र की गंगा से" कविता का सारांश लिखकर उसकी विशेषताएं बताइये.
3. "पाटलीपुत्र की गंगा से कविता द्वारा दिनकर जन-मानस में राष्ट्रीय-चेतना भरना चाहते थे" - स्पष्ट कीजिए.
4. "पाटलीपुत्र की गंगा से" कविता में प्राचीन गौरव के साथ देश को स्वतंत्र करने की जागृति का स्वर है" - इसे पठित कविता के आधार पर स्पष्ट कीजिए.

20.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित कविता के आधार पर दिनकर के राष्ट्रीय भाव-विचार स्पष्ट कीजिए.
2. "पाटलीपुत्र की गंगा से" के आधार पर कवि भारत के किस गौरव और गरिमा का वर्णन करता है ?
3. "पाटलीपुत्र की गंगा से" कविता का मूल उद्देश्य क्या है ?
4. "पाटलीपुत्र की गंगा से" कविता का काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए.
5. नीचे लिखे पद्यांश का भावार्थ लिखिए -

"सन्यासिनी समान विजन में
कर-कर गत विभूति का ध्यान,
रो-रोकर गा रही देवि ! क्या,
गुप्त-वंश का गौरव-गान --"

SRAOU

20.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

20.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- "पाटलीपुत्र की गंगा से" कविता में कवि ने भारत की प्राचीन गरिमा का चित्रण किस प्रकार किया है ?

उत्तर- "पाटलीपुत्र की गंगा से" दिनकर लिखित यह कविता आज़ादी से पहले लिखी गई थी. यह अत्यंत लोकप्रिय एवं चर्चित कविता रही है. कवि ने समकालीन देश की स्थिति में देशवासियों के मस्तिष्क में राष्ट्रीय-प्रेम एवं देश-स्वातंत्र्य की चेतना जगाने हेतु गंगा नदी को एक माध्यम बनाया है. यह गंगा नदी सदियों से बह रही है और इसने भारत के प्राचीन गौरव एवं वैभव को देखा है. चन्द्रगुप्त मौर्य, सम्राट अशोक, गुप्त-वंश के शासकों के वीर-पराक्रमों, बलिदानों एवं देश के लिए उत्सर्ग हो जाने की तत्परता को इस गंगा ने देखा है. देश की सभ्यता-संस्कृति के गौरव को बनाये रखने के लिए इन

वीर-पुत्रों ने जो प्रयास किया था, उसी को यह गंगा, आज भारतवासियों को सुना रही है और देश की स्वतंत्रता के लिए उत्सर्ग होने की चेतना जगा रही है.

गंगा को संबोधित करते हुए और उसी के माध्यम से कवि भारत देश की प्राचीन गरिमा को व्यक्त करता है. यह देश, जिसने ऋषि-मुनियों, साधु-संतों, गौतम-बुद्ध जैसे महात्माओं एवं चन्द्रगुप्त, अशोक, राणा प्रताप और शिवाजी जैसे वीर-पुत्रों को जन्म देकर उनके कर्मों और आदर्शों पर भारतीय संस्कृति का निर्माण किया; मानवीय-मूल्यों तथा प्रेम, सेवा, त्याग एवं कर्त्तव्य के भाव-विचारों के संस्कार मनुष्यों को दिये, वही देश आज विदेशी सत्ता के हाथों पराधीन है. यह सत्ता देशवासियों का शोषण कर रही है. सारा मानव-समाज एकता के अभाव में बिखरा हुआ है और दासता में बिलख रहा है. ऐसे समय कवि गंगा के माध्यम से देशवासियों में देश-प्रेम की चिनगारियां जगाना चाहता है और कहता है कि जिसकी लपटों से दासता की बेडियां जलकर राख हो जायें और सारा देश स्वतंत्र हो जाये.

20.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- पद्यांश की संदर्भ-सहित व्याख्या :

"सन्यासिनी समान विजन में.....
.....
गुप्त वंश का गौरव-गान..... "

उत्तर- यह पद्यांश "पाटलीपुत्र की गंगा से" कविता से लिया गया है. इसे रामधारी सिंह 'दिनकर' ने लिखा है. आधुनिक हिंदी काव्यधारा में दिनकर को राष्ट्रीय-चेतना का कवि माना जाता है.

कवि ने इस कविता में पाटलीपुत्र की गंगा के माध्यम से भारत देश के प्राचीन वैभव और गौरव को वर्णित किया है. समकालीन परतंत्र देश में कवि ने देशवासियों के मन में देश-प्रेम की चेतना जगाने हेतु गंगा को संबोधित कर अपने विचार व्यक्त किये हैं.

उपरोक्त पद्यांश में कवि कहता है कि - "हे गंगे ! तुम्हें देखकर ऐसा लगता है कि, आज इस दासता की स्थिति एवं देशवासियों की दशा को परखकर तुम निर्जन वातावरण में सन्यासिनी के समान ध्यान लगाये बैठी हो और अपने विगत वैभव का स्मरण कर रो-रो कर गुप्त-वंश का गौरव-गान कर रही हो."

BRAOU

20.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. दिनकर की राष्ट्रीय चेतना : राजनाथ शर्मा
2. संस्कृति के चार अध्याय : दिनकर
3. साहित्यिक निबंध : प्रो. शिवकुमार शर्मा

******

इकाई 21 : मुक्तिबोध की कविता : मुद्रा राक्षस

रूपरेखा

21.1 पाठ का उद्देश्य
21.2 पाठ एवं कवि परिचय
21.3 मूलपाठ
21.4 सारांश
21.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
21.6 शब्दार्थ
21.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
21.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
21.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
21.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
21.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
21.8.2मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
21.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

21.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में नई कविता के प्रमुख हस्ताक्षर श्री गजानन माधव मुक्तिबोध की कविता 'ब्रह्मराक्षस' पर प्रकाश डाला गया है. इस पाठ के अध्ययन से आप -

* मुक्तिबोध की विचारधारा से परिचित हो सकेंगे.
* मध्यवर्गीय व्यक्ति के आत्मसंघर्ष को समझ सकेंगे.
* मुक्तिबोध की कविता की विषयगत व कलात्मक विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे.

BRAOU

21.2 पाठ एवं कवि परिचय

कवि परिचय

संघर्षशील व्यक्तित्व के परिचायक श्री गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म ग्वालियर के श्योपुर नामक स्थान पर 13 नवंबर सन् 1917 को हुआ. पिता माधव मुक्तिबोध पुलिस विभाग में इन्स्पेक्टर थे. मुक्तिबोध ने अज्जैन के माधव कालेजिएट हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की और होल्कर कॉलेज इन्दौर से सन् 1938 में बी.ए. पास किया. इसके बाद विषम पारिवारिक परिस्थितियों के कारण कई वर्षों बाद सन् 1954 में ही एम.ए. कर पाए.

ज्ञानार्जन के प्रति मुक्तिबोध का झुकाव आरंभ से ही था उज्जैन में वे पंडित रमाशंकर शुक्ल के संपर्क में आए और उन्होंने मुक्तिबोध को काफी प्रोत्साहित किया मुक्तिबोध ने यूरोप के प्राय: सभी प्रसिद्ध दार्शनिकों और विचारकों का गहन अध्ययन किया था जिसका प्रभाव हमें उनकी रचनाओं में स्पष्ट रूप

से दिखाई देता है. मार्क्सवाद का गहन प्रभाव मुक्तिबोध के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विशेष रूप से पडा.

जीविकोपार्जन : मुक्तिबोध को अपने जीवन में परिस्थितियों से काफी संघर्ष करना पडा. गरीबी एवं गलत मूल्यों के साथ समझौता न करने की उनकी ईमानदार प्रवृत्ति के फलस्वरूप मुक्तिबोध का जीवन काफी कष्ट में बीता. 1940 में वे शुजालपुर में अध्यापक रहे. उसके बाद जबलपुर के एक हाई स्कूल में अध्यापक रहे और अंत में राजनांद गांव के दिग्विजय कॉलेज में प्राध्यापक बने. इसके अतिरिक्त मुक्तिबोध 1945 में बनारस से निकलनेवाले पत्र हंस के संपादन विभाग में भी रहे. आकाशवाणी, नागपुर के समाचार-विभाग में उन्होंने कार्य किया और सन् 1956 में सुवसंत पूणाणिक द्वारा संपादित 'समता' मासिक पत्र की भी नींव डाली. सन् 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित 'तारसप्तक' के द्वारा एक प्रयोगवादी कवि के रूप में विख्यात हुए.

रचनाएं : यद्यपि मुक्तिबोध की समस्त रचनाएं छह भागों में मुक्तिबोध रचनावली के नाम से उनकी मृत्यु के उपरांत प्रकाशित हो चुकी हैं लेकिन मुक्तिबोध की निम्नलिखित पुस्तकें अलग से प्रकाशित हुई जो कि रचनावली में भी संग्रहीत हैं.

कविता संग्रह

1. तारसप्तक में प्रकाशित रचनाएं (सन् 1943)
2. चांद का मुंह टेढ़ा है (सन् 1964)
3. भूरी-भूरी-खाक धूल

निबंध संग्रह

1. नयी कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबंध
2. नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र

आलोचना :

कामायनी एक पुनर्विचार - इस पुस्तक में मुक्तिबोध ने फैन्टसी के स्वरूप, रूप रचना आदि का विवेचन किया है. मार्क्सवादी आलोचनात्मक दृष्टि से 'कामायनी' का विश्लेशण प्रस्तुत पुस्तक में किया गया है.

कहानी संग्रह :

काठ का सपना, सतह से उठता आदमी.

उपन्यास :

विपात्र

विविध :

एक साहित्यिक की डायरी, भारत ! इतिहास और संसकृति

मुक्तिबोध की रचनाओं में न केवल काव्य, कहानी, उपन्यास बल्कि आलोचना, आलोचक के कर्तव्य, रचना-प्रक्रिया, लेखक की ईमानदारी, संयुक्त परिवार, उसके विघटन के कारण आदि अनेक मुद्दों पर विस्तृत चर्चा उपलब्ध है.

BRAOU

अंत में पक्षाघात होने के फलस्वरूप 12 सितंबर, 1964 को उनका देहावसान हो गया.

पाठ परिचय

प्रस्तुत पाठ में मुक्तिबोध की अत्यंत प्रसिद्ध कविता 'ब्रह्मराक्षस' को लिया गया है. इस कविता का रचनाकाल 1956 के आस-पास माना गया है. यह कविता पहली बार 'कवि' पत्रिका में अप्रैल, 1957 में प्रकाशित हुई थी. बाद में 'चांद का मुंह टेढ़ा है' काव्य संग्रह में और अंत में मुक्तिबोध रचनावली भाग-2 में संग्रहीत की गई है. 'ब्रह्मराक्षस' कविता मुक्तिबोध की अत्यंत सशक्त रचना है. यह कविता अपने बिंब-विधान के नएपन और ध्वनि-बिम्ब के साथ चित्र बिम्ब दोनों ही दृष्टियों से मुक्तिबोध की सफलता सिद्ध करती है. इस कविता का नायक एक ब्रह्मराक्षस है. मुक्तिबोध ने 'ब्रह्मराक्षस का शिष्य' नामक एक कहानी भी लिखी है जो इस कविता का अर्थ-व्यंजित करने में काफी सहायक सिद्ध होती है. इस कहानी में ब्रह्मराक्षस जो कि एक प्रकाण्ड ज्ञानी व्यक्ति है लेकिन उसने अपने ज्ञान का समाज कल्याण के लिए उपयोग नहीं किया. जब वह मनुष्य योनि में था, उसने अपने द्वारा अर्जित ज्ञान को अपने तक सीमित रखा. फलस्वरूप मरने के बाद वह प्रेत हुआ. अब अपने शिष्य से वह कहता है "अपने मानव जीवन में मैंने विश्व की समस्त विद्या को मथ डाला, किंतु दुर्भाग्य से कोई योग्य शिष्य नहीं मिल पाया कि जिसे मैं समस्त ज्ञान दे पाता. इसीलिए मेरी आत्मा इस संसार में अटकी रह गई और मैं ब्रह्मराक्षस के रूप में यहां विराजमान रहा." तुमने मेरा ज्ञान प्राप्त कर मेरी आत्मा को मुक्ति दिला दी. ज्ञान का लाया हुआ उत्तरदायित्व मैंने पूरा किया. अब मेरा दिया हुआ तुम किसी और को न दोगे तब तक तुम्हारी मुक्ति नहीं. कविता में भी अपने को समाज के लिए उत्सर्ग करने की बात है. अंतिम पंक्तियों में कवि ब्रह्मराक्षस का उजल.उर शिष्य होना चाहता है. उसी की तरह करुणा से आप्लावित क्योंकि शोधक का लक्ष्य स्वयं को समाज के लिए पूर्णत: अर्पित कर देना है.

21.3 मूलपाठ

ब्रह्मराक्षस

1. शहर के उस ओर खंडहर की तरफ़
परित्यक्त सूनी बावड़ी
के भीतरी
ठण्डे अंधेरे में
बसीं गहराइयां जल की.....
सीढ़ियां डूबीं अनेकों
उस पुराने घिरे पानी में.....
समझ में आ न सकता हो
कि जैसे बात का आधार
लेकिन बात गहरी हो.

2. बावड़ी को घेर
डालें खूब उलझी हैं,
खड़े हैं मौन औदुम्बर ।
व शाखों पर
लटकते घुग्धुओं के घोंसले
परित्यक्त, भूरे, गोल ।

BRAOU

3. विगत शत पुण्य का आभास
जंगली हरी कच्ची गन्ध में बसकर
हवा में तैर
बनता है गहन संदेह
अनजानी किसी बीती हुई उस श्रेष्ठता का जो कि
दिल में एक खटके-सी लगी रहती ।
बावड़ी की इन मुंडेरों पर
मानोहर हरी कुहनी टेक
बैठी है टगर
ले पुष्प-तारे-श्वेत ।

4. उसके पास
लाल फूलों का लहकता झोंर -
मेरी वह कन्हेर.....
वह बुलाती एक खतरे की तरफ़ जिस ओर
अंधियारा खुला मुंह बावड़ी का
शून्य अम्बर ताकता है ।

5. बावड़ी की उन घनी गहराइयों में शून्य
ब्रह्मराक्षस एक पैठा है,
व भीतर से उमड़ती गूंज की भी गूंज,
बड़बड़ाहट-शब्द पागल से ।
गहन अनुमानिता
तन की मलिनता
दूर करने के लिए प्रतिपल
पाप-छाया दूर करने के लिए, दिन-रात
स्वच्छ करने -
ब्रह्मराक्षस
घिस रहा है देह
हाथ के पंजे, बराबर,
बांह-छाती-मुंह छपाछप
खूब करते साफ़,
फिर भी मैल
फिर भी मैल !!

6. और ....होठों से
अनोखा स्तोत्र, कोई क्रुद्ध मन्त्रोच्चार,
अथवा शुद्ध संस्कृत गालियों का ज्वार,
मस्तक की लकीरें
बुन रहीं
आलोचनाओं के चमकते तार !!

BRAOU

उस अखण्ड स्नान का पागल प्रवाह.....
प्राण में संवेदना है स्याह !!

7. किंतु, गहरी बावड़ी
की भीतरी दीवार पर
तिरछी गिरी रवि-रश्मि
के उड़ते हुए परमाणु, जब
तल तक पहुंचते हैं कभी
तब ब्रह्मराक्षस समझता है, सूर्य ने
झुककर 'नमस्ते' कर दिया.
पथ भूलकर जब चांदनी
की किरन टकराये
कहीं दीवार पर,
तब ब्रह्मराक्षस समझता है
वन्दना की चांदनी ने
ज्ञान-गुरु माना उसे ।

अति-प्रफुल्लित कण्टकित तन-मन वही
करता रहा अनुभव कि नभ ने भी
विनत हो मान ली है श्रेष्ठता उसकी !!

8. और, तब दुगुने भयानक ओज से
पहचानवाला मन
सुमेरी-बैबिलोनी जन-कथाओं से
मधुर वैदिक ऋचाओं तक
व तब से आज तक के सूत्र
छन्दस्, मन्त्र, थियोरम,
सब प्रमेयों तक
कि मार्क्स, एंजेल्स, रसेल, टॉएन्बी
कि हीडेग्गर व स्पेंग्लर, सार्त्र, गांधी भी
सभी के सिद्ध-अंतों का
नया व्याख्यान करता वह
नहाता ब्रह्मराक्षस, श्याम
प्राक्तन बावड़ी की
उन घनी गहराइयों में शून्य ।

9. ....ये गरजती, गूंजती, आंदोलिता
गहराइयों से उठ रहीं ध्वनियां, अत:
उद्भ्रांत शब्दों के नये आवर्त में
हर शब्द निज प्रति-शब्द को भी काटता,
वह रूप अपने बिम्ब से ही जूझ
विकृताकार-कृति

BRAOU

है बन रहा
ध्वनि लड़ रही अपनी प्रतिध्वनि से यहां ।

10. बावड़ी की इन मुंडेरों पर
मनोहर हरी कुहनी टेक सुनते हैं
टगर के पुष्प-तारे श्वेत
वे ध्वनियां !
सुनते हैं करौंदी के सुकोमल फूल
सुनता है उन्हें प्राचीन औदुम्बर
सुन रहा हूं मैं वही
पागल प्रतीकों में कही जाती हुई
वह ट्रैजडी
जो बावड़ी में अड़ गयी ।

11. खूब ऊंचा एक जीना सांवला....
उसकी अंधेरी सीढ़ियां....
वे एक आभ्यंतर निराले लोक की ।
एक चढ़ना औ' उतरना,
पुनः चढ़ना औ' लुढ़कना,
मोच पैरों में
व छाती पर अनेकों घाव ।
बुरे-अच्छे-बीच के संघर्ष
से भी उग्रतर
अच्छे व उससे अधिक अच्छे, बीच का संगर
गहन किंचित् सफलता,
अति भव्य असफलता !!
.....अतिरेकवादी पूर्णता
की ये व्यथाएं बहुत प्यारी हैं.....
ज्यामितिक संगति-गणित
की दृष्टि से कृत
भव्य नैतिक मान
आत्मचेतन सूक्ष्म नैतिक भान.....
.....अतिरेकवादी पूर्णता की तुष्टि करना
कब रहा आसान
मानवी अंतर्कथाएँ बहुत प्यारी हैं !!

12. रवि निकलता
लाल चिंता की रुधिर-सरिता
प्रवाहित कर दिवालों पर,
उदित होता चन्द्र
व्रण पर बांध देता
श्वेत-धौली पट्टियां

BRAOU

13. उद्विग्न भालों पर ।
सितारे आसमानी छोर पर फैले हुए
अनगिन दशमलव से
दशमलव-बिंदुओं के सर्वत:
पसरे हुए उलझे गणित मैदान में
मारा गया, वह काम आया,
और वह पसरा पड़ा है....
वक्ष-बांहें खुली फैलीं
एक शोधक की ।

14. व्यक्तित्व वह कोमल स्फटिक प्रासाद-सा,
प्रासाद में जीना
व जीने की अकेली सीढ़ियां
चढ़ना बहुत मुश्किल रहा ।
वे भाव-संगत तर्क-संगत
कार्य सामंजस्य-योजित
समीकरणों के गणित की सीढ़ियां
हम छोड़ दें उसके लिए ।
उस भाव-तर्क व कार्य-सामंजस्य-योजन-
शोध में
सब पण्डितों, सब चिंतकों के पास
वह गुरु प्राप्त करने के लिए
भटका !!

15. किंतु युग बदला व आया कीर्ति-व्यवसायी
....लाभकारी कार्य में से धन,
व धन में से हृदय-मन,
और धन-अभिभूत अंत:करण में से
सत्य की झाई
निरंतर चिलचिलाती थी ।

16. आत्मचेतस् किंतु इस
व्यक्तित्व में थी प्राणमय अनबन....
विश्वचेतनस् बे-बनाव !!
महत्ता के चरण में था
विपादाकुल मन !
मेरा उसी से उन दिनों होता मिलन यदि
तो व्यथा उसकी स्वयं जीकर
बताता मैं उसे उसका स्वयं का मूल्य
उसकी महत्ता !
वह उस महत्ता का

BRAOU

हम सरीखों के लिए उपयोग,
उस आंतरिकता का बताता मैं महत्व !!

17. पिस गया वह भीतरी
औ' बाहरी दो कठिन पाटों बीच,
ऐसी ट्रैजेडी है नीच !!

18. बावड़ी में वह स्वयं
पागल प्रतीकों में निरंतर कह रहा
वह कोठरी में किस तरह
अपना गणित करता रहा
औ' मर गया.....
वह सघन झाड़ी के कंटीले
तम-विवर में
मरे पक्षी-सा
बिदा ही हो गया
वह ज्योति अनजानी सदा को सो गयी
यह क्यों हुआ !
क्यों यह हुआ !!
मैं ब्रह्मराक्षस का सजल-उर शिष्य
होना चाहता
जिससे कि उसका वह अधूरा कार्य,
उसकी वेदना का स्रोत
संगत, पूर्ण निष्कर्षों तलक
पहुंचा सकूं ।

(संभावित रचनाकाल 1956 से 1962 तक. अंतिम संशोधन 1962 में. नागपुर-राजनांद गांव. कवि, अप्रैल, 1957 में प्रकाशित. चांद का मुंह टेढ़ा है में संकलित)

21.4 सारांश

1) एक ऐसी बावड़ी से कविता का आरंभ होता है जो शहर की हलचल से दूर एकांत खण्डहर की तरफ है. उस बावडी का उपयोग कोई नहीं करता, वह बावड़ी सूनी है और कोई भी उस तरफ नहीं जाता. उस बावड़ी के अंदर गहरा अंधेरा है उसमें जल है जिसमें बावड़ी की कई सीढ़ियां डूबी हुई हैं. उस पुराने घिरे हुए पानी को देखकर लगता है कि जैसे उसमें कोई गहरी बात छिपी हुई है लेकिन उस बात का कोई आधार समझ में नहीं आ रहा हो.

विशेष-

कविता के प्रारंभ में ही मुक्तिबोध पाठक को वस्तु यथार्थ अर्थात् बावडी और उसके आस-पास के वातावरण की नि:संगता से अवगत करवाना चाहते हैं. बावड़ी का पुराने खण्डहर के मध्य स्थित होना,

BRAOU

समाज से उसका कटा हुआ होना यह स्पष्ट करता है. कवि उस वातावरण की गंभीरता और गूढ़त्व को भी प्रस्तुत पंक्तियों द्वारा संकेतित करता है.

2) बावड़ी चूंकि बहुत पुरानी है और उसको घेर कर बहुत-सी लताएं आपस में उलझ गई हैं. उसके किनारे पर चुपचाप एक विशाल वट वृक्ष खड़ा है और उसकी शाखाओं पर परित्यक्त भूरे रंग के, गोल आकार के उल्लुओं के घोंसले लटके हुए हैं.

विशेष

यहां का वातावरण केवल यथार्थ स्थिति को उदास ही नहीं बना रहा है वरन् उसे भयावह और डरावना भी बना रहा है. कवि ने पहले छंद में जिस गहरी बात के होने का संकेत दिया है उसे यहां उलझी लताओं और उल्लुओं के घोंसलों से और भी अधिक जटिल बना दिया है.

3) प्रस्तुत पंक्तियों में कवि को उस वातावरण में या उस वस्तु यथार्थ में बीते हुए सौ-पुष्यों का आभास हो रहा है जो कि उस बावड़ी के पास निर्जन जंगल की हरी कच्ची गन्ध में बसकर हवा में तैर रहा है. लेकिन यह अहसास किसी अनजानी बीती हुई श्रेष्ठता का संदेह उत्पन्न कर रहा है जिससे कि हृदय में किसी आशंका का खटका-सा लगा रहता है.

बावड़ी की इन मुंडेरों पर लता मानो अपनी सुंदर कुहनी टेक कर सफेद तारों के समान फूल लेकर बैठी है.

विशेष

कवि ने इन पंक्तियों में वातावरण की भयानकता को कम करके सुकुमारता प्रदान की है. टगर अर्थात् लता का तारे रूपी सफेद पुष्प लेकर बैठना इस नि:संग डरावने वातावरण को सौंदर्य प्रदान करता है.

4) बावड़ी के पास ही लाल फूलों का लहकता हुआ झुण्ड है. अब यहां पर कवि स्वयं प्रकट होता है और कहता है मेरी वह कन्हेर अर्थात् कन्हेर का वृक्ष जो किसी खतरे की ओर संकेत करता है. बावड़ी का अंधेरा मुंह खुला हुआ है और ऐसे लगता है जैसे वह सूने आकाश की ओर ताक रहा हो.

विशेष

यहां पर कवि स्पष्ट करता है कि खतरा बावड़ी के वातावरण के आस-पास उतना नहीं है जितना कि बावड़ी के अंदर है. अत: कवि अब तक उस खतरे की भूमिका स्पष्ट कर रहा था जिसका संकेत वह प्रारंभ में कर चुका था (ऐसी बात जिसका आधार समझ में न आता हो लेकिन बात गहरी हो).

5) प्रस्तुत पंक्तियों द्वारा कवि स्पष्ट करता है कि बावड़ी की उन घनी गहराइयों में एक ब्रह्मराक्षस बैठा है. उसकी पागल के समान बड़बड़ाहट की अस्पष्ट-सी गूंज बावडी के भीतर से प्रतिध्वनित हो रही है. यह ब्रह्मराक्षस हर क्षण जैसे किसी पाप छाया को दूर करने के लिए लगातार अपनी देह घिस रहा है. हाथ के पंजे, बांह-छाती, मुंह बराबर घिस-घिस कर साफ कर रहा है लेकिन मैल साफ ही नहीं हो रही है. संभवत: उसकी बड़बडाहट खूब घिस-घिसकर साफ करने पर भी देह का स्वच्छ न हो सकने के कारण भी हों.

यह ब्रह्मराक्षस कौन है और मैल (तन की मलिनता) क्या है ? जिसके लिए ब्रह्मराक्षस दिन-रात मेहनत कर रहा है. मुक्तिबोध ने ब्रह्मराक्षस के व्यक्तित्व को अगली पंक्तियों में सपष्ट किया है.

BRAOU

6) ब्रह्मराक्षस होठों से किसी अनोखे स्तोत्र का पाठ कर रहा है या क्रोधित होकर मंत्रोच्चार कर रहा है अथवा शुद्ध संस्कृत में गालियाँ दे रहा है. उसके मस्तक की लकीरें मानों आलोचनाओं के तार बुन रही हैं. वह पागलपन के प्रवाह में लगातार (अखण्ड) स्नान कर रहा है और उसके प्राणों में संवेदना तो है मगर वह स्याह है अर्थात् शुभ नहीं है.

विशेष

इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि ब्रह्मराक्षस कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है वरन् कोई प्रकाण्ड ज्ञानी व्यक्ति है क्योंकि वह क्रोध में भी स्तोत्र और मंत्रों का उच्चारण कर रहा है लेकिन वह किसी पाप-छाया से ग्रस्त भी है. इसी कारण कवि उसके अखण्ड स्नान के पागल प्रवाह को देखकर कहता है कि उसके प्राणों में संवेदना स्याह है.

7) प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ब्रह्मराक्षस के व्यक्तित्व के अन्य पहलुओं को स्पष्ट करते हुए कहता है कि जब उस गहरी बावड़ी की अंदर की दीवार पर सूर्य की किरणें पड़ती हैं और कभी-कभी बावड़ी के तल पर भी पहुंचती हैं तब ब्रह्मराक्षस समझता है कि सूर्य देवता ने उसे झुककर नमस्कार किया है. रात को जब अपना रास्ता भूलकर चन्द्रमा की किरणें बावड़ी की दीवार से टकराती हैं तब ब्रह्मराक्षस समझता है कि चन्द्रमा ने उसे ज्ञानी गुरु मानकर उसकी वन्दना की है. इसी क्रम में वह बहुत अधिक प्रफुल्लित होकर अपने छद्म उत्साह में अपने कण्टकित तन-मन से वह यह भी समझने लगता है कि नभ अर्थात् आकाश ने भी विनीत होकर उसकी श्रेष्ठता स्वीकार कर ली है.

विशेष

इन पंक्तियों द्वारा यह स्पश्ट किया गया है कि ब्रह्मराक्षस कोई ज्ञानी-व्यक्ति तो है लेकिन साथ ही वह आत्मरति से ग्रस्त दंभी व्यक्ति भी है जो सूर्य और चन्द्रमा से भी स्वयं को श्रेष्ठ समझता है. जो सूर्य और चन्द्रमा अपने स्वाभाविक क्रम में प्रकाश देते हैं, उन्हें भी वह अपने से हीन समझता है. यहां तक कि वह समझता है कि आकाश ने भी उसकी श्रेश्ठता स्वीकार कर ली है.

8) अपनी श्रेष्ठता के झूठे उत्साह में ब्रह्मराक्षस दुगुने भयानक ओज से सुमेरी-बैबिलोनी जन-कथाओं से लेकर वैदिक ऋचाओं तक और प्रारंभ से लेकर आज तक के सूत्र, छंद, मंत्र, थियोरम आदि तथा एंजेल्स (मार्क्सवाद के संस्थापक एवं विचारक), रसेल और हीडेगर जैसे दार्शनिक, टॉएन्बी और स्पेंग्लर जैसे इतिहासकार तथा सार्त्र, गांधी आदि सभी के सिद्धांतों की नई व्याख्या करता है. इस तरह ब्रह्मराखस उस अंधेरी बावड़ी की घनी गहराइयों में नहाता है अर्थात् सभी सिद्धांतों की नए सिरे से व्याख्या करता है.

विशेष

यहां कवि का संकेत है कि ब्रह्मराक्षस कई दार्शनिक मतों के अध्ययन-क्रम में एकसाथ पुराणों और मिथकों के ऐतिहासिक संदर्भों से नए सूत्र लेता हैं. साथ ही वह मार्क्स, एंजेल्स, रसेल, टॉएन्बी, हीडेग्गर, स्पेंग्लर, सार्त, गांधी आदि की परस्पर विरोधी विचारधाराओं की नई व्याख्या करता है और उसी कार्य में उलझा रहता है. ब्रह्मराक्षस के स्नान का तात्पर्य उसके द्वारा प्राचीन इतिहास और सभी दार्शनिक सिद्धांतों की नई व्याख्या करना है.

9) बावड़ी के भीतर से गूंजती और गरजती हुई तथा आंदोलित कर देनेवाली ध्वनियां आ रही हैं. सारे शब्द भ्रांति उत्पन्न कर देने वाले हैं जैसे हर शब्द एक दूसरे शब्द को काटता हो, जैसे प्रत्येक रूप

अपने ही प्रतिबिम्ब से जूझ(लड़) रहा हो और इस प्रकार एक विकृत आकृति में परिवर्तित हो रहा हो. हर ध्वनि जैसे अपनी ही प्रतिध्वनि से लड़ रही हो.

विशेष

इन पंक्तियों में कवि स्पष्ट कर रहा है कि बावड़ी से उठनेवाली सारी ध्वनियां, सारे शब्द, सारे वक्तव्य, सारी समझ अपने ही विरोधों(अंतर्विरोधों) से ग्रस्त हैं. ब्रह्मराक्षस के मुंह से निकलनेवाले शब्द एक स्पष्ट अर्थ नहीं दे पा रहे हैं बल्कि वे एक दूसरे के विपरीत अर्थ उत्पन्न कर रहे हैं. अत: ब्रह्मराक्षस के भीतर अद्भुत तरीके से विरोधों का सामंजस्य विद्यमान है.

10) बावड़ी की इन मुंडेरों पर टगर के सफेद पुष्प जो कि तारों के समान हैं अपनी हरी कुहनी टेक कर इन ध्वनियों को सुनते हैं. करोंदी के कोमल फूल और पुराना वट वृक्ष (औदुम्बर) तथा साथ ही स्वयं कवि भी पागल प्रतीकों में कहीं जानेवाली वह ट्रैजेडी सुनता है जो कि लगता है बावड़ी में फंस(अड) गई है.

विशेष

यहां कवि ने ब्रह्मराक्षस की समस्त ट्रैजेडी अर्थात् उसकी स्थिति स्पष्ट की है. कवितागत बावड़ी की फेंटेसी यहां स्पष्ट हो चुकी है.

11) प्रस्तुत पंक्तियों से कविता की नई शुरूआत होती है. एक खूब ऊंचा सांवला जीना है और उसमें अंधेरी सीढ़ियां हैं जो कि एक निराले लोक के भीतर की तरफ जाती हैं. इन सीढ़ियों पर ब्रह्मराक्षस चढ़ता और लुढ़कता है और इस क्रम में उसके पैरों में मोच आ जाती है, छाती पर अनेक घाव हो जाते हैं. कवि यहां पर टिप्पणी करते हुए कहता है कि ब्रह्मराक्षस के मन में अच्छे और बुरे के बीच संघर्ष चल रहा है न केवल अच्छे और बुरे के बीच अपितु उससे भी अधिक अच्छे और अधिक बुरे के बीच उसके अंतरमन में युद्ध चल रहा है. उसे थोड़ी-सी सफलता भी मिलती है लेकिन उससे भी अधिक असफलता मिलती है अपने आत्मसंघर्ष को जीतने में. कवि आगे टिप्पणी करते हुए कहता है कि ब्रह्मराक्षस इस संघर्ष में पूर्ण सफलता प्राप्त करना चाहता है जो उसे प्राप्त नहीं होती और इसी कारण वह व्यथित भी होता है लेकिन कवि को यह व्यथाएं बहुत प्यारी लगती है. कवि ब्रह्मराक्षस से सहानुभूति रखते हुए कहता है ज्यामितिक (जामेट्री) संगति-गणित की दृष्टि से अपने भव्य नैतिक मूल्यों और अपने सूक्ष्म आत्मचेतन के नैतिक मूल्यों के अहसास को अतिरेकवादी पूर्णता (आब्सोल्यूट परफेक्शन) की तुष्टि का काम आसान नहीं है लेकिन कवि को ब्रह्मराख्रस की यह संघर्ष की ओर प्रयत्नशील अंतर्कथाएं बहुत प्यारी लगती हैं.

विशेश

प्रस्तुत पंक्तियों में ब्रह्मराक्षस का सीढ़ियों से उतरना-चढ़ना और फिर लुढ़कना से अभिप्राय ब्रह्मराक्षस का अपने आंतरिक लोक में उतरना-चढ़ना और फिर चढ़ना और लुढ़कना है. आभ्यंतर लोक भ्रम(Illusion) का लोक है और इसमें उतरना और चढ़ना ब्रह्मराक्षीय प्रयास ही है. लेकिन दूसरी बात यह भी है कि ब्रह्मराक्षस मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी व्यक्ति है और उसका सीढ़ियों से उतरने चढ़ने से तात्पर्य अपनी मुक्ति की कामना में संघर्ष करना है. इस आत्मसंघर्ष में उसे थोड़ी सफलता इसीलिए मिलती है क्योंकि वह अपनी मध्यवर्गीय चेतना के प्रति थोड़ा सजग है लेकिन उसे अधिक असफलता इसीलिए मिलती है कि वह पूरी तरह से अपनी वर्गीय चेतना के प्रति सजग नहीं है. कवि जानता है कि अतिरेकवादी पूर्णता जिसे ब्रह्मराक्षस प्राप्त करना चाहता है, वास्तव में वह एक भ्रम है. उसे प्राप्त करना

असंभव है लेकिन चूंकि ब्रह्मराक्षस उसके लिए प्रयत्नशील है. इसीलिए कवि को यह 'मानवी अंतर्कथा' बहुत प्यारी लगती है.

12) ब्रह्मराक्षस के प्रयत्नों का क्रम जारी है और सूर्य दीवारों पर मानो लाल रुधिर (खून) की सरिता प्रवाहित कर रहा हो. चन्द्रमा का उदय होता है और मानो वह अपनी सफेद चांदनी से ब्रह्मराक्षस के घावों पर श्वेत-धवल पट्टियां बांध रहा हो.

<u>विशेश</u>

पहले ब्रह्मराक्षस दंभ से प्रेरित होकर यह समझता था कि सूर्य ने उसकी श्रेष्ठता स्वीकार कर उसे नमस्कार किया है अथवा चांदनी ने विनम्र होकर उसे ज्ञान-गुरु मान लिया है लेकिन अब उसका यह फ्रस्ट्रेशन का दौर है. इसीलिए अब सूर्य दीवारों पर लाल रुधिर सरिता प्रवाहित कर रहा है और चांदनी श्वेत धवल पट्टियां बनाकर उसके घावों को बांध रही है.

13) ब्रह्मराक्षस की उद्विग्नता और फ्रस्ट्रेशन का दौर चल ही रहा है अब यह ब्रह्मराक्षस का स्थायी भाव बन चुका है. यह भाव उसे मुक्त नहीं होने देता अत: अब जिस नभ(आकाश) के बारे में ब्रह्मराक्षस [illegible]वता था कि उसने विनीत होकर उसकी श्रेष्ठता स्वीकार कर ली है. आज उसके उद्विग्न अर्थात् बेचैन माथे पर जैसे आकाश के तारे अनगिनत दशमलव बिंदुओं के समान सभी जगह फैले हुए हैं. कवि आगे घोषणा करता है कि गणित के मैदान में वह मारा गया, वह काम आ गया. एक शोधक (सत्य की खोज करने वाला) की तरह वह पसर कर पड़ा है, उसकी छाती, बाहें सब खुली हुई हैं.

<u>विशेष</u>

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने ब्रह्मराक्षस की उद्विग्नता के साथ-साथ उसकी मृत्यु को भी दिखाया है और मृत्यु के समय उसकी बाहें, वक्ष सभी खुले हुए हैं और आकाश में तारे मानो गणित के मैदान में अनगिनत दशमलव के समान सर्वत्र फैले हुए हैं और इन्हीं के बीच ब्रह्मराक्षस पसरा कर पड़ा है. कवि घोषणा करता है कि वह काम आया, मारा गया लेकिन अंत में ब्रह्मराक्षस को शोधक के विशेषण से विभूषित भी करता है. मृत्यु के समय वक्ष और बाहें खुली होने से कवि का तात्पर्य है कि अपनी मृत्यु के समय उसकी आकांक्षा मुक्ति की ही थी.

BRAOU

14) प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ब्रह्मराक्षस की मृत्यु के उपरांत उसके गुणों का आकलन करते हुए कहता है कि ब्रह्मराक्षस का व्यक्तित्व कोमल स्फटिक(श्वेत पत्थर) प्रासाद जैसा था और प्रासाद में एक जीना था और जीने में अकेली सीढ़ियां थीं जिन पर चढ़ना-उतरना बहुत मुश्किल रहा. कहने का तात्पर्य यह है कि ब्रह्मराक्षस जो कि एक बुद्धिजीवी था, वह अपनी मध्यवर्गीय सीमाओं में अकेला था और अकेले ही वह अपनी समस्याओं से जूझ रहा था. कवि प्रासाद की सीढ़ियों की भी व्याख्या करता है कि वे सीढ़ियां 'भाव-संगत, तर्क-संगत और कार्य-सामंजस्य-योजित समीकरणों के गणित की सीढ़ियां थीं. ब्रह्मराक्षस अपने शोध में कितना भाव-संगत, योजित कर सका, यह हम उसी पर छोड़ दें. पर यह सच है कि वह इन तीनों की उपलब्ध करने के लिए पंडितों, चिंतकों के पास गुरु को प्राप्त करने के लिए भटका. विडंबना यही रही कि वह भाव-संगत हुआ तो तर्क संगत नहीं हुआ और तर्क-संगत होकर कुद सफलता प्राप्त भी कर ली तो इन दोनों को कार्य-सामंजस्य से योजित नहीं कर सका.

15) ब्रह्मराक्षस अपनी भाव-संगति और तर्क-संगति को कार्य-सामंजस्य से योजित न कर सका, इस कारण की व्याख्या प्रस्तुत पंक्तियों में करते हुए कवि कहता है कि इसका प्रमुख कारण यह था कि युग बदला और कीर्ति-व्यवसायी (यश का व्यवसाय करनेवाला) आया. यह कीर्ति व्यवसायी पूंजीवादी

व्यवस्था का ही अंग है जिसके प्रत्येक कार्य में व्यक्तिगत लाभ ही उसका उद्देश्य है. हो सकता है ब्रह्मराक्षस अपने आत्म-संघर्ष - व्यक्तिगत संघर्ष के दौरान ही इस कीर्ति व्यवसायी के चक्कर में आ गया हो, जिसने लाभकारी कार्य में से धन व धन में हृदय-मन तक को जोड़ दिया हो और इस तरह ब्रह्मराक्षस का सत्य झाई मात्र रह कर धन-अभिभूत अंत:करण में से चिलचिलाता भर रह गया हो.

विशेष

धन-अभिभूत रहना अर्थात् धन के प्रति आग्रह और सत्य का पक्षधर बने रहना एकसाथ संभव नहीं है. ब्रह्मराक्षस कीर्ति-व्यवसायी पूंजीवादी शासन के इसी कुचक्र में काम आया, उसका संघर्शमय व्यक्तित्व मारा गया, वह उस व्यवस्था का शिकार बना.

16) ब्रह्मराक्षस की मृत्यु के बाद भी कवि बार-बार उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन कर रहा है. वह आत्मचेतस अर्थात् अपने प्रति चेतन तो था लेकिन उसके इस व्यक्तित्व में भी प्राणमय अनबन भी और विश्व-चेतस से बनाव भी बेबनाव जैसा था. प्राणमय अनबन से कवि का तात्पर्य है वह जीवनोन्मुख था और विश्व-घटनाओं, संबंधों के प्रति स्वाभाविक रूप से चेतस भी था किंतु आत्म-महत्ता न मिल पाने के कारण उसका मन विषादाकुल भी था. कवि कहता है कि उसकी इस परिणति पर वह संवेदनशील है और कहता है कि मेरा यदि उससे उन दिनों मिलन होता तो उसकी व्यथा स्वयं जीकर, मैं उसे उसका स्वयं का मूल्य, उसकी महत्ता बताता और उस महत्ता का हम जैसे लोगों के लिए कितना उपयोग है उसकी आंतरिकता के महत्व को मैं उसे बताता.

विशेश

यहां कवि का तात्पर्य यह है कि मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी मन का व्यक्ति अर्थात् ब्रह्मराक्षस जैसा व्यक्ति अन्य उच्चवर्गीय भौतिक सुविधाओं के अभाव में प्रसिद्धि, यश और महत्व पाने का घनघोर आकांक्षी भी होता है. कीर्ति-व्यवसायी ने उसकी इसी आकांक्षा का लाभ उठाया. उसे कीर्ति दी, धन दिया, उसके हृदय को धन से अभिभूत कर दिया और बदले में उसका सत्य उससे छीना और इस प्रकार मुक्ति से पहले, सत्य प्रापित से पहले वह मारा गया, काम आया और मुक्ति का प्रयत्न छोड़ बैठा. इसीलिए अंत में कवि कहता है कि अगर मेरा उससे मिलन होता तो उसकी व्यथा मैं स्वयं जीकर उसे उसका स्वयं का मूल्य बताता.

BRAOU

17) किंतु वह ब्रह्मराक्षस अपनी भीतर के आत्म-संघर्ष और बाहर के वस्तु-जगत के इन दोनों कठिन पाटों के बीच पिस गया और यह एक ऐसी ट्रैजेडी हो गई.

विशेष

यहां कवि का तात्पर्य है कि ब्रह्मराक्षस अपने आभ्यंतर लोक और बाह्य के बीच तार्किक संतुलन स्थापित नहीं कर पाया. वह अपने मध्यवर्गीय भ्रमों में भटकता रहा और अंत में मुक्ति हासिल नहीं कर पाया और उसका अंत हो गया.

18) यहां पर कवि पहली फैंटेसी की ओर जाकर अपने कथन को समाप्त करता है. कवि को लगता है कि बावड़ी में अब वह पागल प्रतीकों (अन्य प्रतीकों) के माध्यम से स्वयं कह रहा है कि "वह कोठरी में किस तरह अपना गणित करता रहा और मर गया." अंत में कवि जैसे लंबी सांस भरकर बता रहा है कि वह घनी झाड़ी के कांटों भरे अंधेरे में मरे हुए पक्षी के समान विदा हो ही गया. वह अनजानी ज्योति सदा के लिए सो गई. कवि उसकी इस परिणति पर दु:खी है और बार-बार सवाल करता है कि यह क्यों

हुआ, क्यों यह हुआ. यहां ध्यान देने की बात यह है कि कवि स्वयं मध्यवर्ग का व्यक्ति है लेकिन वह वर्ग-चेतस है इसीलिए कवि ब्रह्मराक्षस की नि:संग, अकेले, निर्वासित एवं पेटी-बुर्जुआ भ्रमों का शिकार बुद्धिजीवी की परिणति को समझता है और ब्रह्मराक्षस के प्रति ज्ञानात्मक संवेदना से भर जाता है. अंत में कवि वक्तव्य देता है कि "मैं ब्रह्मराक्षस का उजल-उर शिष्य होना चाहता हूं जिससे कि वह ब्रह्मराक्षस के अधूरे कार्य, उसकी वेदना के स्रोत उसकी संगति को पूर्ण निष्कर्षों तक पहुंचा सके.

विशेष

यहां कवि ब्रह्मराक्षस की तरह ज्ञान दंभी होकर अपनी संवेदना को स्याह नहीं करना चाहता अपितु उसके भ्रम, उसके ज्ञान निष्कर्षों को मानवीय संवेदना के सहारे व्यवहार की परिणीत तक ले जाना चाहता है. इसीलिए कवि ब्रह्मराक्षस का सजल-उर शिष्य बनने की कामना करता है.

21.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

मुक्तिबोध की प्रसिद्ध कविता 'ब्रह्मराक्षस' का नायक ब्रह्मराक्षस है लेकिन यह ब्रह्मराक्षस कौन है ? वास्तव में ब्रह्मराक्षस एक ऐसा मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी है जो अपनी मुक्ति के लिए छटपटा रहा है. इसी छटपटाहट में वह बार-बार लगातार अपनी देह घिसता रहता है. ब्रह्मराक्षस अपनी मुक्ति के लिए जीवन भर ज्ञान अर्जित करता रहा लेकिन उसने ज्ञान प्राप्त तो कर लिया लेकिन वह ज्ञान कूप (बावड़ी, कुआं) से निकल नहीं पाया अर्थात् उसने अपने ज्ञान का उपयोग समाज के लिए नहीं किया. वह समाज से कटा रहा, यही कारण है कि समाज से कटा रहने के फलस्वरूप वह अपने ज्ञान को व्यावहारिक क्षेत्र में परिणत नहीं कर सका और वह ज्ञान के किसी भी क्षेत्र में निर्णायक नहीं हो सका. इसी कारण वह मानसिक रूप से उद्विग्न रहता है. अनेक प्रकार के अंतर्विरोधों से ग्रस्त रहता है. यही अंतर्विरोध उसके व्यक्तित्व में जटिलताएं उत्पन्न कर देते हैं. ज्ञान-प्राप्ति के प्रयास में जब कभी वह सत्य से परिचित होता है तब सत्य की कटुता (शोषण का यथार्थ) उसे बेचैन तो करती है लेकिन अपने वर्ग (मध्य वर्ग) से बंधा होने के कारण वह कुछ नहीं कर पाता. वस्तुत: वह शोषक वर्ग का पक्षधर (हिमायती) है या शोषित वर्ग का, यह वह स्वयं भी स्पष्ट नहीं कर पाता. अत: अपने इन्हीं वर्गीय संस्कारों की पाप-छाया को स्वच्छ करने के लिए वह बावड़ी में दिन-रात स्नान करता रहता है, देह घिसता रहता है. इस झूठे (छद्म) संघर्श में उसकी संवेदना भी स्याह (अर्थात् मैली या अनगढ़) हो जाती है. हर दर्शन, कई प्रकार के दार्शनिक मतों के अध्ययन क्रम में वह एकसाथ पुराणों और मिथकों के इतिहास संदर्भों से नए व्याख्या-सूत्र लेता हुआ मार्क्स, एंजेल्स, रसेल, टॉएन्बी, हीडेगर, स्पेंग्लर, सार्त्र और गांधी आदि की परस्पर विरोधी विचारधाराओं की नई व्याख्या करता है और उलझा रहता है. दूसरी ओर अपनी वर्गबद्धता (मध्यवर्ग) के कारण ही उसका अव्यवस्थित ज्ञान उसे दंभी और अहंकारी बना देता है और वह सूर्य, चंद्र, नभ जैसी विराट शक्तियों को भी स्वयं से निम्न और हीन मानकर चलता है. ब्रह्मराक्षस के स्नान का तात्पर्य उसके द्वारा प्राचीन इतिहास और सभी दार्शनिक सिद्धांतों की नई व्याख्याएं करना है और बावड़ी से तात्पर्य उसका समाज से कटा हुआ होना है जिससे वह कभी निकल नहीं पाता. बावड़ी के आस-पास का इलाका मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी व्यक्ति का प्रभावी क्षेत्र है जो शहर से बाहर अर्थात् समाज के गतिमय संसार से कटा हुआ है.

बावड़ी का इलाका (उसका प्रभावी क्षेत्र) भी उसके उलझाओं का शिकार है. "डाले खूब उलझी हुई". कुछ लोग ब्रह्मराक्षस के बौद्धिक तर्कों-मतों आदि को सुनकर कन्फ्यूजहो (उलझ) गए हैं और औदुम्बर (वट वृक्ष) की तरह मौन खडे हैं तथा घुघ्घू (उल्लू) से तात्पर्य समाज विरोधी अवसरवादी लोग हैं जो कि

ब्रह्मराक्षस के पास आकर बस गए हैं. वस्तुत: वे ब्रह्मराक्षस का उपयोग अपने हित में करना चाहते हैं. 'श्वेत-पुष्प-तारों वाली टगर' और महकते लाल फूलों के झौंर' के रूप में कुद संभ्रामा निरीह ज्ञान-पिपासु भी ब्रह्मराक्षस के प्रभावी क्षेत्र में आ गए हैं. कवि भी उस वातावरण में 'विगत-शत पुण्य का आभास पाकर' और 'अनजारी कोई बीती हुई श्रेष्ठता' समझकर आ जाता है. लेकिन एक 'गहन संदेह' से वह ग्रस्त रहता है. बावड़ी के पास की ही एक कन्हेर (पौधा) जो कि कवि की मानसिकता के अधिक पास है और ब्रह्मराक्षस के पास पहले से ही होने के कारण कन्हेर ने ब्रह्मराक्षस के ज्ञान-संघर्ष और उसकी मुक्ति की छटपटाहट को अपनी आंखों से देखा है और वह ब्रह्मराक्षस के वास्तविक और छद्म दोनों रूपों को जान गई है. वह कवि को बावडी की ओर का 'खतरा' बताकर संकेत करती है. यहां 'कन्हेर' ब्रह्मराक्षस के पास रहकर भी उसके प्रभाव से मुक्त है और इस प्रकार कवि स्वयं ब्रह्मराख्रस के आत्मसंघर्ष को देखता और समझ जाता है कि 'खतरा' एक ट्रैजेडी भर है. अब कवि द्वारा ब्रह्मराक्षस की ट्रैजेडी को समझना यह सिद्ध करता है कि कवि अपनी मध्यवर्गीय चेतना के प्रति जागरूक है. वह समझ जाता है कि चूंकि ब्रह्मराक्षस अपनी मध्यवर्गीय चेतना (वर्ग-चेतस) को समझ नहीं पाया यही कारण है कि वह दोनों पाटों के बीच पिस गया और मारा गया.

कवि ब्रह्मराक्षस के व्यक्तित्व का सही तरह से मूल्यांकन करता है और स्पष्ट करता है कि ब्रह्मराक्षस का संघर्श मुक्ति प्रयत्नरत मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी का आत्मसंघर्श है. ब्रह्मराक्षस को पूरी तरह से अपनी वर्गीय चेतना के प्रति सजग न होने के कारण सफलताएं कम और असफलताएं अधिक मिलती हैं लेकिन इसके बावजूद वह पूर्णमुक्ति की खोज में उसी संघर्ष में लगा रहता है. इसीलिए कवि को उसकी व्यथाएं प्यारी लगती हैं. लेकिन वह भाव संगत और तर्क-संगति में में संतुलन स्थापित न कर सका यही ब्रह्मराक्षस की ट्रैजेडी थी. इसी में वह पिस गया.

ब्रह्मराक्षस की ट्रैजेडी के पीछे एक कारण यह भी था कि वह अपने संघर्ष के दौरान पूंजीवादी कीर्तिव्यवसायी के चक्कर में आ गया और इसी कारण उसका सत्य झाई मात्र रह कर धन-अभिभूत अंत:करण में से चिलचिलाता भर रह गया. कवि स्वयं मध्यवर्ग का व्यक्ति है फिर भी वह वर्ग-चेतस है. इसीलिए वह ब्रह्मराक्षस की परिणति को समझते हुए ज्ञानात्मक संवेदना से भर जाता है और वक्तव्य देता है कि मैं ब्रह्मराक्षस का सजल उर शिष्य होना चाहता हूं जिससे कि वह उसके अधूरे कार्य को पूर्ण निष्कर्षों तक पहुंचा सकूँ.

कवि ब्रह्मराक्षस की तरह ज्ञान दंभी होकर अपनी संवेदना को स्याह नहीं करना चाहता, वह ब्रह्मराक्षस के भ्रम, उसके ज्ञान निष्कर्षों को मानवीय संवेदना के सहारे व्यवहार की परिणति तक ले जाना चाहता है.

21.6 शब्दार्थ

परित्यक्त	-	जिसे छोड़ दिया गया हो, जो सबसे अलग पड़ा हो
सूनी	-	सुनसान, जहां कोई न हो
बावड़ी	-	कुआं
मौन	-	चुपचाप
औदुम्बर	-	वट वृक्ष
घुग्घुओं	-	उल्लुओं के
विगत	-	बीता हुआ

शत पुण्य	-	सौ पुण्य
आभास	-	अनुमान, अहसास
संदेह	-	शक
टगर	-	लता
श्वेत	-	सफेद
झौर	-	झुण्ड
कन्हेर	-	एक प्रकार का वृक्ष
अम्बर	-	आकाश
मलिनता	-	मैला, जो स्वच्छ न हो
स्तोत्र	-	पवित्र श्लोक
क्रुद्ध	-	क्रोध में, गुस्से में
मंत्रोच्चार	-	मंत्रों का उच्चारण
अखण्ड	-	लगातार
प्रवाह	-	बहना
स्याह	-	काला
तल	-	नीचे की सतह
प्रफुल्लित	-	प्रसन्न
कण्टकित	-	कांटों से भरा हुआ
विनत	-	झुका हुआ, विनम्र
सुमेरी-बैबिलोनी	-	प्राचीन सभ्यताओं के नाम
वैदिक ऋचाओं	-	वेद के छंद
थियोरम	-	गणित के सूत्र
प्रमेयों	-	गणित का एक पारिभाषिक शब्द, जिसे सिद्ध किया जाना हो.
मार्क्स	-	मार्क्सवादी दर्शन के संस्थापक
एंजेस	-	मार्क्सवादी विचारक और मार्क्स के मित्र
रसैल	-	प्रसिद्ध अस्तित्ववादी दार्शनिक
टॉएन्बी	-	इतिहासकार
हीडेग्गर	-	जर्मन दार्शनिक
सार्त्र	-	अस्तित्ववादी विचारक और रचनाकार
प्राक्तन	-	घेरा
उद्भ्रांत	-	भ्रम से घिरा हुआ
ध्वनियां	-	आवाज़ें
आवर्त	-	अर्थ
विकृताकार	-	जिसका आकार बिगड़ा हुआ हो
प्रतिध्वनि	-	गूंज
मुंडेर	-	किनारे की दीवार
करौंदी	-	करौंदा, एक प्रकार का फल
ट्रैजेडी	-	त्रासदी
आभ्यंतर	-	अंदर की ओर

BRAOU

घाव	-	जख्म
संघर्ष	-	लड़ाई
अग्रतर	-	अधिक गुस्से में, तैश में
संगर	-	युद्ध
किंचित्	-	थोड़ा
अतिरेकवादी	-	चीज़ों को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर देखना
सूक्ष्म	-	महीन
तुष्टि	-	संतुष्ट
रुधिर-सरिता	-	खून की नदी
प्रवाहित	-	बहना
उदित	-	उगना
व्रण	-	घाव
श्वेत-धौली	-	सफेद-धावल
उद्विग्न	-	बेचैन
भालो	-	माथा
सर्वत:	-	सब जगह
पसरा	-	फैला
शोधक	-	खोज करने वाला
स्फटिक	-	पारदर्शी पत्थर (क्रिस्टल)
प्रासाद	-	भवन
सामंजस्य	-	समन्वय
योजित	-	जुड़ा हुआ
आत्मचेतस	-	अपनी आत्मा के प्रति जागरूक
विश्वचेतस	-	विश्व(समाज) के प्रति जागरूक
विषादाकुल	-	दुख से व्याकुल
व्यथा	-	दुख
पाट	-	भाग
सघन	-	घना

21.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

21.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. गजानन माधव मुक्तिबोध के जीवन एवं कृतित्व का परिचय दीजिए.
2. कवि ब्रह्मराक्षस का सजल-उर शिष्य क्यों होना चाहता है ? पठित कविता के आधार पर स्पष्ट कीजिए.
3. मुक्तिबोध के काव्य की विषयगत विशेषताओं का विवेचन कीजिए.

21.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

BRACU

"किंतु, गहरी बावड़ी
की भीतरी दीवार पर
तिरछी गिरी रवि-रश्मि
के उड़ते हुए परमाणु, जब
तल तक पहुंचते हैं कभी
तब ब्रह्मराक्षस समझता है, सूर्य ने
झुककर नमस्ते कर दिया ।
पथ भूलकर जब चांदनी
की किरन टकराये
कहीं दीवार पर,
तब ब्रह्मराक्षस समझता है
वन्दना की चांदनी ने
ज्ञान गुरु माना उसे.

2. मुक्तिबोध की कविता 'ब्रह्मराक्षस' में ब्रह्मराक्षस किस वर्ग के व्यक्ति का प्रतीक है ?

21.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

21.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- मुक्तिबोध के काव्य की विषयगत विशेषताओं का विवेचन कीजिए.

उत्तर- मुक्तिबोध नई कविता के सशक्त कवियों में से रहे हैं. यद्यपि मुक्तिबोध ने सन् 1935 में छायावाद युग में कविता करना प्रारंभ किया तथापि उनकी ख्याति 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित 'तारसप्तक' में संकलित रचनाओं से हुई. आगे चलकर नई कविता के कवियों में अपनी फैन्टेसी-शैली व अपनी लम्बी कविताओं में मध्यवर्गीय व्यक्ति के जीवन संघर्श और पूंजीवादी सभ्यता की विसंगतियों को ईमानदारी से उजागर करने की वजह से मुक्तिबोध की अलग पहचान बनी.

मुक्तिबोध रचनाकार की शिल्पगत और विषयगत ईमानदारी के पक्षधर थे. उनके काव्य में हमें आधुनिक जीवन मूल्यों की सशक्त अभिव्यक्ति दृष्टिगोचर होती है उन्होंने आधुनिक समाज में निम्न मध्यवर्ग या मध्यवर्ग के व्यक्ति की विवशता, सर्वहारा या मजदूर व्यक्ति के शोषण और पूंजीवादी सभ्यता में व्यक्ति की बिकाऊ प्रवृत्ति और पूंजीवाद के शोषण आदि ऐसे विषयों को लिया है जो आधुनिक जीवन के यथार्थ से अपना गहरा संबंध रखते हैं. 'ब्रह्मराक्षस' कविता का ब्रह्मराक्षस मध्यवर्गीय व्यक्ति का ही प्रतीक है. वह अपने वर्ग के जीवन-मूल्यों के प्रति जागरूक नहीं रहता है, वह अपने ज्ञान का समाज कल्याण के लिए उपयोग नहीं करता. वह अपने ज्ञानकूप से नहीं निकल पाता. परिणामस्वरूप वह अपनी आत्ममुक्ति के लिए छटपटा रहा है. वह अपने इन्हीं वर्गीय संसकारों की पाप-छाया को स्वच्छ करने के लिए बावड़ी में दिन-रात स्नान करता रहता है.

मुक्तिबोध के काव्य की एक और विशेषता है अनुभव जगत के आभ्यंतर (आंतरिक) और बाह्य पक्षों (बाहरी पक्ष) के द्वंद्वपूर्ण संबंधों को व्यक्त करना. मुक्तिबोध की कविताओं में जहां बाहरी जगत् अंतर्मन में प्रतिबिम्बित होता है वहां वह मन की गुत्थियों को लेकर प्रकट होता है -

BRAOU

"जितना ही तीव्र है द्वंद्व क्रियाओं का घटनाओं का
बाहरी दुनियां में
उतनी ही तेजी से भीतरी दुनियां में
चलता है द्वंद्व."

मुक्तिबोध ने श्रमिक-वर्ग तथा जनसाधारण के जीवन की घुटन और विसंगतियों को भी अनेक रूपों में प्रस्तुत किया है. इनके प्रति मुक्तिबोध ने गहरी सहानुभूति व्यक्त की है. वे उन्हें शोषण मुक्त देखना चाहते हैं -

"समस्या एक
मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में
सभी मानव
सुखी, सुंदर व शोषण मुक्त
कब होंगे ?"

मुक्तिबोध के काव्य की एक और विशेषता है प्रदीर्घता. मुक्तिबोध अत्यंत ही चिंतनशील कवि हैं. उन्होंने अपने अनुभवों को व्यक्त करने के लिए फेंटेसी शैली को अपनाया है. इन्हीं कारणों से उनकी कविताएं क्रमशः दीर्घ होती चली जाती हैं. उन्होंने स्वयं इस संदर्भ में कहा है कि "यथार्थ के तत्व परस्पर गुंफित होते हैं, साथ ही पूरा यथार्थ गतिशील होता है. अभिव्यक्ति का विषय बनकर जो यथार्थ प्रस्तुत होता है वह भी ऐसा ही गतिशील है और उसके तत्व भी परस्पर गुंफित हैं. यही कारण है कि मैं छोटी कविता नहीं लिख पाता."

संक्षेप में नई कविता के कवियोंमें मुक्तिबोध का अपनी बिम्बात्मक शैली और नवीन विषयों के संयोजन के फलस्वरूप विशेष महत्व है. डॉ. राजेश्वर दयाल सक्सेना के शब्दों में "मुक्तिबोध कविता के लुहार हैं और उनका कविता संसार जीवन की लोहशाला है."

21.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- निम्नलिखित पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

"किंतु, गहरी बावड़ी की भीतरी दीवार पर.....
.....ज्ञान-गुरु माना उसे ।

उत्तर- प्रस्तुत पंक्तियां 'ब्रह्मराक्षस' कविता से उद्धृत हैं. इन पंक्तियों के कवि श्री गजानन माधव मुक्तिबोध है. 'ब्रह्मराक्षस' एक मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी है. वह बहुत ज्ञानी है लेकिन वह अपने ज्ञान को व्यावहारिक जीवन में प्रयोग नहीं कर पाया है. इसी कारण वह कई अंतर्विरोधों से ग्रस्त भी है. इन पंक्तियों में मुक्तिबोध 'ब्रह्मराक्षस' के छद्म अहंकार को प्रकट करते हैं.

भावार्थ - ब्रह्मराक्षस एक गहरी बावड़ी में बैठा है. यह बावड़ी शहर से दूर किसी खण्डहर में सुनसान जगह पर है. जब इस बावडी के अंदर की दीवार पर सूर्य की किरणें पड़ती हैं और कभी-कभी बावड़ी के तल पर भी पहुंचती हैं तब ब्रह्मराक्षस समझता है कि सूर्य देवता ने उसे झुककर प्रणाम किया है. रात को जब अपना रास्ता भूलकर चन्द्रमा की किरणें बावड़ी की दीवार से टकराती हैं तब ब्रह्मराक्षस समझता है कि चन्द्रमा ने उसे ज्ञानी गुरु मानकर उसकी वन्दना की है. इसी क्रम में वह बहुत अधिक प्रफुल्लित

होकर अपने छद्म उत्साह में अपने कण्टकित तन-मन से वह यह समझने लगता है कि नभ अर्थात् आकाश ने भी विनीत होकर उसकी श्रेष्ठता स्वीकार कर ली है.

विशेष

इन पंक्तियों में यह स्पष्ट किया गया है कि ब्रह्मराक्षस कोई ज्ञानी व्यक्ति तो है लेकिन वह आत्मरति से ग्रस्त दंभी व्यक्ति भी है जो सूर्य और चन्द्रमा तथा आकाश से भी स्वयं को श्रेष्ठ समझता है.

21.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. काठ का सपना (कहानी संग्रह) : गजानन माधव मुक्तिबोध
2. गजानन माधव मुक्तिबोध : व्यक्तित्व और कृतित्व : डॉ. जनक शर्मा
3. चांद का मुंह टेढा है : मुक्तिबोध.

******

BRAOU

इकाई 22 : अज्ञेय की कविता : कितनी नावों में कितनी बार

रूपरेखा

22.1 पाठ का उद्देश्य
22.2 पाठ एवं कवि परिचय
22.3 मूलपाठ
22.4 सारांश
22.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
22.6 शब्दार्थ
22.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
22.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
22.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
22.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
22.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
22.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
22.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

22.1 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में प्रयोगवादी कवि एवं ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता साहित्यकार सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की कविता 'उधार' प्रस्तुत की जा रही है. इस पाठ के अध्ययन से आप -

* अज्ञेय का जीवन के प्रति दृष्टिकोण से परिचय प्राप्त करेंगे.
* जीवन और जीवन की प्रकृति की उपादेयता से परिचित होंगे.
* अज्ञेय के जीवन-दर्शन से परिचय प्राप्त करेंगे.
* अज्ञेय की कविता की भाषा एवं शिल्पगत विशेषताओं को समझने की शक्ति प्राप्त करेंगे.

BRAOU

22.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

प्रस्तुत कविता 'उधार' अज्ञेय का कविता-संग्रह 'कितनी नावों में कितनी बार' से उद्धृत है. 1979 में इसी संग्रह पर 'अज्ञेय' को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ था. प्रस्तुत संग्रह अज्ञेय की काव्य-यात्रा की ऊर्ध्वगति का परिचायक है. इसमें उनके जीवन-दर्शन की झलक मिलती है. इस कविता में अज्ञेय कहते हैं कि मनुष्य के पास उसकी जीवंतता को प्रस्फुटित करनेवाले जो भी तत्व हैं वे सभी प्रकृति से उधार के द्वारा प्राप्त हैं. प्रकृति ने उसे खुले दिल से सबकुछ उधार स्वरूप दे दिया है. फिर भी मनुष्य उसे और किसी को देने को तैयार नहीं होता.

कवि परिचय

हिंदी कविता के इतिहास में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन का नाम अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है. आधुनिक साहित्य की विविध विधाओं को भी उन्होंने समृद्ध ही नहीं किया अपितु उन विधाओं पर अपनी अमिट छाप छोड़ दी. अज्ञेय के व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों ही वैविध्यपूर्ण हैं.

'अज्ञेय' का जन्म 7 मार्च, 1911 को देवरिया जिले के कसया पुरातत्व खुदाई शिबिर में हुआ. इनके पिता हीरानंद शास्त्री भारत के पुरातत्व-विभाग की सेवा में उच्च अधिकारी थे. अज्ञेय की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई. सन् 1925 में उन्होंने पंजाब से प्राइवेट मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की. अंग्रेजी और हिंदी के अलावा संस्कृत, फारसी एवं बंगला भाषाओं पर इनका अच्छा अधिकार था. इनकी पहली कविता 1927 में लिखी गयी. पत्रकारिता के क्षेत्र में विशाल भारत, प्रतीक एवं दिनमान से आप संबद्ध रहे और अपने कुशल संपादन की छाप उन पत्रिकाओं पर छोड़ी. 'तारसप्तक' का प्रकाशन सन् 1943 में अज्ञेय के संपादन में हुआ. इसके बाद 'दूसरा सप्तक', 'तीसरा सप्तक' एवं 'चौथा सप्तक' का संपादन भी इन्होंने किया. इन कविता संग्रहों का प्रयोगवाद एवं नयी कविता के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है. अज्ञेय के कुछ महत्वपूर्ण कविता संग्रह इस प्रकार हैं - भग्नदूत, इत्यलम, हरीघास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, अ[illegible] के द्वार-पार, अरी ओ करुणा प्रभामय, सुनहले शैवाल, कितनी नावों में कितनी बार, सागर मुद्रा इत्यादि.

अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभाशाली साहित्यकार हैं. उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, यात्रा-वृत्तांत, अनुवाद एवं संपादन के क्षेत्र में अपनी मौलिक प्रतिभा के कारण वे चिरस्मरणीय रहेंगे. अज्ञेय कृत शेखर एक जीवनी (दो भाग) एवं नदी के द्वीप हिन्दी उपन्यास साहित्य में अपना बेजोड स्थान रखते हैं.

सन् 1964 में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में भारतीय साहित्य एवं संस्कृति पढ़ाने के लिए वे नियुक्त हुए. पुनः सन् 1969 में साहित्य शास्त्र विभाग में अध्यापन के लिए गये. जापान एवं युगोस्लाविया की साहित्य यात्राएं की. सन् 1983 में इंटरनेशनल पोएट्री एवार्ड दिया गया और 'स्वर्णमाल' (दि गोल्डेनरीद) से सम्मानित हुए.

BRAOU

22.3 मूलपाठ

उधार

सवेरे उठा तो धूप खिलकर छा गयी थी
और एक चिड़िया अभी-अभी गा गयी थी ।
मैं ने धूप से कहा : मुझे थोडी गरमाई दोगी उधार -
चिड़िया से कहा : थोडी मिठास उधार दोगी ?
मैं ने घास की पत्ती से पूछा : तनिक हरियाली दोगी -
तिनके की नोक भर ?
शंखपुष्पी से पूछा उजास दोगी - किरण की ओक-भर ?
मैं ने हवा से मांगा : थोडा खुलापन-बस एक प्रश्वास,
लहर से : एक रोम की सिहरन-भर उल्लास ।
मैं ने आकाश से मांगी
आंख की झपकी-भर असीमता-उधार ।

सब से उधार मांगा, सब ने दिया ।
यों मैं जिया और जीता हूं
क्यों कि यही सब तो है जीवन -
गरमाई, मिठास, हरियाली, उजाला,
गन्धवाही मुक्त खुलापन, लोच, उल्लास, लहरिल प्रवाह
और बोध भव्य निर्व्यास निस्सीम का :
ये सब उधार पाये हुए द्रव्य ।
रात के अकेले अंधकार में ।
सामने से जागा जिस में
एक अनदेखे अरुप ने पुकार कर मुझ से पूछा था : क्यों जी,
तुम्हारे इस जीवन के
इतने विविध अनुभव हैं
इतने तुम धनी हो,
तो मुझे थोड़ा प्यार दोगे उधार, जिसे मैं
सौगुने सूद के साथ लौटाऊंगा -
और वह भी सौ-सौ बार गिन के
जब-जब आऊंगा ?
मैं ने कहा : प्यार ? उधार ?
स्वर अचकचाया था, क्योंकि मेरे
अनुभव से परे था ऐसा व्यवहार ।
उस अनदेखे अरुप ने कहा : हां,
क्योंकि ये ही सब चीजें तो प्यार है -
यह अकेलापन, यह अकुलाहट, यह असमंजस, अचकचाहट, अति अनुभव,
यह खोज, यह द्वैत, यह असहाय विरह व्यथा,
यह अंधकार में जाग कर सहसा पहचानना कि
जो मेरा है वही ममेतर है -
यह सब तुम्हारे पास है
तो थोडा मुझे दे दो - उधार - इस एक बार -
मुझे जो चरम आवश्यकता है ।
उसने यह कहा,
पर रात के धुप अंधेरे में
मैं सहमा हुआ चुप रहा, अभी तक मौन हूं :
अनदेखे अरुप को
उधार देते मैं डरता हूं :
क्या जाने यह याचक कौन है ? (कितनी नावों में कितनी बार)

22.4 सारांश

भावार्थ

सबेरे उठा तो.....असीमता उधार ।

BRAOU

ये पंक्तियां अज्ञेय की कविता 'उधार' से ली गयी हैं. 'उधार' कविता 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता संग्रह से ली गयी है.

इन पंक्तियों में यह बताया गया है कि मानव भाव-संचय प्रकृति से ही करता है.

कवि कहता है कि - मैं सबेरे उठा तो मैं ने देखा धूप खिली और चारों ओर छा गयी है. इतने में एक चिड़िया आयी और गाती हुई चली गयी. मैंने धूप से कहा क्या तू मुझे थोड़ी गरमाई उधार दे सकोगी ? चिडिया से मैं ने पूछा-तुम्हारे गीत में इतनी मिठास है, थोडी उधार दोगी ? घास की पत्ती से पूछा कि तिनके की नोक भर हरियाली दोगी ? शंखपुष्पी से पूछा कि थोडी उजास दे सकती हो ? मैंने हवा से थोडा खुलापन : एक प्रश्वास मांगा. लहर से एक रोम की सिहरन भर उल्लास मांगा. मैंने आकाश से आंख की झपकी भर असीमता उधार के रूप में मांगा. सभी से उधार मांगा, सबने दिया.

"यों मै जिया.....पाये हुए द्रव्य ।"

प्रकृति से गरमाई, मिठास, हरियाली, उजास, खुलापन, प्रश्वास एवं उल्लास उधार मांगा और धूप, चिडिया आदि ने उधार दिया. कवि कहता है कि इस प्रकार मैं जिया और जीता जा रहा हूं. क्योंकि जीवन का तात्पर्य ही यह है कि गरमाई, मिठास, हरियाली, उजाला, खुलापन का अनुभव. यह बोध हुआ कि मैं ने जो इन सबसे उधार में पाये ये द्रव्य हैं - ये सब असीम एवं भव्य उस परमात्मा की देन हैं.

"रात के अकेले.....जब-जब मैं आऊंगा ।"

रात्रि के अंधकार में अचानक मैं सपने से जाग गया. उस अंधकार में उस अनदेखे अरूप ने मुझे पुकार कर पूछा - क्यों जी । तुम्हारे जीवन के इतने अनुभव हैं, अनुभव के इतने धनी हो तो मुझे थोडा प्यार उधार दोगे ? मैं उसको बाद में सौ गुने सूद के साथ, सौ-सौ बार गिन कर मैं जब-जब आऊंगा, तब-तब लौटाऊंगा.

"मैं ने कहा.....चरम आवश्यकता है.

मैं अचकचा गया. क्योंकि मुझे यह पता नहीं था कि प्यार उधार दिया जाता है या लिया जाता है. यह सब मेरे अनुभव से परे था. मैंने कहा प्यार ? उधार ? अरूप ने उत्तर दिया - अकेलापन, अकुलाहट, असमंजस, आर्त्त अनुभव, असहाय विरह-व्यथा, यह द्वैत भावना यह अंधकार में जागकर यह पहचानना कि जो यह मेरा है वही मुझ से भिन्न है. ये सभी तुम्हारे पास हैं. मुझे उधार से दे दो. केवल एक ही बार. क्योंकि आज मुझे उनकी अत्यंत आवश्यकता है.

"उसने यह कहा.....यह याचक कौन है ?

अरूप ने कहा कि मुझे थोडा प्यार उधार दो. रात के अंधकार में मैं सहसा चुप ही रहा. आज तक भी मैं मौन भाव से हूं. जिस को देखा नहीं, जिसका कोई रूप नहीं, उसको उधार देते मैं डरता हूं. क्या पता यह याचक कौन है ?

<u>सारांश</u>

'उधार' कविता 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता संग्रह से ली गयी है. कवि की यह अनुभूति कि जो कुछ उसके पास है, वह उसका न होकर किसी से उधार में प्राप्त तत्व हैं, उन्हीं के बल पर, उन्हीं ममेतर तत्वों से जिये जा रहा है, किंतु उससे कोई अरूप, अगोचर उन्हीं तत्वों को उधार मांगता है तो वह देने में शंकालु हो जाता है, उसके मन में संदेह आता है कि यह अरूप याचक कौन है ? यद्यपि अरूप याचक

BRAOU

उसे पूरा आश्वासन देता है कि वह लौटा देगा. स्वयं उसने तो प्रकृति से पूरे तत्वों को बिना संकोच पाया. किंतु देने के लिए असमंजस में पड गया. वह प्रकृति से नहीं सीख सका बिना प्रतिदान की आशा किये आत्मदान करना.

कवि कहता है - मैं सबेरे उठा तो मैंने देखा धूप खिली और चारों ओर छा गयी. इतने में एक चिड़िया आयी और गाती हुई चली गयी. मैंने धूप से कहा - क्या मुझे थोडा गरमाई उधार दे सकोगी ? चिड़िया से मैं ने पूछा - तुम्हारे गीत में इतनी मिठास है, थोडी उधार दोगी ? घास की पत्ती से पूछा कि तिनके की नोक भर हरियाली दोगी ? शंखपुष्पी से पूछा कि थोडी उजास दे सकती हो ? मैं ने हवा से थोडा खुलापन एक प्रश्वास मांगा. लहर से एक रोम की सिहरन भर उल्लास मांगा. मैं ने आकाश से आंख की झपकी भर असीमता उधार के रूप में मांगा. सभी से उधार मांगा, सबने दिया.

कवि कहता है कि इस प्रकार प्रकृति से उधार लेकर मैं जिया और जीता जा रहा हूं. क्योंकि जीवन का तात्पर्य ही यह है कि गरमाई, मिठास, हरियाली, उजाला, खुलापन का अनुभव. यह बोध हुआ कि मैंने जो इन सबसे उधार में पाये ये द्रव्य है - ये सब असीम एवं भव्य उस परमात्मा की देन है.

रात्रि के अंधकार में अचानक मैं सपने से जाग गया, उस अंधकार में उस अनदेखे अरूप ने मुझे पुकार कर पूछा क्यों जी । तुम्हारे जीवन के इतने अनुभव है, अनुभव के इतने धनी हो तो मुझे थोडा प्यार उधार दोगे. मैं उसको बाद में सौ गुने सूद के साथ, सौ-सौ बार गिनकर मैं जब-जब आऊंगा, लौटाऊंगा.

मैं अचकचा गया. क्योंकि मुझे यह पता नहीं था कि प्यार उधार दिया जाता है या लिया जाता है. यह सब मेरे अनुभव से परे था. मैं ने कहा - "प्यार ? उधार ? अरूप ने उत्तर दिया - अकेलापन, अकुलाहट, असमंजस, आर्त्त अनुभव, असहाय विरह-व्यथा, यह द्वैत भावना, यह अंधकार में जागकर यह पहचानना कि जो यह मेरा है, वही मुझसे भिन्न है. यह सभी तुम्हारे पास है, मुझे उधार में दे दो. केवल एक ही बार. क्योंकि आज मुझे उनकी अत्यंत आवश्यकता है.

अरूप ने कहा कि मुझे थोडा प्यार उधार दो. रात के अंधकार में मैं सहसा चुप ही रहा. आज तक भी मैं मौन भाव से हूँ. जिस को देखा नहीं, जिसका कोई रूप नहीं, उसको उधार देते मैं डरता हूं. क्या पता यह याचक कौन है ?

इस प्रकार 'उधार' कविता में कवि ने विस्तार से बडे मर्मस्पर्शी ढंग से मानव को प्राप्त प्राकृतिक उपादानों को रेखांकित किया. कविता की शैली संवादात्मक है. इससे कविता में नाटकीयता आ गयी है और कविता प्रभावोत्पादक बन गयी है.

22.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

अज्ञेय की कविताओं पर अपने विचार प्रकट करते हुए डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने लिखा है - "ध्यान देने पर अज्ञेय की कविता के चार चरण मिलते हैं. पहला है विद्रोह और हताशा का, दूसरा है अपने भीतर शक्ति संचय का, तीसरा है बिना किसी आशा के आत्मदान में सार्थकता पाने का और चौथा है मानवीय दायित्व बोध के साथ-साथ भारतीय अस्मिता की पहचान का." "कितनी नावों में कितनी बार" की कविताओं में चौथे चरण की प्रक्रिया दिखायी देती है. कवि की यह अनुभूति कि जो कुछ उसके पास है वह उसका न होकर किसी से उधार में प्राप्त तत्व है, उन्हीं के बल पर, उन्हीं ममेतर तत्वों से जिये जा रहा है, किंतु उससे कोई अरूप, अगोचर उन्हीं तत्वों को उधार मांगता है तो वह देने में शंकालु हो जाता है, उसके मन में संदेह आता है कि यह अरूप याचक कौन है ? यद्यपि अरूप याचक उसे पूरा आश्वासन

देता है कि वह लौटा देगा. स्वयं उसने तो प्रकृति से पूरे तत्वों को बिना संकोच पाया. किंतु देने के लिए असमंजस में पड गया. वह प्रकृति से नहीं सीख सका बिना प्रतिदान की आशा किये आत्मदान करना.

इस प्रकार 'उधार' कविता में कवि ने विस्तार से बडे मर्मस्पर्शी ढंग से मानव को प्राप्त प्राकृतिक उपादानों को रेखांकित किया । कविता की शैली संवादात्मक है. इससे कविता में नाटकीयता आ गयी है और कविता प्रभावोत्पादक बन गयी है.

22.6 शब्दार्थ

सवेरे	-	प्रात:काल
ममेतर	-	मेरा नहीं
अरूप	-	जिसका रूप नहीं
याचक	-	याचना करने वाला, मांगने वाला

22.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

22.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. 'उधार' कविता का सारांश लिखिए.
2. 'उधार' कविता का परिचय देते हुए कविता का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए.

22.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. अज्ञेय का कवि परिचय दीजिए.
2. सप्रसंग व्याख्या कीजिए -
   "सवेरे उठा तो.....असीमता उधार ।"
3. सप्रसंग व्याख्या कीजिए -
   "उसने यह कहा.....यह याचक कौन है ?"

BRAOU

22.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

22.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- 'उधार' कविता का परिचय देते हुए उद्देश्य बताइये.

उत्तर- हिंदी कविता के इतिहास में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन का नाम अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है. आधुनिक साहित्य की विविध विधाओं को भी उन्होंने समृद्ध ही नहीं किया अपितु उन विधाओं पर अपनी अमिट छाप छोड़ दी. अज्ञेय के व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों ही वैविध्य भरे हैं.

प्रस्तुत कविता 'उधार' अज्ञेय का कविता-संग्रह 'कितनी नावों में कितनी बार' से उद्धृत है. 1979 में इसी संग्रह पर 'अज्ञेय' को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रापत हुआ. प्रस्तुत संग्रह अज्ञेय की काव्य-यात्रा ऊर्ध्वगति की परिचायक है. इसमें उनके जीवन-दर्शन की झलक मिलती है. कवि के विचार में मनुष्य के पास उसकी जीवंतता को प्रस्फुटित करनेवाले जो भी तत्व हैं वे सभी प्रकृति से उधार के द्वारा प्राप्त हैं.

प्रकृति ने उसे खुले दिल से सब कुछ उधार स्वरुप दे दिया. उसको यह भी पता है कि जो भी उसका है वह सब उसका अपना नहीं. फिर भी मनुष्य उसी को और किसी को देने को तैयार नहीं होता.

प्रस्तुत कविता के अध्ययन से कवि का जीवन के प्रति जो दृष्टिकोण है, उसका पता चलता है. कवि ने इसमें जीवन और जीवन की प्रकृति की उपादेयता का परिचय दिया है. अज्ञेय के जीवन-दर्शन का परिचय इस कविता में मिलता है. अज्ञेय की कविता की भाषा एवं शिल्पगत विशेषताओं का परिचय प्रस्तुत कविता से मिलता है.

अज्ञेय की कविताओं पर अपने विचार प्रकट करते हुए डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने लिखा है - "ध्यान देने पर अज्ञेय की कविता के चार चरण मिलते हैं. पहला है विद्रोह और हताशा का, दूसरा है अपने भीतर शक्ति संचय का, तीसरा है बिना किसी आशा के आत्मदान में सार्थकता पाने का और चौथा है मानवीय दायित्व बोध के साथ-साथ भारतीय अस्मिता की पहचान का." "कितनी नावों में कितनी बार" की कविताओं में चौथे चरण की प्रक्रिया दिखायी देती है.

22.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- सप्रसंग व्याख्या कीजिए -
"सबेरे उठा तो.....असीमता उधार ।"

उत्तर- प्रस्तुत पंक्तियां हिंदी के मूर्धन्य कवि अज्ञेय की हैं. यह पंक्तियां अज्ञेय कृत 'उधार' कविता से ली गई हैं. 'कितनी नावों में कितनी बार' काव्य संग्रह में संकलित इन पंक्तियों द्वारा कवि कहता है - मैं सबेरे उठा तो मैंने देखा धूप खिली और चारों ओर छा गयी. इतने में एक चिडिया आयी और गाती हुई चली गयी. मैंने धूप से कहा क्या मुझे थोडी गरमाई उधार दे सकोगी ? चिडिया से मैंने पूछा - तुम्हारे गीत में इतनी मिठास है, थोडी उधार दोगी ? घास की पत्ती से पूछा कि तिनके की नोक भर हरियाली दोगी ? शंखपुष्पी से पूछा कि थोडी उजास दे सकती हो ? मैंने हवा से थोडा खुलापन एक प्रश्वास मांगा. लहर से एक रोम की सिहरन भर उल्लास मांगा. मैंने आकाश से आंख की झपकी भर असीमता उधार के रुप में मांगा. सभी से उधार मांगा, सबने दिया.

इन पंक्तियों में यह बताया गया है कि मानव भाव-संचय प्रकृति से ही करता है.

22.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. अज्ञेय : प्रकृति-काव्य, काव्य-प्रकृति - संजय कुमार
2. कवि, कहानीकार अज्ञेय और मुक्तिबोध : संवेदना और दृष्टि : डॉ. भरत सिंह
3. समकालीन हिंदी कविता : अज्ञेय और मुक्तिबोध के संदर्भ में - शशि शर्मा

******

BRAOU

इकाई 23 : कनागार्जुन : 'अकाल और उसके बाद' एवं 'बाकी बच गया अंडा'

रूपरेखा

23.1 पाठ का उद्देश्य
23.2 पाठ एवं कवि परिचय
23.3 मूलपाठ
23.4 सारांश
23.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
23.6 शब्दार्थ
23.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
23.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
23.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
23.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
23.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
23.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
23.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

23.1 पाठ का उद्देश्य

नागार्जुन की इन रचनाओं के अध्ययन से अध्येताओं को यह ज्ञान होगा कि कवि जीवन से जिस अनुपात में संयुक्त होता है, उसी अनुपात में उसका व्यंग्य धारदार बन पाता है. जीवन से कटकर न तो व्यंग्य कविता लिखी जा सकती है और न मानवीय करुणा का काव्यात्मक आलेख तैयार हो पाता है. नागार्जुन जितने व्यंग्य के कवि हैं, उतने ही करुणा के भी. इसलिए प्रस्तुत पाठ के अध्ययन से आपको -

* जीवन संपृक्ति और करुणा के काव्यात्मक अंतर्संबंध ज्ञात होगा.
* यह ज्ञात होगा कि व्यंग्य की प्रेरणा और आधार करुणा ही होती है. व्यंग्य की प्रामाणिकता करुणा ही बतलाती है.
* करुणा की प्रामाणिकता कवि की वास्तविक जीवन संपृक्ति से ज्ञात होती है.
* जन कवि नागार्जुन की जन प्रतिबद्धता से परिचय प्राप्त होगा.

22.10 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

प्रस्तुत पाठ में नागार्जुन की दो प्रसिद्ध कविताएं ली जा रही हैं. यह कविताएं कवि के निरीक्षण, उस निरीक्षण की पृष्ठभूमि में सक्रिय जीवन-संपृक्ति और उस जीवन संपृक्ति का काव्य-भाषा से प्रगाढ़ संबंध के आधार पर ही संभव हुई हैं. नागार्जुन ने जीवन को पूर्णरूपेण लिया है. जीवन का विष उन्हें खूब पीना पड़ा है, लेकिन वही विष रचना कर्म में ढल कर अमृत हो गया है. वही अमृत नागार्जुन के काव्य में करुणाभाव कहलाता है. उनका व्यंग्य भी विषैला नहीं है, बल्कि करुणा का ही एक आयाम है.

BRAOU

'अकाल और उसके बाद' तथा 'बाकी बच गया अंडा' ये दोनों कविताएं हिंदी काव्य के इतिहास में अविस्मरणीय तथा कालजयी मानी जाती हैं. दोनों ही कविताओं में आज़ादी के बाद का भारत अपनी पूरी शक्ति एवं कमजोरी, विशेषता और दुर्बलता के साथ व्यक्त हुआ है. नागार्जुन का काव्य कालजयी होने के क्रम में समकालीनता की उपेक्षा नहीं करता. यह कहा जा सकता है कि बिना समकालीन हुए कोई भी काव्य कालजयी नहीं हो पाता. जो साहित्य तत्काल के प्रति प्रामाणिक नहीं है, अनंत काल के प्रति प्रामाणिक कैसे हो सकता है ? अपने काल के साथ न्याय करके ही कोई रचना कालजयी होने की पात्रता उपलब्ध करती है. नागार्जुन का काव्य अपने समय का और अपने युग का जीवंत दस्तावेज़ है और इसलिए वे चाहे व्यंग्य की शैली अपनाएं या करुणा को वस्तु बनाएं, वह कालजयी हो गया है. व्यंग्यकार न केवल करुणा से और जीवन संपृक्ति से भरा होता है, बल्कि उसके पास जीवन के अनुभव भी भरपूर होते हैं. उन अनुभवों से शिक्षा लेने की क्षमता भी उसमें बड़ी प्रबल होती है. चाहे करुणा हो, चाहे व्यंग्य हो - दोनों ही जगह जीवन को जीने और लगातार सीखते रहने की प्रवृत्ति जब चरितार्थ होती है, तो ही ऐसा कालजयी काव्य रचा जा सकता है.

अकाल एक ऐसी आपदा है जो मनुष्य को उसके आदिकाल से अपने चंगुल में कसती रही है लेकिन मनुष्य की जिजीविषा अकाल के पड़ाव को पार कर लेने के बाद जीवन का उत्सव भी मनाती रही है. आनंद और विषाद दोनों ही जीवन के दो पक्ष हैं और दोनों मिलकर ही जीवन को संपूर्णता देते हैं.

इसी संपूर्णता में जब कोई कमी मनुष्य देखता है तो उसका असंतोष उभरता है और यह असंतोष कभी-कभी व्यंग्य बनकर उभरता है. निश्चित ही व्यंग्य के लिए जीवन की संपूर्णता का एक विजन चाहिए जो नागार्जुन के पास हमेशा रहा है.

कवि परिचय

नागार्जुन का जन्म बिहार के ग्राम तरोनी जिला दरभंगा में सन् 1911 में हुआ. शिक्षा प्राचीन पद्धति से हुई और वह भी केवल संस्कृत की ही. इनका पूरा नाम वैद्यनाथ मिश्र था तथा 'यात्री' उपनाम से मातृभाषा मैथली में वे लेखन करते थे. शिक्षा समाप्त होते न होते नागार्जुन घुमक्कड़ बन गये. बौद्ध भिक्षु बने तो नाम नागार्जुन हुआ. लेकिन स्वभाव से आवेगशील होने के कारण गृहस्थ हो गए. आरंभ से ही जनता के मुक्ति संघर्षों में सक्रिय रहे. मैथिली, संस्कृत, हिंदी और बंगला में रचनाएं कीं. कई उपन्यास, कविता संग्रह, भस्मांकुर नामक खण्ड काव्य आदि ग्रंथों को प्रकाशित किया. जनता से जुडे रहने के कारण सहज ही जनकवि कहलाए. आपका निधन सन् 1999 में हुआ.

23.3 मूलपाठ

अकाल और उसके बाद

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त ।

दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद ।
धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनों के बाद ।
चमक उठी घर भर की आंखें कई दिनों के बाद ।
कौए ने खुजलाई पांखें कई दिनों के बाद ।

बाकी बच गया अंडा

पांच पूत भारत माता के, दुश्मन था खूंख़ार
गौली खाकर एक मर गया, बाक़ी रह गए चार
चार पूत भारतमाता के, चारों चतुर-प्रवीन
देश निकाला मिला एक को, बाक़ी रह गए तीन
तीन पूत भारतमाता के, लड़ने लग गए वो
अलग हो गया उधर एक, अब बाकी बच गए दो
दो बेटे भारतमाता के, छोड़ पुरानी टेक
चिपक गया है एक गद्दी से, बाकी बच गया एक
एक पूत भारतमाता का, कंधे पर है झंडा
पुलिस पकड़ के जेल ले गई, बाक़ी बच गया अंडा

23.4 सारांश

1. नागार्जुन का परिवेश ठेठ बिहारी रहा है और बिहार में आये दिन अकाल पड़ते रहते हैं. बाढ़ और अकाल यूं तो बिहार एवं भारतीय ऋतुओं का समकालीन यथार्थ बन गया है. किंतु बिहार एक ऐसा प्रदेश है जो इस यथार्थ को पूरी तरह से प्रकट करने का माध्यम है. बिहार नाम बौद्ध विहारों की अतिशयता के कारण पड़ा हो किंतु इसका एक और अर्थ मौज-मज़ा करना या आनंद करना भी होता है और अकाल तथा बाढ़ के बावजूद बिहार प्रदेश अपने जीवन समर्थक उत्सवों के कारण भी प्रसिद्ध रहा है. प्रस्तुत कविता में अकाल भी है और उसके बीत जाने के बाद का आनंद भी हैं. वस्तु निष्ठ वर्णन का आभास देती हुयी कवि की यह कविता अपनी आत्मीयता और जीवन में जबर्दस्त हिस्सेदारी के दस्तावेज़ के रूप में जानी जाती है. अकाल के विवरण को कवि इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि चूल्हा कई दिनों तक रोता रहा क्योंकि उसमें पकाने के लिए घर में कुछ नहीं था और चक्की उदास रही क्योंकि पीसे जाने के लिए भी अनाज की ज़रूरत होती है. चूल्हा और चक्की के घर सापेक्ष यथार्थ को ही अधिक प्रभावित करने के लिए उनके पास कानी कुतिया के सोने की बात कवि ने लिखी है क्योंकि कानी कुतिया को ज्यादा अशुभ माना जाता है अगर वह रसोई घर में चूल्हे के पास सो रही हो तो उसका सीधा-सीधा मतलब यही है कि घर में रसोई घर जैसे कोई जगह नहीं है क्योंकि रसोई न तो बनती है और न उसके बनने की संभावना है. दीवार पर छिपकलियों की गश्त इसलिए लगती रही कि घर में अनाज हो तो कीड़े, पतंगे आदि पैदा होते हैं. छिपकलियों के आहार के लिए भी कुछ नहीं है. इसीलिए वे गश्त लगा रही हैं. घर के चूहे स्वयं को हारा हुआ महसूस कर रहे हैं क्योंकि उनके लिए सारे प्रयत्नों के बावजूद कुछ नहीं है. निश्चित ही उस घर में मनुष्य रहते हैं जिनकी हालत बयान करना कवि का उद्देश्य है और वह अन्योक्ति के सार्थक इस्तेमाल से अकाल की विभीषिका का वर्णन कर सका है.

कविता के उत्तरार्ध में 'घर में' अनाज के आने के बाद का विवरण है. 'दाने आये' तो क्या-क्या हुआ ? सबसे पहले तो आंगन के ऊपर से धुंआ उठा, अर्थात् चूल्हा जलाया गया. फिर 'घर भर' की आंखें खुशी से चमकने लगीं. यहां 'घर भर' घर के सारे सदस्यों के लिए प्रयुक्त हुआ है. उन सदस्यों में मानव भी हैं और मानवेतर प्राणी भी. चूहों और छिपकलियों की आंखें भी चमकी होंगी. सिर्फ एक पंक्ति में कवि ने यह संकेत दिया है कि कौए ने कई दिनों के बाद अपने पंख खुजलाए. निश्चित ही आहार मिलने की उम्मीद ही उसके इस कार्य की प्रेरणा रही होगी.

BRACU

आधुनिक कविता में अन्योक्ति तथा मात्रिक छंद (16+10=26 मात्राएं) का ऐसा प्रयोग कविता को अतिरिक्त रूप से शक्तिशाली बनाता है.

2. प्रस्तुत कविता 'बाकी बच गया अंडा' सन् 1950 में रची गयी थी. तब आज़ादी मिले कुछ ही वर्ष हुए थे. कवि ने प्राइमरी स्कूल के बच्चों को समझाने के तर्ज़ पर एक कविता लिखी थी. इसमें कवि भारतमाता के पांच पुत्रों की कहानी कहता है. सबसे पहले खुंखार दुश्मन एक को गोली से मार डालता है तो चार बचते हैं, चारों पुत्रों को कवि ने चालाक और बुद्धिमान कहा है लेकिन एक को देश निकाला मिला जाता है तो फिर तीन बचते हैं. तीनों आपस में लड़ने लगते हैं तो उनमें से एक अलग हो जाता है. अब बचे दो. दो में से एक गद्दी से चिपक जाता है तो फिर एक बचता है. वह एक कंधे पर देश का झण्डा रखता है तो पुलिस उसे पकड़कर ले जाती है और कवि कहता है कि अब कुछ नहीं बचा. यह कुछ नहीं बचना ही कवि की पंक्ति में 'बाकी बच गया अण्डा' की तर्ज पर कहा गया है.

23.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं जिन्हें परंपरा का पूरा ज्ञान था और आधुनिकता उनकी रग-रग में प्रवाहित होती थी. आरोपित न परंपरा थी, न आधुनिकता ही. अगर नागार्जुन की कविता सीधी-सादी और सरल लगती है तो इसलिए कि उसमें आरोपित कुछ भी नहीं है. वे अनुभवकर्ता के रूप में यथार्थ के बाहर रहकर निरीक्षण करने लगते हैं. 'कौए का पंख खुज़लाना' कवि देखता है लेकिन उससे पहले घर में आई हुई उस खुशी को भी महसूस करता है जिसने कौए को पंख खुजलाने की प्रेरणा दी. कविता में संपूर्णता इसलिए आ सकी कि अनुभूति की शर्त अनुभव है जो कवि के पास भरपूर है.

इसी प्रकार भारत माता के पांच पुत्रों की कथा भारत की आज़ादी की लड़ाई और उसके बाद की परिणतियों का पूरा इतिहास बाल गीत की तर्ज़ पर है. नागार्जुन की काव्य साधना चमत्कारों को भी मामूली बनाकर पेश करने में निष्णात है. काव्य रसिक पाठक चमत्कृत होते हुए देखता है कि कवि की यह सहज काव्य शैली है. काव्य-पंक्तियों में चमक पैदा करने की कोई कोशिश कवि ने नहीं की. सतह पर अभिधा ही इस्तेमाल की गई लेकिन व्यंजना में कहीं कोई कमी नहीं रह गयी है. परंपरा के अनुसार व्यंग्य ध्वनि का निर्माण हुआ. मात्राएं उतनी ही और उसी तरह से है. जैसे - 'अकाल, उसके बाद' कविता में है लेकिन यह व्यंग्य ध्वनि, वक्रोक्ति आदि का निर्वाह करते हुए व्यंग्य को भी सहज बनाकर प्रस्तुत करती हैं. इतिहास यहां काव्य में रूपांतरित हो गया है अथवा पुनर्रचित हुआ है. साहित्य को जीवन की पुनर्रचना कहा गया और जीवन के एक आयाम के रूप में ही यहां इतिहास प्रस्तुत हुआ जो बाबा नागार्जुन से पुनर्रचित होकर बालगीत बन गया. निश्चित ही यह एक ऐसी विशेषता है जो कितनी सहज लगती है, उतनी ही दुर्लभ है. यदि नागार्जुन सहज ही जनकवि उपाधि के अधिकारी हो गए तो ऐसी दुर्लभ विशेषता के ही बल पर जो कहीं से भी विशेषता नहीं लगती. विशेष ही सामान्य बनकर प्रस्तुत होता है अथवा असाधारण का साधारणीकरण हो जाता है और यह प्रक्रिया इतनी शीघ्र होती है कि काव्य रसिक पाठक अधिक से अधिक मुग्ध हो सकता है या विस्मित. इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि अपने काल के प्रति प्रामाणिक प्रतिक्रिया इन रचनाओं को कालजयी बना देती है.

23.6 शब्दार्थ

1) मीत - दीवार
   गश्त - चक्कर लगाना

	शिकस्त	-	हार, पराजय
2)	खूंखार	-	खतरनाक
	चतुर	-	चालाक
	प्रवीण	-	बुंद्धिमान
	टेक	-	संकल्प या प्रण

23.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

23.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. पठित कविताओं के आधार पर यह बतलाइए कि नागार्जुन को जनकवि कहा जाना किस प्रकार उचित है ?
2. नागार्जुन के काव्य की विशेषताएं बतलाइए.

23.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. नागार्जुन ने अकाल की विभीषिका के चित्रण में अनूठापन किस तरह उत्पन्न किया हैं ?
2. अकाल के बाद की स्थिति का वर्णन अद्वितीय कैसे बन पडा है ?
3. किस तरह भारतीय इतिहास का यथार्थ बालगीत बन गया है ?
4. पठित कविताओं के आधार पर नागार्जुन के वस्तुविधान को रेखांकित कीजिए ?

23.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

23.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

BRAOU

प्रश्न- पठित कविताओं के आधार पर यह बतलाइए कि नागार्जुन को जन-कवि कहा जाना किस प्रकार उचित है ?

उत्तर- जन-कवि के काव्य में जनता ही 'वस्तु' होती है और 'रूप' (फार्म) भी जनता के लिए ही निर्धारित होता है. निश्चित है कि इसके लिए यह आवश्यक होता है कि कवि का मानस, जन-मानस से संपृक्त रहे. इसे ही दूसरे शब्दों में लोक मानस में लीन होना भी कहा जाता है. जन-कवि जनता की बात जनता के लिए तो लिखता ही है वह खुद भी जनता के भीतर ही होता है.

प्रस्तुत पाठ में दी गयी दोनों कविताएं इस तथ्य को भली-भांति प्रतिपादित करती है. अकाल की विभीषिका और उसके बीच में मानव की पीड़ा और हर्ष उन पशु-पक्षियों के व्यवहारों के चित्रण से व्यक्त किए गए हैं जो घर की खुशियों और ग़म से जुड़े रहते हैं. कुतिया, छिपकलियां, चूहे और कौए के व्यवहार से मानव की स्थिति और मन:स्थिति व्यक्त की गई है, कुछ इस प्रकार कि वह अपनी मिसाल आप है. दोनों ही कविताएं न सिर्फ गाये जा सकते हैं बल्कि कोरस की तरह गायी जा सकती हैं. सप्रेषणीयता पूरी तरह से कारगर होकर इन कविताओं में प्रस्तुत हुई है. वस्तु के स्तर पर और रूप के स्तर पर कोरस का ध्वनि सौंदर्य भी संप्रेषण को सहज बनाता है. एक ओर अभिधा का आभास देती शब्दावली है तो दूसरी ओर इस तरह रस ध्वनि को प्रस्तुति हुई है कि आनंद वर्धन की आत्मा प्रसन्न हो

जाए. मानवीय करुणा की गहराइयां और बालगीत की आकर्षक एवं मन मोहक तर्ज का एकसाथ निर्वाह किसी ऐसे ही कवि के बूते ही बात हो सकती है जो वास्तव में जनकवि हो. नागार्जुन की कविता किसी भी काव्य-रसिक को चाहे वह जटिलता का प्रेमी हो अथवा सरलता का, एकसाथ संतुष्ट करती है और इसलिए ऐसी अद्भुत उपलब्धि को उपलब्ध कराने वाला कवि जन-कवि कहलाता है तो उचित ही है.

23.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (100 शब्दों में)

प्रश्न- पठित कविताओं के आधार पर नागार्जुन के वस्तुविधान को रेखांकित कीजिए ?

उत्तर- किसी भी रचनाकार का वस्तुविधान ही उसकी पहचान होता है. कवि का वस्तु चयन उसी जीवनानुभवों में से होता है जिसे वह भोगता एवं जीता है. यह जीना जिस अनुपात में स्थूल होता है उसी अनुपात में सूक्ष्म भी. जीवन अनंत है और नागार्जुन उसके उजले और अंधेरे दोनों पक्षों का समान भाव से चित्रित करते हैं. नागार्जुन के वस्तु-विधान में कहीं कोई वर्जना नहीं है. अकाल में मनुष्य की पीड़ा व्यक्त करने के लिए चूहे, छिपकली, कुतिया आदि जानवर आते हैं तो भारतीय इतिहास को बतलाने 'भारत के पांच पूत' सक्रिय होते हैं. वस्तु विधान इस तरह से खुले चरित्र का है कि उसमें जीवन के क्षुद्र से क्षुद्र आयाम भी पूरी गरिमा और आदर के साथ प्रतिष्ठित किए गए हैं. पठित कविताएं तो खैर हैं ही लेकिन नागार्जुन के काव्य में मादा सुअर पर भी कविता है और नेवले पर भी. नागार्जुन की कवि दृष्टि से कुछ भी नहीं छूटता. जीवन अपनी संपूर्णता के साथ उस दृष्टि में समेट लिया जाता है. निश्चित ही नागार्जुन के काव्य का वस्तु-विधान जीवन की तरह ही व्यापक, विराट, उन्मुख और वर्जना हीन है.

23.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. नागार्जुन : मेरे बाबूजी - शोभाकांत
2. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि नागार्जुन : डॉ. प्रभाकर माचवे
3. नागार्जुन - जीवन और साहित्य : डॉ. प्रकाशचंद्र भट्ट.

******

BRAOU

इकाई 24 : धूमिल की कविताएं : 'संसद से सड़क तक' एवं 'बीस साल बाद'

रूपरेखा

24.1 उद्देश्य
24.2 पाठ एवं कवि परिचय
24.3 मूलपाठ
24.4 सारांश
24.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन
24.6 शब्दार्थ
24.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न
24.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
24.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न
24.8 नमूने के प्रश्नोत्तर
24.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर
24.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर
24.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

23.10 पाठ का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में नई कविता के प्रतिनिधि कवि श्री सुदामा प्रसाद पाण्डेय 'धूमिल''की दो कविताओं - 1. 'सच्ची बात' और 2. 'बीस साल बाद' पर प्रकाश डाला गया है. इन कविताओं के अध्ययन से आप -

* बीस साल के स्वतंत्र भारत की परिस्थितियों पर कवि के विचारों और भावों पर प्रकाश डाल सकेंगे.
* कविता के कथ्य और अभिव्यक्ति पक्ष की विवेचना कर सकेंगे.
* काव्यगत विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे.

24.2 पाठ एवं कवि परिचय

पाठ परिचय

'धूमिल' की दो कविताएं इस पाठ में संग्रहीत हैं. दोनों कविताएं "संसद से सड़क तक" शीर्षक काव्य संग्रह से ली गई हैं.

"बीस साल बाद" शीर्षक कविता स्वतंत्रता के बीस वर्ष बाद के समय को दृष्टि में रखकर लिखी गई कविता है. अर्थात् लगभग 1967 की कविता मानी जा सकती है. बीस वर्ष के स्वतंत्र भारत में सामान्य जन की गरीबी की स्थिति में कोई आकांक्षित उन्नति देखी नहीं गई. आम आदमी की इस दशा से व्यथित 'धूमिल' का हृदय इस कविता में व्यक्त हुआ है. इस कविता में प्रश्न सामने छोड़कर कवि

BRAOU

चेतनता और संवेदनशीलता को झकझोरते हैं. 'सच्ची बात' मानव की, खासकर आधुनिक मानव की, मानसिकता पर प्रकाश डालती है और साथ-साथ गहरी चोट भी करती है.

दोनों कविताएं 'धूमिल' की श्रेष्ठ कविताओं में गिनी जाती हैं.

कवि परिचय

'धूमिल' कवि का उपनाम और साहित्य जगत में ख्यात नाम है. पूरा नाम है सुदामा प्रसाद पाण्डेय 'धूमिल'. ये पंडित शिवनायक पाण्डेय और श्रीमती रजवन्ती देवी के सुपुत्र है. 'धूमिल' ग्यारह वर्ष की उम्र में ही अपने पिता जी को खो बैठे. पांच भाइयों में बडा होने के कारण इन्हें परिवार का दायित्व संभालना पड़ा.

'धूमिल' ने सन् 1953 में हाई स्कूल की परीक्षा पास की. ये गांव के रहनेवाले थे. उनका गॉव था काशी के पास का खेवली. वहां उनका परिवार खेती करके आजीविका चलाता था. अपने गांव के प्रथम हाई स्कूल पास थे. इसीलिए तुरंत नौकरी की तलाश में लगे. घर का भार भी इसके लिए उन्हें बाध्य कर रहा था. उनकी प्रथम नौकरी एक व्यावसायिक फर्म में लगी. उसमें वे 'पासिंग अफसर' थे. अपनी नौकरी की बदौलत उन्होंने अच्छा भ्रमण किया. इस भ्रमण काल में उन्होंने मजदूर और पूंजीपतियों के बीच की दूरियां देखी. कुछ समय बाद वे बीमार हुए. इस वजह से मालिक द्वारा किये गये अपमान पर रुष्ट होकर उन्होंने नौकरी छोड़ दी.

तदुपरान्त 'धूमिल' जी ने विद्युत प्रविधि का डिप्लोमा किया. इसके आधार पर वे विद्युत अनुदेशक नियुक्त हुए. आगे चल कर इसी विभाग में वे पर्यवेक्षक के पद पर भी नियुक्त किये गये. अपने विभाग के भ्रष्टाचारियों का पर्दाफाश करते रहने के कारण वे नौकरी में अधिक स्थानांतरित होते रहे. इसी क्रम में उनका स्थानांतरण सीतापुर में हुआ. वहां से वे छुट्टी लेकर वाराणसी लौटे. फिर नौकरी पर नहीं लौटे. अपनी जीवन में व्यक्तित्व के बल पर जूझने वाले 'धूमिल' जी का देहान्त 10 फरवरी, 1975 को हुआ.

B.R.A.O.U.

व्यक्तित्व : धूमिल का व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक था. उनका एक आक्रामक व्यक्तित्व था. वैचारिक दृष्टि से ये मार्क्सवादी माने जाते हैं. बाह्य रूप से कठोर और आक्रामक लगते थे किंतु हृदय से निश्चल और स्नेहमय थे. वे स्वभाव से जिद्दी माने जाते थे. जाति-पांति, अंधविश्वास आदि में उनकी आस्था नहीं थी. देहाती सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित 'धूमिल' आदर्शपूर्ण व्यवहार के पक्षपाती थे.

रचनाएं : 'धूमिल' के दो काव्य संग्रह हैं. सन् 1972 में प्रकाशित 'संसद से सड़क तक" उनकी ख्याति प्राप्त रचना है. मरणोपरान्त सन् 1977 में उनका दूसरा कविता संग्रह 'कल सुनना मुझे' प्रकाशित हुआ है. इनके अलावा 'बांसुरी जल गयी' नामक एक गीत संग्रह और कुछ पत्र - पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाएं हैं.

विशेषताएं : 'धूमिल' की रचनाएं युग परिवेश और जीवन के संघर्षों से संबद्ध हैं. कवि ने जो देखा, जिसको भोगा, जो उस पर से गुजरा उसी को काव्य का आधार बनाया और उसी को प्रखर अभिव्यक्ति दी. व्यवस्था को अमानवीयता से मुक्त करके उसमें परिवर्तन लाना ही 'धूमिल' का लक्ष्य है. इसी की आशा में उन्होंने अपनी कविता में मानव की विसंगतियों का परिचय कराना और अच्छाई की दिशाओं में ले जाना अपना लक्ष्य रखा है.

24.3 मूलपाठ

बीस साल बाद

मेरे चेहरे पर
वे आंखें वापस लौट आई हैं
जिन से मैं ने पहली बार जंगल देखा है
हरे रंग का एक ठोस सैलाब जिस में सभी पेड़ डूब गए हैं
और जहां हर चेतावनी
खतरे को टालने के बाद
एक हरी आंख बनकर रह गई है ।
बीस साल बाद
मैं अपने आपसे एक सवाल करता हूं
जानवर बनने के लिए कितने सब्र की जरूरत होती है ?
औ[illegible]बिना किसी उत्तर के चुपचाप
आगे बढ़ जाता हूं
क्योंकि आज-कल मौसम का मिजाज यूं है
कि खून में उड़नेवाली पत्तियों का पीछा करना
लगभग बेमानी है ।
दोपहर हो चुकी है
हर तरफ ताले लटक रहे हैं
दीवारों से चिपके गोली के छर्रों
और सड़कों पर बिखरे जूतों की भाषा में
एक दुर्घटना लिखी गई है
हवा से फड़फड़ाते हुए हिंदुस्तान के नक्शे पर
गाय ने गोबर कर दिया है ।
मगर यह वक्त घबराये हुए लोगों की शर्म
आंकने का नहीं
और न यह पूछने का
कि संत और सिपाही में
देश का सब से बड़ा दुर्भाग्य कौन है ।
आह ! वापस लौटकर
छूटे हुए जूतों में पैर डालने का वक्त यह नहीं है ।
बीस साल बाद और इस शरीर में
सुनसान गलियों से चोरों की तरह गुजरते हुए
अपने आप से सवाल करता हूं
क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है
या इसका कोई खास मतलब होता है ?

BRAOU

और बिना किसी उत्तर के आगे बढ़ जाता हूं
चुपचाप । -- "संसद से सड़क तक"

सच्ची बात

बाड़ियां फटे हुए बांसों पर फहरा रही हैं
और इतिहास के पन्नों पर
धर्म के लिए मरे हुए लोगों के नाम
बात सिर्फ इतनी है
स्नान घाट पर जाता हुआ हर रास्ता
देह के मंडी से होकर गुजरता है
और जहां घटित होने के लिए कुछ भी नहीं है
वहीं हम गवाह की तरह खड़े किये जाते हैं
कुछ देर फिर चमत्कार की वापसी के बाद
भीड से वापस ले लिए जाते हैं
वक्त और लोगों के बीच
सवाल शोर के नापने का नहीं है
बल्कि उस फासले का है जो इस रफ्तार में भी
सुरक्षित है
आदतों और विज्ञापनों से दबे हुए आदमी का
सब से अमूल्य क्षण संदेहों में
तुलना है
हर ईमान का एक चोर दरवाज़ा होता है
जो सण्डास की बगल में खुलता है
दृष्टियों की धार में बहती नैतिकता का
कितना भद्दा मज़ाक है
कि हमारे चेहरों पर
आंख के ठीक नीचे ही नाक है ।

24.4 सारांश

बीस साल बाद

धूमिल कहते हैं - बीस वर्षों के बाद आज मुझे वे आंखें मिली जिनसे मैं ने पहली बार जंगल देखा था, ऐसा जंगल जिसमें हरियाली की एक ऐसी बाढ़ थी जिसमें सबकुछ डूब जाता था.

यहां आकर क्या देखा जा रहा है. हर सावधान करने का प्रयत्न खतरे के टल जाने के बाद, एक हरी आंख बनकर रह जाता है (अर्थात् आगे बढ़ने के लिए एक हरा संकेत बनता जाता है. बिना परिवर्तन के और बिना प्रगति के).

बीस वर्ष बाद मैं अपने आप से एक प्रश्न करता हूं -- (मनुष्य को) जानवर बनने के लिए कितनी सहनशीलता की आवश्यकता है ? बिना उत्तर पाये मैं आगे बढ़ जाता हूं चुपचाप ही (उत्तर की कोई

आवश्यकता नहीं है). क्योंकि आजकल परिवेश का स्वभाव ही कुछ इसी प्रकार का है. खून में उड़नेवाली पत्तियों (शोषितों) को पीछे जाना जाता है.

मध्याह्न का समय हो चुका है. हर दिशा में ताले लगे हुए हैं. (बढ़ने का कोई रास्ता नहीं दिखाई दे रहा है.) दीवारों पर बंदूकों के छर्रों के निशान हैं और सड़कों पर जूते बिखरे पड़े हैं. (जनता पर गोली चलने और जनता के तितर-बितर होने के निशान हैं.) इसी के एक दुर्घटना का चित्र इतिहास में उभर आता है. वह हिंदुस्तान के चित्र को खराब करने वाला ही है.

आज के समय डरे - सहमें लोगों की लज्जा का हिसाब लगाने का समय नहीं है. न आज यह पूछने का वक्त ही है कि महात्मा महान है या सैनिक अथवा इन दोनों में से देश के दुर्भाग्य का हेतु कौन हो सकता है ? दु:ख की बात यह भी है कि आहत और भीत प्रजा से छोड़े गये उन जूतों में पैर डालकर चलने का समय भी यह नहीं है (उसी भीरुता से बढ़ने का वक्त भी नहीं है). बीस वर्षों के बाद इन सुनसान रास्तों में गुजरे एक शरीर से मैं प्रश्न करता हूं कि आजादी क्या तीन रंगों के झंडे का नाम है जिसे एक पहिया (अशोक चक्र) वहन करता फहराता है ? अथवा क्या इसका और कोई अर्थ भी है ?

बिना उत्तर पाये ही मैं चुपचाप आगे बढ़ जाता हूं.

<u>सच्ची बात</u>

धूमिल कहते हैं - इतिहास में धर्म के नाम पर बलिदान दिये हुए लोगों के नाम अंकित हैं. उनके संकेत फहरा रहे हैं. बात इतनी ही है कि पवित्र स्नान के लिए स्नान घाट की ओर ले जाने वाला हर रास्ता शरीरों के थोक बाजार (वेश्यालयों) से ही गुजरता है. यहां पर होने के लिए कुछ नहीं, फिर भी इसी स्थान पर हमें साथी बनाकर खड़ा किया जाता है. कुछ समय के बाद कुछ चमत्कार होता है और फिर भीड से होकर वापस हो जाते हैं. भाव है कि देश में जन हित का कोई काम नहीं हो रहा है फिर भी जनहित के कार्यों का मात्र विज्ञापन किया जाता है. इस समस्त घटना चक्र में समय और मनुष्यों के बीच जो कोलाहल होता है उसे मापने का समय अब नहीं है, बल्कि समय और मनुष्य के बीच की उस दूरी का प्रश्न है जो आज की इस गति में भी ज्यों की त्यों सुरक्षित है. आदतों, प्रचारों और विज्ञापनों के बीच बिचारा मनुष्य कर ही क्या सकता है ? उसके सब से अनमोल क्षण शंकाओं में नष्ट हो जाते हैं (इसीलिए वह किसी निश्चय पर आ नहीं सकता. संदेह उसे दूर खींच ले जाते हैं). यह इस कारण से होता है कि हर ईमानदार व्यक्ति के लिए सत्याचरण से दूर उसे ले जाने का एक चोर मार्ग रहता है. यह मार्ग सड़ा और दुर्गंध से युक्त कुमार्ग ही होता है - सण्डास के पास के मार्ग - सा भद्दा मज़ाक हो जाता है. ढिंढोरा ईमानदारी का पीटा जाता है और आचार भ्रष्टपूर्ण होता है.

यह एक विडंबना है कि चेहरे पर आंखों के नीचे ही नाक है. आंख देखती है और नाक पहचानती है. फिर होता क्या है ? यही जीवन का व्यंग्य है कि समीपतम यथार्थ को भी झुठला दिया जाता है.

24.5 समीक्षा एवं मूल्यांकन

पांचवें और छठे दशक में हिंदी साहित्य के क्षेत्र में कवियों की एक नयी पीढी उभर आयी है. इन लोगों ने कविता को एक नयी दिशा दी है. धूमिल इन कवियों में पांचवें दशक के प्रमुख हस्ताक्षर है. इस समय तक स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लगभग 15 वर्ष बीत चुके थे. समाज में राजनैतिक भ्रष्टाचार, टूटती परंपराएं मृत मान्यताएं आदि की व्याप्ति ने सामान्य का जीवन दूभर कर दिया था. मानव का मूल्य घट रहा था. स्वतंत्रता के सपने टूटते दिखाई दे रहे थे.

BRAOU

ऐसे समय में कवि से सच्चाई, साहस, संघर्ष-प्रियता, विद्रोह, आक्रोश, उत्तेजना आदि की आशा ही की जा रही थी. हुआ भी यही था. इस समय का कवि साहसी, संघर्षशील और विद्रोही के रूप में सामने आया. इसमें कुछ प्रतिद्धिता का होना स्वाभाविक ही माना जा सकता है. साम्यवाद ने इस आधुनिक कवि को अपनी ओर आकर्षित किया. इसी परंपरा के कवियों में धूमिल हमारे सामने एक प्रमुख हस्ताक्षर के रूप में उभर कर आते हैं.

धूमिल ने अपनी कविता के माध्यम से हिंदी कविता की धारा को एक महत्वपूर्ण मोड दी. इनकी अभिव्यक्ति को डॉ. विधानिवास मिश्र ने 'आक्रामक अभिव्यक्ति' कही है. इसी की एक झांकी इन उदाहरणों में मिल सकती है.

"क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है
या इसका कोई खास मतलब होता है"
--बीस साल बाद

"हर ईमान का एक चोर दरवाजा होता है
जो सण्डास की बगल में खुलता है"
--सच्ची बात

धूमिल स्वतंत्र चेतना के कवि भी हैं. उनकी कविता पाठक को रोक कर सोचने के लिए बाध्य करती है. धूमिल की कविताओं के अर्थ, संदर्भ और प्रसंग जानने के बाद ही उनका व्यापक परिवेश और तीखे प्रहार की दशा का बोध तथा लक्ष्य की दिशा की पहचान हो जाता है. धूमिल अपनी कविता में सपाट बयानी करते हैं जिसमें शब्दों की जादूगरी भी मिली रहती है. उनकी अभिव्यक्ति में विचार बिम्ब और भावों की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति की सघनता है. कविता की सार्थकता के लिए वे शब्दों की तलाश करते हैं और उनका सटीक प्रयोग भी. नव्य प्रयोग इनकी कविता में बहुमात्रा में मिलते हैं. एक उदाहरण देखिए -

"वक्त और लोगों के बीच
सवाल शोर के नापने का नहीं है"

शोर को नापने की बात कहकर उन्होंने विचार को एक विशिष्ट दिशा दी है और बिम्ब भी प्रदान किया है. अपने युग की विसंगतियों, यथार्थताओं, विडंबनाओं और वास्तविकताओं को व्यंग्य के आधार पर प्रस्तुत करके एक नयी चेतना को प्रसारित करने वाले कवि धूमिल हिंदी के एक महान आधार स्तंभ हैं.

24.6 शब्दार्थ

चेहरा	-	मुखमण्डल, माथे से लेकर ठुड्डी तक सिर का भाग
सैलाब	-	बाढ़ का पानी, चढ़ाव का पानी
चेतावनी	-	सावधानी, खतरों की पूर्व सूचना
सवाल	-	प्रश्न
सब्र	-	सहन शक्ति, धैर्य
जरूरत	-	आवश्यकता
मौसम	-	ऋतु

मिजाज	-	स्वभाव, प्रकृति
यूं	-	इस प्रकार
बेमानी	-	अर्थहीन, व्यर्थ
छर्रों	-	लोहे की गोली जो बंदूक में भरी जाती है
नक्शा	-	चित्र
सुनसान	-	सन्नाटा, जनशून्य
गुजरना	-	निकलना
तीन रंग	-	काषाय, सफेद और हरा जो झण्डे में हैं
पहिया	-	अशोक चक्र
बाड़ियां	-	चोलियां, स्त्रियों के अंग वस्त्र
पन्ना	-	पृष्ठ
स्नान धाट	-	नदी के किनारों पर नहाने के लिए निर्दिष्ट स्थान
मंडल	-	थोक बिक्री का बाजार
गवाह	-	साक्षी
शोर	-	कोलाहल
नापना	-	मापना
फासला	-	दूरी
रफ्तार	-	वेग
आदत	-	लत, व्यसन
ईमानी	-	विश्वासी
दरवाज़ा	-	द्वार
सण्डास	-	कुएं जैसा बना हुआ पाखाना जिसे मेहतर साफ नहीं करता
मज़ाक	-	व्यंग्य
भद्दा	-	अशिष्ट, अयुक्त

BRAOU

24.7 परीक्षार्थ नमूने के प्रश्न

24.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. बीस साल के स्वतंत्र भारत की परिस्थितियों पर कवि धूमिल के विचारों की समीक्षा पठित कविताओं के आधार पर कीजिए.
2. धूमिल की पठित कविताओं की काव्यगत विशेषताओं को रेखांकित कीजिए.
3. "सच्ची बात" कविता की समीक्षा करते हुए धूमिल द्वारा कसे गये व्यंग्य पर प्रकाश डालिए.

24.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. पठित कविता की किन्हीं चार पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.
2. "धूमिल की कविताओं में जीवन की सच्चाइयों की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है" - इस कथन की समीक्षा कीजिए.
3. 'सच्ची बात' कविता का सारगर्भित सारांश - लिखिए.

4. 'बीस साल बाद' कविता में कवि की किन-किन अपेक्षाओं को पूरा होते न देख आजादी के प्रति रोष प्रकट हुआ है.

24.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

24.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न- बीस साल के स्वतंत्र भारत की परिस्थितियों पर कवि धूमिल के विचारों की समीक्षा पठित कविताओं के आधार पर कीजिए.

उत्तर- धूमिल समकालीन कविता के क्षेत्र में प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हस्ताक्षर हैं. संख्या की दृष्टि से चाहे आपकी रचनाएं कम हैं फिर भी वैचारिक स्पष्टता और प्रखरता की दृष्टि से ये मूल्यवान है. धूमिल ने अपने समय के परिवेश को देखा, उसकी विसंगतियों से क्षुब्ध हुए तथा उन पर कठोर प्रहार भी किया है. उनकी कविता में व्यक्त आक्रोश ध्वंसात्मक होकर निर्माणात्मक दिशाओं में कार्य के लिए प्रेरित करने वाला है. जीवन मूल्यों और लक्ष्यों की दिशा में परिवर्तन की प्रखर इच्छा की झलक उनकी रचनाओं में मिलती है.

धूमिल का व्यक्तित्व आक्रामक व्यक्तित्व कहा गया है. किंतु यह व्यवस्था की अमानवीय क्रिया-प्रतिक्रियाओं से जूझनेवाला आक्रामक व्यक्तित्व है उनके व्यक्तित्व पर उनके अनुज कन्हैया ने एक जगह कहा है - "साहित्यिक अभिरुचि उनमें बाल्यावस्था से ही थी. पढ़ने का शौक व्यसन बन गया था. जीवन की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का मार्ग कविता में मिला.....थोडे ही समय में साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने अपना स्थान बना लिया." नया प्रतीक, अप्रैल, (1979) धूमिल ग्रामीण वातावरण और संस्कृति से संबद्ध रहे हैं. इसीलिए उनके व्यवहारों में आदर का रूप मिलता है. फिर भी विचार के क्षेत्र में उनका प्रखर व्यक्तित्व उभर आया है.

पाठ्यक्रम में स्वीकृत दो कविताएं हैं - "बीस साल बाद" और "सच्ची बात". प्रथम कविता में स्वतंत्रता के बाद बीस साल बाद देश की स्थिति को देखकर धूमिल के हृदय की व्यथा और आक्रोश का सम्मिलित रूप व्यक्त हुआ है.

आधुनिक समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, नैतिक मूल्यों में विघटन, देश के टूटते सपने आदि सब ने धूमिल को व्यथित और आक्रामक बनाया है. ऐसे समय में सचचे कवि से साहस, संघर्ष-प्रिय, विद्रोह, आक्रोश के युक्त बनने की आशा की जाती है. धूमिल इसी रूप में हमारे सामने अवतरित होते हैं और हिंदी साहित्य की समकालीन गति को एक मोड़ देते हैं. ये स्वतंत्र चेतना के कवि हैं और उनकी कविताएं पाठक को सोचने विचारने के लिए बद्ध कर देती है. यही बात पठित कविताओं में भी देखी जा सकती है.

'बीस साल बाद' कविता में एक प्रखर प्रश्न पाठकों के सामने धूमिल उपस्थित करते हैं

'जानवर के लिए कितने सब्र की जरूरत होती है ? यह बीस साल बाद के हिंदुस्तान की विशेष स्थिति का सूचक है. अंदर से खूंखार जानवर की प्रवृत्ति के लोग समाज को चूस रहे हैं हम लोग सब कुछ बर्दाश्त कर लेते हैं. इस प्रश्न का उत्तर तो नहीं मिलता. स्वयं को चूस रहे हैं. हम लोग सबकुछ बर्दाश्त कर लेते हैं. इस प्रश्न का उत्तर तो नहीं मिलता. स्वयं कवि अपने को भी आम आदमी के समान चित्रित करके आगे बढ़ जाते हैं. यहां की चोट अत्यंत प्रखर है.

हिंदुस्तान की स्थिति पर व्यथा है जो हर व्यक्ति को आज साल रही है. यह हर आम आदमी को सोचने के लिए तो बाध्य करती है फिर भी सब चुप हैं.इसी को देखकर धूमिल स्पष्ट और तेज भाषा में कहते हैं-

"हवा से फ़डफ़डाते हुए हिंदुस्तान के नक्शे पर
गाय ने गोबर कर दिया ।"

देश की वस्तु स्थिति से तंग आकर इसी कविता में ये एक सवाल छोड़ जाते हैं -

"क्या आज़ादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है
या इसका कोई ख़ास मतलब होता है ?"

इस तरह सीधे ढंग से प्रहार करके पाठकों को झकझोरने वाला कोई अन्य कवि समकालीन काव्य में दिखाई नहीं देता.

'सच्ची बात' आम भारतीय जन पर चोट करने वाली कविता है. विडम्बनाओं और विसंगतियों को देखते हुए भी चुप रहने वाले भले मानसों पर व्यंग्य है जो प्रखर बन पड़ा है. धूमिल कहते हैं -

"आदतों और विज्ञापनों से दबे हुए आदमी का
सब से अमूल्य क्षण संदेहों में तुलता है।"

इतना ही नहीं अपने लिए सुरक्षित मार्ग ढूंढना भी वह आम आदमी जानता है. आम आदमी की एक मानसिकता है कि वह अपने हर व्यवहार में सच्चाई जताने का प्रयत्न करता है. इसी पर चोट करते हुए धूमिल कहते हैं -

"हर ईमान का एक चोर दरवाजा होता है
जो सण्डास की बगल में खुलता है ।
दृष्टियों की धार में बहती नैतिकता का
कितना भद्दा मज़ाक है ।"

निष्कर्ष : उक्त विवेचन से यह विदित होता है कि धूमिल समय की विडंबनाओं से त्रस्त है. उनके प्रति धूमिल के आक्रामक विचारों का स्वरूप अत्यंत तीखा है. भाषा में घुमा फिराकर कहना वे जानते नहीं हैं. विचार स्पष्ट रूप से प्रगति की दिशा में समान और व्यक्तियों को ले जाने वाले हैं. उग्र और क्रांतिकारी चेतना के कवि धूमिल का वैचारिक पक्ष भी प्रबल और विद्रोहपूर्ण है.

24.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न- नीचे दी गई पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए.

"हर ईमान का एक चोर दरवाज़ा होता है
जो सण्डास की बगल में खुलता है
दृष्टियों की धार में बहती नैतिकता का
कितना भद्दा मज़ाक है
कि हमारे चेहरों पर
आंख के ठीक नीचे ही नाक है."

BRAOU

उत्तर- प्रस्तुत कवितांश आधुनिक युग के प्रमुख कवि धूमिल की कविता 'सच्ची बात' से अवतरित है. यह कविता उनके प्रसिद्ध काव्य संग्रह 'संसद से सड़क तक' से ली गई है.

"सच्ची बात" धूमिल की प्रखर भावनाओं और विचारों की कविता है. इस कविता में धूमिल ने आधुनिक स्वतंत्र भारत की विडम्बनाओं का चित्र खींचा है. वास्तविकताओं के बीच से अपने को बचाने का प्रयत्न करने वाले भीरु मानव पर उनका तीखा व्यंग्य इस कविता में प्रखारता के साथ अभिव्यक्त है. इस कविता के उद्धृतअंश में ईमानदार दिखने वाले मनुष्य की बेईमानी का पर्दाफाश किया गया है.

धूमिल कहते हैं कि मनुष्य ईमानदारी से जीवन बिताना चाहता है, किंतु दुनिया उसे ईमानदार बने रहने नहीं देती. तब उसे अपनी ईमानदारी को छोड़कर व्यवहार में कुछ संखरे अथवा बेईमानी के रास्तों पर चलना होता है. ऐसी स्थिति में वह अपने को लोक की दृष्टि से बचाना चाहता है. साथ-साथ अपने को नैतिक और ईमानदार भी सिद्ध करने का प्रयत्न करता है. क्योंकि सच्चा बनने का प्रयत्न करता है तो उसे दुनिया रहने नहीं देती. नैतिक वर्तन और व्यावहारिक स्थिति में जब विडम्बना उत्पन्न होती है तो मानव की मानसिकता अपने को बचाने की होती है. ऐसी स्थिति में वह उन रास्तों को अपनाता है और अपने को बचाता फिरता है. ऐसे मार्गों की गंदगी और वक्रता को वह समझता है, फिर भी वह विवश है. यह बहती नैतिकता का वर्तन है. दृष्टिकोणों की धारा में यही होता रहता है.

इसी बात को और प्रभावात्मक बनाने के लिए धूमिल कहते हैं कि यह कैसा मज़ाक है कि मानव के चेहरे पर ठीक आंख के नीचे नाक है. इन दोनों ज्ञानेंद्रियों से देखना और सूंघना होता है. सामने की वस्तु की स्थिति को कुछ ही दूर से पहचानने वाले ये ज्ञानेंद्रीय ही हैं. जहां ये काम नहीं करना चाहते हैं वहां ये दोनों एक ही हाथ से बंद भी किये जा सकते हैं या ढके भी जा सकते हैं. धूमिल शायद यह कहना चाहते हैं कि मानव अपने को बचाने के लिए ऐसे रास्तों चलता रहता है जिन पर सामान्य स्थितियों में वह जाना नहीं चाहता. धूमिल की प्रखर अभिव्यक्ति का यह एक सुंदर उदाहरण है. समाज में व्यक्ति आचरण की स्थितियों की बीच की सत्यता का उद्घाटन बडे ही प्रभावशाली रूप में इन पंक्तियों में किया गया है. धूमिल की आक्रांत अभिव्यक्ति का यह भी एक अच्छा खासा उदाहरण बन जाता है. शब्द चयन में कोई विशेषता अगर देखी जाती है तो वह यही कि सामान्य शब्द ही ग्रहीत है फिर भी उन्हें सशक्त और सटीक रूप में प्रयोग किया गया है.

24.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. संसद से सड़क तक - धूमिल
2. संकल्प कविता दशक : संपादक - केदारनाथ सिंह.

*****

BRACU

संकेताक्षरी

अथर्व.	-	अथर्ववेद
अमर.	-	अमरकोष
अष्टा	-	अष्टाध्यायी
आर्योद्देश्य	-	आर्योद्देश्य रत्नमाला
उणादि.	-	उणादि कोष
उद्योग	-	उद्योगपर्व
ऋक्.	-	ऋग्वेद
ऋ.भा.भू.	-	ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
कौ.अर्थ.	-	कौटिल्य अर्थशास्त्र
गो.नि.	-	गोकरुणा निधि
तैत्तिरीय.	-	तैत्तिरीय ब्राह्मण
धातु.	-	धातुपाठ
बृहदा.	-	बृहदारण्यकोपनिषद्
निरु.	-	निरुक्त भाष्य
भर्तृ.	-	भर्तृहरि सुभाषितानि
मनु.	-	मनुस्मृति
महा.	-	महाभारत
महा.	-	महाभाष्य
यजु.	-	यजुर्वेद
रघु.	-	रघुवंश
रामा.	-	रामायण
वेदों के राज.	-	वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त
वेदों में राज.	-	वेदों में राजनीति शास्त्र
वै.को.	-	वैदिक कोष
वै.वा. का इति.	-	वैदिक वाङ्मय का इतिहास
शत.	-	शतपथ ब्राह्मण
शुक्र.	-	शुक्रनीतिसार
सत्यार्थ.	-	सत्यार्थ प्रकाश
साम.	-	सामवेद

BRAOU

डॉ.बी.आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय

हिन्दी विभाग

स्नातक परीक्षा - द्वितीय वर्ष - हिन्दी साहित्य

विषय : हिन्दी काव्य

गृहकार्य-1 (Assignment)

आवश्यक सूचनाएं

* गृहकार्य में प्रश्न के उत्तर लिखते समय किसी भी पुस्तक से प्रत्यक्ष नकल न करें.
* प्रश्न के उत्तर अपने शब्दों में लिखें.
* किसी स्रोत से उदाहरण लेना आवश्यक हो तो उसके सही संदर्भ का उल्लेख अवश्य करें.
* गृहकार्य संपादन के लिए व्यक्तिगत 'फुलस्केप' पृष्ठों का उपयोग करें.
* परीक्षक की टिप्पणी के लिए पृष्ठ पर यथोचित स्थान छोड़ दें.
* गृहकार्य पूरा करने के लिए सामान्यत: एक घंटे से अधिक समय नहीं लगना चाहिए.
* सभी प्रश्नों के उत्तर लिखना अनिवार्य है.

खण्ड-अ (1 x 15 = 15)

प्रश्न 1: 'महादेवी वर्मा के गीतों में कोमल भावों और मधुर कल्पनाओं का सुंदर चित्रण हुआ है' - पठित गीतों के आधार पर इस कथन का स्पष्टीकरण कीजिए.

खण्ड-ब (2 x 8 = 16)

* इस खण्ड के प्रश्नों के उत्तर लगभग 100 शब्दों में लिखें.

प्रश्न 2 : मैथिलीशरण गुप्त ने 'वन में सीता' कविता में क्या संदेश दिया है ?

प्रश्न 3 : संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए.

आया था संसार में, देखन को बहुरूप ।
कहै कबीरा संत हो, परि गया नजर अनूप ।।

जब मैं था तब हरि नाहि, अब हरि है मैं नाहि ।
प्रेम गली अति साकरी, या में दो न समाहि ।।

******

BRAOU

डॉ.बी.आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय
हिन्दी विभाग

स्नातक परीक्षा - द्वितीय वर्ष - हिन्दी साहित्य
विषय : हिन्दी काव्य

गृहकार्य-2 (Assignment)

आवश्यक सूचनाएं

* गृहकार्य में प्रश्न के उत्तर लिखते समय किसी भी पुस्तक से प्रत्यक्ष नकल न करें.
* प्रश्न के उत्तर अपने शब्दों में लिखें.
* किसी स्रोत से उदाहरण लेना आवश्यक हो तो उसके सही संदर्भ का उल्लेख अवश्य करें.
* गृहकार्य संपादन के लिए व्यक्तिगत 'फुलस्केप' पृष्ठों का उपयोग करें.
* परीक्षक की टिप्पणी के लिए पृष्ठ पर यथोचित स्थान छोड़ दें.
* गृहकार्य पूरा करने के लिए सामान्यत: एक घंटे से अधिक समय नहीं लगना चाहिए.
* सभी प्रश्नों के उत्तर लिखना अनिवार्य है.

BRAOU

खण्ड-अ (1 x 5 = 15)

* इस खण्ड के प्रश्न का उत्तर लगभग 250 शब्दों में लिखें.

प्रश्न 1 सूर की कविता में वात्सल्य रस का अनूठा चित्रण है - स्पष्ट कीजिए.

खण्ड-ब (2 x 8 = 16)

* इस खण्ड के प्रश्नों के उत्तर लगभग 100 शब्दों में लिखें.

प्रश्न 2 : सुमित्रानंदन पंत ने 'नौका विहार' कविता में क्या संदेश दिया है ? स्पष्ट कीजिए.

प्रश्न 3 : संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए.

समै-समै सुन्दर सबै, रूप कुरूप न कोइ ।
मन की रुचि जेती जितै, ति तेती रुचि होइ ।।

बड़े न दूजैं गुननु बिनु, बिरद बड़ाई पाइ ।
कहत धतूरे सौं कनकु, गहनौ गढ़्यौ न जाइ ।।

******

डॉ.बी.आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय
हिन्दी विभाग

स्नातक परीक्षा - द्वितीय वर्ष - हिन्दी साहित्य
विषय : हिन्दी काव्य

गृहकार्य-3 (Assignment)

आवश्यक सूचनाएं

* गृहकार्य में प्रश्न के उत्तर लिखते समय किसी भी पुस्तक से प्रत्यक्ष नकल न करें.
* प्रश्न के उत्तर अपने शब्दों में लिखें.
* किसी स्रोत से उदाहरण लेना आवश्यक हो तो उसके सही संदर्भ का उल्लेख अवश्य करें.
* गृहकार्य संपादन के लिए व्यक्तिगत 'फुलस्केप' पृष्ठों का उपयोग करें.
* परीक्षक की टिप्पणी के लिए पृष्ठ पर यथोचित स्थान छोड़ दें.
* गृहकार्य पूरा करने के लिए सामान्यत: एक घंटे से अधिक समय नहीं लगना चाहिए.
* सभी प्रश्नों के उत्तर लिखना अनिवार्य है.

BRAOU

खण्ड-अ (1 x 15 = 15)

* इस खण्ड के प्रश्न का उत्तर लगभग 250 शब्दों में लिखें.

प्रश्न 1 : 'जागो फिर एक बार' कविता में कवि निराला के राष्ट्रीय प्रेम पर प्रकाश डालिए.

खण्ड-ब (2 x 8 = 16)

* इस खण्ड के प्रश्नों के उत्तर लगभग 100 शब्दों में लिखें.

प्रश्न 2 : 'उधार' कविता का भाव समझाते हुए उसकी काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए.

प्रश्न 3 : संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

कागर कीर ज्यों भूषन-चीर सचीरु लस्यो तजि नीरु ज्यों काई ।
मातु-पितु प्रिय लोग सबै सनमनि सुभायें सनेह सगाई ।।
संग सुभामिनि, भाइ भलो, दिन द्वै जनु औध हुते पहुनाई ।
राजीवलोचन रामु चले तजि बापको राजु बटाउ की नाईं ।।

******

डॉ.बी.आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय

हिन्दी विभाग

II Year (3 Year Degree Course) Examination

नमूना प्रश्न पत्र

Model Question Paper

Time : 3 Hours **Course 1 : Hindi Poetry** **Max. Marks 100**

खण्ड-अ : 4 x 15 = 60 Marks

ध्यान दें

1. इस खण्ड से किन्हीं 4 प्रश्नों के उत्तर लिखें.
2. सभी प्रश्नों के अंक समान हैं.
3. प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 250 शब्दों में दें.

प्रश्न

1. 'कबीर समाज सुधारक थें' - इस कथन की समीक्षा पठित दोहों के आधार पर कीजिए.
2. तुलसीदास की भक्ति की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए.
3. 'बालक की विविध चेष्टाओं, उनके नाना मनोभावों और क्रीडाओं का चित्रण सूरदास के पदों में बडा ही स्वाभाविक बन पडा है' - इस कथन का स्पष्टीकरण पठित पदों के आधार पर कीजिए.
4. क्या रहीम के दोहों में जीवन के अनुभव है ? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए.
5. बिहारीलाल के पठित दोहों की समीक्षा कीजिए.
6. प्रिय प्रवास की पवनदूत प्रसंग कविता में राधा के मनोभावों का चित्रण कीजिए.
7. काव्य की उपेक्षिता नारियों के प्रति मैथिलीशरण गुप्त के दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए.
8. 'जागो फिर एक बार' कविता में कवि निराला के राष्ट्रीय प्रेम पर विचार कीजिए.

BRAOU

खण्ड-ब : 5 x 8 = 40 Marks

ध्यान दें

1. इस खण्ड से किन्हीं 5 प्रश्नों के उत्तर लिखें.
2. सभी प्रश्नों के अंक समान हैं.
3. प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 100 शब्दों में दें.

प्रश्न

9. कबीरदास ने गुरु के महत्व को किस प्रकार स्पष्ट किया है.
10. सूरदास की कविता में वात्सल्य रस का अनूठा चित्रण है - स्पष्ट कीजिए.
11. केवट की भक्ति की विशेषता क्या है ?
12. महाकवि रसखान की भक्ति भावना पर प्रकाश डालिए.

13. भाव और विचार दोनों दृष्टियों से बिहारीलाल के दोहों की समीक्षा कीजिए.

14. धूमिल की कविता में जीवन की सच्चाइयों की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है - पठित कविता के आधार पर इस कथन की समीक्षा कीजिए.

15. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

पहले यह मन काग था, करता जीवन घात ।
अब तो मन हंसा भया, मोति चुनि चुनि खात ।।

16. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

मेरी भव-बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाईं परै, स्याम हरित-दुति होइ ।।

17. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

उधौ यह मन और न होय ।
पहिले ही चढ़ि रह्यौं स्याम रंग छूटत न देख्यो धोय ।
कैतव-वचन छाडि हरि हमको सोइ करै जो मूल ।
जोग हमें ऐसो लागत है ज्यों तोहि चंपक फूल ।
अब क्यों मिटत हाथ की रेखा ? कहौ कौन विधि कीजै ।
सूर स्याम मुख आनि दिखाओ, जाहि निरखि करि जी जै ।।

18. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

हरि रस जानिये, जे कबहुं न जाइ खुमार ।
मैमंता घूमत रहै, नाहि तन की सार ।।

हेरत हेरत हे सखि ह्वा कबीर हिराइ ।
बँद समानि समुंद में, सो कत हेरी जाइ ।।

* * * * * *

BRAOU

BRAOU

UNIVERSITY AT YOUR DOOR STEP

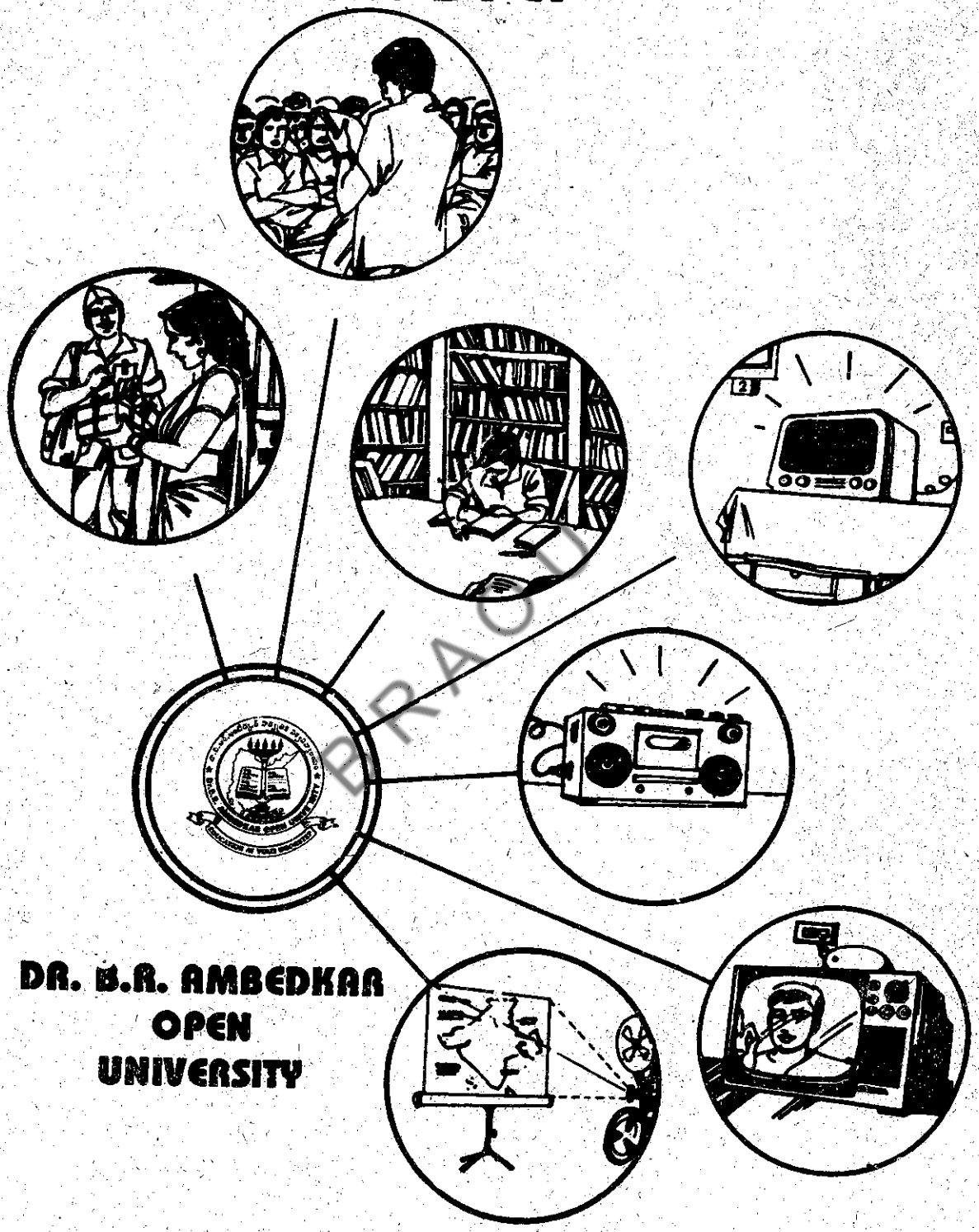

DR. B.R. AMBEDKAR OPEN UNIVERSITY

Road No. 46, Jubilee Hills,
Hyderabad - 500 033.

BRAOU